माधव जी सिंधिया

(ऐतिहासिक उपन्यास)

मयूर प्रकाशन, झांसी

प्रकाशक :
सत्यदेव वर्मा, बी.ए.,एल-एल.बी.
मयूर-प्रकाशन, झांसी।

प्रथम संस्करण-१९५७
द्वितीय संस्करण-१९५९
तृतीय संस्करण-१९५९

मूल्य छैः रुपया

मुद्रक :
रामसेवक खड्ग
स्वाधीन प्रेस, झांसी।

परिचय

कुछ लोगों का कहना है कि राजनीतिज्ञ वह जन्तु है जो बैठा तो रहता है पेड़ की ऊँचाई पर परन्तु कान लगाये रहता है नीचे की भूमि पर रेंगने और चलने फिरने वाले जीवो पर ! जर्मनी का संगठन करने वाले विख्यात बिस्मार्क ने राजनीतिज्ञ और राजदर्शी में यह अन्तर बतलाया था कि राजनीतिज्ञ आने वाले चुनाव की चिन्ता में ग्रस्त रहता है, परन्तु राजदर्शी आने वाली पीढ़ी के कल्याण की बात सोचा करता है। डेढ़ सौ वर्ष से ऊपर हो गये जब एक ने झुँझलाकर कहा था कि यदि पदों का बटवारा राजनीतिकों के स्वयं सिद्ध अधिकार की बात है तो पद रिक्त हों कैसे ? पद रिक्त होता है या तो पदाधिकारी की मृत्यु से—जो कभी कभी ही होती है—*या पदत्याग से*, परन्तु पदत्याग तो कोई करता नहीं ! ऐसे भी हैं जो कहते है कि राजदर्शी वह जो भेड के बाल काटे और राजनीतिक वह जो भेड की खाल खीच डालने पर ही जुट पड़े !

राजनैतिक स्थिति मे चाहे वह वर्तमान की हो अथवा भूतकालीन, आर्थिक, सामाजिक और धार्मिक तत्व तथा प्रश्न घुले मिले रहते हैं। आजकल हम जिस परिस्थिति में हैं मध्य युग के अन्त पर जब अंग्रेज यहा आ जमे हम कहां थे ? क्या मध्य युग के उस अन्त के काल मे हमारे भीतर राष्ट्रीय भावना थी ? हमारी प्रान्तीयता, वर्ग द्वेष, जाति मोह और स्वार्थपरता ने यहां विदेशियों का अड्डा जमाने में उनकी कितनी सहायता की ? क्या ये सकट अब हमसे दूर पड़ गये हैं ? क्या इन संकटों के निवारण की चेष्टा किसी ने मध्य युग के अन्त पर—अट्ठारहवीं शताब्दि में की थी ? यदि की थी तो क्या आज हम उससे कुछ सीख ले सकते हैं ?

उस युग में चुनाव नहीं होते थे, परन्तु राजनीतिक, राजनीतिज्ञ और राजदर्शी तो थे ही। और राजनीति के क्षेत्र मे भयङ्कर महत्वाकांक्षी भी।

कुछ राजदर्शी भी थे। उनमे एक बहुत बडे माधव जी सिन्धिया जिन्हें बोलचाल में महादजी सिंधिया भी कहते हैं।

नाम माधव जी का कही छुटपन मे ही सुन लिया था। 'रूलर्स ऑव इण्डिया' ग्रंथ माला मे प्रकाशित उनका जीवन चरित पीछे पढ़ा। इसका लेखक कीन (Keene) नाम का एक अंग्रेज विद्वान है। उसकी पुस्तक में माधव जी के सम्बन्ध में यह वाक्य पढ़ने को मिला—'Amongst Asiatic publicmen no name to match with Madhava Sindhia' (Keene's Madhava Rao Sindhia P. 191)—'एशिया भर के जन नायकों में कोई भी ऐसा नाम नही है जो माधव सिन्धिया की बराबरी कर सके। (पृष्ठ १९१)

सन् १९१४ में इस पुस्तक के आधार पर मैंने 'माधवराव सिन्धिया का जीवन चरित' लिखा और एक मित्र की कृपा से खो भी दिया। कृपा इसलिये कि यदि छप जाता तो पीछे पछताता क्योंकि कीन के हाथ ऐसी बहुत सी सामग्री नही लगी थी जो मुझे वर्षों उपरान्त प्राप्त हुई। इसी कारण कीन से कुछ गलतियां भी हुई हैं। जनरल सरजॉन माल्कम माधव जी का सम-सामयिक था। उसने अपनी पुस्तक Memoirs of Central India में माधव जी के लिये लिखा है Steel under velvet gloves मखमली दस्तानों में फौलाद! मैं धीरे धीरे सामग्री इकट्ठी करता रहा और माधव जी के सम्बन्ध में कही गई वे बातें मन मे रखे रहा।

'Historical Papers relating to Madhavaji Sindhia' महादजी शिन्दे ह्यान्ची कागद पत्रें (मराठी) सन् १९३७ में प्रकाशित हुई। ग्रान्ट डफ् (Grant Duff) का मराठों का इतिहास (दो भाग) विख्यात कृति है। श्री जी० एस० सरदेसाई का मराठों का इतिहास (तीन भाग), सर यदुनाथ सरकार के Fall of the Mogul

Empire (मुगल साम्राज्य का पतन) तीन भाग, तथा Persian Records of Maratha History-Delhi Affairs, अर्विन (Irvine) का Later Moguls (बाद के मुगल) दो भाग, श्री जी० एस० सरदेसाई का Main currents of Maratha History (मराठा इतिहास की प्रमुख धारायें,) एलफिन्स्टन, टॉमसन, रानाडे इत्यादि की अंग्रेजी पुस्तकें और तारीखें मुजफ्फरी (फारसी) तथा तारीखे महाराजगाने ग्वालियर (उर्दू) इत्यादि ग्रन्थ भी मुझे प्राप्त हो गये। इन सबका अध्ययन करने के उपरान्त मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि माधव जी सिंधिया सचमुच महामानव थे। उनमे कुछ त्रुटिया भी थी, परन्तु कितनी ? उनके बड़े बडे गुणों के सामने नगण्य सी। किस महामानव मे नही थी ऐसी छोटी छोटी सी त्रुटिया ?

इतिहास के जिस चौखटे मे माधव जी सिंधिया का मैं चित्रण करना चाहता था वह विशाल और विस्तृत था—अखिल भारतीय ! चित्र की रूप रेखा, विभिन्न रगो का अनुपात और वितरण, ऐतिहासिक तथ्यों और कल्पना का घोल-मेल—ये सब समस्यायें सामने थी। परन्तु इन सबको चिनौती देने वाला माधव जी का महान व्यक्तित्व उस घोर ग्लानि वाले युग में ! यह हमारे देश का सौभाग्य है कि अति पतनोन्मुखी युग मे भी महान नर नारी हुये हैं जो मार्ग दर्शन करते हुये अपनी छाप छोड गये—माधव जी सिंधिया और उनके समकालीन ही राम शास्त्री, अहिल्याबाई होलकर, माधवराव पेशवा, इब्राहीमखां गर्दी इत्यादि।

हमारे अनेक इतिहासकारों ने अखिल भारत को एक-रस एक-रूप, एक केन्द्रतत्रस्थ देखने की कल्पना की है। जिस राजा या बादशाह ने भारत के समग्र प्रदेशो को सशक्त केन्द्र के नीचे समेटने का प्रयत्न किया वही अत्यधिक प्रशंसा का पात्र बना। आज हमारा गणतन्त्र संघीय-गणतन्त्र है। यही हमारे लिये स्वाभाविक भी है। भूतकाल में केन्द्र को पूर्णरूपेण सशक्त बनाये रखने की भी आवश्यकता थी अन्यथा विदेशी

आक्रमणकारियो को कौन हटाता ? परन्तु भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी प्रदेशो के लिये भी तो कुछ चाहिये था। पठान, मुगल इत्यादि सम्राटो के काल मे—अकबर और उसके दो उत्तराधिकारियो को छोडकर—शेष सब तुर्क, तूरानी, ईरानी, हब्शी इत्यादि परदेशियो की सैन्य सख्या पर निर्भर थे। केन्द्र से छुटकारा पाकर जो प्रदेश आत्म निर्भर हुये उनमे हिन्दू और मुसलमानों की एकता बढी, केन्द्र मे उस एकता का काफी अभाव रहा। अट्ठारहवी शताब्दि मे यह अभाव बहुत बढ़ गया। उत्तर भारत के लगभग सभी खण्ड परदेशी जागीरदारो, जमीदारों के हाथ मे चले गये। ऐसी कठिन परिस्थिति मे भी माधव जी सरीखे नायक का ही काम था कि केन्द्र को प्रबल बनाये रखने के साथ ही उन्होने प्रदेशो को भी आत्म-निर्भर बने रहने मे सहयोग दिया और हिन्दू मुसलमानों मे एकता की भावना समृद्ध करने के प्रयत्न किये। साथ ही उन परदेशी जागीरदारो और जमीदारो को उखाड कर जनता के विकास का मार्ग विस्तृत किया।

माधव जी सिंधिया का जीवन चरित्र न लिखकर उपन्यास लिखने का संकल्प मैंने इस कारण किया कि बडी मात्रा मे कल्पना के लिये गुञ्जाइश मिल गई। परन्तु मैंने कल्पना को भी इतिहास मूलक रखा है।

'माधव जी सिंधिया' के सब पात्र केवल बहुत थोडों को छोड़कर ऐतिहासिक हैं। नारी चरित्रों मे गन्ना बेगम और उम्दा बेगम इतिहास प्रसिद्ध हैं। गन्ना बेगम की समाधि ग्वालियर के उत्तर पश्चिम मे लगभग ग्यारह-बारह मील है। कहा की तो गन्ना बेगम और कहा उसका देहावसान हुआ ! यो तो माधव जी के युग की अनेकानेक घटनायें रोमाञ्चकारी और ध्यान आकृष्ट करने वाली है, परन्तु गन्ना बेगम, उम्दा बेगम, जवाहरसिंह, नजीबखा, गुलाम कादिर, शिहाबुद्दीन इत्यादि की तो बहुत ही हैं। शिहाबुद्दीन ! हद हो गई इस एक में नृशन्सता, नीचता, छल कपट, क्रूरता और निर्ममता की। क्या थी राजनीति उस

युग की ! उस पतित और भ्रष्ट राजनीति के युग में भी माधव जी सिंधिया सदृश्य महापुरुष को भारत ने जन्म दिया।

कर्नल मैलीसन अपनी पुस्तक 'The Final French Struggle in India' (भारत मे फ्रासीसियो का अन्तिम सघर्ष) में माधव जी के सम्बन्ध में कहता है—

'····The Great Dream of Madhava was to unite all the native powers of India in one great confederacy against the English. In this respect he was the most far sighted statesman that India has ever produced —It was a grand idea, capable of realisation by Madhavaji, but by him alone, and, but for his death, would have been realised.'
अर्थात्—'······माधव जी का विशाल स्वप्न भारत की सारी शक्तियों को अंग्रेजों के विरुद्ध एकता मे बांधने का था। इस विषय मे उन सरीखा अत्यन्त दूरदर्शी राजदर्शी भारत ने और कोई नही उत्पन्न किया। यह एक विराट कल्पना थी, परन्तु इसे माधव जी, केवल माधव जी ही, सफल बना सकते थे। यदि उनका देहान्त न हो गया होता तो वे सफल हो जाते।'

यह थी वास्तव में स्वराज्य की तत्कालीन कल्पना जिसे छत्रपति शिवाजी ने सबसे पहले साकार किया। शिवाजी ने अपने पत्र मे स्वराज्य *का विवरण दिया है। देखिये 'पत्र सार संग्रह' नं०* ६४२ और सर देसाई की Main currents of Maratha History पृ० १३३। माधव जी इसी परम्परा के भक्त थे। *उन्होंने कभी अपने को राजा महाराजा नहीं कहा, केवल पटेल ! जनरल सर मालकम ने कुढ़कर लिखा है—*

'Madhoji made himself a sovereign by calling himself a servant.' Central India I. P. 125

यह बात उस युग की है जिसके लिये कहा जाता है कि मराठे और जाट हल की नोक से, सिक्ख तलवार की धार से और दिल्ली के सरदार बोतल की छलक से इतिहास लिख रहे थे ! और अंग्रेज उस समय क्या थे ? क्लाइव के विविध रूपों के समन्वय—व्यवसाय, सिपाहीगीरी, भेड़ की खाल उधेड़ने वाली राजनीतिज्ञता, बेईमानी, शूरता, धूर्तता ।

जब ईस्ट इण्डिया कम्पनी स्थापित हुई उसके विधान में एक धारा यह भी थी—

'कोई भी सज्जन उत्तरदायित्व के किसी भी पद पर नहीं रक्खा जायगा ।'

'The society of adventurers constituted into The East India Company resolved on consultation not to employ any gentleman in any place of charge.'—Bruce's Annals of the East India Co. Vol. I. P. 17 and P. 132.

नीति और सदाचार की कमी अनेक अंग्रेज आगन्तुको में बहुत समय तक बनी रही । माधव जी के युग में यही हाल रहा । भारत के तत्कालीन अधिकांश राजनीतिको मे कदाचार कदाचित और भी अधिक था । अंग्रेजों के पास अनुशासन और नये नये अस्त्र-शस्त्र अवश्य थे । इन सबका सामना करने के लिये माधव जी ने कमर कस ली । आँधी-तूफानों की भँवरों और असह्य धक्को में—छाती ताने, सिर सीधा किये हुये एक ही माधव—शायद उस युग में दूसरा कोई नहीं !

इन आँधी तूफानो में एक बड़ा था 'सल्तनते जम्हूरियत' का मुस्लिम संगठन । शाहवली उल्लाह फकीर इसके संस्थापक थे । अपने मतसमर्थन वाले हिन्दुओं को भी इस संघ मे शामिल करना चाहते थे । परन्तु उनका एक चेला शाहकुतुब मन ही मन इस विचार के विरुद्ध था । वही है यह कुतुबशाह जिसने नजीबखां रुहेले का साथ देकर माधव जी के बड़े भाई दत्ता जी का, घायल और बन्दी होते हुये भी, सिर काट कर

नजीबखां को भेंट किया था। शाहवली उल्लाह का देहान्त सन् १७६२ में हो गया। उनका प्रधान शिष्य शाह अब्दुल अजीज मतान्धता में बहुत आगे निकल गया। उसने फतवा दिया कि 'जहां आजाद इस्लाम की हुकूमत न हो वह दारुलहरब है; वहां मुसलमान हुकूमत के खिलाफ या तो तलवार पकड़ें या हिजरत करें—उस देश को छोड़कर चले आवें।' इस मत का विस्तार परदेशी मुसलमानों ने जोर के साथ किया। एक दिन दिल्ली का बादशाह भी इस चक्कर में खींच लिया गया, जिसकी सहायता माधव जी कर रहे थे! अट्ठारहवीं शताब्दि के इस आन्दोलन के बीज हमारी बीसवीं शताब्दि में भी फूले फले। मुस्लिम-लीग पाकिस्तान और पाकिस्तान की इस्लामी रिपबलिक (जम्हूरियत) अधिकांश में उसी के परिणाम हैं। अंग्रेज भी इस आन्दोलन का साथ देने पर तुल पड़े थे क्योंकि उन्हें खंड खंड विभक्त भारत का हड़पना तब दुष्कर नहीं जान पड़ता था। कलकत्ते से प्रकाशित होने वाले 'कलकत्ता गजट' ने अंग्रेजों को इस नीति के अपनाने से सावधान किया था—

'Many have urged the necessity of upnolding the Mogul influence to counter-balance the power of the Hindus; bnt this should seem bad policy as we should uselessly become abnoxious and involve ourelves in the interest of a declining state.' Calcutta Gazette 8-3-1787

अर्थात्—'बढ़ती हुई हिन्दू शक्ति की तौल घटाने के लिये अनेकों का आग्रह है कि मुगलों के प्रभाव को समृद्ध करो। यह नीति बुरी होगी। इस पतोन्मुखी राज्य के झंझटों में उलझने के कारण हम लोग घृणास्पद हो जायेंगे।'

माधव जी ने हिन्दू मुसलमानों में भारतीय एकता और समग्रता उत्पन्न करने के प्रयत्न किये, परन्तु विदेशी तुर्क तूरानी इत्यादि सदा बाधा डालते रहे। फिर भी अनेक हिन्दुस्थानी मुसलमान माधव जी के आदर्शों के दृढ़ पोषक बने—जैसे सेनानायक रानेखां। रानेखां ने लालसोट की

लड़ाई के पहले माधव जी से भस्म और प्रसाद तक लिया था। अगम और घोर कठिनाइयों से संघर्ष करके ऊपर उठने वाले माधव जी भारतीय इतिहास के दमकते हुये तारे हैं। 'महादजी शिन्दे ह्याञ्ची कागद पत्रें' की भूमिका लिखने वाले हमारे विख्यात इतिहासकार डा० यदुनाथ सरकार ने लिखा है—

'From such an int imate study the man emerges even greater than we supposed him before. The habitual meekness of spirit. the respect for venerable persons which this strong and busy man of action displayed even at the height of his earthly glory which was to him but a crown of thorns.... .He towers over Maratha history in solitary grandeur, a ruler of India without an ally, without a party without even an able and reliable civil and diplomatic service or strong and honest advisors, If..Nanas Fadnis had possessed only half of Machiavelli's patriotism and honesty, or even a wise perception of self-interest and had backed Madhavaji at the out set ..... then the whole course of the later Maratha history might have become different.'

अर्थात्—'इस गहरे अध्ययन के बाद अब इस मानव (माधव जी) को उस ऊँचाई पर पाते हैं, जिसकी पहले हम कल्पना नहीं कर सके थे। बहुत बड़ी पार्थिव महत्ता प्राप्त कर लेने पर भी, जो उनके लिये काटों का ताज ही था, वे आदरणीय वयोवृद्धों के प्रति अपनी स्वाभाविक नम्रता और विनय प्रकट करते रहते थे—उतने प्रबल और कार्य-व्यस्त रहते हुये भी! मराठा इतिहास में उनका चमत्कारपूर्ण गौरव अत्यन्त उच्च शिखर पर है—वे थे भारत के शासक बिना किसी सहयोगी के, बिना किसी दल-बल के, बिना किसी योग्य या विश्वसनीय सचिव-वर्ग के! यदि नाना फडनीस में चाणक्य की देश-भक्ति और ईमानदारी आधी

भी होती अथवा नाना में स्वार्थ का ही प्रबुद्ध विवेक होता और आरम्भ मे ही माधव जी को साथ दे दिया होता तो उपरान्त के मराठा इतिहास की धारा भिन्न हो गई होती।' तात्पर्य यह कि अंग्रेजों या विदेशियों का राज्य भारत पर असंभव हो जाता।

और माधव जी कविता भी करते थे! मराठी और हिन्दी दोनों मे!! उज्जैन के ज्योतिषाचार्य विद्वद्वर श्री सूर्यनारायण जी व्यास की कृपा से मुझे माधव जी रचित कुछ हिन्दी दोहे मिल गये। मैं उनका आभारी हूं। गन्ना बेगम इन दोहों को भी गाया करती थी। गन्ना बेगम के प्रसंगों पर डॉ॰ सरकार की पुस्तक *Fall of the Mogul Empire* में पर्याप्त सामग्री है। परन्तु उस पर Wendel ने अपनी पुस्तक में बहुत लिखा है। शिहाबुद्दीन की क्रूरताओं का वर्णन डॉ॰ सरकार ने तो किया ही है, अन्य इतिहास लेखकों ने भी किया।

गन्ना बेगम के विषय में वैन्डैल ने लिखा है कि वह जवाहरसिंह को बेहद चाहती थी। उन दोनों ने परस्पर निश्चय कर लिया था कि जब आगरे से जा रही हो तब मार्ग में धावा मार कर जवाहरसिंह उसे अपने साथ ले जावे; परन्तु जवाहरसिंह के पिता भरतपूर नरेश सूरजमल को पहले ही मालूम हो गया। वह जवाहरसिंह के उस धावे के समय आ धमका। गन्ना जवाहरसिंह के साथ न जा सकी। बाप बेटे—सूरजमल और जवाहरसिंह—के आपसी वैर का यही कारण हुआ। दोनों मे लड़ाई छिडी जिसमे जवाहरसिंह घायल हो गया था। गन्ना बेगम को उसी की सहमति से जवाहरसिंह ने दूसरी बार धावा मार कर झपट ले जाने का प्रयास किया, परन्तु फिर विफल हुआ।

गन्ना बेगम का देहान्त सन् १७७५ में हुआ था—'आह गमये गन्ना बेगम' उसकी कब्र पर खुदा है। यह ग्वालियर से उत्तर पश्चिम में ११, १२ मील की दूरी पर नूराबाद स्टेशन के निकट है। उस वाक्य से गन्ना के देहावसान की तारीख का पता लगा है और उसके दुखी जीवन का भी—यहां दुःखिनी गन्ना बेगम के लिये एक आह और आंसू डाल देना।'

उपन्यास की तैयारी के क्रम में जब मैं मुरादाबाद-स्थित उस स्थल को देखने गया तब क़ब्र खुदी पाई ! अभिलेख वाला वह पत्थर अलग रक्खा था। मालूम हुआ कि १९४६–१९४७ के हिन्दू-मुस्लिम दगों के बीभत्स ने यह कुकर्म करवाया है। एक आसू तो आख में आ ही गया और उस बर्बरता पर कलेजा थर्रा गया। मेरे साथ उस समय मध्यभारत के एक मन्त्री थे जो मेरे मित्र भी हैं। उनसे प्रार्थना की कि वह अविलम्ब गन्ना वेगम की समाधि का पुनरोद्धार करा दें।

शिहाबुद्दीन इमादुल्मुल्क सन् १८०० में कुत्ते की मौत मरा। वह कहा मरा उससे तो इतिहास को वास्ता है और न मुझे।

परन्तु उत्तर भारत में जहा शिहाब सरीखे लोग थे, वहा मन्यारसिंह सिक्ख सरीखे वीर भी थे। इसी ने अपने प्राणों की होड़ लगाकर मुगल शाहजादियों की इज्जत बचाई थी, दिल्ली की जुमा मस्जिद को गुलाम कादिर द्वारा ध्वस्त और अपमानित होने से बचाया था, और कैद किये शाहजादो की रक्षा गुलाम कादिर की पाशविकता के विरोध मे की थी। मन्यारसिंह ने इतिहास में स्थान पाया है, और गुलाम कादिर ने भी जो नजीबखा रुहेला का पौत्र और 'सल्तनते जम्हूरियत इस्लाम' का एक पाया भी था !!

उपन्यास मे जिन प्रमुख व्यक्तियो और घटनाओ का वर्णन आया है,—वे सब इतिहास सम्मत हैं,—उनसे सम्बन्ध रखने वाले लगभग सारे स्थलों की मैंने यात्रा की। केवल पूना निकटस्थ वनवाडी रह गई थी जहा 'माधव जी के साथ गुनीसिंह रहा था', और जहा माधव जी का देहावसान १२–२–१७९४ के दिन हुआ था। उपन्यास पूरा हो गया था १९४८ की रामनवमी के दिन, परन्तु मैं पूना १९५६ के सितम्बर में जा सका। इतने दिनों उपन्यास के अप्रकाशित पड़े रहने का एक कारण यह भी रहा—जब तक वनवाडी की यात्रा न करलू उपन्यास प्रेस में कैसे जाये ?

जैसा कि मैंने ऊपर कहा है उस समय कुछ समस्यायें ऐसी थीं जैसी किसी न किसी रूप में आज भी हैं। उस काल के चित्रण का जो प्रयत्न मैंने किया है पाठकों के सामने प्रस्तुत है। तत्सम्बन्धी कुछ सत्य बहुत ही कड़वा और भयानक है। उसे थोड़ा सा हलका करने का प्रयास किया है, परन्तु सत्य तो सत्य ही है। जैसा कुछ बन पड़ा देख लीजिये। और—और क्या कहूं ?

झाँसी
जन्माष्टमी
१८-८-१९५७

वृन्दावनलाल वर्मा

प्रस्तावना

राजा साहू अपनी मनोवृत्तियों को बाहर से बटोर बटोर कर भीतर बिखेरता रहता था। राज्य-शासन स्वभावतः पेशवा और प्रतिनिधि के हाथों में चला गया। वे लोग न भी उस भार की महत्ता को अपने सिर लेना चाहते तो भी लेनी पड़ी। फिर, सत्ता की महत्ता तो मोहक भी बहुत होती है। एक बार हाथ में आने पर और कटीली होने पर भी, छोड़ी नहीं जाती।

सवाई जयसिंह चिड़चिड़ाहट की एक घड़ी में साहू को पत्र लिखा, 'आपने हिन्दू धर्म के लिये क्या किया है? कितने मन्दिर बनवाये? कितना दान पुण्य किया?'

साहू ने बेखटके उत्तर दिया, "मैंने मुगलों से सारा देश, दिल्ली से लेकर रामेश्वर तक जीत लिया है और ब्राह्मणों को दे दिया है!'

साहू ने अपनी मौज में और भी बहुत कुछ किया।

शिकार खेलते खेलते एक बार नाहर के पन्जे में आ गया होता, पर स्वामिभक्त कुत्ता साथ था। कुत्ते ने प्राण बचा लिये। साहू कुत्ते पर बेतरह रीझ गया। कुत्ते को एक जागीर लगादी! पालकी बख्शी!! आदमी कुत्ते को पालकी मे बिठला कर लाने जाने लगे!!! इससे भी बढ़कर साहू ने एक सनक और दिखलाई।

दो बड़े मराठा सरदारों का दरबार में स्वागत होना था। साहू ने अपने उस कुत्ते को रेशम, जरतार, सोने, मोती तथा हीरों जवाहिरों से लाद दिया और अपनी राजसी पगड़ी भी उसके सिर पर बाध दी! सरदारों ने पहले अपने राजा के इस प्रतिनिधि को प्रणाम किया!!

कुत्ते के सिर पर पगड़ी ऐसी बांधी कि अपने सिर पर फिर वह या कोई भी पगड़ी उसने कभी नही रक्खी—नगे सिर ही बना रहा !!!

ऐसे राजा का राज्य मराठे सरदारो पर लगभग चालीस वर्ष रहा। इस परिस्थिति मे शिवाजी के आदर्शों का पालन, सरदारो और जागीरदारों का एकीकरण तथा जनता का सुख साधन कितने दिनों चल सकता था या ठहर सकता था ?

फिर भी बालाजी बाजीराव ने साधारण जनता—किसान और मजदूरों—की रक्षा की, उनके बोझ हलके किये और उनको सुखी बनाये रखने के उपाय किये।

साहू के देहान्त के पीछे राज्य का प्रतीक, क्रमशः, राजा न रहकर, पेशवा हो गया और वास्तविक राजधानी सतारा से खिसक कर पूना चली गई।

पूना के पड़ोसी हैदराबाद के निजामुलमुल्क के देहान्त पर उसके लड़को और भतीजो में युद्ध हुआ। निजाम का एक लड़का नसीरजंग दक्षिण मे पहले से था; दिल्ली के अधिकार-वृत्त में अपना पन्जा रखने के लिये निजाम ने अपने एक लडके गाजीउद्दीन को रख छोडा था। *गाजीउद्दीन कन्जूस और रोजा-नमाज वाला आदमी था।* उसने अपने लड़के शिहाबुद्दीन को धर्म की कडाइयो के शिकन्जे में छुटपन से कसा था। स्त्रियों की सगति और दृष्टि तक मे उसको इस तरह बचाने की कोशिश की थी जैसे कोई दूध पीते बच्चे को आग से बचाने का प्रयत्न करता रहता है।

जब गाजीउद्दीन दक्षिण की सूबेदारी—या रियासत—के अपने दावे को सर करने गया तब शिहाबुद्दीन को दिल्ली मे ही छोड़ गया। *शिहाबुद्दीन उस समय चौदह पन्द्रह साल का था।* बाप के सदा प्रस्तुत भय से वह कुछ मुक्त हुआ, परन्तु उसके अप्रस्तुत भयङ्कर प्रभाव से फिर भी दबा रहा : स्त्रियों के प्रति निगाह न जाने देने की मनाही थी

परन्तु यह निषेध उसकी अन्तर्दृष्टि को अपने बाल-सहज सौन्दर्य मोह से निवृत्त नहीं कर सकता था। शिहाबुद्दीन ने पिता की अनुपस्थिति में धर्म की ओर से मन को खींचकर अपने शरीर को सजाने संवारने में लगाया। स्त्रीत्व को अपने पुरुषत्व पर आरोपित किया।

उधर गाजीउद्दीन मराठों की सहायता से अपने भाई भतीजों का मुकाबिला करने के लिये दक्षिण में व्यस्त था।

उन्होंने युद्ध की नौबत ही नहीं आने दी। आदर सत्कार किया और दावतों ज्याफतों का पहाड़ खड़ा कर दिया। लड़ाई किस बात के लिए? रियासत यों ही हाजिर है। मराठों की सहायता ली ही क्यों जाय?

एक दावत में गाजीउद्दीन को विष दे दिया गया और वह हैदराबाद की रियासत तथा इस संसार से सदा के लिये विदा ले गया।

शिहाबुद्दीन न तो मराठों को भूल सकता था और न मराठे हैदराबाद को। गाजीउद्दीन के समाप्त होने के उपरान्त उसके भाई भतीजों में परस्पर चल पड़ी। दो बड़े बड़े दल बने। एक दल ने फ्रांसीसियों का सहारा पकड़ा। फ्रांसीसी सेनानायक बुसी खूब सीखे सिखाये तिलंगे और यूरोपियन सैनिकों को लेकर उस दल में शामिल हो गया। उसके पास बढ़िया फ्रांसीसी तोपें भी थीं। दूसरे दल ने मराठों का सहारा पकड़ा।

मराठों को हर हालत में युद्ध करना था। उनके नित्य जीवन के लिये निजाम का राज्य—हैदराबाद—एक कठोर कांटा था। इसको तोड़े या मोड़े बिना उनका काम ही नहीं चल सकता था। पुर्तगाली, फ्रांसीसी और आगे आने वाले अङ्गरेज भी उनको स्पष्ट अपने शत्रु दिखलाई पड़ रहे थे। इसलिये इस युद्ध के लिये महाराष्ट्र में बड़ी उमंग फैली।

परन्तु विघ्नों का एक समूह और था। हैदराबाद रियासत जिन रियासतों—गोलकुंडा, बीजापूर, बीदर इत्यादि—के खण्डहरों पर खड़ी

होने जा रही थी, वे अपने को जनप्रिय और भारतीय बना चुकी थीं। उनके अधिकांश सरदार और जागीरदार हिन्दू—मराठे थे। गोलकुंडा इत्यादि के नष्ट हो जाने पर, इनमें कई के सरदार निजाम की गोठ में पड़ गये। मराठों को अपने इन भाइयों के साथ टक्कर लेनी थी। निजाम विदेशी था, तूरानी नसल का और उसकी अधिकांश सेना विदेशी थी, परन्तु इसके साथ अनेक छोटे-बड़े मराठा सरदार भी थे—भूमि के भूखे प्यासे सामन्त !

पूना की सम्पूर्ण सेना निजाम-दमन के लिये न आ सकी। इधर रुहेलों और अवध के नवाब सफदरजङ्ग के बीच लड़ाई हो गई थी। सफ़दरजंग ने अहमदशाह अब्दाली से सहायता की याचना की थी। वह एक युद्ध हारा, दूसरा जीता और लौटकर चला गया। तब फदरजंग ने मराठों को निमन्त्रित किया। मल्हारराव होलकर और रानोजी का औरस पुत्र जयप्पा सिंधिया उसकी सहायता के लिये गये। भरतपुर के जाट राजा सूरजमल ने उनका साथ दिया। इन तीनों की सहायता से रुहेले, रुहेलखण्ड से खदेड़े जाकर कुमायूं की पहाड़ियों और जंगलों में भागे। उसी समय अहमदशाह अब्दाली का दूसरा आक्रमण हुआ। उसने आसानी से लाहौर और मुल्तान को अधिकार में कर लिया। दिल्ली के बादशाह अहमदशाह ने अहमदशाह अब्दाली के साथ सन्धि करके उसके अधिकार को स्वीकृत कर लिया। मराठों को उत्तर में जागीर मिली और रुहेलों से पचास लाख रुपये का वचन।

मल्हारराव होलकर और जयप्पा सिंधिया दिल्ली की ओर बीधे हुये थे। ऐसे समय में मराठों को निजाम से लड़ना पड़ा।

निजाम के विरुद्ध लड़ने के लिये जो मराठी सेना भेजी गई थी उसके नायक रानोजी सिंधिया और उसके दो लड़के दत्ताजी और माधव जी थे।

जयप्पा, दत्ताजी और जोतीबा रानोजी की विवाहिता पत्नी से उत्पन्न हुये थे और माधव जी तथा तुकाजी अविवाहिता से। माधव को

अपनी माता का प्यार बहुत कम मिल पाया था; रानोजी छुटपन से ही उनको अपने साथ रखता आया था।

माधव जी अब बीस साल के हो गये थे। आंखें भीग गई थीं, सांवला रंग कुछ और खरा हो गया था। माता की ओर से तो उनको ममता कम मिली थी, परन्तु पिता का स्नेह बहुत। माधव जी बहुत नम्र और सुशील हो गये थे—दिखलाई कम से कम ऐसे ही पड़ते थे। बड़ी-बड़ी आंखें हँसता हुआ चेहरा, दृढ़ ठोडी, और दृढ़तर भौंहें।

परन्तु चेहरे की हँसी उन दृढ़ भौंहों और ठोडी के बीच में असमय समाने लगी। निजाम के विरुद्ध कोई बड़ा युद्ध न लड़ पाने के पहले ही रानोजी का देहान्त हो गया; माधव जी अब संसार की समस्याओं के सामने कुछ अकेले से पड़ गये। इससे उनके ओज में कमी नहीं आई। मुकाबिला करने के लिये उन्होंने मुट्ठी कस ली।

(१)

दो पहर रात जा चुकी थी। जाड़े की ऋतु। दो दिन पहले पानी भी बरस चुका था। मैदान में पहाड़ी से भीगी-भीगी हवा की सोंध आ रही थी। थोड़ी दूर निजाम की मुगल फौज द्वारा जलाया और मिटाया हुआ तली गांव अब भी धुंधा रहा था। कड़ाके की ठण्ड होने हुये भी मराठा छावनी में आग का जलाना बिलकुल मना था।

एक डेरे में दत्ताजी, माधव जी और दो अन्य मराठा सरदार धान के प्याल पर बिछाये हुये कम्बलों पर बैठे हुये थे और गुजरात के बने हुये कम्बल ओढ़े हुये थे जिनके लिये उस समय वह प्रान्त प्रसिद्ध था।

'*मुगल सेना से रात को ही निबट लिया जाय*। हमारे सिपाही और घोड़े विश्राम कर चुके हैं', दत्ताजी ने अपनी चौड़ी छाती के पीछे दाहिने कन्धे को जरा-सा उभका कर कहा और वह माधव जी की ओर देखने लगा।

माधव जी ने उन दोनो सरदारों की ओर आंख उठाई और फिर दाईं भौंह को ऊपर चढ़ाकर सांस-सी साधकर रह गये।

उन दो सरदारों में से एक बोला, 'मैदान में स्थान-स्थान पर अभी कीचड़ है, घोड़े अटकेंगे। इसके सिवाय पहाड़ी के उस ओर मुगल सेना असावधान नहीं है, लड़ाई के लिये तैयार है और फ्रासीसियों ने तोपखाने भी चुस्त कर लिये हैं।'

रात और दिन की लड़ाई के इस समझौते पर दूसरा सरदार हँस पडा। उसने हलकी-सी चुटकी ली, 'माधव जी दो टूक एक बात नहीं कहते। यह भी ठीक, वह भी ठीक ! मैं तो इसी समय पिल पड़ने के पक्ष मे हूं।'

माधव को बुरा नही लगा। जरा-सा मुस्करा कर चुप रहे।

दत्ताजी की आँख द्रुतगति वाली थी, चेहरा चौड़ा—खिला हुआ, गर्दन ठोस और हठवाहिनी। परन्तु दत्ताजी संयमनिष्ठ भी था।

मुस्कराकर बोला, 'माधव बहुत विचारशील हैं, इसलिये जो सम्मति इन्होने दी है वह दिन की लड़ाई का अधिक समर्थन करती है।'

दूसरा सरदार ब्राह्मण था। अभी तक वह कम बोला था। इस समय प्रधान नायकत्व उसी के हाथ मे था। मुखाकृति तपस्वियों की सी, हाथ और छाती तलवार और भाला चलाने वालों के जैसे और माथा शास्त्रों की उधेड़-बुन करने वालों जैसा। नाम था माधव जी पन्त पुरन्दरे। अधेड अवस्था पार कर चुका था।

पुरन्दरे ने निर्णय किया, 'मुगल सेना रात को ही हमारे ऊपर आक्रमण करेगी। हमको यहा से खिसकने का क्रम अभी से आरम्भ कर देना चाहिये। परन्तु शत्रु जानने न पावे। लड़ाई का ढोंग भी साथ ही होता चले। फिर उसको अपने अनुकूल परिस्थिति मे डालकर दिन मे डटकर लड़ा जाय। फांसीसी तोपखाने भारी नहीं हैं, हलके और चचल है। उनसे अपना बरकाव करते रहना होगा।'

माधव जी ने नीचे-नीचे देखते हुये अपनी दाई भौंह चढ़ाई। एक बार पुरन्दरे की ओर देखा और फिर उस मराठा सरदार की ओर देखकर सिर नीचा कर लिया। मानो कह लिया हो, अन्त में अधिकांश मेरे ही फैसले को माना गया।

उस मराठा सरदार को वह चितवन गड़ सी गई।

भभककर बोला, 'पन्त जी मेरा नाम त्र्यम्बक त्रिम्बक नहीं जो कल विजय-लाभ न करूँ। कल से मेरे घोड़े के पैर में चांदी का कड़ा पड़ेगा।'

'चांदी का कड़ा !' दत्ताजी ने सयत होकर कहा, 'क्या कहते हो कन्नड़ ? ऐसा प्रण क्यों ? परिस्थिति सहज ही वश मे आ जायगी।'

कन्नड़ त्रिम्बक फूले नयने और पतले ओठों का सिपाही था। बोला, 'इस मुगलिया बखेडे और फ्रांसीसी झंझट को शीघ्र ही समाप्त करना चाहिये। मैंने घोड़े के पैर मे कडा डालने का निश्चय कर लिया है। या तो विजय-लाभ करूंगा या मरूंगा। महाराष्ट्र और स्वराज्य के लिये यह निजाम बड़ा लम्बा कांटा है।'*

दत्ता भी शूर और सहसा प्रवर्ती था, परन्तु वह कन्नड की अपेक्षा कही अधिक सयमी भी था। फिर भी उस पर कन्नड़ के प्रण की छाप सी बैठी। वह कुछ उद्धत बात कहना चाहता था, परन्तु दूरदर्शिता ने उसको भड़कने नही दिया।

तो भी उसने कहा, 'रणक्षेत्र का मथने वाला लडाई ही मे मरता है चाहे वह घोड़े के पैर मे चांदी का कडा डाले या न डाले, फिर भी मैं तुम्हारी सराहना करता हूं। मन को रुचता हो तो करो, परन्तु माधव जी कहा करते हैं कि सेनानायक को वीरता से बढ़कर चतुराई को अपनाना चाहिये।'

'जब जैसा अवसर सामने आ पडे। आप विना प्रण किये भी आंधी और बिजली की तरह अपने सवारों सहित शत्रु सेना पर टूट पडते हैं। कन्नड जी इस युद्ध के दूल्हा बनना चाहते हैं। अन्तर कुछ नहीं।' माधव जी ने पंचायत सी कर दी।

दत्ता जी अपने भाई के इस मन्तव्य पर प्रसन्न हुआ और कन्नड सन्तुष्ट।

*घोडे के पैर मे चांदी का कडा डालने की प्रथा मराठों मे पुरानी थी। कडा डालने वाला व्यक्ति मानो संसार भर को घोषित कर देता था कि वह या तो जीतेगा या मरेगा, एक युद्ध को और अनेक युद्धो को। हर दशा में उसका अर्थ था लडाई मे मरना।

पुरन्दरे की योजना के अनुसार मराठी सेना भाड़-भोट का प्रबन्ध करके अनुकूल स्थान के लिये खिसक चली। निजाम की मुगल सेना को तब मालूम हुआ जब वह केवल थोड़ा सा सामान छोड़कर समूची निकल गई। निजाम की सेना ने बन्दूकबाजी और गोलाबारी की, परन्तु सिवाय एक मराठा अफसर के घायल होने के और कोई परिणाम नहीं हुआ। कुछ थोड़ा सा सामान जरूर उसके हाथ पड़ गया। भोर होते होते उस छावनी के स्थान पर कुछ भी बाकी न था। निजाम के फ्रांसीसी दस्ते का नायक विख्यात सेनापति बुसी था। उसके दस्ते में पांच सौ यूरोपियन और पांच हजार भारतीय (तिलंगे) पैदल थे और तोपें बिलकुल नवीन प्रकार की।

निजामुलमुल्क मर चुका था और उसके बड़े लड़के गाजीउद्दीन को जहर दिया जा चुका था; निजाम का तीसरा लड़का सलाबतजंग इस समय निजाम था।

सलाबतजंग फ्रेंच भाषा का कोविद फ्रांसीसी रहन-सहन और विलास-प्रियता का मोही और हिन्दुस्थान में बाहर से आये हुये मुसलमानों के अत्याचारों का शौकीन था।

सलाबतजंग ने मराठों की छावनी को सूना और वहां थोड़ा सा सामान पाकर, सोचा विजय बहुत सहज रही। बड़ी खुशी मनाई, परन्तु सतर्क फ्रेन्चनायक बुसी मराठों को जानता था। उसने अपनी तोपें कड़े के साथ लगाईं।

मराठों ने एक अनुकूल स्थान को अपनी योजना के अनुसार मोर्चों में परिवर्तित किया और रात के कुछ घण्टों में आराम भी कर लिया।

प्रातःकाल के उपरान्त ही उन्होंने मुगल सेना पर प्रचण्ड आक्रमण कर दिया। हरावल का नायक कन्नड़ त्रिम्बक था—अपने घोड़े को चांदी का कड़ा पहिनाये हुये। मुगल सैनिक इस कड़े का अर्थ जानते थे।

दत्ता जी की सम्मति थी कि मुगल सेना जिस परिस्थिति में अपना रणक्षेत्र बना चुकी थी, उसमें उसकी कोई भी हरावल न बनने पावे,

चारो ओर से उसको बाजुओ मे बदल दिया जावे। परन्तु पुरन्दरे ने इसको ठीक नही समझा, क्योकि दो बाजुओ की रक्षा फ्रेंच तोपें कर रही थी। शायद पुरन्दरे की राय ठीक थी। परन्तु पवन-वछेरे मराठा सरदार ब्राह्मण का आदेश यों ही मानने वाले न थे।

पुरन्दरे बडा त्यागी पुरुष था। बालाजी ने इसको अपना दीवान बना लिया था। सदाशिवराव भाऊ को बालाजी का यह कार्य इतना नापसन्द आया कि उसने बगावत का भण्डा खडा कर दिया था। पुरन्दरे ने देखा कि उसको लेकर महाराष्ट्र मे गृह-दाह और स्वराज्य-कल्पना का विध्वन्स होता है। उसने तुरन्त पद-त्याग कर दिया। सदाशिवराव को दीवानी मिल गई और परस्पर द्रोह की अग्नि प्रज्वलित होने से रह गई थी।

त्यागी पुरन्दरे की बात को दत्ताजी इत्यादि नायकों ने मान लिया और आंधी के बवण्डर की तरह सिमट कर मुगल सेना पर तीन तरफ से आक्रमण कर दिया। माधव जी के सिपुर्द एक बाजू के फ्रेंच तोपखानों को व्यर्थ कर देने का काम था। उनके सवारो के पीछे पैदल पल्टन छिपी-छिपी बढ़ी। फ्रांसीसी नायक ने उनको बढते आने दिया। माधव जी समझ गये कि मौत फरेब रच रही है। उन्होने तुरन्त अपने सवारो को मोडा, पैदलो को आडो मे लेट जाने के लिये आदेश दिया और सवारों को भिन्न-भिन्न दिशाओ मे तिनकों की तरह बिखेर दिया। फ्रेंच कमांडर ने अपने धोखे की चाल को छोड़कर ठिये त्यक्त किये और वह तोपो को लेकर आगे बढ़ आया। जैसे ही माधव जी के पैदलो की मार मे ये तोपें आईं उन्होने बाढ दागी। तोपों के खींचने वाले अनेक जानवर मारे गये और कई तोपची भी। उसी समय माधव जी ने अपने सवारों की बिखरी हुई आंधी को तुरन्त इकट्ठा किया और वे दो ओर से तोपखानों पर टूट पड़े। फिर तो परिणाम के लिये थोड़ी-सी घड़ियों की ही अपेक्षा थी।

उधर कन्नड़ त्रिम्वक अपने सवारों के आगे, अपने कसीले घोड़े के पैर में पड़े हुये चांदी के कड़े का प्रण और अर्थ चरितार्थ करता हुआ पिल पड़ा। दूसरी दिशा से चौड़ी छाती और लम्बे हाथों वाला बेतहाशा और बेताव दत्ताजी। सेना की योजना को पूरी तरह कार्यान्वित करने वाला माधव जी पन्त पुरन्दरे तो पीछे था ही जो सेंती हुई सवार और पैदल सेना को गोले-गोलियों की तरह कुमुक के रूप में निरन्तर भेज रहा था।

युद्ध क्या था, सलावतजंग की मुगल सेना के लिये वज्रपात था। सम्पूर्ण सेना उसी दिन समाप्त हो जाती, मराठों की तलवार, बर्छी और बन्दूक से बचाकर शायद ही कोई निकल पाता, परन्तु कन्नड़ त्रिम्वक के अल्हड़ साहस ने उसको चतुराई नहीं बर्तने दी। उसकी दिशा का फ्रेंच तोपखाना अपने ठिये पर जमा रहा और उसने टकराती हुई मराठी सेना के एक अंश का संहार कर दिया। मुगल सेना अविकल विनाश से बच निकली परन्तु उसकी बिकट पराजय में कोई सन्देह नहीं रहा।

सन्धि की चर्चा चल उठी। दक्षिण में निजाम के पास कई टुकड़ियां में बहुत काफी सेना थी। इस सेना में हबशी, अरब, सीदी, पुर्तगाली, फ्रांसीसी इत्यादि तो थे ही, मराठे और तिलंगे भी बहुत थे। ये वे मराठे और तिलंगे थे जिनको भूमि और जागीर के सामने शिवाजी और बाजीराव के आदर्शों की कोई परवाह न थी। ये ही क्या, भारत के प्रत्येक खण्ड में इस प्रकार के अनगिनत लोग थे जो भूमि और जागीर की स्वार्थपरता में किसी भी सफल आक्रमणकारी का साथ देने के लिये तैयार रहते थे।

इस लड़ाई के जीत लेने पर भी अभी बालाजी इत्यादि को और भी बहुत कुछ करना था। राघवजी भोंसले लगभग पचास सहस्र सेना लिये हुये मुगलिया निजामी को दूसरी ओर से छिन्न भिन्न करने में लगा हुआ था। मराठे सेनापति और राजनीतिज्ञ अच्छी तरह जानते थे कि जब तक दक्षिण में निजाम की शक्ति बनी रहेगी तब तक महराष्ट्र की

शान्ति ग्रौर स्वराज की कामना को निरन्तर चिनौती देती रहेगी, इसलिये वे एक दो लड़ाइयों की जीत हार को अपने राजनैतिन बही-खातें में महत्व का स्थान नही देते थे। उनका निश्चित ग्रादर्श था निजाम की मुगलाई को हमेशा के लिये समाप्त करना। परन्तु इस ग्रादर्श की सिद्धि में सबसे बडी बाधा घर की कलह थी। इस कलह की उस समय सचालक ताराबाई थी जिसकी छाया में बहुत से स्वार्थी ग्रौर ग्रापापन्थी मराठा सरदार थे। इनकी स्वार्थ—लोलुपता को ग्राज ताराबाई तो कल दूसरा बहाना चाहिये था : ग्रौर, भूमि—भूख ग्रौर जागीरदारी-प्यास के उस समान्त युग मे इन बहानों की कमी नहीं थी।

इसलिये बालाजी को निजाम—सलाबतजग के साथ सन्धि कर लेनी पड़ी। भोसले को वापिस बुला लिया गया। पूना दरबार को सन्धि मे निज़ाम के कुछ जिले मिल गये ग्रौर जुर्माना।

ग्रौर कन्नड़ त्रिम्बक के सुलभ—दुस्साहस को शूरता की ग्रमरता, माधव जी सिंधिया को ठण्डी रण—चतुराई का विश्वसनीय कौशल ग्रौर दत्ताजी की झंझागति को वज्र की उपमा, मिली।

परन्तु वे सब जानते थे कि निजाम के साथ न तो यह पहली लड़ाई है ग्रौर न ग्रन्तिम। एक दूसरी छोटी सी लडाई में कन्नड —त्रिम्बक गोली से मारा गया, परन्तु उसके घोड़े के पैर में चादी का कड़ा इतिहास की ग्रांख में सदा नाचता रहा। इसके उपरान्त भी ग्रनेक मराठा युवकों ने ग्रपने घोड़ों को चांदी के कडे पहिना कर ग्रात्मोत्सर्ग किया, परन्तु उस उत्सर्ग को पूरा मूल्य प्राप्त न हो सका।

महाराष्ट्र में पुनर्जीवन का भभकता हुग्रा ज्वाला-मुखी किसी मुगलिया प्रतीकार या ग्रत्याचार से नही दबाया जा सकता था। लेकिन उस पुनर्जीवन को छूत ग्रछूत का दम्भ ग्रौर ब्राह्मण ग्रब्राह्मण का वर्ग-विद्वेष ग्रौर जाति मोह, ज्वालामुखी की चट्टानों ग्रौर ग्रधगली—तथा ग्रधगली धातुग्रों की तरह बार बार उसके निरन्तर फैलते ग्रौर खुलते हुये मुख पर लौट लौट पडते थे।

जागीरदारी प्रथा और संयम की कमी, ये अन्य बड़ी बाधायें थीं। इन दोनों दोषों को शिवाजी की सूक्ष्म दृष्टि ने देख लिया था और इन दोनो को दूर करने का उन्होंने प्रयत्न भी किया था। परन्तु उन्होंने युगसञ्चित विघ्नों को जो देश की सभ्यता और संस्कृति के विकास मार्ग में प्रचुरता के साथ फैली पड़ी थीं, विलीन कर पाने के लिये समय ही कितना पाया था ?

इसलिये युवकों के उत्सर्गों का देश को पूरा मूल्य न मिल पाया।

आपसी विद्वेष के कारण उन उत्सर्गों का मूल्य और भी कम हो गया।

दत्ताजी ने माधव को एक दिन लगभग तीस वर्ष पहले की एक घटना सुनाई—

'बालाजी विश्वनाथ ने जब दिल्ली के ऊपर पहला आक्रमण किया तब मल्हारराव होलकर साथ था। वह युवावस्था में था और बालाजी विश्वनाथ का पुत्र बाजीराव भी, जो साथ ही था, युवक था।'

'दिल्ली के पड़ोस के गाव में मल्हारराव पहुचा और उसने किसानों की हरी फसल का एक भाग कटवा लिया। घोड़ो को खिलाने के लिये अपनी छावनी में कटी फसल ले आया। जब बाजीराव को मालूम पड़ा वह डंडा लेकर मल्हारराव के डेरे पर पहुंचा और अपराधियों को दण्ड देने के लिए तत्पर हुआ। एक सिपाही घोड़े को हरी फसल खिला रहा था। बाजीराव ने उस पर डण्डा चलाया : किसानो को ही सताने लगे तो स्वराज्य का क्या अर्थ ?'

'पास ही मल्हारराव का तम्बू तना था। मल्हार ने बाजीराव को देख लिया। वही से उसने बाजीराव पर मिट्टी का एक ढेला फेंका। बाजीराव अपराधियो को दण्ड न दे सका।'

'जब मराठी सेना दिल्ली को लौटी, शिवपुरी—कोलारस के निकट एक नाले पर ठहरी। बाजीराव दस-पन्द्रह साथी सवारों को लेकर नाले मे नहाने के लिये गया। स्नान कर के भोजन के लिये एक झाड़ी की

छाया में बैठा ही था कि मल्हारराव होलकर पाँच-सौ सवारों को लेकर आ गया। मल्हारराव ने बाजीराव की नङ्गी छाती पर अपने पैने भाले को सीधा करके कहा —,

'उस दिन मैंने तुमको मिट्टी का ही ढेला मार पाया था। बोलो, 'यदि मैं इस भाले को तुम्हारी छाती में ठूँस दूँ तो तुमको कौन बचा लेगा ?'

बाजीराव धैर्य के साथ धीरे से उठा, मल्हारराव के घोड़े से जा सटा और बोला, 'यदि बाजीराव की छाती को छेदकर होलकर स्वराज्य की स्थापना करने में सफल हो सकते हैं तो भाले को हूलने में विलम्ब न लगावें।'

होलकर ने भाले को मोड़ लिया। क्या शिवाजी ने अपने देश-वासियों से इसी प्रकार के संयम और अनुशासन की आशा की होगी ?

माधव जी ने एक आह भरी और ओफ ! कर के रह गये।

(२)

गाजीउद्दीन के मारे जाने की खबर काफी देर के बाद दिल्ली पहुंची। उसका लड़का शिहाबुद्दीन इस समय सोलह साल का था। दिल्ली के तूरानी दल का, अल्पायु होने पर भी, वह मौरूसी मुखिया मान लिया गया। दूसरा मुख्य दल ईरानी शियो का था जिसका मुखिया सफदरजङ्ग प्रधान मन्त्री और अवध का सूबेदार था। उस समय की राजनीति के परिवर्तनशील युग मे दिल्ली के अधिकाश हिन्दुस्थानी—हिन्दू और मुसलमान—शियो से बहुधा मेल-मिलाप रखते थे।

गाजीउद्दीन मराठो की सहायता का अवलम्ब लेकर दक्षिण गया था। मराठो को वैसे भी किसी न किसी निजाम से लड़ना था, उनकी टक्कर सलाबतजग मे हुई और वह हार गया। यह समाचार भी शिहाबुद्दीन को मिल गया। उसको यह भी मालूम हो गया कि सलाबत जग के विरुद्ध मराठी सेना के नायक दत्ताजी और माधव जी सिंधिया थे। सिंधिया भाइयों को उसने तुरन्त बधाई और मित्रता की प्रार्थना का पत्र भेजा। उन दोनों को उसने 'बड़े भाई' से सम्बोधन किया। दत्ताजी से छोटे होने के कारण माधव जी पर उसने अधिक अनुराग प्रकट किया।

कट्टर पन्थी और कन्जूस पिता के निधन पर उसको ससार मे स्वतन्त्रता के साथ उच्छ्वास लेने के लिये प्राण और एक करोड़ से ऊपर नकद रुपया मिला। हवेलियां और जागीर भी।

परन्तु दिल्ली के उस टूटे-फूटे साम्राज मे भी किसी बड़े पद की प्राप्ति ऐसे लोगो के वर्तमान और भविष्य— दोनों के लिये—काफी महत्व रखती थी।

कठमुल्लों की तालीम और रोजा-नमाज के साधनों से वह पद-प्राप्त नही हो सकता, सोलह साल का शिहाबुद्दीन इस बात को अच्छी तरह जानता था परन्तु पद-प्राप्ति की अभिलाषा अभी मन में उत्कट नहीं हुई थी।

वह सुन्दर प्राकृति का था। छुटपन से ही स्त्रियों के सम्पर्क, नृत्यगान इत्यादि के ससर्ग से वह कठोर सावधानी के साथ दूर रक्खा गया था। इसलिये दर्पण मे अपनी शकल को देखकर तृप्ति सन्तोष प्राप्त किया करता था। जिस दिन बाप के मरने का समाचार मिला उस दिन वह रोया, बाप के मरने के शोक मे नहीं, वरन् इस कल्पना पर कि यदि वह पिता के सामने मर जाता तो संसार का कितना महान सौन्दर्य-सुमन असमय मुर्झा जाता और उसका पिता उसके लिये कितना न रोता!

रोने के बाद उसने अपना मुह धोया, बाल सवारे और आइने में पड़ी आखो के लाल डोरो को देखा। लाल डोरे आंखो को कितना मधुर और आकर्षक बना देते हैं यह उसको रोने के उपरान्त ही जान पड़ा। वह दर्पण के सामने अपने मुख की छाया के साथ मूक-संभाषण कर रहा था कि उसी समय उसका शिक्षक आ गया। उसका नाम था अकीवत खां काश्मीरी।

अकीबत खां के आने पर शिहाबुद्दीन ने दर्पण को रख दिया, परन्तु उसके चेहरे पर झेंप नही आई, केवल नम्रता की हलकी-सी लहर दौड़ गई।

अकीवत खां ने शिक्षक के ढंग पर नहीं, प्रत्युत सेवक, निर्देशक और कुशल शुभचिन्तक के बिलकुल मिले हुये गाढ़े रस के साथ कहा, 'सरकार को दुनियां मे अब कुछ और सीखना है। जबानें आप बहुत-सी जानते हैं; शायरी भी करनी आ गई है; मजहब की बहुत बातें आती ही हैं, अब हवा को पकड़ने और मोड़ने की बात भी जहन में आ ही जानी चाहिये। दक्षिण मे मराठे और नवाब सलावतजंग आपस में निबटते रहेंगे और दक्षिण यहा से है भी दूर। दिल्ली की किसी बड़ी बागडोर को फौरन मुट्ठी में किये बिना काम नही चल सकता, मेरे प्यारे मालिक।'

'प्यारे मालिक' के सम्बोधन और 'दिल्ली की किसी बड़ी जागीर को हथियाने की सम्भावना ने, शिहाब के रोम रोम को जगा दिया।'

शिहाब ने अपनी वाणी में मुस्कान का रस घोला, 'उस्ताद मैं समझा नहीं।'

'काम करने का—फौरन कुछ कर डालने का वक्त आ गया है, हुजूर,' अकीदत ने अपने बोल में रहस्य को पिरोया।

'हुजूर' सम्बोधन ने शिहाब को और भी फुरफुरी दी। मुस्कराहट और भी विकसित हुई। दर्पण में अभी हाल जिस सौन्दर्य को शिहाब ने निरखा था, मुस्कराते ही उस रूप की स्मृति दुगुनी लहर खा गई।

बोला, 'उस्ताद, मैं तो अब भी कुछ नहीं समझा। जो कुछ जानता हूं आप ही का दिया हुआ तो है। आप ही बतलाइये क्या करना है; कौनसा काम है,—मेरे लिये तो आप ही सब कुछ हैं।'

अकीदत ने अधिक विस्तार न देकर अपनी योजना पेश की।

'मीरबख्शी की जगह खाली है, और वह हासिल की जा सकती है। आपका मौरूसी हक है।'

'मुझको बतलाइये क्या करूं? बादशाह के पास जाऊं?'

'जी नहीं; वजीर सफदरजंग के पास जाना होगा।'

'मगर मीरबख्शी के मुकर्रर किये जाने का फरमान तो बादशाह सलामत ही जारी करेंगे।'

'बादशाह सलामत तो फरमान पर दस्तखत भर करेंगे। सुझाव तो उनको वजीर ही देंगे।'

'मगर सफदरजंग शिया है, मेरी मदद क्यों करेगा?'

'सफदरजंग तूरानियों को खुश रखना चाहता है। हुजूर तूरानियों के कुदरती मुखिया हैं।'

'तो मैं अभी उनके पास जाने को तैयार हूं।'

'जी नहीं; ऐसे काम नहीं चलेगा।'

'फिर क्या करूं?'

'यहा, हिन्दुस्थान मे एक बड़े मजे का रिवाज है। उसको धरना कहते हैं।'

'धरना ! कैसा धरना ?'

'जब किसी को किसी से कोई काम कराना होता है और वह और किसी तरह नही हो सकता है, तब वह उसके दरवाजे जा बैठता है। न खाता है न पीता है। जब तक वह उसको मजबूर नही कर लेता है तब तक न तो चैन लेता है और न लेने देता है।'

'बहुत अजीब है, कुछ मनहूस भी है।'

'*बिलकुल नहीं, नतीजे को तो सोचें—बिना झंझट के कामयाबी मुट्ठी में। सरकार सफदरजंग की हवेली पर धरना दें।*'

सौन्दर्य शरारत भी कर सकता है, इस कल्पना ने शिहाब के मन को उसकाया, परन्तु अकीबत की बात को उसने सहज ही नही मान लिया। अकीबत ने धरने की उसको पूरी प्रणाली समझाई और अपनी योजना के ब्यौरे को उसके दिमाग मे पूरी तौर पर बिठला दिया।

उसी दिन नौ बजे रात के पहले शिहाबुद्दीन वजीर सफदरजंग की हवेली पर जा अड़ा। पहरेदारो ने समझाया बुझाया, सफदरजंग के कारिन्दो ने अर्जूमिन्नत की, परन्तु शिहाब न टला। शिहाब ने रात भर और दूसरे दिन दोपहर तक धरने के अनेक रंगरूप पेश किये। सफदरजंग को पानी पानी होना पड़ा। उसने शिहाब को पुत्रवत मानने और सहायता देने का वचन दिया। शिहाब ने धरना समाप्त कर दिया।

सफदरजंग उसको अपने हरम मे ले गया। सफदर की बेगम बिना किसी नकाब बुर्के के उसके सामने आगई और उसने शिहाब को माता बनने का आश्वासन दिया। सफदरजंग के एक लड़का शुजाउद्दौला था। शुजाउद्दौला को शिहाब का पगड़ी बदल भाई बनाया गया।

शिहाबुद्दीन अपने इस पहले पराक्रम पर सन्तुष्ट होकर घर लौट गया। गुरु—अकीबत—के अध्यवसाय की सराहना की।

उसका फल भी शीघ्र ही प्राप्त हो गया : अर्थात् जब गाजीउद्दीन के मातम का समय बीत गया तब सफदरजंग शिहाब को बादशाह के सामने ले गया।

शिहाब का बालपन कठमुल्लों की दबोच में रहा था। इस दबोच ने कोमल नैतिक भावनाओं का तो दमन कर दिया, परन्तु मनको एकाग्रता दे दी जिस एकाग्रता से मनुष्य स्वार्थ को लूटखसोट, हत्या, जालफरेब इत्यादि साधनों द्वारा सफल करने से नहीं हिचकता और किसी के आगे नहीं सहमता। बादशाह अहमदशाह के समक्ष होने में वह नहीं सहमा।

सफदरजंग बादशाह अहमदशाह का केवल वजीर ही नहीं था, वह उसका भूत भी था जिससे वह डरता था और बहुत घृणा भी करता था। परन्तु विवश था।

अहमदशाह मुहम्मदशाह का लड़का था। बाईस वर्ष की आयु तक मुल्ला-मौलवियों की कैद में नहीं, खवासों, खोजों, हिजड़ों और हरम की स्त्रियों के अधिकार में रहा था। बाप-मुहम्मदशाह रंगीला-बहुत काफी उड़ाऊ खाऊ था, परन्तु लड़के के साथ उसने हद दर्जे की कन्जूसी वर्ती इसलिये हरम के वातावरण में रहते हुये भी वह सुरा और सुन्दरियों को बहुत कम पा सका था, क्योंकि इसके लिये गांठ में धन बहुत कम था—विलास-प्रियता का शख कोरा बज नहीं सकता था।

मुहम्मदशाह के मरने पर जैसे ही वह 'शाहन्शाह' हुआ विलास के प्रवाह में डुबकियां लगाने लगा। उसका सबसे बड़ा परिषद एक हिजड़ा था। वह शीघ्र सर्वेसर्वा बन गया। वजीर सफदरजंग था, परन्तु मुगल सम्राट की बागडोर इस हिजड़े के ही हाथ में थी। एक दिन मौका पाकर सफदरजंग ने अपने ही घर पर इसको कुछ तुर्की गुलामों द्वारा जो उसके सिपाही भी थे, मरवा डाला। बादशाह अहमदशाह उस दिन से सफदरजंग से भूत की तरह डरने लगा था और घृणा भी हद दर्जे की हो गई थी।

अहमदशाह सवेरे से दोपहर तक दरबार करता था और फिर अपने हरम मे पहुंच जाता था जिसका (भौगोलिक) क्षेत्रफल चार वर्गमील था और जिसमे नाना देशो और प्रदेशों से खरीदकर लाई गईं सैकड़ों सुन्दरिया रमाई गई थीं। इस हरम में वह विलास की उन सब क्रियाओं में डूबता था जिनकी कवि, शायद कल्पना भी नही कर सकते। उसकी मां ऊधमबाई–नाम हिन्दू, परन्तु थी वह मुसलमान–दिल्ली की एक नामी वेश्या थी। मुहम्मदशाह ने रीझकर इसको प्रधान बेगम का पद दे दिया था। वह मुहम्मदशाह के जीवनकाल में ही अपनी वृत्तियो का निरोध नहीं कर सकी। शासन और हरम की मौजो में वह अहमदशाह की सहायक रहती थी।

सफदरजग शिहाबुद्दीन को बादशाह के सामने उस समय लेकर पहुंचा जब वह हरम के विलासोद्यान मे जाने की सोच ही रहा था सफ़दरजंग के आते ही भीतर भीतर उसका कलेजा ऐंठा, परन्तु ऊपर से मुस्कराकर बोला, 'वज़ीर आज़म, आज आपको कुछ देर हो गई!'

वज़ीर ने क्षमा याचना की।

अहमदशाह ने सुन्दर युवक शिहाबुद्दीन को देखकर सफदरजंग के प्रति अपनी घृणा और भय का थोडा सा बदला चुकाया। सकेत मे पूछा, 'यह कैसे आया?'

परिचय कराने की कम आवश्यकता थी, क्योंकि शिहाब अपने पिता गाज़ीउद्दीन के साथ कई बार उसके सामने हो गया था, परन्तु वह उसकी आकृति को खुमारी मे डूबी हुई अपनी स्मृति के भीतर सही तौर पर नही मिला पा रहा था।

सफदरजग ने निज़ामुलमुल्क की राज-भक्ति की–जिसका वास्तविक नाम घोर राज द्रोह होना चाहिये–झूठी प्रशंसा की, और शिहाबुद्दीन के पिता गाज़ीउद्दीन की जो बादशाह का मीरबख्शी रहा था, सेवाओं की गणना की, जो वास्तव मे कुछ भी न थीं।

बादशाह यह सब जानता था, परन्तु प्रतिवाद करने का उसमें साहस न था। वह उठ जाना चाहता था कि योग्यता के प्रदर्शन और राजनैतिक जानकारी की दिखावट की लालसा उमड आई। वह चाहता था कि उसकी धाक कम से कम उस सलोने लडके पर तो बैठे।

उसने कहा, 'मराठे तुम्हारे दोस्त हैं वजीरआज़म, उनके पेशवा बालाजीराव को सरहद का सूबेदार बना दिया जाय तो कैसा ?'

'जहांपनाह' सफदर ने उत्तर दिया, 'मराठों की मदद से मैं हुजूर को काबुल और अफ़गानिस्तान के सूबे भी वापिस दिलवा सकता हूं। मराठा फौज पेशावर और अटक में रहने लगे तो अफ़गानों की तरफ से हम लोगों को खतरा बिलकुल ही न रहे, काश्मीर बच जाय, लाहौर और मुल्तान के सूबे लुटेरे पठानों से चैन पा जायें।'

बात के आगे बादशाह का विचार कुछ ही अंगुल रहा करता था। बोला, 'मराठों ने तुम्हारे दुश्मन रुहेलो को फतेहगढ की लड़ाई में किस खूबी के साथ काट कूटकर हराया था !'

सफदरजंग को, इस लड़ाई के पहले की जिसमें उसका प्रधान सेनापति नवलराम सकसेना मारा गया था, याद आ गई। वह जानता था कि भीतर भीतर बादशाह उससे कुढता है,—कर कुछ नही सकता, और गुप्त रूप से रुहेलो का समर्थन करता है। सफदर ने बादशाह को कुढाने के लिये कहा, 'जहांपनाह, उस लड़ाई मे बारह हजार रुहेलों में से दस हजार को मराठो ने लड़ाई के मैदान में बिछा दिया था।'

बादशाह ने अपनी कुढ़न को छिपाया और सफदर की बात पर मुहर लगाई, 'मैं बालाजीराव पेशवा को सरहद का सूबेदार मुकर्रर करता हूं। अहमदशाह अब्दाली से उन्हे काबुल और अफ़गानिस्तान को वापिस लेना पड़ेगा।'

सफदर ने इस आज्ञा पर बादशाह को धन्यवाद दिया।

परन्तु सरहद या कहीं की भी सूबेदारी या रियासत बादशाह की आज्ञा पर निर्भर न थी—वह थी निर्भर परिस्थितियों के संघर्षो और महत्वाकांक्षी के बाहुबल पर।

सफ़दर को शिहाबुद्दीन का भला करवाना था। विनय और नम्रता ही इसके उपकरण हो सकते थे, परन्तु सफदरजग बिकट अभिमानी था। बादशाह पर रोब जमाने के उद्देश्य से बोला—

'जहांपनाह की खास फौज बदख्शानी रिसाले को फिर कई महीने से तनखाह नही मिली है। सरदार मानखां साहब का मन गाने बजाने मे ज्यादा लगा रहता है, वे बदख्शानियों के आराम या गुजर बसर की परवाह कम करते हैं।

'सरदार' मानखां ग्रहमदशाह की मां ऊधमबाई का निज भाई था। वह कुछ दिन पहले दिल्ली की गलियो में आवारा घूमा करता था और नाचने वालियों के पीछे चटक मटक और अदा-लचक के साथ नाचा गाया करता था। बादशाह ने उसको अपने बदख्शानी रिसाले मे छै हजारी मन्सब दे दिया था। बदख्शानी रिसाले में बारह हजार सवार थे, सबके सब विदेशी, मध्य एशिया के रहने वाले जिनको हिन्दुस्थान की किसी भी बात से कोई सहानुभूति न थी। तनखाह महीनों की बाकी में पड़ जाने के कारण ये लोग दिन दहाडे शहर के भले हिन्दू-मुसलमानों के बर्तन और गहनों को उठा ले जाते थे और बाजार मे बेचकर बादशाह की रिसालेदारी किया करते थे! सफ़दरजंग की बात मे इस सारे चित्र की ओर कटीला सकेत था।

बादशाह इस बात का ठीक उत्तर देने के लिये अपने दिमाग को अधिक कष्ट नहीं दे सका। उसके मुह से निकल पड़ा, 'तनखाह देने का काम मीरबख्श का है। जल्दी इस ओहदे का इन्तजाम होना चाहिये।'

सफ़दरजग इसी प्रस्ताव को बादशाह के मुँह से निकालना चाहता था—यदि बादशाह अन्त तक न कहता तो सफ़दरजग स्वय ही अनुरोध करता। वह निश्चय करके घर से चला था।

वह काम अपने आप होता दिखलाई पड़ा, सफ़दरजंग ने अपने को नम्रता का बाना पहिना कर कहा, 'जहांपनाह, सल्तनत के मीरबख्शी गाज़ीउद्दीन मरहूम थे। उनका यह इकलौता बच्चा शिहाबुद्दीन हाज़िर है। मेरे बेटे के बराबर है। बड़ा होनहार है। जहांपनाह का पंजा इसके सिर पर होना चाहिये।'

शिहाब के चेहरे पर आशा, महत्वाकांक्षा और उमंग की लाली दौड़ गई।

बादशाह शिहाब की सुनाई पर थोड़ा सा लचा था, परन्तु उसको मीरबख्शी के दायित्वपूर्ण पद के योग्य न समझता था। वह सफ़दर को थोड़ा सा भुलाना भी चाहता था। उसने पूछा, शिहाबुद्दीन ने पढ़ा लिखा तो काफ़ी है, क्योंकि गाज़ीउद्दीन ने इसके मौलवियों का कई बार जिकिर किया था, मगर दुनियां की पहिचान भी मीरबख्शी के लिये बहुत जरूरी है।'

शिहाब ने सिर नीचा कर लिया और सफ़दर ने भी। सफ़दर विनय का ढोंग करना चाहता था।

कुछ क्षण उपरान्त बादशाह ने कहा, 'किसी सूबे का सूबेदार क्यों नहीं बना देते? मैंने तो एक, दो बरस के बच्चों तक को सूबेदारी बख्शी है। यह तो पन्द्रह, सोलह साल का बड़ा पुतला है।'

शिहाब अपनी सुन्दरता पर जरा झेंपा। मन में उसने अपने को भरोसा दिया, 'मौक़ा मिले तो साबित करूंगा कि मैं मौत का पुतला और आफ़त का पर काला भी हूं।'

सफ़दरजंग ने उत्तर दिया, 'दिल्ली में रहकर हुज़ूर के क़दमों की तालीम पा जाने के बाद फिर सूबेदारी भी कर लेगा।'

'हुज़ूर के क़दम' रंडी भंडुओं की पद-चापों के पीछे चला करते थे, और, सफ़दर इस बात को बहुत अच्छी तरह जानता था। उत्तर देने के उपरान्त उसको भासित हुआ कि बात में व्यंग की मीड़ है। वह मन ही मन प्रसन्न हुआ। बादशाह व्यंग को नहीं समझा।

उसे अकस्मात एक विचार अवगत हुआ—शिहाबुद्दीन एक बालक ही है; काफी तूरानी इसके पल्ले में हैं जो सब मुझी हैं, किसी दिन इसका उपयोग किया जा सकता है; यह लड़का सहज ही मेरी इच्छा के अनुकूल हो जायगा और सदा मेरे कहने में रहेगा।

उसमें विवेक और बुद्धि हरम के खेल खिलवाड़ो के अनुरूप ही थी उसने अपने हठ को त्याग दिया और बोला, 'अच्छा तो फिर आज से ही इसको मीरबख्शी का ओहदा बख्शा जाता है। और, इसके खिताब होंगे इमादुल्मुल्क, गाजीउद्दीन खानबहादुर, अमीरुलउमरा, निजामुल्मुल्क आसफजाह।'

शिहाबुद्दीन इतने बड़े वरदान की आशा नहीं किये था—हर्ष के उन्माद में लाल हो गया। माथे पर पसीना आ गया। वह डंडे की तरह बादशाह के पैरों के समाने पड गया।

बादशाह प्रसन्न होकर अपने हरम में चला गया।

सफदरजंग भी सन्तुष्ट था। परन्तु उसके सन्तोष में एक छोटा सा काटा कही गड रहा था। घर पहुंच कर एकान्त में सफदर ने नये इमादुलमुल्क को समझाया।

देखा, बादशाह कितना बे अकल है। शुरू में उसने कितनी हिचर मिचर की! जानता था कि सफदरजंग की बात खाली नहीं डाली जा सकती, नाहक जिद की। फौरन राजी हो जाना चाहिये था।'

सफदर नहीं चाहता था कि शिहाब के मन में राई रत्ती भी बादशाह के प्रति कृतज्ञता पनपे। वह उसको अपना गुड्डा बनाये रखना चाहता था।

कहता गया, 'मैंने तै कर लिया था ऐसे नहीं मानेगा तो वैसे मनवाऊँगा। तुमने सब ठीक तौर पर समझ लिया होगा।'

शिहाब ने वास्तव में सब कुछ ठीक तौर पर समझ लिया था। वह ताड़ गया कि बादशाह को मीरबख्शी की नियुक्ति करने में विवश होना पड़ा है और सफ़दरजंग भी हर किसी ऐरे गैरे को मीरबख्शी

नियुक्त नहीं करवा सकता था। निजामुल्मुल्क का पोता, गाज़ीउद्दीन का पुत्र और तूरानियों का मौरुसी नेता ही तो मीरबख्शी बनाया जा सकता था!

सोलह वर्ष का वह किशोर कुशाग्र बुद्धि था और स्वार्थ परता का संस्कार उसने अपने पुरखों से पाया था। थोड़ी सी ही देर में उसकी समझ में आ गया कि स्वार्थ पालन का चालाकी काफी प्रबल हथियार है-धरना, बादशाह के सामने की बातचीत और अब सफ़दरजंग के मुकाबिले मे बातों के जानने की—परिस्थिति के समझने की प्रयास बेहद बढ़ी। उसने बादशाह और सफदरजंग की बातचीत में कई प्रसंगो पर संकेत से ही सुने थे—मराठे, रुहेले, काबुल, अफगानिस्तान, बदख्शानी रिसाला इत्यादि। वह सब कुछ जानना चाहता था, परन्तु यह नहीं प्रकट करना चाहता था कि नितान्त अज्ञान है। उसके साथ ही वह उस समय कोई दम्भ भी प्रकट नहीं कर सकता था।

सफ़दरजंग अपने अनुभव, राजनीतिक-ज्ञान और वीरत्व का उल्लेख करना चाहता था जिसमे शिहाबुद्दीन पर जो अब मीरमुन्शी इमादुल्मुल्क इत्यादि था, उसका सिक्का बैठ जाय। सफ़दर की कल्पना थी कि इतने बड़े अहसान के कारण बालक शिहाबुद्दीन के कृतज्ञ हृदय पर उसके ज्ञान, कार्यों और योग्यता की छाप बैठ जाय तो सदा के लिये श्रेयस्कर होगा। उस टटके समय को उसने सबसे अधिक उपयुक्त अवसर समझा। सफदर वक्ता और शिहाबुद्दीन कुतूहल और जिज्ञासा मग्न श्रोता बन गये।

सफदर ने कहा, 'दिल्ली सल्तनत की हालत काफी खराब हो गई है। मुसलमान मुसलमान ही आपस मे लड बैठे है। जैसे सुन्नी और शिया। कुछ बादशाहो ने शियो पर जुल्म ढाये। ईरानी लियाकत और दिमाग दिल्ली के तख्त से फिर गये। प्रजा मे जाट, गूजर, अहीर वगैरह सरकश हो गये हैं, बड़ी ऐंठ उमेठ वाले, रुहेले लूट खसोट और लुटेरेपन पर आमादा। खज़ाने में बदख्शानियों की तनख्वाह देने के लिये

दो लाख रुपये तब हासिल हुये जब महल के कमठाने का बहुत सा सामान बेचा गया, हालांकि बाईजू साहबा ऊधमबाई बेगम ने अपने जन्म दिन के जशन मे दो करोड़ रुपये, पूरे दो करोड़, उड़ा डाले, मेरे शिहाब।'

'ओफ् हो।'

'हाजी पूरे दो करोड़ रुपये फूंक दिये ! उधर आमदनी के जरियो का यह हाल है कि बंगाल और बिहार से शायद ही कभी मालगुजारी आती हो। पन्जाब को अहमदशाह अब्दाली हजम करने की फिकिर में है। इलाहाबाद के सूबे को पठान और रुहेले डकार जाना चाहते थे। खैर हुई जो मराठों की मदद से इलाहाबाद के सूबे को बचा लिया गया और रुहेलो को खदेड कर हिमालय की तराई मे भगा दिया गया।'

'बहुत खूब, किबला।'

'हिन्दुओ की पीठ पर जरा हाथ फेर दो कि उनको बेखरीद गुलाम बना लिया जा सकता है। मेरे सारे दीवान, सरिश्तेदार और फौजदार हिन्दू हैं। मेरे लिये हमेशा कुरबान होने को तैयार रहते हैं। मगर ये छोटे-छोटे बद दिमाग़ मनसबदार, जागीरदार, हिजड़े, कुजड़े, और कसाई इस बात को नापसन्द करते हैं। मैंने भरतपूर के सूरजमल जाट को अपनी और सल्तनत की तरफ मिला लिया तो रुहेलों का मुँह तोड़ने के लिये एक और बढ़िया नुस्खा हाथ लग गया। मैंने क्या कुछ बुरा किया ?'

'बिलकुल नही, वालिद मेरे।'

'दक्षिण मे तुम्हारे वालिद मरहूम को उनके भाइयों ने मार डाला। मराठे उन लोगो से उलझे हुये हैं। अपने दोस्त हैं, मगर हैं खतरनाक। लेकिन कोई डर नही। मराठो को लडने-भिडने और लूटने-पीटने के लिये कुछ चाहिये। उनके पेशवा बालाजीराव के साथ का सुलहनामा लिख-पढ लिया गया है। तुमको उसकी कुछ खास-खास शर्तें सुनाऊँ ?'

'जरूर, जरूर।'

'पेशवा को पचास लाख रुपये इस मतलब से दिया जाना तै हुआ कि वह अहमदशाह अब्दाली को हिन्दुस्थान से बाहर रक्खे; पंजाब और सिन्ध सूबों की सूबेदारी भी इसी गरज से बाजीराव पेशवा को दे दिया जाना तै पाया। हिसार सम्बल, मुरादाबाद और बदायूं के जिले पेशवा को उसके फौजी खर्च के लिये लगाये गये। रुहेलों का होश ठिकाने लगाये रखने का इरादा इसकी जड़ में था। सूबों की आधी आमदनी शाही खर्च के लिये, क्योंकि बादशाह के खर्च के लिये निमक और गल्ले के बाजारों के महसूलों के सिवाय और कोई जरिया बाकी नहीं रहा था, और एक चौथाई मेरे और उस हिजड़े के फौज खर्च के लिये—'

'हिजड़ा कौन ?'

'अजी वही जिसको मुझे जहन्नुम भेजना पड़ा है। मैं करता भी क्या ? वह कितना मक्खीचूस था,—मजा यह कि बादशाह ने उसको नवाब बहादुर का खिताब दे रक्खा था। एक दिन तनख्वाह का लम्बा बकाया पड़ जाने की वजह से फौज वालों ने महलों के दरवाजे पर एक गधे और एक कुतिया को साथ बांधकर खड़ा कर दिया और इतनी खिल्लियाँ मचाई कि शुमार नहीं।'

'क्यों हजरत ? मैं समझा नहीं।'

'साफ तो है मियाँ। गधा वह हिजड़ा और कुतिया बाईजू साहबा ऊधमबाई—बादशाह की माँ !'

'ऐं !!'

'हाँ, भाई। जमाना इन्हीं बातों का है। बिना इसके काम भी तो नहीं चलता। वह हिजड़ा बड़ा बदमाश भी था, बेहद घूसखोर और बद। एक हरफ भी पढ़ा-लिखा नहीं, काला अक्षर भैंस बराबर ! तिस पर भी दिल्ली सल्तनत की पूरी हुकुमगीरी का इजारा। मैंने उसको खतम कर दिया। हां तो मैं पेशवा वाली शर्तों का जिकिर कर रहा था। पेशवा को अजमेर और आगरे का सूबेदार मुकर्रर करना भी तय

पाया था। पेशवा के हाथ खास फर्ज वह मिपुर्द किया गया था कि जितने ऊलजलूल नामाकूल सरदारों ने इलाके या जमीनें जबरदस्ती अपने काबू में करली थी, उनको छीनकर अमन चैन कायम करे।'

शिहाब के मन में एक सवाल उठा, 'हुजूर ने कितना इलाका, या कितने इलाके दाब लिये हैं?' परन्तु उसने सवाल नहीं किया। सोचा कहीं न कहीं से ढूंढ खोज कर ही ली जायगी।

सफदरजंग थोड़ी देर के लिये चुप हो गया। शिहाबुद्दीन उसके बतलाये तथ्यों को स्मृति में बिठलाने और निष्कर्षों को पचाने-समझने में लग गया।

सफदरजंग को राजस्थान की स्थिति पर कुछ कहना था।

बोला, 'मालवा मराठों के हाथ में है। वह अब उनका ही है। गुजरात झगड़ों का अखाड़ा है, मगर मराठे वहां करीब करीब कामयाब हो गये हैं। उनके एक सरदार पीलाजी गायकवाड़ को जोधपुर के राजा अभयसिंह ने धोखे से मार डाला। अब उनके दो लड़कों-रामसिंह और विजयसिंह में गद्दी के लिये तकरार उठ खड़ी है। जोधपुर की जयपुर के साथ सख्त अनबन इसके अलावा है। मराठों का रुख उस तरफ फिरेगा। इसके अलावा, अजमेर और आगरे की सूबेदारी का बालाजीराव पेशवा को बख्शना सिर्फ एक मतलब रखता है और एक ही नतीजा पैदा करता है। राजपूताने की रियासतों से मराठे चौथ या मालगुजारी वसूल करें।'

शिहाब ने विनय के साथ कहा, 'क्या मैं हुजूर से यह पूछ सकता हूँ कि राजपूताने में मराठों को क्यों दखल दिया गया?'

सफदरजंग ने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'बेटा शिहाब, यह एक पुराने किस्से से ताल्लुक रखता है। तीस बत्तीस साल से ऊपर हो गये जब बादशाह मुहम्मदशाह की मदद के लिये बारा के सैयदों ने बालाजीराव के बाप बाजीराव को बुलाया था। मराठों ने मदद की, मगर उनका दावा पूरा नहीं चुकाया गया। इसलिये वे लोग बराबर दबाव डालते

रहते हैं। सल्तनत को बाहरी मदद की हमेशा जरूरत रहती है और मराठा फौज गिनती में बेशुमार है, इसलिये पेशवा को हर हालत में दोस्त बनाये रखना पड़ता है। राजपूतों की सरकशी और बगावत को दबाने का इलाज भी तो वे ही लोग हैं।'

'मैं समझ गया, किबला।'

'राजपूतों को लड़ाई फसाद और जमीन चाहिये। वे लोग आपस में बेतरह लड़ते रहते हैं। जयपुर, जोधपुर और बूंदी सब एक दूसरे के दुश्मन। जोधपुर की कहानी मैंने बतलाई है। जयपुर के राजा जयसिंह को मरे तीन चार साल हुये हैं। उनके लड़कों में झगड़ा हुआ। ईश्वरीसिंह और माधवसिंह में। ईश्वरीसिंह ने अपने बहुत ही काबिल दीवान को मरवा डाला। दीवान के गुट्ट ने मराठों को बुलाया। मराठों को चौथ वैसे भी वसूली करनी थी,—उनका हक था। वे आ गये। राजा ने फरेब से हजार डेढ़ हजार मराठों का कत्ल करवा दिया। पेशवा ने जयपुर के ऊपर पुरानी बाकी वसूल करने के लिये और भी बड़ा दबाव डाला। जयपुर और जोधपुर के मामलों की गुत्थी में बूंदी भी उलझा हुआ है। उदयपुर के घरेलू झगड़े मराठों को बुला लेने के लिये काफ़ी हैं।

शिहाब का मन ऊबने लगा और वह जमुहाइयां लेने लगा। सफदर ने प्रसंग को बन्द कर दिया। कहा, 'तुम थक गये होगे, आराम करो। कहां क्या हो रहा है और क्या होना चाहिये कुछ दिनों में खुद समझ लोगे। एक बात की गांठ जरूर बांध लो—हम और तुम मिलकर बहुत कुछ कर सकते हैं।'

शिहाब ने स्वस्ति की और चला आया।

(३)

सफदरजंग ने मराठों के साथ किये गये जिस सन्धि पत्र का वर्णन किया था वह लिखने के उपरान्त ही समाप्त भी हो गया—बादशाह ने अपने कुछ 'हिजड़े कुंजड़े' सलाहकारो की प्रेरणा पर अहमदशाह अब्दाली के साथ अलग सन्धि कर ली ! इस सन्धि के द्वारा अहमदशाह अब्दाली को सारे पंजाब की सूबेदारी मिल गई !! अहमदशाह अब्दाली ने उसी दिन से पन्जाब को अपने राज्य का अग मान लिया । उधर बालाजीराव ने पजाब, सिन्ध, अजमेर और आगरा के प्रान्तो को 'हिन्दूपदपादशाही' मे गिन लिया !!! बादशाह और उसके मूर्ख तथा कट्टरपन्थी परिषदो को विश्वास हो गया कि बढ़िया तरकीब रही—'दोनो मूजी' एक दूसरे से टकराकर चकनाचूर हो जावेंगे और दिल्ली का राज्य और अपना भोग विलास सुरक्षित हो जायगा !!!!

आय के साधन भी सुरक्षित समझ लिये गये थे । मेवाड़ को छोड़कर राजपूताने के सब राज्य दिल्ली को कर दिया करते थे, परन्तु उसी युग में जिसमे दिल्ली का शासन प्रबल होता था । और उसके हाथ मे अटूट विदेशी सैनिक होते थे । औरगजेब के मरने के पहले ही राजस्थान की स्वतन्त्रता को फुरफुरी आ गई थी । वह जागी । यद्यपि राजपूतों की आपसी कलह और सहसा प्रवर्ती स्वभाव के कारण स्थायी परिणाम न न हुआ, फिर भी वे सब स्वतन्त्र हो जाने की धुन मे थे । औरगजेब के बाद तक राजस्थान के छोटे छोटे पुरवो तक मे एक एक मसजिद और अजान देने वाले मुल्ला का होना अनिवार्य था । व्ययभार रहता था इसका राजा के ऊपर । औरंगजेब के मरने के कई वर्ष पीछे राजपूतों ने मन्दिरों और धर्म के अपमान का दिल्ली-साम्राज्य से बदल लिया – प्रत्येक पुरवे के मुल्ले और मसजिद को समाप्त कर दिया । राजस्थान के हिन्दुओं को इस्लाम से बैर नही था, परन्तु जिस आतक को दृढ़ और चिरन्तन करने के लिये दिल्ली के सम्राटों ने राजस्थान के प्रत्येक पुरवे मे मसजिद और मुल्ला के रखने का आयोजन किया था, चाहे पुरवे में एक भी मुसलमान

न रहता हो, वह राजस्थानियों को असह्य था। मेवाड़ ने इस विद्रोह में सबसे अधिक भाग लिया था।

इस परिस्थिति में भी दिल्ली की बादशाही आशा करती थी कि राजपूताने की रियासतें उसको 'खिराज' देती रहेंगी! उनसे खिराज को वसूल करने की दिल्ली-शाह में निज की शक्ति न थी, इसलिये मराठों को अजमेर और, आगरा की सूबेदारी प्रदान की गई थी। वे अपने लिये राजस्थान में धन-संग्रह करें और उसका एक अंश बादशाह को देते रहें। जयपुर इत्यादि कुछ राज्य तब तक कर देते रहे जब तक उनको दिल्ली के शासन में से सूबेदारी इत्यादि द्वारा कुछ मिलता रहा। सूबेदारियां मराठों या ईरानी तूरानियों ने ले ली, अब जयपुर इत्यादि के पास कोई कारण दिल्ली-शाह को कर देने के लिये न था।

माराठों को रुपये की जरूरत थी और उनके पास रुपया वसूल करने की शक्ति थी। मराठों के सामने अखिल भारतीय हिन्दू-साम्राज्य स्थापित करने का स्वप्न था। वे इसको अवतारण अविलम्ब करना चाहते थे। ठहरने या रुकने की कोई गुन्जाइश न थी। अत्यन्त तीव्रगति के साथ उन्होंने अपना विस्तार किया। परन्तु इस तीव्रगति के कारण व्यवस्था को स्थिरता और स्थायित्व देना असम्भव हो गया। समाज में जो दोष थे वे न दब पाये और न दबाये जा सके, अव्यवस्था की अनुकूलता पाकर ये दोष खूब विकसित हुये और फूले फले!

मराठों के कुछ सरदारों ने राजस्थान के लोगों की परम्पराओं के साथ अपने आदर्शों के समन्वय का प्रयास किया, परन्तु कुछ ने अपनी सूबेदारी, जागीरदारी और सम्पत्ति लोलुपता में ही आदर्श की इति समझी।

राजपूतों को घरेलू झगड़ों, व्यक्तिगत चरित्र की हीनताओं और व्यक्तित्व-मग्नता ने दूरदर्शी न बनने दिया। मराठों को राजपूत या तो एक विपद या अपने घरेलू झगड़ों को हल करने का सहायक मात्र समझते थे। इसका दुष्परिणाम परस्पर का संघर्ष हुआ।

राजस्थान के साथ दक्षिण-पश्चिम में गायकवाड़, उत्तर-पूर्व और मध्य में होलकर और सिन्धिया का अधिक सम्पर्क रहा। इसमें भी मल्हारराव होल्कर का बहुत ज्यादा। सिंधिया वंश का जयप्पा मल्हार राव होल्कर के प्राय: संग रहता था। इस काल में माधव जी और दत्ता जी सिंधिया दक्षिण की निजामी लड़ाइयों, या गृह-विद्रोह के दमन करने में लगे थे। इन लड़ाइयों या गृह-विद्रोहों के दमन का प्रधान नेतृत्व बालाजी का निज भाई रघुनाथराव—अंग्रेजों का सुप्रसिद्ध राघोबा या चिमना जी आपा का लड़का—बाजीराव का ककियाउँता भाई—सदाशिवराव किया करते थे। माधव जी सिंधिया ने इन युद्धों से बहुत कुछ सीखा। कई मराठा सरदारों की देश-द्रोही स्वार्थपरता ने उन्हें अपने आदर्श के प्रति दृढ़, सजग और सतर्क कर दिया।

(४)

सफ़दरजंग मे साहस और पुरुषार्थ था, परन्तु आतुरता और दुरशीलता उसमें इतनी थी कि किसी की सुनता न था। दूरदर्शी योजनाओं के बनाने की उसमें योग्यता न थी। ईरानी अहङ्कार और शान का शौक उसमें भरपूर था। अपने लड़के शुजाउद्दौला के ब्याह में उसने छयालीस लाख रुपया फूंक दिया! बादशाहों में, शाहजहां ने, अपने सबसे बड़े लड़के दाराशिकोह के ब्याह मे तीस लाख रुपये ही खर्च किये थे। लोग समझते थे आदि काल से किसी भी राजा बादशाह ने इतना रुपया न बहाया होगा। सफदरजंग ने सबको मात कर दिया! सफ़दरजंग में एक दोष और था—वह अपने मित्रों को दीर्घकाल तक अपना मित्र बनाये रखने की समर्थता नहीं रखता था केवल शिया मुसलमान और हिन्दू उसका साथ प्रतिकूल परस्थितियों में भी दिये रहे, सो वे अपनी प्रकृति के कारण। सुन्नियों को उनका यह संग साथ सदैव खटका।

केवल शिहाबुद्दीन ऐसा एक सुन्नी था जो कम से कम उस घड़ी के कुछ महीनों उपरान्त तक उसका मित्र बना रहा जब सफदरजंग ने उसको मीरबख्शी का पद दिलवाया।

बादशाह के दरबार में उसके विरुद्ध वातावरण प्रबलता के साथ बढ़ता चला गया, परन्तु उसने परवाह नहीं की और बराबर अपनी जागीर और सम्पत्ति के बढ़ाने में लगा रहा। सोचता था, मैं हिन्दुस्थान मे ईरान से आया ही इस प्रयोजन से हूं।

शरद ऋतु अवसान पर थी। रात दो पहर जा चुकी थी। शिहाब ने आकर कुछ क्षण उपरान्त अपनी एक कठिनाई उपस्थित की, 'तूरानी फौज अपनी तनख़ाह के लिये बेहद हायतोबा मचा रही है। क्या करूं?' सफ़दरजंग ने बिना किसी संकोच के उत्तर दिया, 'मेरे तुर्की कुलापोशों को भी यही शिकायत है। शाही इलाकों की आमदनी आ ही

नही रही है। रुहेलों ने मेरठ सहारनपुर के इलाके को बरबाद कर दिया है।'

'अब तो वे भी बरबाद होकर नेपाल की तराई में झक मार रहे हैं।'

'मारें झक, उनको हिन्दुस्थान में आने के लिये न्योता किसने दिया था? ये भुखमरे रुहेले भी पचास साठ कबीलों की तादाद में बाल बच्चे, घोड़े, गधे, बकरे बकरियां लेकर आ घुसे जैसे उनके नानाजी की मीरास हो। बेहद लूटमार और ऊधम मचा रक्खा है। इनमें वगश, अफ़रीदी मासूद और युसुफ़ज़ाई तो परले दर्जे के डाकू और दगाबाज हैं। खुद तो लूटमार और खूनखराबी को जिन्दगी का फर्ज मानते हैं और जब मेरे जाट सिपाही उनका होश ठीक करने के लिये टूट पड़ते हैं तो उसको जाट-गर्दी कहते हैं। इन मनहूसों से इलाके की जान बचे तब अपनी फौज की तनखाह चुकाई जा सके। मेरे पास तो भाई कुछ नहीं। बतलाओ क्या किया जावे?'

'मेरी निज की जागीर में इतनी जान नही, वरना मैं अपनी अमदानी में से खर्च कर डालता।'

शिहाब चतुर और कुशाग्र-बुद्धि था। उसने अपने इस वाक्य में सफदरजंग की लम्बी-चौड़ी जागीरों की ओर संकेत किया। सफदरजंग समझ गया। स्वभाव का उद्धत था। शिहाब पर उसने चोट की, 'मेरी जागीरें मेरे अवध के सिपाहियों और मेरे घर के खर्च के लिये हैं: शाही फौज की तनखाहों से उनका कोई वास्ता नहीं। आपके वालिद और दादा मरहूम ने जो रुपया आपके कब्जे में छोड़ा है वह सब शाही इलाकों की वसूली है और सल्तनत की अमानत है। उसमें से खर्च करो न बेटा।'

यह बात शिहाब के कलेजे में शूल की तरह छिद गई। परन्तु वह छोकरा होते हुये भी वाक संयमी था। चोट को पीकर मुस्कराते हुये

बोला, 'जब कहीं से मिलता न दिखलाई पड़ेगा तब उसी मे से दे दूंगा। आप भी अपनी तुर्की फौज को अपने पास से दे दीजिये।'

सफदरजंग ने जरा तेज होकर कहा, 'भाई मेरे, जो रुपया मेरा निज का है वह मैं किसी को कसे दे दूंगा? तुर्की फौज बादशाह की है और शाही कामों के लिये है। मेरे गुसाइयों की फौज के फौजदार गुसाई राजेन्द्रगिरि और जाटों के फौजदार से पूछो कि कभी उनका एक पैसा भी बाकी रहा है? मैं तो तनखाह के अलावा उनको मनमानी इनामें पर इनामें भी जब तब देता रहता हूं।'

शिहाब ने इसको भी ठंडक के साथ पचा लिया। परन्तु सफदरजंग की बात से प्राप्त कुछ निष्कर्ष गांठ मे बाघ लिये।

प्रसंग को टाल कर शिहाब बोला, अहमदशाह अब्दाली ने पन्जाब पर तीसरा हमला किया है। लाहौर को ले लिया है, कहीं दिल्ली की नौबत न आवे।'

सफदर ने कहा, 'यह गैर मुमकिन है। अहमदशाह का मुकाबिला मराठे करेंगे। अन्देशा रुहेलों से है मुझको। ये लोग अहमदशाह अब्दाली से मिली भगत रखते हैं, लेकिन खैर देखा जायगा। आपके तुरानी, मेरे तुर्क और वक्त आ पड़ने पर मेरे गुसाई और जाट भी अफ़गानों को दिल्ली पर आ चढ़ने से दूर रक्खेंगे।'

शिहाब के मुंह से निकल पड़ा, 'मैं भी एक फौज अपने मन की बनाऊँगा।' फिर उसने अपने को तुरन्त संयत किया, 'मगर मुझे अलग फौज की जरूरत ही क्या है? जब तक आप मेरे सरपरस्त हैं, मेरा कोई बाल भी बांका नहीं कर सकता।'

सफदर के मन में कोई खुटका नहीं हुआ। शिहाब कहता गया, 'रुहेलों को काबू में रखकर उनसे काम भी निकाला जा सकता है।'

सफदर अभी तक मसनद से टिके हुये बात कर रहा था। शिहाब के इस वाक्य पर चौंक सा पड़ा। बोला, 'अभी आप निरे बच्चे हैं।

रुहेले सांप हैं। इनको किसी तरह भी नहीं पाला जा सकता। इनका तो अड्डा साफ करने मे ही खैर है।

शिहाब नही सहमा। उसने कहा, 'मेरे पास उनका एक सरदार आया है। रुहेलो को काफी तादाद मे आपके कदमों की खिदमत और सल्तनत के बचाव के लिये ले आने का वादा करता है।'

'कौन है वह ?'

'नजीबखां।'

'नजीबखा ! अजी वह रुहेला नही है। अफगानिस्तान की नंगी ऊजड बरफीली पहाडियो से उतर कर आया हुआ महज एक वरकन्दाज है। रुहेलों मे पहुँचकर अपने को रुहेला कहने लगा है। मगर हा, रुहेले ही कौन हैं ? उन्ही टीलों टोरियों के पहाडी न ? क्या कहता है यह नजीबखां और दिल्ली में आया कैसे ?'

'वह दिल्ली मे आपकी खिदमत करने के लिये उसी तरह आया है जैसे और लोग आते रहते है। कहता है कम से कम पाच हजार रुहेलों को हुजूर के कदमो में डाल दूंगा; सिर्फ एक मन्सब चाहता है।'

सफदर ने हँसकर अपना मन्तव्य प्रकट किया, 'और एक पैनी छुरी चाहता है जिसको मौका पाते ही मेरी या आपकी बगल मे किसी दिन घुमा देगा।'

शिहाब प्रतिहत नही हुआ। बोला, 'उससे बातचीत करने में क्या हर्ज हैं। कितनी भी लम्बी या छोटी छुरी लिये हो अपना कर ही क्या सकता है ?'

सफदर ने अपने भय को और अधिक प्रकट करना ठीक नहीं समझा। दिखलाया जैसे शिहाबुद्दीन के हठ पर नब गया हो। उसने पूछा, 'कहाँ है वह ?'

शिहाब ने उत्तर दिया, 'बाहर हाजिर है। हुकुम हो तो बुला लिया जाय ?'

साथ ही ले आया था ? सफदर ने सोचा, पर कहा कुछ नहीं। अनुमति दे दी। नजीबखां भीतर बुला लिया गया।

नजीबखां लगभग पचास साल का था। शरीर दृढ़; स्थिर और क्रूर आंखों के एक कोने में कपट, और अवसर-वादिता; ओठों का सम्पुट उद्देश्य के अबाध अनुशीलन का अभ्यासी, ठोडी के नीचे गर्दन की सिकुड़नें सक्रियता और हठानुराग की द्योतक।

आते ही उसने साधारण शिष्टाचार का प्रणाम किया, तपाक के साथ मजे में एक अच्छी सी जगह पर बैठ गया और बेधड़क बोला,

'मैं हुजूर की खिदमत करना चाहता हूं।'

सफदरजंग की ईरानी संस्कृति को उसका निधड़कपन खल गया। पूछा, 'किस तबेले से निकल कर आये हो मियां ?'

नजीब के माथे पर शिकन नहीं आई। पुष्ट छाती से निकले हुये धीमें घराते हुये से स्वर में उसने उत्तर दिया, 'तबेले में से नहीं आया हूं। पठान फिर्के का हूं।'

शिहाबुद्दीन ने सरसता उत्पन्न करने के लिये तुरन्त कहा, 'यह पठान सरदार है, हुजूर।'

सफदर अकुण्ठित स्वर में बोला,' हां हां मैं जानता हूं। तुम मियां अली मुहम्मद रुहेले के चोबदार थे न ?'

'मैं जब अफगानिस्तान से चला था तो पैदल चल पड़ा था और अब घोड़े पर सवार रहता हूं।'

सफ़दरजंग की गर्मी कम नहीं हुई।

'कितने डाके डाले हैं रुहेलों के साथ मिलकर ? उन लोगों का तो पेशा यही है न ?'

'वक्त की बात है साहब। हिन्दुस्थान में आकर लोगों को या तो डाके डालने पड़ते हैं या भीख मांगनी पड़ती है।'

'तुम इनमें से क्या करते रहे थे ?'

'सिपाहीगीरी।'

नजीब की ठसक के कारण सफ़दरजंग ने चुटीली बातचीत को और आगे नहीं बढ़ाया। पूछा, 'रुहेले अब क्या करना चाहते हैं?'

उसने उत्तर दिया, 'आपकी खिदमत। इस वक्त विचारे तराई में मारे मारे फिर रहे हैं। उन्होने जैसा किया वैसा पाया। मुझको कुछ वास्ता नही। मेरी तरह के बहुत से पठान हैं जो शाही नौकरी कर लेना चाहते हैं।'

सफ़दर ने कहा, 'रुहेले बादशाह के खिलाफ बगावत करते हैं, मालगुजारी नही अदा करते हैं और सिर पर पैर रखकर चलते हैं। उनको समझाते क्यों नहीं? रुहेलो से वसूल करके पचास लाख रुपया मराठों को देना तै पाया है। इसमे मदद कर सकते हो?

नजीब बोला, 'बिलकुल नही हज़रत। मैं तो उन लोगो से अलग ही हो गया हूँ। मेरी बात वे लोग सुनने ही क्यो चले?'

सफदरजंग सोचने लगा।

शिहाबुद्दीन ने सुझाव दिया, 'जो जमीनें रुहेलों ने छीन ली हैं उन्हीं में से कुछ का मन्सब इनको लगा दीजिये। ये अपने साथी सिपाहियों का इन्तजाम उनकी आमदनी मे कर लेंगे।'

सफदर को सुझाव अच्छा लगा। नजीब ने स्वीकार कर लिया। फरमान पर बादशाह के हस्ताक्षर कराने के लिये दूसरे दिन के लिये बात तै पाई।

सफ़दर ने सोचा रुहेला दल का एक प्रभावशाली सरदार हाथ लग गया।

शिहाबुद्दीन ने मन में कहा, 'एक विश्वसनीय सुन्नी नायक मित्र बन गया।'

नजीब खां ने निश्चय किया, 'दिल्ली की ऊँची छत पर पहुँचने के लिये सीढ़ी का पहला डंडा पैर तले आया। बतलाऊँगा कमबख्त को कि ऐसे तबेले से निकला हूँ जिसमें आग के घोड़े बँधे रहते हैं।

(५)

निर्जीव ऐसे साम्राज्य के वजीर का नौकर हो गया जिसमे कोई भी मनचला किसी दिन मालिक बन जाने की कल्पना कर सकता था। मुगल साम्राज्य अपने अच्छे से अच्छे दिनो मे एक विशाल सैनिक छावनी थी जिसका मुखिया–बादशाह–ईरानी और बाबुली शान की साधना से, भूमि और धन के भूखे हिन्दू मुसलमान सामन्तो की सहायता द्वारा, असंख्य जनसाधारण की आखों में चकाचौंध लगाता हुआ अपने ही बड़प्पन से घुटता रहता था। यह विशाल सैनिक छावनी मध्य एशिया के बर्बरों के निरन्तर प्रवाह और प्रबल बादशाह के दृढ हाथो से ही कायम रह सकती थी। जनता को शान्तिपूर्वक खेती और रोजगार करने तथा करों के देने से ही मतलब था। जब कोई अत्याचारी या निर्बल बादशाह दिल्ली के सिंहासन पर बैठा तब वह सकपकाई और जब कोई प्रबल सबल बैठा तब उसने उसकी जय मनाई। उसके धर्म पर आघात किया तो वह उखड़ पड़ी।

औरंगजेब के उत्तराधिकारियो के जमाने मे उत्तर हिन्द एक मुर्दा सा हो गया। इस मुर्दे को खाने के लिये चारों ओर से चील कउये झपट मारने और मड़लाने लगे। नादिरशाह खींच–नोच कर चला गया था। अब महमदशाह अब्दाली तैयार हो रहा था। इधर जाट, गूजर, मेवाती, रुहेले काटने कपटने में लगे ही थे। सरदार, नवाब और राजा लोग आपाधापी में संलग्न थे। बादशाह सुरा और सुन्दरियो से अपना जन्म सफल कर रहा था। मुगल साम्राज्य नाम की विशाल छावनी अनेक छावनियों मे विभक्त हो गई थी। सफदरजंग, शिहाबुद्दीन, नजीबुद्दौला इत्यादि अपनी अपनी छावनी बनाने की धुन में चिपट गये।

उत्तर हिन्द मृत प्रायः था तो दक्षिण एक प्रचण्ड ज्वालामुखी सदृश था।

इस ज्वालामुखी के प्रधान विस्फोटक थे,—फ्रांसीसी, निज़ामग्रली, ताराबाई, गायकवाड, भोंसले, सदाशिवराय भाऊ, बालाजी बाजीराव पेशवा और उसकी पत्नी गोपिकाबाई।

भारतीय विकास शताब्दियों से अवरुद्ध था, गन्दगी और सड़ाद मानो, भर गई थी। उसको साफ करने के लिये यह ज्वालामुखी तैयार हुआ था। उसकी शक्ति और धारा का उचित या अनुचित संचालन करने के लिये उपरोक्त व्यक्ति या समूह अग्रसर थे। अङ्गरेज भी आ चुके थे, परन्तु वे फ्रांसीसियों के प्रतिद्वन्द्वियों के रूप में अधिक थे और इतिहास बनाने वालों के रूप मे उस समय कम।

उस ज्वालामुखी की परम प्रधान शक्ति थी महाराष्ट्र की जनता, गौण शक्तियां थीं अरब, पठान, हब्शी, फ्रांसीसी और उत्तर से आये हुये खिल्त-मिल्त लोग जो दक्षिण में अपनी भूख मिटाने और कीर्ति कमाने के लिये पहुँचे थे।

दक्षिण के जिस पश्चिमी भाग मे मराठे रहते थे उसने भूख से खुद कभी पूरा निस्तार नही पाया था। प्रकृति की जङ्गली, पहाड़ी और सुजलाजोद में खेलते और लड़ते झगड़ते संघर्षशील मराठे प्रकृति के लाड़ले बन गये थे। इसके युवक भूख की शान्ति और पराक्रम की महत्ता पाने के लिये विविध प्रकार के नायकों और सामन्तों की सेवाओं में भर्ती होते चले जाते थे। जहा गये, अधिकारा, वही बस गये, परन्तु अपनी प्यारी घाटियों और बीहड़ो में मन रमाये रहे। चरित्र की आत्म-निर्भरता और स्वाधीनता उनकी अपनी सम्पत्ति थी। किसी भी कठिनाई या विघ्न बाधा के सामने हार मान कर बैठ जाना उनके स्वभाव मे न था। व्यापक दरिद्रता ने उनको आलसी नही बनने दिया और समाज मे अधिक ऊँचाई निचाई को बहुत कम उत्पन्न होने दिया। प्रत्येक पुरुष और प्रत्येक स्त्री को कुछ न कुछ काम करना पड़ता था। रहन-सहन मे सिधाई और आपस में बराबरी का बर्ताव। संघर्षों ने साहसी, युद्ध-प्रिय और स्वाभिमानी बनाया। युग युग में उत्पन्न होने

वाले सन्तों और महात्माओं ने भक्ति से उनको नवाया। अपना धर्म, अपने मन्दिर अपने तीर्थ, अपना समाज। दुखियों के लिये त्याग की भावना और अत्याचार करने वालों के प्रति भाले की कठोर और तेज नोक। न तो किसी का अपमान करें और न किसी का अपमान सहें। मुसलमानों की लगातार लड़ाइयों और भूमि लिप्सा ने, उनके अत्याचारों और जन पीड़न ने चुस्त चालाकी और अवसरवादिता अवश्य पैदा करदी। परन्तु उनकी सक्रियता, मुस्तैदी, आत्म-निर्भरता, स्वाभिमान और समानता-प्रेम अक्षुण्ण बने रहे। समस्या के सामने आते ही अविलम्ब उसका हल निकाल लेना; उस हल को तुरन्त कार्य रूप देना; संकटों के सामने सिर न झुकाना; अपनी लगन को किसी भी और कितनी भी बड़ी विघ्न बाधा के नीचे न दबने देना; पत्थर के नीचे दब जाने पर चीख-पुकार न करना, किसी प्रकार उसके नीचे से निकल आना और फिर पत्थर पर चढ़ बैठना; पचास मील पर शत्रु के सिर पर या बगल में ठोकर देकर लौट पड़ना और दूसरे दिन फिर पचास मील की आंधी समेटना; नायक या सरदार के मारे जाने पर अपनी ही सूझबूझ से काम लेकर कार्यक्रम को आगे बढ़ाना, ये गुण मराठों में मानो जन्मजात रहे हैं। एशिया भर की सारी कौमों में अफगानों से मराठे सबसे अधिक सादृश्य रखते हैं–केवल, वे बर्बर और निर्दय नहीं हैं। अफगानों को मराठों का लोहा लेना और मानना पड़ा।

जब शिवाजी क्षेत्र में आये तब उन्होंने मराठों को इसी प्रकार का पाया। अङ्गारों पर राख चढ़ गई थी। शिवाजी ने उस राख को हटाया और बिखरे हुये अङ्गारों को इकट्ठा करके एक प्रचण्ड ज्वाला में परिवर्तित कर दिया।

परन्तु दुकानदारी वाले की काम काजी समझ की व्यापक कमी के कारण वे अपने प्रयत्नों को पूरा साज और चमत्कार न दे सके। महाराष्ट्र के ब्राह्मण इस कमी को पूरा करते रहे। महाराष्ट्र ब्राह्मणों ने जब सिपाहीगीरी की तब वे अपनी काम काजी बुद्धि के कारण साधारण मराठा के बहुत ऊपर उठ गये, उनके नायक

बने और फिर उनके राजा। आर्थिक ऊँचाई निचाई पैदा हुई, पर-भोगी और पर-जीवी लोगों की संख्या बढ़ी, परस्पर ईर्षा द्वेष और स्वार्थ की बाढ़ आई ब्राह्मण जनता की श्रद्धा का मुकुट बांधे हुये राजनीति में दाखिल हुआ। राजनीति की ठोकरों ने उसके मुकुट को तोड़ फोड़ दिया। जातपांत की ऊँचाई निचाई आर्थिक ऊँचाई निचाई मे शामिल होने लगी। मराठा के समानता-प्रेम को धक्का लगा और संघर्ष उत्पन्न हो गया। महाराष्ट्र भर में शिवाजी और बाजीराव की धधकाई हुई देश-प्रेम की आग पूरी तरह नहीं परच पाई थी कि यह संघर्ष सामने आ गया। जनता अपने भीतर एक भावना की उमंग पाती थी जो उन सबको एक कहने के लिये विवश सा करती थी, परन्तु वह अपने को एक नहीं कह पाती थी; उसके पास उस भावना के प्रकट करने के लिये शब्द नहीं था,–स्वराज्य, हिन्दूपदपादशाही, शब्द उसने सुन रखे थे, परन्तु कार्य-रूप में महाराष्ट्र के बाहर उन शब्दों का असली अर्थ और वास्तविक रूप क्या है, या क्या होना चाहिये यह वह नहीं जानती थी। महाराष्ट्र के बाहर जाकर चौथ, सरदेसमुखी का उगाहना, लूटमार करना और बँधे हुये हिस्सों के अनुसार उसका बांटना, सरदारों को जागीरें और साधारण सिपाही को जमीन तथा सोना चांदी साधारण जनता स्वराज्य का यह रूप देख रही थी और मन्दिर मूर्तियों तथा तीर्थ स्थानों की रक्षा में हिन्दूपदपादशाही। इससे अधिक देखने के प्रयास में उसकी आखें धुंधली हो उठती थी–और इससे अधिक देखने का उसके पास न अवसर था, न समय और न विचार।

उत्तर भारत में किसान शान्ति पूर्वक अपनी खेती करले और मन्दिर में चुपचाप पूजा, तो मानो राजनीति और शासन-व्यवस्था का चरम आदर्श प्राप्त हो गया। बादशाह वह सबसे बड़ा जो इस प्रकार की व्यवस्था को बनाये रखे, आलीशान महल बनवाये, कलाप्रवीणों को आश्रय दे हर-हालत में जो अपने ईरानी तूरानी, बदख्शानी, ईराकी और अरबी तुर्की रिश्तेदारों और मन्सबदारों को छावनी बांधकर उन्हें

अपनी निज की पादशाही कायम न करने दे। इतना हो जाय तो मानो किसान मजदूर जनता को सब मिल गया, पर-जीवी, पर-भोगी चाहे जितने भरे रहें और बढ़ते जायें। दक्षिण में—महाराष्ट्र में—पर-जीवी और पर-भोगी कम बढ़ पाये। पराक्रम और त्याग का पुरस्कार और बदला चाहने वाले निस्सन्देह बहुत हो गये। इस चाह ने पराक्रम के के लिये प्रेरणा दी और पराक्रम ने उस चाह को उत्तरोत्तर बढ़ाया।

(६)

साहू के जीवनकाल मे ही शासन की बागडोर पेशवा के हाथ मे पहुँच गई थी। साहू का उत्तराधिकारी उसकी भी अपेक्षा निर्बल हुआ। पेशवा का दरबार पूना पहुँच ही चुका था उसका हाथ और भी प्रबल हो गया। परन्तु पेशवाई के मार्ग मे काटे भी बहुत से बिछे हुये थे। शिवाजी की पुत्रवधू ताराबाई एक काटा और दूसरा सदाशिवराव भाऊ। ताराबाई सत्तर वर्ष की हो चुकी थी परन्तु उसकी शक्ति, महत्वाकाक्षा और ईर्षा क्षीण नही हुई थी। भाऊ बालाजी बाजीराव पेशवा का ककियावता भाई था। आपस मे गांठ पड गई थी। बालाजीराव ने सहनशील दूरदर्शिता से काम लिया—उसे अपना प्रधान मन्त्री बना लिया। बालाजी पेशवा राजनीतिज्ञ था और भाऊ सूरवीर सेनानायक। पेशवा को ताराबाई के साथ ही भोसले और गायकवाड सरीखे उद्दण्ड सरदारो तथा हैदराबाद के निजामअली सरीखे फासपोषित पड़ोसी अमित्र के भी डक विषहीन करने थे।

ताराबाई सतारा में थी। वही से महाराष्ट्र के सरदार सामन्तों को भडकाती और अपने षड़यन्त्रो में समेटने का प्रयत्न करती रहती। बालाजी को कर्नाटक की लड़ाई में जाना पड़ा। ताराबाई को शान्त करने का काम वह माधव जी सिन्धिया को सौंप गया। उस समय वह सिन्ध खेडे मे थे।

माधव जी ताराबाई के पास बिना फौजफाटे के जा पहुचे। ताराबाई के सामने अपने साथ केवल एक सैनिक ले गये।

ताराबाई के चेहरे पर झुर्रियां छाई हुई थी और आंखों मे तेज।

बोली,—'क्या पूना मे बालाजी के पास कोई बड़ा बूढा नही बचा जो तुम्हे भेजा ?'

'क्योकि महारानी साहब मुझ सरीखे छुटभइयो का अधिक विश्वास कर सकती हैं', माधव ने उत्तर दिया।

यह कड़वा घूंट पिलाना चाहती थी—'बालाजी ने अपने बाप का नाम अपने नाम के साथ जोड़ना छोड़ दिया है। अब तो बड़ा आदमी हो गया है !'

'मेरी दृष्टि मे तो सभी बड़े हैं, परन्तु अभी वे बाजीराव से बड़े नही हुये हैं; अपने पिता की स्मृति कैसे छोड़ सकते है ?'

'मेरे पास उसकी जो चिट्ठियां आती हैं उनमे वह अपने को केवल बालाजीराव पेशवा लिखता है। बड़े हो जाने पर ये ब्राह्मण अपने बाप को भी भूल जाते हैं !'

'मैं क्या कह सकता हू ?—मैं नही जानता।'

'तुम नही जानते कि इन लोगो ने मेरे ससुर स्वर्गीय छत्रपति शिवाजी के वंश को कैसा अपने पैरो तले रोंद रक्खा है ? तुम नही जानते कि ये मराठों को अपनी शतरज के मोहरे और चौसर के पासे बनाये हुये हैं ? तुम नहीं जानते कि पैर पुजवा पुजवाकर अपने भाई बान्धवो को प्रत्येक ऊँचाई और लाभ के स्थान पर किसी न किसी प्रकार ठेल ठालकर बिठला देते है ?'

माधव जी ने सिर नीचा कर लिया। ताराबाई क्रोध की भभक मे कुछ क्षण चुप रहीं।

फिर बोली,—'तुम सिंधिया वंश के हो। तुम्हारे वंश की लड़की मेरे जेठ साहू जी को ब्याही थी। क्या तुम्हे अपना और मराठों का अपमान बिलकुल नहीं अखरता ?'

माधव जी ने कुछ सोचकर उत्तर दिया,—'स्वराज्य के आदर्श को आगे बढ़ाना है। योग्य और सुपात्र लोग ही, चाहे वे ब्राह्मण हों चाहे मराठे, उस आदर्श को व्यवहार का रूप दे सकते हैं। पेशवा इसी प्रकार के लोगों का संघ बना रहे है जो भारत भर में स्वराज्य की स्थापना करेंगे। माताजी, आपसी झगड़ों को नहीं उभड़ने देना चाहिये।'

ताराबाई कड़ाक से बोली, 'एक या कुछ चतुर चालाक लोग अपने चारों ओर मूर्खों का जो समूह इकट्ठा कर लेते हैं उसी को सघ कह दिया जाता है। तुम भी इस सघ में इतनी कच्ची आयु मे ले लिये गये हो।'

'मैं तो अपने को महाराष्ट्र का केवल एक छोटा सा सेवक समझता हू।'

'पेशवा ने मालवा मे जागीर लगा दी है न? मल्हारराव होलकर को भी एक मिल गई है और एक पवार को भी। इसीलिये मेरी बात तुम लोगों को नही सुहाती। देख लेना, ये ब्राह्मण किसी दिन तुम लोगों से अपनी धोतियाँ धुलवायेंगे।'

माधव जी चुप रहे।

ताराबाई कहती गई, 'बालाजी की पत्नी गोपिकाबाई क्या कहती है? गायकवाड़ को कैद मे डाल लिया है। उस बिचारे को इतना दबोचा कि उससे लाख सवा लाख रुपये खसोट कर सदाशिवराव भाऊ और गोपिकाबाई ने आपस मे बाँट लिये और पेशवा ने पन्द्रह लाख रुपये की जागीर अपने लिये गुजरात प्रान्त मे ले ली। यही ढग है न स्वराज्य स्थापित करने का?'

माधव जी के मन मे एक कड़वा जवाब उठा, परन्तु उनको आत्म-नियन्त्रण का अभ्यास हो चला था। मिठास के साथ कहा, 'पेशवा को सेना भी रखनी पड़ती है। उसके खर्च के लिये रुपया चाहिये। कर्नाटक की लडाई मे ही बहुत खर्च हो रहा है।'

'एक दिन आयगा जब केवल पेशवा ही की एक बडी सेना रह जायगी और तुम सब उसके पिछलग्गे हो जाओगे', ताराबाई बोली।

माधव जी ने कहा, 'महारानी साहब, हम लोग तो आपके पटेल हैं। सेनापति हो जायें, जागीरदार बन जायें या और किसी पद पर पहुंच जायें, परन्तु यह कभी नही भूलेंगे कि हम आपके पटेल हैं।'

ताराबाई इस उत्तर से कुछ ढली। कठोर स्वर को कुछ मुलायम करके बोली, 'माधव, तू अभी नासमझ है। मैं तुमको सावधान करती हूँ—बालाजी के जाल में मत फसना।'

माधव जी ने कुछ प्रतिवाद का सकल्प किया, 'परन्तु ताराबाई की आयु शिवाजी की पुत्रवधू का पद, उसका पूर्व इतिहास, जो औरंगजेब और उसकी विशाल सेना के छक्के छुटाने से ओतप्रोत था, स्मरण हो आये, और अपनी आयु, महाराष्ट्र में अपना छोटा सा पद तथा जिस काम के लिये उनको बालाजीराव ने भेजा था एक साथ याद आ गये।

माधव जी ने नम्रता के साथ कहा, 'महारानी साहब, बाजीराव पेशवा ने छत्रपति महाराज की जिस परम्परा को भलीभांति बढ़ाया, वर्तमान पेशवा भी उसी परम्परा के बढाने के लिये व्यग्र हैं—'

ताराबाई ने तुरन्त टोका, 'बालाजी विलासी है। रंग महल का विलास केवल निकम्मे आलसियों के लिये है, योधा का वह विनाश है और राजा के लिये बिना थाह का गड्ढा। स्वर्गीय साहू ने अपना सर्वनाश इसी में किया और बालाजी का भी इसी से होगा।'

ताराबाई की भविष्यद्वाणी का माधव जी पर कोई प्रभाव नही पड़ा, बोले, 'महारानी साहब, मैं यह प्रार्थना करने आया हूँ कि शांतिपूर्वक किसी गढ़ में विराजी रहें और भोंसले, यादव, गायकवाड़ इत्यादि सरदारों को अराजकता मचाने से रोके रहें, क्योंकि ये लोग आपके आदेश को नही टाल सकते। पेशवा समेत हम सब लोगों को आप अपना सेवक समझें हम लोग इस समय संकटो से घिरे हुये हैं। निजाम हमारी नाक के नीचे ही उपद्रवों को सृजन कर रहा है और हमारे स्वराज्य के पौधे को झुलसाने के लिये तैयार है। फ्रासीसी शक्ति निजाम की सहायक बनकर हमको चूर कर डालने के लिये तुली बैठी है। कुछ सरदार घुन बनकर हमको खोखला करने के लिये तैयार हैं—'

ताराबाई ने तुरन्त कहा, 'उनको दबाने के लिये अंगरेजो की सहायता तो ली थी।'

माधव जी ने मन्तव्य प्रकट करते हुये विनय की, 'अंग्रेजों की सहायता लेना भूल थी। फ्रांसीसियों की छाया के पीछे पीछे अंग्रेजों की महत्वाकांक्षा इस तितरे-बितरे देश के ऊपर है। आपसे हाथ जोड़कर विनय करता हूं इस आपसी अराजकता को बन्द करवाइये और महाराष्ट्र को स्वराज्य विस्तार में सहायता दीजिये। ऊपर चढ़ने के लिये प्रयत्न करना पड़ता है, थमना भी पड़ता है, परन्तु नीचे फिसलने के लिये तो कोई रोकथाम है ही नहीं।'

ताराबाई ने जरा दुखी स्वर में कहा, 'पीडतों और अभागों की निन्दा करने से बढ़कर और नीच कर्म क्या हो सकता है ? यह पेशवा जगह जगह मेरी बुराई करता है। मुझको चैन नहीं लेने देता।'

माधव जी ने आश्वासन दिया, 'महारानी साहब, यदि पहले कोई अपराध हो गया हो तो क्षमा करें। आगे ऐसा न होगा।'

ताराबाई तुरन्त क्षुब्ध हो गई। बोली, 'माधव, मैं बालाजी को क्षमा नहीं कर सकती और न उन लोगों को जो उसके पक्षपाती हैं।'

फिर माधव की अल्पायु और उनकी निरीहता को देखकर ताराबाई नरम पड़ गई। जरा मीठे स्वर मे बोली, 'तू हमारी मराठा जाति का समझदार युवक है। क्या तू जानता है बालाजी स्वयं मेरे पास क्यों नहीं आया ?'

माधवजी ने बहुत नम्रता के साथ उत्तर दिया, 'महारानी सहाब, वे स्वयं आ रहे थे, परन्तु कर्नाटक की लडाई ने उनको न आने पर विवश कर दिया। मुझको उन्होंने आश्वासन देने का अधिकार देकर भेजा है।'

ताराबाई के स्वाभाव ने फिर झटका खाया। रुष्ट होकर बोली, 'हुं-ऊँ ! छोकरों को राजदूत बनाकर भेजने की दिखावट करने लगा है यह ब्राह्मण। कह देना कि वह स्वयं आवे, या सामना करने के लिये तैयार रहे।'

माधवजी ताराबाई के हठ को मुलायम न कर सके। उनको सतारा से लौट आना पड़ा। आते ही पता लगा कि उत्तर-भारत से बादशाह का बुलावा शिहाबुद्दीन इमादुलमुल्क के द्वारा आया है: 'वजीर सफदरगंज ने बगावत ठानी है, मराठे बादशाह की सहायता करने के लिये आवें।'

कर्नाटक के युद्ध को सफलता के साथ समाप्त करने के बाद बालाजीराव आया और उसने ताराबाई को शान्त करने के लिये स्वयं बातचीत की। ताराबाई का हठ कुछ अंशों में ढीला हुआ, परन्तु वह चिन्ता का निरन्तर कारण बनी रही।

(७)

सफ़दरजंग बड़ा स्वार्थी और घमंडी था। उस युग में सब सामन्त और सरदार डाके डाल डाल कर जागीरें कमाते रहे। सफ़दरजंग चोर डाकुओं के एक सीधे सिद्धान्त को नही जानता था, यदि जानता था, तो वर्तता नही था : चोर डाकू एक दूसरे के हक़ और कमाई को मान्यता दिये बिना नहीं पनप सकते। जो ईरानी, तूरानी, बदख़्शानी और बलूची दिल्ली साम्राज्य को कन्धों पर उठाने के लिये दिल्ली आये, वे अपनी अपनी जागीरें बना बैठे थे। सफदरगंज ने इनमे से अनेकों की जागीरें जब्त करके अपनी जागीर मे मिलाली। बादशाह का उसे कोई डर नही था, फिर भी बादशाह के पास लोगों का आना जाना उसने लगभग बन्द कर दिया। जो लोग जाते थे वे उसके परवाने के बिना नही जा सकते थे। बादशाह का भय न होते हुये भी उसको आशंका थी कि बिगड़े नवाबों का गिरोह बादशाह से मिलकर कही उसके खिलाफ षडयन्त्रों की रचना न करे।

धीरे धीरे सफदरगज के खिलाफ गुट बना। इस गुट्ट की सहायता से बादशाह ने सफदरगंज के नियुक्त किये हुये किले के पहरे वालो और अफसरो को निकाला। इन लोगो के निकाले जाने के उपरान्त इस गुट्ट और सफदरगज के बीच मे खुली लडाई छिड़ गई। उधर शाही गुट्ट था और इधर सफदरी। शाही गुट्ट का संगठन शिहाबुद्दीन ने अपने अथक परिश्रम और मनोबल से किया। नजीब उसके साथ था। मराठों को शिहाबुद्दीन के द्वारा बादशाह ने अपनी सहायता के लिये न्योता। सफदरगंज ने भी अपनी सहायता के लिये उनको बुलाया। राजपूतों और जाटो को भी निमन्त्रण गये। भूमि के भूखे इन न्योतों पर टूट पड़े। जाट राजा सूरजमल ने सफदरजंग का पक्ष लिया। कुछ राजपूत सरदार बादशाह की ओर झुके। मराठों को निश्चय करने में देर नही लगी। उनको शिहाबुद्दीन के भाई बन्द दक्षिण के निजाम की पड़ी

थी, और उत्तर भारत के मधमड़े मुर्दे को ठिकाने लगाना था, इससे उन्होंने शिहाबुद्दीन वाले गुट्ट का साथ किया।

सफ़दरजंग एक बड़ी कठिनाई में था। उसकी मुसलमान सेना का बहुत बड़ा अंश मुग़ी था और इस सेना का घर द्वार, बालबच्चे, मुग़ल-पुरा में आबाद थे जिसके ऊपर दिल्ली के किले की तोपें सीधा मुँह किये बैठी थी।

परन्तु सफदरजंग को अपने गुसाईं सैनिकों का जिनका नायक राजेन्द्र-गिरि था, बहुत बल भरोसा था। वह उसका बहुत आदर सत्कार करता था। यहां तक कि उसकी ताजीम करता था और रुहेलों की डकैती से सहारनपुर का इलाका छीन उसे जागीर में लगा दिया था। वह और उसके गुसाईं इतने भयंकर लड़ाके थे कि साधारण तौर पर यह प्रसिद्ध हो गया था कि वे लोग जादू के जोर से लड़ाइयां जीतते हैं!

और साथ में जाट भी थे।

इन लोगों ने युद्ध के आरम्भ होने के पहले दिल्ली के आसपास लूट-मार शुरू कर दी। उधर से मराठों ने भी कसर नहीं लगाई।

आरम्भ में युद्ध तो क्या तुक्केबाजी सी होती रही। युद्ध का पूरा रूप तब आया जब सफ़दरजंग के अपनाये हुये लड़के—शिहाबुद्दीन—ने एक घोषणा मौलवी मुल्लों से दस्तखत करवाकर प्रचलित कराई। इस घोषणा में डंके की चोट प्रकट किया गया कि सफदरजंग 'नमकहराम राफ़िजी' है और उसके शिया होने के कारण यह लड़ाई, कुफ्र के खिलाफ़, जिहाद है। एक गुप्त जिहाद और किया गया। शिहाब ने सफ़दर के सिपाहियों को प्रति सिपाही पचास रुपये, एक महीने का वेतन और नजर भेंट का प्रलोभन दिया। सफदर के तेईस सहस्र योधा बादशाह के गुट्ट में शीघ्र जा मिले।

नजीबखां ने पन्द्रह हजार रुहेले इकट्ठे किये। उसको स्मरण था: 'उस तबेले से निकला हूं जिसमें भाग के घोड़े बँधे रहते हैं।'

बादशाह की गाठ मे रुपया न था, परन्तु शिहाब के पास बाप का करोड़ों रुपया था। वह उसे पानी की तरह बहा रहा था। बादशाह के प्रति स्वामि-भक्ति पर न्योछावर नही थी यह, और न सफदरजंग से उसको किसी विशेष वैर का बदला ही चुकाना था, वरन, उसको अपना भविष्य बनाना था। वह जानता था कि सफदर को साफ कर देने के बाद फिर दिल्ली की पूरी शक्ति और शान को अधिकृत करने में कोई बाधा न रहेगी और कुल खर्च किया हुआ रुपया ब्याज त्याज के साथ जल्दी लौट आयगा।

तुर्कों, इरानियों और बदख्शानियो से गुसाइयो की मुठभेड़ हुई। फिर घोर युद्ध। गुसाइयो ने बात की बात मे शाही फौज के एक बडे अंग को कतर डाला। शिहाब, जो इस समय १७, १८ साल की आयु का था, लडाई मे कूद पडा। भागते हुये शाही सैनिको को उसने इकट्ठा किया। नजीब ने सहायता दी। फिर जमकर युद्ध हुआ। राजेन्द्रगिरि बढ़ बढ़कर लड़ने लगा और शाही सेना को पीछे हटाने लगा। परन्तु उसको एक गोली लगी और 'जय नारायण' कहते ही वह समाप्त हो गया। शाही सेना को उस दिन विजय मिल गई।

किन्तु युद्ध समाप्त नहीं हुआ।

गुसाइयों और जाटो की सहायता से सफदरजंग खाइयां खोदकर लड़ने लगा। शिहाब, नजीब तथा मराठों ने भी खाइयां तैयार कीं। लड़ाई में बहुत से मराठे मारे गये। शिहाब ने शाही सेना को बहुत प्रोत्साहन दिया, परन्तु वह आगे न बढ़ सकी। उसने सोचा यदि बादशाह सिपाहियों के बीच में आ जाय तो उनको बड़ा उत्तेजन मिलेगा। इसी समय समाचार मिला कि सूरजमल सफदरजंग का साथ छोड़कर बादशाह के गुट्ट में मिल जाने के लिये तैयार है-केवल चाहता यह है कि जितना इलाका दबा लिया है वह भरतपुर राज्य में मान लिया जाय। कुछ तै न हो पाया!

सफ़दरजंग धीरे धीरे पीछे हटने लगा। मराठों ने उसकी छावनी की पिछाड़ी का लूटना प्रारम्भ कर दिया। बादशाह के पास वेतन देने के लिये कुछ था नहीं इसलिये उन लोगों ने लूटमार से पेट भरा। रुहेलों, बलूचियों और गूजरों को भी यही करना पड़ा। खास दिल्ली नगर में दिन दहाड़े बादशाह के सिपाही लूटमार कर उठे।

फिर एक बड़ी लड़ाई हुई। हरावल में बादशाह की ओर से मराठे और सफदरजंग की ओर से जाट तथा गुसाईं। घमासान हुआ, परन्तु बाजी बराबर रही।

शिहाब और नजीब बादशाह के पास पहुँचे। उसे सुझाया कि यदि वह किसी भी ठाठ बाट से सिपाहियों को दर्शन दे दे तो वे विजय को सामने ला खड़ा कर देंगे। बादशाह ने जमुहाइयां लीं, आनाकानी की, फिर मान गया।

बादशाह को बांदियों ने कपड़े पहिनाये, बेगमों ने जिरहबख्तर चढ़ाये। एक बांदी शराब की सुराही कटोरी ले आई और दूसरी सोने का जड़ाऊ हुक्का और चांदी की चिलम भर लाई। बादशाह ने शराब पी, हुक्का गुड़गुड़ाया। अब लगी कपड़ों और जिरहबख्तर के बोझ के मारे गरमी। उतरवाकर अलग किये। खाइयों में अफसर और सिपाही उत्कण्ठा के साथ प्रतीक्षा करते रहे।

लगभग एक महीने तक बादशाह को रंगमहल के बाहर निकलने का अवकाश नहीं मिला। एक काम अवश्य हो गया—सफदरजंग को वजीर पद से निरत कर दिया गया। शिहाब वजीर नहीं बनाया गया क्योंकि आयु का कच्चा था। एक दूसरा सरदार वजीर नियुक्त कर दिया गया। अब तक की लड़ाई और उसके प्रबन्ध के श्रेय ने शिहाब के भीतर आत्म-विश्वास उत्पन्न कर दिया था और आगे के मार्ग को स्वच्छ कर डालने की सूझबूझ।

सूरजमल ने पहले बादशाह के पास और फिर शिहाब के पास अपनी ओर से सन्धि का प्रस्ताव भेजा। वह असफल रहा। बादशाह ने

सब झंझटों से निवृत्ति पाने का एक सरल सहज उपाय ढूंढ निकाला—चुपचाप सफदरजंग के पास सुलह की चिट्ठी भेज दी ! परन्तु वह शिहाब के हाथ पड़ गई !!

बादशाह ने जयपुर के राजा माधवसिंह को बीच-बचाव करने के लिये बहुत आग्रह के साथ बुलवाया और बालाजी पेशवा को लिख भेजा—'मैं आपके लड़के के बराबर हूं, मुझे बचाइये।'

माधवसिंह पहले आया। उसने युद्ध बन्द करवा दिया। बादशाह ने सफदरजंग को खिलत बख्शी। शिहाब को यह भी मालूम हो गया।

शिहाब ने बादशाह को सफ़दर के पास भेजी हुई चिट्ठी दिखलाई। कहा,—'जहांपनाह ने मेरी पीठ मे छुरी भोंकी है !'

'बिलकुल जाली है, इस पर मेरे दस्तखत नहीं हैं।'

शिहाब ने उस समय इस झूठ को निगल लिया। सफदरजंग अवध की सूबेदारी के लिये लखनऊ चला गया। दिल्ली बादशाह और शिहाब के द्वन्द में पड़ गई। बादशाह की नकेल वजीर के हाथ में थी और सेना का बल शिहाब के हाथ मे। इसी सेना में नजीब था। नजीब को दुआब और गंगा पार का एक बड़ा इलाका जागीर मे दे दिया गया। वह अपने मन्सूबे गाठने और बल बढ़ाने के लिये अपनी नई जागीर मे चला गया।

सूरजमल बादशाह का पक्षपाती बना रहा, क्योंकि इसमें कुछ लेना-देना न था। शिहाब ने सूरजमल से कर मांगा। उसने नाहीं कर दी। शिहाब लड़ गया।

दक्षिण से पेशवा की भेजी हुई सेना रघुनाथराव (राघोबा) और मल्हारराव होलकर के नायकत्व मे आ गई। जाटों के झगड़े को लेकर शिहाब और बादशाह के बीच चल पड़ी। शिहाब जाटों के दवाने में दिल्ली से कुछ दूर निकल गया। उसी समय मराठी सेना का एक दल दिल्ली में आया था।

इस दल का नायक मल्हारराव का पुत्र खण्डेराव था। इस दल को अपनाने के लिये बादशाह और शिहाब में प्रतिद्वन्द्वता हुई।

वजीर ने खंडेराव के पास अपना एक विशेष प्रतिनिधि भेजा।

खंडेराव उद्धत प्रकृति का था। उसने मिलने से इनकार कर दिया। कहलवाया,—'मेरे पिता मल्हार जी ने मीरबख्शी शिहाबुद्दीन इमादुलमुल्क के पास मुझे भेजा है। किसी और से कोई सरोकार नहीं।'

बादशाह और वजीर ने तब बाईस हजार मुहरें नजर के तौर पर पहुँचाई।

खंडेराव ने क्षोभ के साथ कहा, 'मैं बादशाह या वजीर का नौकर नहीं हूँ। ले जाओ ये सोने के टुकड़े और खिलत यहां से।'

प्रतिनिधि ने अनुनयपूर्वक प्रतिवाद किया, 'बादशाह सुल्तानों के सुल्तान और महाराजों के महाराज हैं। मीरबख्शी तो केवल उनके नौकर ही हैं।'

'सुल्तानों का सुल्तान होगा, परन्तु महाराजों का महाराज नहीं हो सकता।'

'दिल्ली की गद्दी अकबर, शाहजहां और औरंगजेब की है। इस बात का आपको ख्याल रखना चाहिये।'

'और मैं महाराष्ट्र से आ रहा हूँ जहां हर एक सिपाही के झोले में गद्दियां पड़ी रहती हैं।'

'आपको दिल्ली में आकर कम से कम शिष्टाचार तो सीखना चाहिये।'

'तुम्हारे यहां शिष्टाचार का क्या कोई अलग विभाग है? हमारे यहां यह काम ब्राह्मणों के सिपुर्द है।'

'क्या आपकी भाषा में आपका भी शब्द नहीं है?'

'हमारी भाषा में बराबरी का दावा पेश करने वाले तुम और तू हैं। उन्हीं में हमारा परस्पर आदर-सत्कार, स्नेह-प्रेम, मोह और ममत्व सोते और खेलते रहते हैं। अब तुम्हारे यहां की ईरानी तुर्की बनावट हमारी भाषा में कुछ लोग ला रहे हैं, परन्तु हमारे सन्तों की वाणी जो कविता में है इस बनावट से बिलकुल बची हुई है।'

'तो क्या आपकी जबान मे देहाती बोली की कसरत है ?'

'हां, ठीक उसी तरह जैसा तुम्हारी भाषा के ऊपर विदेशियों का बोझ और बनावटी शान की कलई है। अब जाओ, मैं अधिक बात नही करना चाहता।'

वजीर के प्रतिनिधि ने फिर फुसलाया, 'आपकी ठेठ बातें मुझको बहुत पसन्द आई। बादशाह सलामत को भी बहुत भली लगेंगी। आप उनके मुजरे के लिये चलिये। बादशाह सलामत थोड़ी सी मराठी भी जानते हैं।'

खंडेराव ने अभिमान के साथ कहा, 'भाषा विज्ञान पर चर्चा करनी हो तो पेशवा के भाई रघुनाथराव आ रहे हैं, उनसे करले तुम्हारा बादशाह। राजकाज की बात करना हो तो मेरे पिता मल्हार जी आ रहे हैं, उनसे बात करले। मैं तो सिपाही हू। मुझको बादशाह से कोई बात नही करनी है।'

खंडेराव ने न तो बाईस हजार मुहरों की नजर स्वीकार की और न देहाती प्रयोगों को छोड़कर दरबारी भाषा का उपयोग किया।

राजपूताना मे चौथ की कर्कश वसूली का तहलका मचाकर शेष मराठी सेना भी राघोबा और मल्हारराव होलकर के साथ दिल्ली आ गई। इन्होंने आते ही शतरंजी खेली – कभी बादशाह को झटका दिया, कभी शिहाब को। अन्त मे शिहाब का पक्ष ग्रहण कर लिया।

सूरजमल के ऊपर आक्रमण किया गया। वह विकट लड़ाई लड़ा। कुम्मेर के किले पर आक्रमण करने मे खन्डेराव मारा गया—यह प्रसिद्ध रानी अहिल्याबाई का पति था। अन्त में सूरजमल को मराठों से सन्धि करनी पड़ी। दो करोड़ रुपये नकद और तीस लाख तीन किस्तो मे देने का वचन. सूरजमल के मत्थे पड़ा। दो करोड़ रुपयों का शिहाब और मराठों के बीच समान भाग बांटा जाना तै पाया। शिहाब ने शाही फौज के वेतन मे अपने रुपये में से कुछ नहीं दिया। फौज ने दिल्ली शहर को फिर लूटा—टीकाटीक दोपहरी में।

बादशाह और उसके वजीर ने एक षडयन्त्र रचा—वे दिल्ली से मराठों को निकालना चाहते थे। राजपूताना के राजाओं का संघ बनाने की योजना बनाई गई जिसमें रुहेलों और पञ्जाब के ईराकी, अफगानी और बलूची सरदारों के भी मिलाने की बात थी।

राजपूतों से कहा गया,—'तुम्हारी भूमि को ये दक्षिणी लुटेरे रौंद कर यहां आये हैं और आगे हर साल रौंदते रहेंगे।' इस संघ में सफदरजंग को भी मिलाये जाने की बात निश्चत हुई। पत्र लिखा गया।

शिहाब को मालूम हो गया। उसने तुरन्त प्रतीकार किया। महल की कोई भी बात छिपी न रहती थी। बांदियों को मालूम हुई—हिजड़ों खवासों के कान में पड़ी और फैल गई। शिहाब ने बादशाह से हठपूर्वक अनुरोध किया,—'सफदरजग को अवध की सूबेदारी से हटा दीजिये और उसका सारा खजाना जब्त करके सिपाहियों में बांट कर किस्सा पाक कर दीजिये।'

शिहाब के पन्जे से बचाने के लिये वजीर ने बादशाह को पूरे हरम और साज सामान के साथ सिकन्दराबाद खिसका दिया, जहाँ आशा थी कि सूरजमल इत्यादि की सहायता सुलभ हो जायगी। सिकन्दराबाद पहुँचने पर रात के दो बजे शिहाब ने शाही डेरे पर मराठों का आक्रमण करवा दिया। अंधेरी रात थी। डेरे की बड़ी दुर्गति हुई। बहुत से नर नारी हताहत हुये। हरम की स्त्रियां इधर उधर मारी मारी फिरीं। मल्हारराव होलकर को जब विदित हुआ कि उसकी कैद में हरम की बेगमें और बांदियां पड़ गई हैं तब उनकी रक्षा का प्रबन्ध करके सम्मान के साथ दिल्ली भेज दिया। बादशाह भी दिल्ली लौट आया! संघ निर्माण की योजना उस अंधेरी रात में बुझ गई।

बादशाह के पास शिहाब उस्ताद अकीबत मुहम्मद पहुंचा। उसने बादशाह को विश्वास दिलाया,—'जहांपनाह मीरबख्शी शिहाबुद्दीन को वजीर बना दें और किले में पड़े पड़े आराम करें। मराठे उनके दायें हाथ हैं, कोई खुटका न रहेगा।' बड़ी बड़ी सौगन्धों पर यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया गया।

(८)

दिन निकलने के पहले से ही गरम हवा चलने लगी, उतरते जेठ के दिन थे। एक पहर उपरान्त लू और बढ़ गई। बादशाह महमदशाह दीवान खास में तख्त ताऊस की नकल पर बैठा हुआ था। शिहाब आया और उसने झुक झुक कर ताजीम की। उसके चेहरे पर अब भी कुछ मनोहरता थी, परन्तु उसके निकट अतीत के इतिहास ने एक बड़ा भयानक चित्र बादशाह के मन में कौंधा दिया। आज शिहाब को बादशाह के हाथों प्रधान मन्त्री का पद, खिलत इत्यादि मिलनी थी।

बादशाह ने कुरान शरीफ की एक प्रति मंगवाई जो औरंगजेब के हाथ की लिखी हुई थी। यह प्रति शिहाब के हाथ में दी गई।

बादशाह ने शिहाब से झीनी मुस्कराहट के साथ कहा, 'फिरंगियों के मुल्क में रिवाज है कि जब कोई सरदार वजीर मुकर्रर किया जाता है तब उसको वफादारी की कसम खानी पड़ती है रिवाज अच्छा है, और आज कल बेवफाई ज्यादा दिखलाई पड़ रही है तब उसकी जरूरत भी हमारे मुल्क में बहुत है।'

शिहाब के चिकने चेहरे पर शिकन नहीं आई। उसने झुककर तसलीम की, कुरान को हाथ में लेकर आंखों से लगाया और चूम कर बोला, इतने बड़े शाहन्शाह के हाथ की लिखी हुई यह पाक किताब है। इसकी हलफ से कहता हूँ कि हमेशा जहापनाह का वफादार रहूंगा।'

बादशाह को एक बार की सौगन्ध से विश्वास नहीं हुआ।

शिहाब ने कई बार सौगन्ध खाई। अपने बाप की रूह और अपने 'प्यारे से प्यारे' की कसमें खाईं। बादशाह ने उसको वजीर पद का परवाना दिया और खिलत बख्शी। परस्पर नजर न्योछावर के बाद शिहाबुद्दीन वजीरुलमुल्क किले के उस भाग में गया जहां मुन्शी लोग दफ्तर के काम के लिये बैठते थे। वहां उसने दस्तूर निभाने के लिये कुछ

कागजों पर हस्ताक्षर किये। इसके बाद वह एक कोठे में अलग गया। अपने उस्ताद अकीवत को बुलवाया।

उस्ताद से बोला, 'किले के भीतर अपनी बदख्शानी फौज के अलावा और भी कोई दस्ता है ?'

'नहीं हुजूर।' उस्ताद ने अदब के साथ कहा, 'छोटे मोटे दस्ते महदियों और हुजरों के हैं जो नहीं के बराबर हैं। अपनी बदख्शानी फौज के अलावा होलकर की मराठी फौज भी है जो कुछ बाहर है और कुछ भीतर।'

'काम इत्मीनान के साथ किया जा सकता है ?'

'बिलकुल इत्मीनान के साथ सरकार।'

'तो देर मत लगाइये। लू तेज होने ही वाली है ? सिपाही खाने पीने और आराम की तरफ रुझान करेंगे। फौरन पचास बदख्शानियों को भेजकर शाहजादा अजीजुद्दौला को ले आइये।'

'जो हुकुम।'

कह कर अकीवत वहां से चला गया और शाहजादा अजीजुद्दौला को लिवा लाया। यह शाहजादा औरंगजेब का प्रपौत्र था। अभी तक किले के भीतर वाले कैदखाने में पड़ा था—जहां बादशाह के कुटुम्बी इस डर के मारे कैद रखे जाते थे कि कहीं शाही तख्त के छीनने के सपने न देखने लगें। शाहजादे के आते ही शिहाब ने बहुत झुक झुक उसको कई बार सलाम किया और बोला,

'बादशाह गाजीउद्दीन सुलताने सलातीन शाहन्शाह आलमगीर सानी* जिन्दाबाद !'

हाल का छूटा हुआ कैदी अजीजुद्दौला बावन साल का दुबला पतला पीला मनुष्य था।

फीकी मुस्कान के साथ उसने जयकार का उत्तर दिया, मुबारबाद अजीजुद्दौला मीर शिहाबुद्दीन खां इमादुल्ला।'

---

*सानी = द्वितीय। पहला आलमगीर औरंगजेब था।

आलमगीर द्वितीय के सिर पर जरी की छतरी तानी गई और उसको दीवान आम ऊँचे तख्त पर बिठला दिया गया। शिहाब के बदख्शानियो ने जयजयकार किया।

नये बादशाह ने जो सबसे पहला काम किया वह था बादशाह अहमदशाह को गिरफ्तार करवा कर, सामने हाजिर किया जाना।

अहमदशाह को पहले ही सूचना मिल गई थी। वह अपने हरम मे भागा और वहा से रग महल के सामने वाले बगीचे की एक झुरमुट मे। वहीं उसकी मा भी छिपी हुई थी। सिपाहियो ने दोनों को पकड़ कर पास के एक कोठे मे कैद कर दिया। लू बहुत तेज हो गई थी। अहमदशाह प्यास के मारे बेताब हो गया। कैदखाने के दरोगा ने उसको फूटे हुये घड़े के एक ठीकरे में पानी दिया।

मराठी सेना को भी समाचार मिल गया। पिछले कर की बाकी के वसूल होने की पूरी आशा हो गई। शिहाब पर तकाजे किये। परन्तु उसी समय दक्षिण से ताराबाई के फिर सिर उठाने और निजामअली निजाम के साथ पुनः युद्ध छिड जाने की सूचना आई। नये बादशाह से दुआब का एक बड़ा भाग उनको जागीर में मिल गया, परन्तु इस भाग पर नजीब रुहेला और अवध के नवाब का चल विचल अधिकार और पक्का दावा था। सफदरजंग मर गया था, उसका लड़का शुजाउद्दौला नवाब हो गया था। ऐसी परिस्थिति मे ध्यान को दक्षिण की ओर मोड़ना पड़ा। दिल्ली मे थोड़ी सी मराठी सेना रही। बडा अश मालवा की ओर चला गया। लडाई हो पडी। परस्पर युद्ध और निजामअली से भी खटपट। इन मुठभेड़ों में माधवजी को भी भाग लेना पड़ा। उनके रण-कौशल की कीर्ति मिली। युद्ध की चिन्ताओ के बीच उन्हें उत्तर से समाचार मिला कि बडे भाई जयप्पा को जोधपुर में कतल कर दिया गया है। उस समय वे पूना में थे।

(६)

छै सात वर्ष पहले मारवाड़ में धोखे से सैकड़ों मराठों को मार डाला गया था। उस बार होलकर की सेना का एक अंश नष्ट कर दिया गया था। अबकी बार सिंधिया की भी हानि हुई। परन्तु जयप्पा के मार डालने से मारवाड़ के राजपूतों को कोई लाभ नहीं हुआ। जयप्पा के साथ उसका लड़का जनकोजी वहां था और भाई दत्ता जी। दत्ता जी ने तुरन्त जनकोजी को जयप्पा का उत्तराधिकारी घोषित करके मराठा सेना को संगठित और तत्पर कर दिया।

पेशवा दक्षिण मे निजाम की उलझनो में बीधा हुआ था। मैसूर में हैदरअली ने भी अपने हिन्दू स्वामी को अलग करके सिर उठाया और मराठों को एक नई चिन्ता दी। पंजाब से अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण का समाचार आया। शिहाबुद्दीन को सफदरजंग के विरुद्ध सहायता देने के बदले मे मराठों का बहुत ऋण चुकाना था। शिहाब ने पंजाब की चौथ जागीर इत्यादि का प्रलोभन देकर पेशवा से सेना भेजने के लिये अभ्यर्थना की। नकद रुपया तो थोड़ा ही दे सकता था, परन्तु पूरा पंजाब चौथ और जागीर के लिये पेश किया। रघुनाथराव उत्तर से खाली हाथ लौट आया था। पेशवा की गांठ मे सेना का खर्च चलाने के लिये रुपया न था। बंगाल और उड़ीसा से रुपया नहीं मिल सकता था, क्योंकि वह क्षेत्र भोंसले का था। रुपया माधव जी के पास भी न था।

माधव जी के सामने ही पेशवा ने अपनी आर्थिक कठिनाइयों का बखान करते हुये रघुनाथराव से कहा, 'आशा थी कि तुम दिल्ली से रुपया लाओगे। सो तुम रीते हाथ लौटे!'

रघुनाथराव तिनक कर बोला, 'वहाँ हम लोगो को थोड़े दिन और ठहरने देते तो सूरजमल जाट से काफी रुपया मिल जाता,' परन्तु यहां दक्षिण की लड़ाइयो मे जो बुला लिया।'

पेशवा ने भर्त्सना की, 'तुमने उत्तर में जाकर बेहिसाब रुपया फूका है। गांठ का उड़ा कर बराबर कर दिया और सूरजमल इत्यादि के वादों को खीसे मे रख कर लौट आये ! कम से कम अपना खर्च तो दिल्ली के रुपये से चला लेते।'

रघुनाथराव ने जलकर कहा, 'तो उत्तर भारत में जाकर स्वयं सेना का संचालन करो न। मैं आगे उत्तर पथ पर पैर न रखूंगा चाहे पृथ्वी इधर की उधर हो जाय।'

पेशवा माधव जी की ओर देखकर बोला, 'सिपाही और सिपाहियों के नायक तो बहुत मिल सकते हैं, परन्तु माल और दीवानी का काम करने वाले बहुत कम। तुम पूना मे रहकर बहुत अधिक काम कर सकते हो।'

रघुनाथराव महत्वाकांक्षी और अभिमानी था। उसने देखा पेशवा ने मनाया नहीं और माधव जी सरीखे युवक और छोटे अफसर को दाद दी। रघुनाथराव ने माधव जी की ओर बिना देखे हुये ही कहा, 'अब मैं पूना के बाहर नही जाऊँगा।'

पेशवा ने सोचा भले निबटे। बोला, 'मैं तुम्हारी इच्छा पूरी करूंगा। तुम माल-विभाग को जिस प्रकार चाहो चलाओ। मैं निश्चित हुआ।'

माधव जी ने धीमें स्वर मे पूछा, 'मेरे लिये क्या आज्ञा है ?'

पेशवा ने उत्तर दिया, 'तुम मालवा, राजपूताना होते हुये दिल्ली और पन्जाब की ओर जाओ। दत्ता जी और मल्हारराव होलकर के साथ काम करो।'

माधव जी ने सिर झुकाकर स्वीकार किया। रघुनाथ को यह सब बहुत गड़ गया। वह अपने इस अपमान को कभी नही भूला। रघुनाथराव को माल विभाग का प्रबन्ध हाथ में लेना पड़ा। सदाशिवराव भाऊ और माधव जी को उत्तर की ओर जाने की आज्ञा मिली।

रघुनाथराव के दीवान होते ही किसानों के साथ कठोरता का बर्ताव बढ़ गया। बेगार की प्रथा पहले से जारी थी ही, अब वह किसानों के लिये दुस्सह हो उठी। छोटे छोटे से जागीरदार और माल के साधारण अफसर भी रिश्वतखोरी में डूबने लगे।

(१०)

सदाशिवराव भाऊ और माधवजी उत्तर भारत की ओर प्रस्थान करने की तैयारी करने लगे। उन्हीं दिनों निजामअली निजाम ने अपने एक अफसर इब्राहीम खां गार्दी को सेना से बरखास्त कर दिया। इब्राहीम गार्दी फ्रान्सीसी जनरल बूसी के नीचे सेना में एक अच्छे पद पर रहा था। इसीलिये गार्दी कहलाता था। वह फ्रान्सीसी भाषा सीख गया था। ऊँचे परिवार का आदमी था। निजामअली से बिढकर उसने पेशवा की नौकरी करने की प्रार्थना की। सदाशिवराव भाऊ और माधवजी चाहते थे कि मराठों की एक बहुसंख्यक सेना यूरोपियन ढंग पर तैयार की जाय। पेशवा ने इब्राहीम को नौकरी में ले लिया। इब्राहीम ने मांगा, 'मेरे सिपाहियों को हर महीने ठीक समय पर वेतन मिल जाया करे, सरकार। मैं दस हजार सिपाहियों की पैदल पल्टनें बनाऊँगा। युद्ध के समय इन सिपाहियों के सहयोग के लिये इनकी गिनती के एक चौथाई यानी ढाई हजार घुड सवार चाहने पड़ेंगे। बन्दूकें संगीन वालो, और मझोली तोपें।'

पेशवा ने स्वीकार किया, परन्तु जब व्यय का कूता लगाया, तब पेशवा का कलेजा धसने लगा। बोला, 'इतना रुपया तो हम अपने तीस हजार सिपाहियों पर भी खर्च नहीं करते !'

इब्राहीम ने नम्रता के साथ कहा, 'हुजूर आपके वे तीस हजार सिपाही लूटमार कितनी करते हैं! उस लूटमार से नियम संयम और आपका कितना समय बरबाद नहीं होता!! और फिर सीखी-सिखाई और अदब कायदे में ढाली हुई थोड़ी सी फौज का ये तीस हजार जवान बहुत बहादुरी दिखलाते हुये भी कितनी देर सामना कर पाते हैं? आपको अपनी हरएक जीत कितनी महँगी नहीं पड़ती है ?'

बालाजीराव पेशवा सोचने लगा।

निजामअली के साथ सन्धि हो गई थी, परन्तु फ्रांसीसी षड्यन्त्र उसको फिर उखाड़ पछाड़ रहा था और उसके बन्धु बान्धव, अर्बी हब्शी विदेशी सैनिक और ताराबाई के साथ सम्पर्क रखने वाले उसके हिन्दू जागीरदार जिनको पेशवा से अपना कोई न कोई पुराना वैर भी भुनाना था, उनको बराबर उभाड़ रहे थे। उधर मैसूर को हड़पने वाला हैदरअली कर्नाटक को कुरेदता कतरता हुआ बढ़ रहा था युद्ध अनिवार्य था।

पेशवा ने आश्वासन चाहा, 'निजामअली के खिलाफ लड़ सकोगे? हिचकोगे तो नहीं?'

इब्राहीम ने कुरान की शपथ लेकर कहा, 'हुजूर मेरी वफादारी जब चाहें तब तौल लें। वजन में उसको कभी कम नहीं पावेंगे।'

पेशवा ने इब्राहीम को नौकर रख लिया, और, जैसा इब्राहीम ने चाहा था, लगभग दस सहस्र की सख्या में पैदल पल्टनें तैयार करने का अधिकार दे दिया।

माधवजी इब्राहीम गार्दी की सब क्रियाएं ध्यान के साथ परखते रहे।

थोड़े ही दिनों उपरान्त निजामअली से पेशवा की टक्कर हुई। इब्राहीम ने पूरी स्वामि-धर्म निभाई। निजामअली हारा। कुछ दिनों के लिये सन्धि हो गई।

फिर पेशवा को हैदरअली से लड़ जाना पड़ा। सदाशिवराव भाऊ ने साठ सहस्र योधा लेकर हैदरअली को श्रीरंगपट्टम में जा घेरा। माधवजी का उत्तर की ओर जाना स्थगित हो गया, परन्तु उनकी अन्तर्दृष्टि उत्तर की ओर लगी हुई थी। उत्तर के नाम से ही कल्पना को स्पन्दन मिल उठता था। हैदरअली से मराठे कुछ छोटे युद्धों में हारे और दो बड़े बड़े युद्धों में जीते। उत्तर की टकार ने उनका ध्यान विभक्त किया। अब माधवजी का उत्तर की ओर जाना आवश्यक हो गया।

(११)

पन्जाब नाम मात्र के लिये दिल्ली बादशाही का सूबा था। शाह आलम द्वितीय के बादशाह होने के समय अहमदशाह अब्दाली पन्जाब का कर वसूल करने लगा था। लाहौर का सूबेदार पंजाब में तुर्की और पठान सिपाहियों की सहायता से शासन चला रहा था और उन्हीं के सहारे उठते हुये सिक्खों का दमन करता रहता था। दिल्ली के साथ उसका एक सम्बन्ध था—उसकी लड़की, उम्दा बेगम, की सगाई शिहाबुद्दीन के साथ छुटपन में हो गई थी। दिल्ली से और कोई बड़ा नाता न था।

सूबेदार के मरने के बाद उसकी विधवा, मुग़लानी बेगम ने सूबेदारी संभाली, और अपने को ऐश आराम मे घोलने लगी। उसकी दुश्चरित्रता की कहानियां फैलने लगीं। उसका पति भरा हुआ खजाना छोड़ ही गया था। अफ़ग़ानिस्तान के अहमदशाह अब्दाली की विशाल सेना थी उसकी पीठ पर!

परन्तु कुछ सरदारो ने सिक्खों की सहायता से विद्रोह किया। उस समय अब्दाली कई अफ़गानी कबीलों के विरोध-दमन में लगा हुआ था। इसलिये मुगलानी बेगम की सहायता के लिये न आ सका।

शिहाब ने सोचा, पञ्जाब को फिर दिल्ली की सल्तनत में मिला लेने का अवसर आ गया। उसके पास बारह हजार बदख्शानियो की सेना थी ही, नजीबखाँ के हाथ मे रुहेले थे और मराठों की असंख्य सेना दूर न थी।

परन्तु गांठ में रुपये न थे और बदख्शानी फ़ौज को महीनों से वेतन नहीं दिया गया था। एक करोड़ से ऊपर कञ्जूस बाप का रुपया था, लेकिन वह उसको सुरक्षित रखना चाहता था। उस्ताद अक़ीवत से सलाह की।

अक़ीवत ने सम्मति दी, 'हुजूर एक करोड़ रुपया बिलकुल आसानी के साथ इकट्ठा किया जा सकता है।'

'कैसे ?', शिहाब ने बिना कोई आशा की प्रफुल्लता प्रकट किये हुये पूछा।

उस्ताद ने आत्म-विश्वास के साथ उत्तर दिया, 'हर एक आदमी से दो दो रुपये उगाहे जावें। बात की बात में एक करोड़ से ऊपर वसूल हो जावेगा।'

शिहाब ने कहा, 'मुश्किल मालूम होता है। कैसे वसूल होगा ? कौन वसूल करेगा ?'

अकीबत बोला, 'मैं सरकार, मैं वसूल करूँगा ?'

शिहाब ने ताकीद की, 'तो जल्दी करिये। बदख्शानियों की तनखाह बेबाक करिये और पंजाब पर हमला।'

अकीबत ने आँखें चलाईं और होंठ बिरबिराये। फिर मुस्कराकर कहा, 'हुजूर को पंजाब के फतह करने में कोई दिक्कत नहीं पड़ेगी। मुगलानी बेगम यों ही शिकार हो जाने को तैयार हैं। सरकार की सगाई हुये एक जमाना हो गया है। अब वक्त आ गया है।'

शिहाब को यह संकेत बहुत खला। मुगलानी बेगम की दुश्चरित्रता की कहानियां बहुत कुख्यात हो चुकी थीं। वह उसकी लड़की उम्दा बेगम के साथ विवाह नहीं करना चाहता था। परन्तु मुगलानी बेगम को धोखे में डाले रखना था, इसलिये उसने अकीबत के साथ विवाद नहीं किया। बोला, 'अभी वक्त नहीं आया है। देखा जायगा। आप रुपया वसूली का फौरन इन्तजाम करें।

अकीबत हर्ष मग्न होकर अपने इस काम में लग गया। रुपया उसने काफी इकट्ठा किया, परन्तु एक करोड़ न हो सका। बड़ी रकम अपनी अण्टी में दबाई और लगभग एक लाख रुपया शिहाब के पास भेज दिया। यह रुपया बहुत सता सताकर वसूल किया गया था।

इतने रुपये से होता क्या था ?

अकीवत अपनी सफाई देने और धन-संग्रह की किसी नई योजना को मुझाने के लिये शिहाब के पास जा रहा था कि बीच में कुछ बदख्शानी सिपाही मिल गये। उन्होंने घेर लिया।

एक बोला, 'शरम नही आती खा खाकर मोटा पड गया है जब कि हम लोग भूखों मर रहे हैं ! दे हमारी तनखाह।'

दूसरे ने कहा, 'हमारे नाम से रुपया वसूल किया और लूटकर घर मे रख लिया है। देता है या लगाऊँ लातें ?'

अकीवत हक्का बक्का रह गया।

'मारो दगाबाज को। वैसे नहीं देगा।'

'करो मरम्मत बेईमान की।'

'इसी ने तो दिल्ली को परेशान कर रखा है।'

'कुलीगीरी करें हम और नवाबी करे यह !'

अकीवत ने घिघियाकर कहा, 'भाईजान, आपकी तनखाह के बन्दोबस्त मे ही तो नीद और आराम हराम हो गए हैं। वजीर के पास रुपया भेज दिया है। आपको अभी मिलता है।'

हमको मालूम है कितना वजीर के पास भेजा है और कितना तुम खा गये हो।'

'शैतान कही का।'

'मारो ! तोड़दो इसके दात !!'

सिपाही अकीवत पर चिपट पड़े और बहुत मारपीट की। उसके कपड़ो की धज्जियां कर दीं। कुछ बदख्शानी अफसरो ने बीच बचाव कर दिया नही तो वहीं घूसो और लातों से ही मार डाला जाता।

उसी दशा मे वह शिहाब के पास गया।

उसकी मारपीट की कहानी संक्षेप में सिहाब के कानों पहले ही पहुँच गई थी।

शिहाब के ऊपर उसके बिसूरने का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। शिहाब ने कहा, 'बदख्शानियों की तनख़ाह क्यों नहीं दी ?'

उसने उत्तर दिया, 'रुपया तो हुजूर के पास भेज दिया, मैं कहां से देता ?'

'क्या मेरे पास सबकी सब वसूली भेज दी है आपने ?'

'और नहीं तो क्या ?'

'और नहीं तो क्या ! आप बहुत पाजी और बेशरम हैं !! आपने यह नौबत क्यों आने दी जिसमें आप पीटे गये और मेरी बदनामी हुई ? लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे—वजीरुद्दौला का खास आदमी वजीरुद्दौला के फौजियों के ही हाथों पीटा गया ! मेरी बड़ी रुसवाई हुई ! बहुत बेइज्जती !!

'रुसवाई और बेइज्जती तो मेरी हुई है, सरकार आप का क्या बिगड़ा है ?'

शिहाब बदख्शानियों को दण्ड नहीं दे सकता था। बेइज्जत किये हुये अपने उस्ताद और खास आदमी को स्वतन्त्रता के साथ घूमने देना अपमान की मानो घूमती हुई पुस्तक के प्रचार के समान था। ऐसी परिस्थिति में उसने एक सहज सरल उपाय ढूँढ निकला। बदख्शानी प्रसन्न हो जायँगे, रौब बैठ जायगा और उस्ताद का जमा किया हुआ निजी रुपया हाथ आ जावेगा।

वहीं उसके कुछ अफगान अफसर खड़े थे। शिहाब ने उनसे कहा, 'फौरन इस बला को पाक करो। अब यह जिन्दा रहने का हकदार नहीं।'

प्राणों की भिक्षा मांगने के पहले अफग़ान अफसरों के खन्जर म्यान से बाहर निकल पड़े और अकोबत की छाती में धंस गये। वह उसी स्थान पर तुरन्त मर गया।

(१२)

इसके उपरान्त शिहाब ने बदख्शानियों को कुछ दे लेकर कुछ फुसला कर मना लिया और पञ्जाब की ओर कूच कर दिया। बादशाह को भी साथ ले लिया। बादशाह अपने पूरे कुटुम्ब और हरम के साथ शिहाब के संग हो लिया।

धीरे धीरे कूच करता हुआ यह लश्कर पानीपत मे जा रमा।

बादशाह का अधिकांश जीवन कैदखाने मे बीता था, और उस जीवन का अधिकांश समय रोजा, नमाज, नियाज इत्यादि में। उसने औरंगजेब को अपना आदर्श बनाया था, परन्तु अत्याचार और दमन के लिये हिन्दू नहीं मिल सकते थे। यदि मन्दिर तोडता फोड़ता, हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाने का प्रयास करता, उन पर जजिया लगाता तो मुसीबतों पर मुसीबतें गर्दन पर चढ़ दौड़ती–मराठे, सिख, जाट और राजपूत। इसलिये उसने अपने उस आदर्श को शियों के सताने पर सीमित कर दिया। शिये सख्या मे थोड़े थे और सिवाय अवध के नवाब शुजाउद्दौला के उनका कोई बल भारत में था नहीं। शुजाउद्दौला से शिहाब की अनबन थी और वह दिल्ली की बादशाही का विद्रोही समझा जाता था। इसलिये उसकी कोई परवाह न थी। आलमगीर द्वितीय ने शियों को बहुत परेशान किया।

आलमगीर शराब नहीं पीता था। बहुधा बीमार रहता था, परन्तु अपने को पुरुषार्थी समझने और कहने का उसको बहुत अरमान था। बड़ी लगन !

वह स्त्रियों का बहुत प्यासा था ! यहां तक कि अपनी भतीजी तक पर आंख डालने से न चूका !! ब्याह के लिये कहा और जब वह सहमत न हुई तब उसे कैद में डाल दिया।

मुगलानी बेगम ने बादशाह और वजीर के पानीपत में आने का समाचार पाते ही नजरें, और वजीर के साथ अपनी लड़की उम्दा बेगम के विवाह का सन्देशा भेजा।

वजीर ने अपनी योजना तुरन्त बनाई। वह अपनी फौज को लाहौर भेजकर मुगलानी बेगम को पकड़ लेना चाहता था। इसके बाद पंजाब का राज्य एक सहज समस्या हो जाती। न मराठों की सहायता की आवश्यकता और न सिक्खों तथा जाटों को फुसलाने की अटक।

पंजाब में मुगलानी बेगम और अहमदशाह अब्दाली के विरुद्ध अदीना बेग नाम का एक मनचला और उठ खड़ा हुआ था। उसने एक लाख से ऊपर सेना और बहुत सी तोपें भी इकट्ठी कर ली थीं। सिक्ख उसका साथ दे रहे थे। अब्दाली ने अपनी ओर से एक नया सूबेदार लाहौर भेजा। मुगलानी बेगम ने लड़की को ब्याहने के सन्देशे के साथ-साथ शिहाब से स्वरक्षा के लिये भी प्रार्थना की। शिहाब ने सोचा, मुगलानी को पकड़ लेने से मार्ग का एक कांटा तो दूर हो जायगा; रह गया अदीना बेग, सो उससे निबट लिया जायगा या मेल कर लिया जायगा।

परन्तु योजना को कार्यान्वित करने के पहले ही एक बड़ा झंझट शिहाब के सामने आ गया—उसकी बदख्शानी फौज ने फिर वेतन न मिलने के कारण बलवा कर दिया।

शिहाब को सन्देह था कि सेना में उतने सिपाही हैं भी या नहीं जितने की तनख्वाह मांगी जा रही है! सेना के कप्तानों ने गिनती देने से नाहीं कर दी, क्योंकि उनकी पोल खुल जाती और बेईमानी से जेब भरने का द्वार बन्द हो जाता। अचानक ढाई सौ सिपाही शिहाब के निवास स्थान के सामने आकर जमा हो गये। बेहद रौरा मचाया। शिहाब अपने हरम के बाहर एक सलूका पहिने आया। सिपाहियों ने उसके ऊपर अचानक हल्ला बोल दिया और पकड़ कर घसीटते हुये बाजारों में ले गये। उसने भर्त्सना की, घराई बिनती की, परन्तु सिपाहियों ने एक न सुनी। बेहद शोर करते हुये उसकी प्रदर्शिनी करने लगे।

एक सिपाही बोला, 'यह है दिल्ली का वजीर ! मुफ्तखोरा !! हरामखोर !!!'

दूसरे ने कहा, 'कन्जूस का बेटा मक्खी चूस !'

'गरीब अकीवत को बेकसूर कतल करने वाला ! इसने हमको वरगला कर उसे पिटवाया था !!'

'रियाया को लूटने वाला !'

'गरीबों का खून चूसने वाला।'

'मक्कार, फरेबी दगाबाज !'

'मराठों का हिमायती और मुसलमानों का दुश्मन !'

'सिपाहियों का पेट और गला काटने वाला !'

'दिन रात औरतों में वक्त गुजारने वाला !'

'मारो हरामी को ! मारो !!'

सपाहियों ने उसके ऊपर धूल फेंकी। फिर चपतियाते हुये एक कोस अपने प्रधान अफसर के पास ले गये। वहां उसकी पिटाई होती रही और जो कुछ थोड़े कपड़े पहिने था उनकी धज्जियां उड़ा दी गईं। सिपाही चिल्ला रहे थे—अपने घर से हमारी तनखाह मगवाओ।'

जब आलमगीर ने सुना सिपाहियों को मना करवा। सिपाही पागल हो रहे थे। किसी की भी नहीं सुन रहे थे। शिहाब को एक सरदार किसी तरह छुड़ाकर हाथी पर बिठला ले आया। शिहाब ने घर पहुँच कर कपड़े बदले और रुहेलों को बदख्शानियों के ऊपर तुरन्त आक्रमण करने की आज्ञा दी, साथ में यह छूट भी दे दी कि बागियों की जिसको जितनी सम्पत्ति मिले लूट ले।

नजीब ने बागियों का दमन किया और किसी दिन शिहाब की छाती पर चढ़ बैठने का हौसला भी भर लिया। शिहाब के सामने सूरजमल के दमन की भी समस्या थी। इस पर उसने नजीब को लगाया। नजीब ने थोड़ी सी लड़ाई के उपरान्त सूरजमल से समझौता कर लिया। शिहाब ने पंजाब की ओर पुनः मुंह फेरा।

उसने अदीना बेग को मिला लिया और मुगलानी बेगम को पकड़ लिया। मुगलानी का सब सामान शिहाब ने लूट लिया और विवाह सम्बन्ध के बारे में मुगलानी से कहा, 'ऐसी बदचलन औरत की लड़की के साथ मैं शादी करके क्या अपना मुह काला करूँगा ?'

उम्दा बेगम सीधी सादी शकल की लड़की थी, उसकी गणना सुन्दरियो मे नही की जा सकती थी।

अहमदशाह अब्दाली के पास समाचार पहुचा। उसने एक बड़ी सेना लेकर आक्रमण किया। पेशावर के पूर्व मे आते ही अब्दाली ने पन्जाब मे आग और तलवार बरसानी शुरू करदी। लोग खेती-पाती, कारबार रोजगार छोड़ छोड़कर भागे। इसके आठ नौ बरस पहले अब्दाली ने पन्जाब पर आक्रमण किया था। उस समय सिक्खो ने डटकर और कसकर उसका सामना किया था। अब्दाली सिक्खो से जमी लडाई में हार कर लौटा गया था। फिर आया। इस बार सिक्ख आपसी झगड़ो के कारण इकट्ठे न हो सके। अब्दाली पुराने अनुभवो को ध्यान मे रक्खे था। उसका विश्वास था कि हिन्दुस्थान आग और घोर रक्तपात से ही दबाया जा सकता है, और उसके एक अंग को काट देने या जला देने से दूसरे अंग को पीड़ा नही पहुंचती !

(१३)

आलमगीर बादशाह ने, अपने नमूने, औरंगजेब के सारे आदर्शों का पालन न कर पाने के कारण अफीम खाना शुरू कर दिया और बदख्शानियों की सेना को तोडने के बाद शिहाब ने अधिक शराब पीनी आरम्भ कर दी। हरम मे ब्याहताओ और अनब्याहताओ की प्रचुरता थी ही।

उस घडी उसने थोडी सी ही पी थी। आखों मे खुमारी और मन मे कुछ शून्यता थी। ख्वाजा पैर सहला रहा था। बाहर हवा में कुछ गरमी थी, भीतर ठंडक।

ख्वाजा ने पैर की उङ्गलिया चटकाते हुये कहा, हुजूर पर कुरबान जाऊँ, कैसा सिन ! किस बला का जोहर !! कैसा हुस्न !!! कैसी सुडौल देह !!!! सरकार के लायक तो वह है—वही।'

'कौन ? ढली हुई आखो को जरा सा चमका कर शिहाब ने पूछा—

'मैं बल जाऊँ, हुजूर को दुनिया भर के हसीन औरत मर्दों का पता रहता है, क्या गन्ना बेगम का नाम नहीं सुना ?'

'गन्ना बेगम ! यह नाम तो नहीं सुना। कौन है वह ? कहा है ?'

'ईरानी नसल की है। बाप शायर, मा शायर। दिल्ली मे रहती है।'

'शिया होगी ? मगर कोई बात नही।'

'मा दिल्ली की एक मशहूर नाचने गाने वाली मन्ना बेगम है। मगर उसने एक सरदार के साथ निकाह कर लेने के बाद पेशा छोड़ दिया। लड़की गन्ना बेगम पेशा नहीं करती। उसकी अभी शादी नही हुई है।'

'हो भी गई हो तो हर्ज क्या है। तलाक हो जायगी। हरम मे दाखिल कर लेंगे।'

'हरम मे तो दाखिल हो ही जायगी। मुझे मालूम है अभी उसकी शादी नहीं हुई है। उसके बाप का कुछ रुहेला सरदारो से मेल है।'

'रुहेला सरदारों के साथ सिया का मेल ! खैर। देखूँगा। रुहेलों का इलाज जानता हूँ।'

'हुजूर गन्ना बेगम भी शायरी करती है। फारसी और हिन्दवी दोनों की, और गाती भी बहुत अच्छा है।

'तुमने सुना ?'

हुजूर के लिये फूलों की तलाश करते करते गन्ना बेगम वाले चमन मे भी पहुँच गया था। छिपे छुके उसको देखा और चुपचाप उसका रस कानों मे डाला। ऐसा हुस्न, ऐसा स्वर तो, सरकार, न कभी देखा और न कभी सुना। हुजूर देखकर बहुत खुश होंगे।'

'कहा रहती है वह दिल्ली में ?'

ख्वाजा ने गन्ना बेगम का पता ठिकाना, हुलिया सब बतलाया। शिहाब की आंखों से खुमारी चली गई। मन की शून्यता मे भरभराहट और मिचकिया आने लगी। अपने हरम मे इस फूल को लाने का मन में हठ पक्का किया। ख्वाजा इस प्रकार के काम मे कुशल था ही।

शिहाब ने कहा, 'जैसी बतला रहे हो उससे कम न निकले।' और चाहा कि ख्वाजा उसका वर्णन और भी बढ़ा चढ़ा कर करे।

ख्वाजा बोला, 'सरकार, गन्ना बेगम की एक एक नजर पर पांवड़े बिछाने पड़ेंगे और एक एक स्वर पर न्योछावरें। पलकें क्या हैं हुजूर, काले रेशम की बारीक डोरिया जिनसे वह··········'

'बके जा, बके जा। तू इसी तरह की तारीफ करने की आदत वाला है न।'

हुजूर अगर एक लफ्ज भी गलत पाया जाय तो मेरा सिर कलम करवा दें। उसकी पलको की बरोनियों पर नाज और नियाज खेलते रहते हैं।'

'ख्वाजा, मैं तुम्हारा यकीन करता हूँ।' मगर कही उस बीमार खबीस आलमगीर को न मालूम हो जाय। वह उसको अपने हरम में दाखिल करने के लिये दौड़ धूप कर उठेगा।'

तब हुजूर का इकबाल कहा जायगा ? सरकार को मालूम है कि सूरजमल की रंजिश में बादशाह सलामत भागीदार हैं। पहरे को कड़ा करवा दीजिये। खाने को रोटियां कुछ कम कर दीजिये, बादशाह गन्ना बेगम का नाम तो क्या लेंगे, याद भी कभी न करेंगे।'

तुमने ठीक कहा ख्वाजा। मैं आज ही बादशाह का पहरा कड़ा करता हूं। रोटी तो अभी कम नहीं करूंगा। जरूरत पड़ने पर देखा जायगा। अच्छा तो तुम्हारा अब पहला कदम क्या होगा ?'

'मैं उसकी मां से बातचीत करूंगा। वजीरुद्दौला, अमीरुलउमरा इमादउद्दौला और ऐसे खूबसूरत जवान के साथ कौनसी मां अपनी बेटी की शादी करने से इनकार करेगी ? शादी मैंने इसलिये कही कि शायद उसकी मां उसका महज बांदी बनकर रहना मन्जूर न करे।'

'तुम जो कुछ तै कर आओगे मुझको कबूल होगा, मगर देखो उसके हुस्न वगैरह में कोई फर्क न निकले।'

'उसकी बाबत मैं हुजूर से पहले ही अर्ज कर चुका हूं।'

शिहाब ने उसी दिन से बादशाह का पहरा कड़ा करवा दिया।

(१४)

मध्याह्न मे हवा कुछ गरम चली, परन्तु सन्ध्या के पहले भीनी सुगंधि, तरल वायु और आगरा की सड़क की चहल पहल में स्पर्द्धा-सी हो उठी।

सड़क किनारे की एक मझोली कोठी के बाहरी भाग में एक युवती धीरे धीरे टहलकर कुछ गा रही थी। खिड़कियाँ छोटी और थोड़ी सी थीं। लड़की लाल रङ्ग का रेशमी पैंजामा, नीले रङ्ग की कन्चुकी और धानी रङ्ग का दुपट्टा ओढ़े थी। वह अपने गाने में इतनी बेसुध सी हो हो जाती थी कि दुपट्टा सिर से खिसक खिसककर कन्धे पर आ आ जाता था। उसके चिकने प्रशस्त ललाट, भौंरे के जैसे काले और चमकीले केश और स्वर्ण जैसे रंग को संगीत की शुद्ध तानें उभार उभार देती थीं।

सड़क पर आनवान के साथ एक घुड़सवार निकला। घोड़ा बड़ा अबलक, और बहुत ही चमकीला। उसका एक एक रेशा थिरक रहा था। इस सवार के पीछे, कुछ अन्तर पर चार पांच सवार चले आ रहे थे। अबलक घोड़े का सवार साचे मे ढली हुई सी देह वाला था। बहुत पुष्ट बाहे और मान्सल कन्धे तथा भरी हुई छाती। मांसें भीग चुकी थीं। आंखें बड़ी बड़ी, रंग गोरा, जरा गेहुयेंपन की तरफ झुका हुआ, नाक सीधी और सिमटी, ठोड़ी महान हठ द्योतक। चौड़े माथे पर केसरिया रंग का रेशमी साफा बाधे था जिस पर दमकते हुये मोतियो की दो मालायें एक दूसरे से भेंट करती हुई सी आड़ी कसी थीं।

टापों की आवाज ने उस युवती का ध्यान गायन पर से उचटा दिया। वह खिड़की के पास आई। सिर खुला हुआ था, धानी रंग का दुपट्टा कन्धे पर आ गया था, और गले में पड़ी हुई मोतियों की माला लहर खा रही थी। बाहर से लाल रंग का पैंजामा थोड़ा थोड़ा दिख रहा था।

अबलक घोड़े के सवार ने खिड़की मे खडी हुई उस सुन्दरी को देखा। देखते ही उसकी आंख ठिठकी। युवती ने अपने सिर को खिड़की के पास से जल्दी हटाने के प्रयास में भी घुडसवार की आख पर अपनी बड़ी आखों की लम्बी बरौनियो की एक टक को बिठला दिया। वह खिडकी पर से हटते हुये भी कुछ वही बनी रही। सिर को अपनी अटारी मे एक पल के लिये घुमाया—कोई और तो नही है वहा फिर सवार को देखा—अब भी देख रहा है उसकी ओर या नही। युवक की दृष्टि अचल थी।

सवार ने यकायक झटका देकर घोड़े की लगाम खीची। घोडा पिछले पैरों खडा हो गया। उसके पीछे आने वाले घुडसवार निकट आ गये। युवती खिडकी की बगल मे थोडी सी हट गई। तिरछी होकर सवार को देखने लगी। सवार उतरा और घोडे को पुचकारने लगा। वह घोड़े के माथे और कण्ठ के ऊपर हाथ फेर रहा था, परन्तु आखें उसकी खिड़की की ओर थी।

पीछे वाले सवारों मे से एक ने आगे बढ़कर कहा, 'राजकुमार, घोडे का कोई दोष नही, आपने उसको झटका दिया इसलिये वह पिछले पैरो खड़ा हो गया।'

राजकुमार सम्बोधित व्यक्ति उपेक्षा के साथ बोला, 'घोडे के स्वभाव को मैं ज्यादा अच्छी तरह जानता हू।'

आखें उसकी बराबर खिडकी की ओर जा रही थी। उसके साथी सवार ने भी देख लिया, और उन आखो को भी जिनकी लम्बी बरौनियों से खिड़की द्वारा चमक-सी झर रही थी।

पीछे वाले अन्य सवार भी आ गये, उनकी आखें भी खिडकी की ओर गई। युवती खिडकी के पीछे से हट गई थी।

अबलक घोड़े का सवार अपना रुपहला कोडा वही छोडकर घोड़े पर चढ़ गया और आगे बढा। उसके साथी सवार भी, अन्तर के साथ पीछे पीछे हो लिये। थोड़ी सी दूर ही जाकर अबलक घोड़े का सवार

तुरन्त तेजी के साथ मुड़ा। साथियों से कहता गया, 'कोड़ा भूल आया हूं। उठा लाऊं।'

सवार फिर उस खिड़की के पास पहुंचा। खिड़की की ओर देखा। वहां कोई न दिखलाई पड़ा। घोड़े से उतर कर उसने कोड़ा उठाया। सवार होने को ही था कि धानी रङ्ग का दुपट्टा और लाल पैजामे का कुछ भाग दिखलाई पड़ा। अबकी बार धानी दुपट्टे से सिर ढका हुआ था, परन्तु उसमें होकर काली बड़ी आँखें सवार को उत्सुकता के साथ देख रही थीं। सवार को घोड़े पर न चढ़ पाने के लिये कोई कारण न था। चाहता था घोड़े पर से फिसल जाऊँ, गिर पड़ूँ, और वे आँखें उसको उसी प्रकार निहारती रहें।

सवार को वहां से जाना पड़ा। परन्तु जाते जाते वह इस प्रकार सिर हिला गया मानो कहना चाहता हो मैं फिर आऊँगा, जल्दी आऊँगा।

(१५)

रात अँधेरी। दो ढाई पहर बीत जाने पर भी चन्द्रमा का उदय नहीं हुआ था। आगरा की सड़कों पर सन्नाटा छाने को था। पहरुये इधर उधर मकानों के चबूतरों और बरामदों में बैठे हुये कोई हुक्का गुड़गुड़ा रहे थे, कोई ऊँघ रहे थे और कोई लेटे लेटे चिल्ला पड़ते थे—'जागते रहो।'

उस कोठी की खिड़की के नीचे कोई चलता फिरता आया। साथ में एक पुरुष था जो उससे कुछ फासले पर खड़ा हो गया। आगन्तुक ने खिड़की के नीचे खड़े होकर खासा।

राहगीर दिन में भी इस तरह के आने जाने वालों और उस प्रकार के खासने वालों की रोक-टोक करने का साहस नहीं रखते थे—कोई सरदार या मन्सबदार हुआ और टोकने पर कहीं उसने तलवार म्यान से बाहर कर ली तो कोतवाल उल्टा प्रश्न कर उठेगा, 'तुमने सरदार साहब को टोकने की नालायकी क्यों की?'

एकाध राहगीर निकला। चुपचाप चला गया। उस आगन्तुक को राहगीर की परवाह न थी। अटारी में एक शमादान में दीपक टिमटिमा रहा था। धीरे से कोई खिड़की के सामने आया। तुरन्त पीछे हटा, फिर सामने आया। सिर पर धानी रंग का दुपट्टा था।

आगन्तुक ने धीरे से परन्तु सुनाई पड़ने योग्य स्वर में कहा, 'अबलक घोड़े का सवार।'

अबलक घोड़े के सवार के कान में बहुत बारीक मीठा स्वर पड़ा, 'मैं हूं'''मगर खतरा है।'

'मैं खतरों की परवाह नहीं करता। आपका दर्शन किसी भी खतरे में सिर खपा देने की हिम्मत दिला रहा है।'

धानी रंग के दुपट्टे वाली युवती खिड़की से पीछे हटी। उसने धीरे से गला साफ किया। कोठी की आहट ली फिर खिड़की के पास आकर बोली, 'क्या मैं जान सकती हूं कि किससे बात कर रही हूँ?'

'क्या प्रेमी को अपना नाम धाम बतलाने की जरूरत पड़ती है ? सिपाही हूँ—वैसे एक राजकुमार।'

धीरे से उस युवती के कण्ठ से एक तान सी निकली, 'वहां के ?··· खैर···बड़ी मुश्किल है। यहां आप कैसे आवें ? रास्ते में रुकावट है।'

सवार ने बिना संकोच के कहा, 'अभी आ सकता हूँ। खिड़की में से एक रस्सी डाल दीजिये।'

'गैर मुमकिन।' युवती बोली।

सवार ने अधीरता के साथ प्रस्ताव किया, 'तो शमादान के प्रकाश को जरा तेज कर दीजिये। कम से कम आपके दर्शन तो कर लूँगा।'

कुछ क्षण सवार को कोई उत्तर नहीं मिला। 'मेरी विनती सुन ली गई या नहीं ?' सवार ने प्रश्न किया।

युवती ने उत्तर दिया, 'कोठी की बगल से गली गई है। उसमें होकर आइये। सिरे पर कोठी का छोटा सा बगीचा है। फिर कांपते हुये स्वर में सवार ने सुना—'बगीचे की दीवार कुछ ऊँची है। आपको फांदनी पड़ेगी।'

इसके उपरान्त खिड़की धीरे से बन्द हो गई। सवार अपने साथी को लेकर गली में गया। यह साथी उन ४–५ सवारों में से एक था जो *सन्ध्या की बेला उसके साथ थे। साथी को कुछ फासले पर छोड़कर* दीवार में खुरदरे स्थान को ढूंढ़ने लगा। मिलने पर उसने पैर जमाया और फुर्ती के साथ दीवार के ऊपर चढ़ गया। वहां से बगीचे पर आंख पसारी। एक स्थान पर पेड़ों की झुरमुट के पास कुछ ऊँची जमीन दिखलाई दी। धीरे धीरे दीवार पर रेंगता हुआ उसकी बराबरी पर पहुँचा। आहट सी। जान पड़ा मानों कोई उसकी ओर बढ़ रहा है। वह दीवार की मुंडेर पर हाथ *की गद्दी जमाकर धीरे से बगीचे में कूद* पड़ा। खड़े होकर देखने लगा। एक युवती धीरे धीरे आकर उसके पास खड़ी हो गई।

सवार ने युवती के और निकट जाकर कहा, 'मैं हूं भरतपूर के महाराज सूरजमल का रामकुमार जवाहरसिंह ।'

युवती ने चेहरा उठाकर देखने का प्रयत्न किया । जवाहरसिंह ने और कुछ तो नही देख पाया, पर उस युवती की सुहावनी मुस्कान उसकी आंखो मे पड गई ।

जब जवाहरसिंह ने युवती का हाथ पकड़ा तब वह कांप रही थी ।

जवाहरसिंह ने उसी अवस्था मे युवती से कहा, 'मेरा नाम तो आपको मालूम हो गया है । मैं भी तो जानूं कि मेरे जीवन को कौन सफल कर रहा है ?'

'क्या करियेगा जानकर महाराजकुमार साहब ? औरतें आप लोगों की जूतियां हैं । पुरानी पड़ीं और उतार फेंकी ।' युवती ने गद्‌गद् स्वर में उत्तर दिया ।

थरथराते हुये कण्ठ से जवाहरसिंह बोला, 'गंगा-यमुना मेरी साखी हैं । आप मेरी होकर रहेंगी और मैं आपका । हम लोग कभी अलग नही होंगे ।'

'सोचिये महाराजकुमार साहब । आपकी जातपात मे मैं कैसे समा पाऊँगी । आपके महल में मेरा ठौर ही क्या होगा ?'

'मैं आपके लिये अपना राजपाट सब छोड़ दूगा ।'

'हरगिज नही । आपका इतना बडा त्याग मैं नही सह सकूंगी । आप अपना खूबसूरत धर्म भी न छोड़ें । कृष्ण कन्हैया के गीत गाने वाले मुझे बड़े प्यारे लगते हैं । क्या मैं आपके धर्म मे हो सकती हूं ? क्या आप मुझको ले सकते हैं ?'

'हां हमारे यहां कोई बाधा नहीं पड़ेगी ।'

'नई बात है महाराजकुमार साहब । राजपूत ऐसा नहीं करते, नहीं कर सकते ।'

'राजपूत मूर्ख है, वे अपनी बेटियां दे सकते हैं, ले नहीं सकते। मैं जाट क्षत्रिय हूं। आप मेरे घर आते ही जाट बन जायेंगी। मैं आपके साथ ब्याह करूंगा। अपने शास्त्र के अनुसार विवाह।'

'मेरा भाग्य है।'

'अब अपना पता तो दीजिये, मैं यहां से अपने डेरे पर जाकर उस नाम का सुमरन कर सकूं।'

'मेरे पिता बादशाह के सात हजारी मन्सबदार थे। हाल में ही उनका देहान्त हुआ है। लखनऊ से काम के लिये दिल्ली आये थे। वहां कई महीने बीमार रहकर चल बसे।'

'क्या आगरे में बसने का विचार है?'

'नहीं तो। फर्रुखाबाद में मेरे पिता के मित्र एक रहेले सरदार हैं। वहां पर मेरी मां और कुछ नौकर हैं। पिता का कुछ रुपया यहां चाहिये है। उसको वसूल करके सब चले जायेंगे।'

'और मुझको कुयें में ढकेल जाइयेगा? सूरज कहा।'

'मैं तो आपकी मर्जी पर हूं।'

'मेरे साथ चलना होगा।'

'चलूंगी, लेकिन अभी नहीं। चाहती हूं जब हम लोग रथों पर रास्ते में हों तब आप यकायक आ जायें और मुझको ले जायें। फिर कोई ढूंढ खोज नहीं होगी। लोग सोचेंगे, मैरा न जाने क्या हुआ। आपको इसमें कोई दिक्कत न होगी। आपके घर पहुंचने पर मुझसे टेढ़े-मेढ़े सवाल नहीं किये जायेंगे। कह दूंगी राजपूतानी हूं।'

'नहीं जाटनी।'

'जी हां जाटनी, कुल गोत वगैरह सब पढ़ा दीजियेगा।'

'अब यहां से कब तक फर्रुखाबाद की यात्रा करेंगी?'

'आज से छठवें दिन।'

'मैं ध्यान में रखूंगा और बिलकुल चौकस रहूगा।'

'मेरे महाराजकुमार साहब.........।'

'मैं भी तो अपनी जीवनदायिनी का नाम सुनूं ?' जवाहरसिंह ने बहुत प्यार के साथ पूछा।

युवती ने भरे गले से उत्तर दिया, 'गन्ना बेगम।'

(१६)

जवाहरसिंह उस रात देर से अपने डेरे में पहुचा। कई रात बराबर आया। अन्तिम रात्रि के समय गन्ना बेगम ने उससे कहा, 'हम लोग परसों फरुखाबाद जा रहे हैं। महमदखां बंगश नाम के रुहेला सरदार के घर ठहरेंगे। रास्ते मे अपनी थोडी सी फौज लाकर मुझको इस कैद से छुड़ा ले जाइयेगा, नहीं तो आप किसी दिन सुनेंगे कि मारी गई या मर गई। कल मत आइयेगा।'

जवाहरसिंह ने आश्वासन दिया। उसने अपनी एक बहुमूल्य अंगूठी गन्ना बेगम को दी। गन्ना ने सावधानी के साथ अंगूठी को रख लिया।

'पहिन लो' 'जवाहरसिंह ने अनुरोध किया।

'अभी नहीं।' गन्ना बोली, 'अपनी भावर के समय पहिनूंगी।'

जवाहरसिंह हँसा। थोडी देर बाद फूला हुआ चला आया।

जिस दिन जवाहरसिंह को ससैन्य फरुखाबाद के मार्ग से गन्ना बेगम को दिखावटी जबरदस्ती के साथ पकड कर ले जाना था, उस दिन और घड़ी के लिये जवाहरसिंह तैयार हो गया।

उसके साथ दो ढाई सौ सुसज्जित सवारों की हथियारबन्द टुकड़ी थी। पर उनमें एक वह सवार नहीं था जो उस दिन सन्ध्या की वेला उसके साथ चार पांच सवारों में था और जो उसके साथ कई बार रात में उस कोठी पर गया था। वह दो दिन पहले भरतपुर चला गया था। उसने घर पर एक बहुत आवश्यक काम बतलाया था।

वह दिन आया। जवाहरसिंह ने अपने जासूस फरुखाबाद के मार्ग पर लगा दिये। मार्ग के दोनों ओर पेड थे और इधर उधर पलाश और करील की डाग। रास्ता तो उस युग में अच्छे से अच्छा भी कच्चा, ऊबड़-खाबड़ और टेढा मेढा होता था। एक मोड़ पर कुछ रथ आये। आस-पास थोड़े से हथियार बन्द सवार। रथों पर भरंपं पड़ी हुई थीं। एक

झरप रह रहकर हट जाती थी। गन्ना बेगम झरप हटा हटाकर कुछ देखती जाती। उसी रथ मे उसकी माँ बैठी हुई थी।

मां ने कहा, 'बराबर झरप क्यों हटाती है गन्ना ? जमाना खराब है। कोई देख लेगा और ताड़ लेगा कि हम लोग हैं तो लूटमार के लिये टूट पड़ेगा।'

गन्ना ने प्रतिवाद किया, 'गरमी के मारे दम घुटा जा रहा है। ताजी हवा के लिये कभी कभी झरप हटा लेती हूं।'

मा ने हठ दिया, 'झरप खोलने से धूल जो आती है। वैसे ही इतनी धूल फांकनी पड़ी है कि मेरा तो गला बैठ गया है।'

'और गरमी की वजह से मेरा गला रुँध ही गया है।' गन्ना ने कहा।

कुछ क्षण झरप बन्द रही। गन्ना ने फिर साँसें लेकर हटाई। कुछ दूरी पर धूल उड़ती हुई दिखलाई दी।

गन्ना ने धीरे से कहा, 'आंधी सी आ रही है ! देखिये।'

उसकी मा ने बारीकी के साथ देखा। कुछ देर देखती रही। फिर टापो की आवाज सुनाई पड़ी।

मा ने घबराकर कहा, 'यह तो आफत आ रही है। झरप बन्द कर दे।'

'अभी नही।' गन्ना बोली, 'समझ तो लें कि क्या आफत है। खुदा का नाम लीजिये सब मुश्किल आसान हो जायगी।'

कुछ समय उपरान्त जवाहरसिह अपने सवारों को लेकर आ कूदा। उसने रथों को और उनके अश्वारोही रक्षकों को चारो ओर से घेर लिया। रथो के रक्षक इतने थोड़े थे कि उन्होन लड़ना व्यर्थ समझा। सिमटकर एक ओर खड़े हो गये। जवाहरसिह ने आगे बढ़कर पूछा, 'रथों मे कौन कौन है ?'

गन्ना ने जवाहरसिह का स्वर पहिचान लिया। हृदय व्याकुल हो उठा। मां से बोली, 'मुझको सवाल जवाब करने दीजिये।'

मा उससे लिपट गई। मां ने कहा, 'न बेटी। तुझको झरप के बाहर सिर न निकालने दूंगी। यहीं से जेवर बाहर फेंके देती हूं। इन लोगों को लूट से मतलब है तुझको देखते ही कोई और मनहूस मन्सूबा बाँध उठेंगे।'

गन्ना झरप उठाना चाहती थी। उसका हाथ भी कई बार झरप पर गया, पर मा ने झरप नहीं उठाने दी।

जवाहरसिंह ने कई ने बार प्रश्न किया, 'रथों में कौन कौन है ?'

उत्तर में गन्ना केवल जोर से खांसती रही। उसकी मां ने गहने उतार उतार कर बाहर फेंकने शुरू कर दिये। दूसरे रथो में बांदियां और नौकरानियां बैठी थीं। उन्होंने भी अपने गहने उतारे, परन्तु वे खासी नहीं, रोईं और चीखी।'

गन्ना का हाथ झरप के बाहर पहुंच गया। जवाहरसिंह की समझ मे आ गया किसका हाथ है। बोला, 'मैं इस रथ की तलाशी लूंगा। झरपें हटाओ और मार्ग में से जेवर उठाकर जहां के तहां लौटा दो।' उसके सिपाही आगे बढे।

गन्ना की मां चीख उठी, 'गन्ना मेरा गुमान सही निकला। या खुदा, अब इज्जत कैसे बचेगी ?'

जवाहरसिंह ने सुन लिया। रथ मे गन्ना बेगम के होने का विश्वास घर कर गया। घोड़े पर से उतर पड़ा। अपने हाथ से रथ की झरप हटाई। गन्ना से उसकी मा लिपटी हुई थी। गन्ना का मुंह जवाहरसिंह की ओर था। मां की आखों मे आंसू, चेहरे पर पीलापन और देह भर मे थरथराहट थी। गन्ना की आखो में उत्कण्ठा, ओजस्विता और उमंग थी। गोरा मुंह लाल हो रहा था।

उसने अपनी मा से कहा, 'छोड़ दीजिये, मैं इनसे बहस करूंगी।'

उसी समय जवाहरसिंह के कुछ सवार चिल्ला पड़े, 'कुमार, देखिये इस दिशा से कोई आ रहा है ! बड़ी धूल उड़ रही है !!'

जवाहरसिंह ने आतुरता के साथ गन्ना को देखा। उसकी आंखों से कातरता बह पड़ी थी। उसने भी सुन लिया था, 'कुमार, इस दिशा से कोई आ रहा है बड़ी धूल उड़ रही है!!' फिर जवाहर ने सचिन्त दृष्टि से उस दिशा में देखा जहां से धूल की आंधी उड़ती हुई आ रही थी।

उसके सवार फिर चिल्लाये—'कोई बड़ी सेना आ रही है, कुमार! सावधान!!'

जवाहरसिंह ने झरप को हाथ में पकड़े ही उस धूल की आंधी को आंख गड़ाकर देखा। गन्ना ने भी घबराहट के साथ प्रयास किया, परन्तु वह न देख सकी।

धूल की आंधी और निकट आई। जवाहरसिंह ने अच्छी तरह से गन्ना की आंखों में अपनी आंखें मिलाईं। गन्ना की आंखों में आंसू आ गये थे। जवाहरसिंह की आंखें सूख गई थीं। उसके सवार चिल्लाये, 'राजकुमार घोड़े पर तुरन्त सवार होइये और चलिये।'

जवाहरसिंह के हाथ से झरप छूट गई। झरप के एक कोने से उन बड़ी बड़ी आंखों में आंसू ही देख पाये, और कुछ नहीं। सिपाहियों से बोला, 'ठहरो, भागो मत। जाट लोग लड़ाई के मैदान को छोड़ कर भागना नहीं जानते। लोहे से लोहा टकरायेंगे। आने दो। देखता हूं कौन है।'

सिपाहियों ने भागने का विचार त्याग दिया। बन्दूकें संभालीं और उस आती हुई आंधी पर तानीं।

कुछ क्षण उपरान्त वह आंधी साफ हो गई। एक बड़ी संख्या में—कम से कम दो सहस्र होंगे—घुड़सवारों की सेना आ गई। उस सेना को जवाहरसिंह के सवारों ने पहिचान लिया, और जवाहरसिंह ने भी। सवारों की बन्दूकें नीची पड़ गईं और जवाहरसिंह की आंखें। उसका सिर झरप की ओर मुड़ गया। झरप के नीचे एक हाथ का कुछ भाग निकला हुआ था जिसको जवाहरसिंह पहिचानता था। दूसरी ओर जरा सा मुंह मोड़ कर देखा—सामने उसका पिता, भरतपुर नरेश,

सूरजमल, हाफते हुये घोड़े पर सवार था। दो सहस्र संख्या वाली सेना उसी की थी।

सूरजमल ने रथ वालों से कहा, 'ले जाओ रथ। जाओ जहाँ जाना हो।'

नीचे पड़े हुये गहनों को सूरजमल की आज्ञा से गंगा वाले रथ में डाल दिया गया। रथ और उसके रक्षक अपने मार्ग पर बढ़ गये। उनके चले जाने पर सूरजमल ने जवाहरसिंह से कहा, 'हम लोग इस तरह की बटमारी नहीं करते। तुमने हमारे कुल को बुरी तरह लजाया है।'

जवाहरसिंह की घिग्घी बँध गई। सूरजमल का क्रोध और बढ़ा।

बोला, 'मैं सोचता था तुम मेरे वंश को उजागर करोगे। तुमने इस बटमारी से मेरे पुरखो के मुह पर कालोंच पोती!'

सूरजमल नही कहना चाहता था कि माल असबाब लूटने नही आया था जवाहरसिंह, बल्कि एक लड़की को पकड़ कर उड़ा ले जाना चाहता था। क्रोध के आवेश में यही दोषारोपण उसके मन मे पहले आया। जवाहरसिंह लूटमार के लिये नही आया था; जिस काम के लिये आया था उसको भुला कर सूरजमल से बोला, 'पिता जी, महाराज! आप गलत कह रहे हैं। आप भ्रम में हैं।'

सूरजमल ने संयत स्वर मे कहा, 'ऐसा नहीं करना चाहिये था। जो हुआ सो हुआ। घर चलो।'

अपमानित, पीड़ित जवाहरसिंह बाप के साथ भरतपुर चला गया। परन्तु उसके मन मे जो ग्लानि और अशान्ति मची उसने बाप बेटे के बीच में खुला युद्ध करवाया; जो जाट अकेले उत्तर हिन्द को काबू में रखने की शक्ति रखते थे वे निर्बल पड़ गये। विद्रोह करके जवाहरसिंह

डीग के किले में जाकर बन्द हो गया। सूरजमल ने सेना भेजी। सेना अपने युवराज से डर डर कर कुछ समय तक लड़ती रही फिर युद्ध ने भीषण रूप धारण किया। जवाहरसिंह आत्मघात के लिये तलवार लेकर अपने पिता के सिपाहियों पर टूट पड़ा। उसको तलवार और गोली के घाव लगे। दाया हाथ सदा के लिये कमजोर पड गया और एक टाग टूट गई। लगड़ा हो गया।

(१७)

गन्ना बेगम अपनी माँ के साथ फरुखाबाद रुहेला सरदार के घर पहुंच गई। उसके साथ ब्याह के लिये दो अभ्यर्थी थे। एक अवध का नवाब शुजाउद्दौला और दूसरा दिल्ली का वजीर शिहाबुद्दीन।

उसकी मा के पास शुजाउद्दौला का पैगाम दिल्ली से आगरा आने के पहले ही आ चुका था। शुजाउद्दौला के हरम मे ब्याहता और रखेली, सब मिला कर, आठ सौ से ऊपर थी। हर एक के लिये चार चार छ छः बांदियां अलग।

शुजाउद्दौला के पिता से बादशाह और उसके वजीर शिहाब का युद्ध दो बरस पहले ही समाप्त हुआ था। शुजा के लिये दिल्ली के दरबार में कोई मान सम्मान न था। रुहेलों से अवध के नवाब की मौरुसी शत्रुता थी। गन्ना अब रुहेले सरदार के घर पहुंच गई थी। और आठ सौ से ऊपर की बेगम-सख्या वाले हरम मे अपनी सुन्दर लड़की को भेजना उसकी मा को ऐसा लगा जैसा किसी कीचड वाले पोखरे में स्वच्छ मीठे पानी की एक बूंद का फेंकना। उसका मन बिलकुल फिर गया।

सूरजमल दिल्ली के साथ मैत्री स्थापित करने का इच्छुक था। वह जानता था कि शिहाब के साथ गन्ना का विवाह हो जाने पर वह दिल्ली दरबार की आंखों मे ऊँचे चढ़ जायगा और सफदरजंग के गत विद्रोह में शामिल होने के कारण शिहाब का बिगड़ा हुआ मन शान्त हो जायगा। पजाब की घटनाओं के भी सम्पर्क में वह था। शिहाब यदि अब्दाली का मित्र बन गया तो अच्छा ही है; शत्रु रहा तो भी कोई हानि नहीं। इसीलिये उसने तुरन्त जवाहरसिंह को जा रोका था, इसीलिये मार्ग में पड़े हुये गहने रथ में रखवा दिये थे, इसीलिये उसने, एक दिन, अपने गुप्त दूत द्वारा शिहाब के पास समाचार भिजवाया कि गन्ना बेगम अपनी माँ के साथ फरुखाबाद में रुहेले सरदार के घर है और इसीलिये उसने

उस रुहेले सरदार को एक मित्र द्वारा सुझाव दिया कि शिहाबुद्दीन सुन्नी है उसके साथ गन्ना बेगम का विवाह कर दिया जाय। रुहेला सरदार पहले से ही चाहता था।

गन्ना के हृदय की पूरी लगन जवाहरसिंह के ऊपर थी, परन्तु उसके हृदय को पूछता कौन था ? वह अपने मन की बात कह किससे सकती थी ? पढ़ी लिखी थी, परन्तु जवाहरसिंह के पास एक कागज का टुकड़ा तक नहीं भेज सकती थी। अकेले में रोते कलपते उसके दिन बीते। कविता कर कर के अपने बेचन मन को आंसुओं से रिझाने का प्रयत्न करती रही।

एक दिन शिहाबुद्दीन के साथ उसका विवाह हो गया। रोती पीटती दिल्ली चली गई। शिहाब ने अपने ख्वाजा को पुरस्कार दिया। देते समय कहा, 'जैसा तुमने बतलाया था उससे भी कहीं ज्यादा हसीन है बेगम।'

(१८)

जिस दिन शिहाब का विवाह गन्ना बेगम के साथ हुआ लगभग उसी दिन ग्रहमदशाह ग्रब्दाली पेशावर से चलकर पंजाब को धूल में मिलाता हुआ आगे बढ़ रहा था।

और इस समय पेशवा की साठ सहस्र सेना कर्नाटक की ओर गई हुई थी। ताराबाई अपनी हेकड़ी पालने के लिये ब्राह्मण अब्राह्मण के द्वन्द में पड़ी हुई थी। माधवजी पेशवा के पास पूना में थे। वहां से उनको कर्नाटक की ओर जाना था। पेशवा ने उत्तर की ओर जाने के लिये रघुनाथराव को फिर राजी कर लिया। मल्हारराव को इन्दौर से साथ लेकर उसे राजपूताने की ओर जाना था। दक्षिण में जिले और सूबे तो जागीर में मिल रहे थे, परन्तु पेशवा के पास रुपया न था। वह ऋण में डूब रहा था। रघुनाथराव को इसीलिये राजपूताने की ओर भेजा गया। राजपूताने से रुपया आवे तब दक्षिण की लड़ाइयों का ठिकाने से सञ्चालन किया जा सके। परन्तु राजपूताने में पहुँचने के लिये रघुनाथराव के पास नित्य व्यय तक के लिये पैसा न था। इसलिये लूट-मार से अपने सिपाहियों का पेट भरता हुआ वह इन्दौर से मेवाड़ की ओर चला गया। मेवाड़, जयपुर, जोधपुर इत्यादि राज्यों पर पूना के कई वर्ष का पावना था।

दिल्ली के रणक्षेत्र के लिये केवल तीन सहस्र मराठा सिपाहियों का एक बेड़ा ग्वालियर में इकट्ठा हो पाया था।

रघुनाथराव के साथ सब मिलाकर सोलह सहस्र सेना थी जब वह इन्दौर से मेवाड़ की ओर गया। वह मेवाड़ न पहुँच पाया होगा जब लाहौर से अब्दाली सरहिन्द में आ गया। दिल्ली पर सपाटा लगने ही वाला था।

दिल्ली की सड़ियल सेना में मुश्किल से तीन सहस्र सैनिक होंगे। उनमें दिल्ली के लिये युद्ध करने की रत्ती भर भी ललक नहीं थी। जिन बदख्शानियों को शिहाब ने बरखास्त कर दिया था वे ग्रहमदशाह

अब्दाली की फौज में जा मिले । नजीबखाँ को अपनी चतुरता और कुटिलता के कारण बीस सहस्र रुहेलो का नायकत्व प्राप्त था ।

शिहाब ने नजीब को बुलाया । ठण्ड पड रही थी, परन्तु वह सवेरे ही आ गया । शिहाब ने उसको बड़े आदर के साथ बिठलाया ।

शिहाब ने अभ्यर्थना की, अब आप ही के हाथ मे हम लोगों की लाज है । अब्दाली जल्दी जल्दी दिल्ली की तरफ बढता चला आ रहा है । मुकाबिले के लिये आप से बढकर और आपके सिवाय कोई दूसरा नही है ।'

नजीब ने ठण्डक के साथ कहा, 'आप तो हैं । कहिये मेरे लिये क्या हुकुम है ?'

'हुकुम नही अर्ज है । बीस हजार के करीब रुहेले आपके पास है । दस पाच हजार और भर्ती कर लीजिये और अब्दाली से भिड़ जाइये ।'

'भर्ती तो कर लूंगा मैं एक लाख सिपाही । रुपया दीजिये ।'

'रुपया ! रुपया मेरे पास कहा है ?' रुपया होता तो बदरुशानियों वाला फ़जीता ही क्यो होता ?'

'आपका मतलब है कि अब मैं अपना फजीता कराऊं । यह मुमकिन नही है ।'

'दिल्ली का क्या होगा ?'

'जो होना हो या जो होता आया है — मुझको क्या मतलब ? मैं अपने दुआब मे चला जाऊँगा ।'

शिहाब को क्षोम हो आया । बोला, 'आधा दुआब जागीर में मैंने ही दिलवाया है, या, सही यह है कि मैंने ही दिया है । यह जागीर आपको फौज की तनखाह देने और लड़ाई का सामान तैयार रखने के लिये ही लगाई गई है । जागीर आपकी मीरास नही है ।'

बहुत ठण्डक और बड़ी दृढता के साथ नजीब ने कहा, 'जो मोती, जवाहर, हीरे और सोना आपने शाही महल से ढो ढो कर अपनी कोठी में भर लिये हैं क्या उन पर आपकी मीरास हो गई है ?' उनको

निकालकर फौज और फौजी सामान पर खर्च करिये, फिर मैं अपनी जागीर की बात सोचूंगा।'

शिहाब क्रोध में सन्न रह गया।

कुछ क्षण बाद बोला, 'आप वक्त बेवक्त कुछ नहीं देखते और बिना सोचे समझे बात कर बैठते हैं। कुछ अन्दाज लगाया कितना रुपया चाहिये ?'

नजीब ने तड़ाक से जवाब दिया, 'दो करोड़ रुपया। चाहे लड़ने के लिये फौज पर खर्च कर डालिये, चाहे, आई बला को टालने के लिये अब्दाली को दे दीजिये।'

'इसका मतलब यह है कि आपके पास अब्दाली का कोई सन्देसा है!'

'आपके पास भी आवेगा।'

'आपको याद रखना चाहिये कि जिस कलम से दुआब की जागीर का परवाना लिखा गया था उसी से उसकी जब्ती और आपकी बरखास्तगी भी लिखी जा सकती है।'

'मैं अपनी तलवार की नोक से अपने और दूसरों के परवाने लिखा करता हूं, कलम की उसके सामने हकीकत ही क्या है? होश में बात करिये।'

'मैं वजीरुलमुल्क हूं।'

'और मैं रुहेलों का सालार।'

'अभी अक्ल ठिकाने लगाता हूं। यहां से बाहर न जाने पाओगे।'

'बेशक नहीं जाने पाओगे। हरम में जाओगे तो हरम में भी नहीं बचोगे और हरम भी नहीं बचेगा, क्योंकि रुहेले तुम्हारे हरम की भी परवाह नहीं करेंगे। पांच हजार रुहेले बाहर मुस्तैद खड़े हैं। तुम्हारे पास दो सौ ढाई सौ हिजड़े ही होंगे न?'

'ओफ! बदतमीज कहीं का!!' शिहाब के मुंह से निकल पड़ा।

नजीब ने दांत भींचे। धीरे से कहता हुआ चला गया, 'बहुत जल्दी तमीज सिखलाऊँगा। ऐसी सिखलाऊँगा कि तेरे फरिश्ते तक याद करेंगे।'

नजीब के जाते ही शिहाब ने तुरन्त पता लगाया कि बाहर कितने रुहेले हैं। उसके हिजड़ो और सिपाहियो ने बतलाया कि दस हजार होंगे, शायद और भी ज्यादा हों और फसाद करने पर तुले हुये हैं!

नजीब झूठ नही बोला था।

(१६)

शिहाब ने अपनी कोठी के फाटक बन्द करवा दिये। नजीब ने कोठी को चारों ओर से घेर लिया। पड़ोस का बाजार लूट लिया और बहुत से आदमी मार दिये। उस समय मनुष्य के प्राणों का मूल्य ही कितना था ?

लूटमार करने के उपरान्त अपनी सारी रुहेली सेना को तोपों सहित लेकर रात में ही दिल्ली से चल दिया और अब्दाली से जा मिला। अब्दाली के साथ उस अवसरवादी सरदार की बातचीत पहले ही तै हो चुकी थी।

शिहाब ने ग्वालियर के मराठों बेड़े को बुलाने के लिये पत्र लिखा और भरतपूर से सूरजमल को तुरन्त बुलाया। सूरजमल को मालूम हो गया था कि अब्दाली तीस सहस्र अफगानों और नये हथियारों के साथ सुसज्जित होकर आया है। उसको यह भी मालूम हो गया कि नजीब बीस हजार रुहेले सिपाहियों को लेकर तोपों सहित जा मिला है। दस बारह हजार बदख्शानी उसकी सेना में पहले ही भर्ती हो चुके थे। सब मिलाकर साठ हजार सीखे सिखाये सैनिक अब्दाली के पास होंगे। इससे कम से कम आधी भीड़ सम्भव पञ्जाब की ओर उसकी छावनी के चारों ओर थी जो लड़ भी सकती थी। लूटमार, रक्तपात, की भूखी प्यासी तो थी ही। सूरजमल यह सब जानता था। वह लड़ना नहीं चाहता था। इसलिये उसने शर्त रखी कि रुहेलों, जाटों, अवध के नवाब और राजपूतों का एक संघ बनाओ; मराठों को उत्तर-भारत से अलग करो,—क्योंकि, उसने अभी तक तै किये हुये दो करोड़ रुपये मराठों को नहीं दिये थे,— फिर अब्दाली से लड़ जाओ। सब असंभव।

शिहाब भी मराठों को रुपया नहीं देना चाहता था, परन्तु वह उनको छोड़ भी नहीं सकता था। इसलिये सूरजमल से कोई बात नहीं पटी। सूरजमल जैसा आया वैसा ही चला गया।

अब्दाली दिल्ली की ओर और बढा। दिल्ली के सरदारों और साधारण जन में भी बेचैनी और निराशा फैल गई। शिहाब ने एक और सहारा ढूंढा।

अपने हिजडो के सालार से कहा, 'तुमको मालूम है एक बड़े ही पहुँचे हुये फकीर दिल्ली मे वही रहते हैं। उनके बहुत चेले हैं। किसी से एक पैसे का भी सवाल नही करते। कही आते जाते तक नहीं हैं। बड़े भारी करामाती हैं।'

हिजडे ने अपने उत्तर की बहुमूल्यता बढाने के लिये बात छिपाई। बोला, 'हुजूर, फकीर तो दिल्ली मे इतने हैं कि शुमार नही। न जानूँ कितने कल्ले रखाये रंगीन कपडे पहिने, चमीटे पीटते हुये घूमते हैं। कहते हैं हम सूफी हैं। कई शहजादे और शहजादियां तक इनकी शागिर्दी मे हैं।'

शिहाब ने कुछ कुढकर कहा, 'म्या, मैं इन शुहदों की बात नही कह रहा हूँ। मैं एक असली फकीर की बात कह रहा हूँ जिनको शाहजादों और शहजादियों से कोई वास्ता नहीं। कोई शाह साहब हैं जिनके आम लोगो में बहुत मुरीद हैं और जो हर किसी की मुराद को पूरा करने की ताकत रखते हैं। नाम याद नहीं आ रहा है इस वक्त।'

'उनका नाम हुजूर, है। शाहवाली सचमुच बडे पहुँचे हुये हैं।' चट से हिजड़ा बोला।

शिहाब ने कहा, 'यही नाम है, याद आ गया। मैं उनसे मिलना चाहता हू। इस मुसीबत में वे बेशक मदद कर सकेंगे।'

हिजड़े ने सिर नीचा कर लिया।

'चुप कैसे हो गये म्यां ?'

'हुजूर, वे कुछ अजीब बातें भी करते हैं।'

'क्या ?'

'कहते डर लगता है।'

'मुझसे तुमको डर ! मैं तो तुम्हारी हर एक बात सुन लेता हूं। डरो मत, कहो।'

'हुजूर, शाह वलीउल्ला साहब बादशाहों, जागीरदारों और मनसबदारों के खिलाफ हैं। वे कहते हैं इनकी कोई जरूरत नहीं जम्हूरी सल्तनत कायम होनी चाहिये; बादशाहों को मिटा देना चाहिये !'

'मैं बादशाह को कायम रखने के चक्कर में हूं कहां ? और जितनी आसानी के साथ बादशाहों को मैं खतम कर सकता हूं उतनी आसानी के साथ शाहवली साहब के चेले चांटे खतम नहीं कर सकते।'

'शाह साहब कहते हैं कि मामूली आदमियों का राज होना चाहिये, यह कैसे मुमकिन है ?'

'मुमकिन ही नहीं, हो भी रहा है। वह अहमदशाह मामूली आदमी था। फिर नादिरशाह की फौज में एक अफसर हो गया। अब हकूमत करता है। मराठे मामूली किसान मजदूर थे, अब राजों नवाबों को बिगाड़ते उखाड़ते फिर रहे हैं। मैं इसीलिये तो शाहसाहब के पास जाना चाहता हूं। कितने शागिर्द होंगे उनके लगा सकते हो अटकल ?'

'लाखों की तादाद में सरकार।'

'कहां कहां ?'

'दुनियां भर में हुजूर—दिल्ली, आगरा, लखनऊ, पटना सब जगह। दिल्ली के आस-पास बहुत।'

'मैं उनसे मिलूंगा। ले चलो मुझको। मगर जाहिर न होने पावे।'

हिजड़े ने सहर्ष स्वीकार किया।

(२०)

मुगल साम्राज्य के प्रधान वजीर के शाहवली की कुटिया में पहुंचने के कारण, चहल पहल मच गई। हिला नहीं तो फकीर शाहवली।

शाहवली वृद्ध था, कमजोर, बीमार और अन्धा। वजीर के पहुँचने का उसके चेहरे तक पर कोई प्रभाव न था। फकीर की वाणी कुछ देर बाद खुली। पूछा, 'कैसे आये हो?'

'हुजूर से एक मिन्नत करने आया हूँ।' शिहाब ने अत्यन्त दीन स्वर में कहा, 'मैं बहुत मुसीबत में हूं। आप मेरी मदद करिये।'

फकीर ने मिन्नत को बिना सुने हुये तुरन्त इनकार कर दिया, 'मैं कोई मदद नहीं कर सकता। मुझको अमीर उमरा से कोई निस्बत नहीं।'

कुछ वर्ष पहले शिहाब सफदरजंग सरीखे घुटे घुटाये वजीर और राजनीतिज्ञ को चकमा दे चुका था, एक फकीर का सीधा करना क्या कठिन होगा?

गिड़ गिड़ाकर बोला, 'मैं तो अमीर उमरा कुछ भी नहीं, हुजूर का महज खादिम हूं। और फिर, हुजूर की निगाह में तो सब इनसान बराबर हैं।'

'नसीहत देने आया है मुझको!' क्रुद्ध स्वर में फकीर ने कहा।

पास बैठे हुये शिष्यों और प्रशंसकों के मन मे फकीर के प्रति श्रद्धा उमड़ पड़ी।

शिहाब ने और भी मिन मिनाकर कहा, 'हुजूर अगर मुझको अपनी जूतियों से भी मारेंगे तो मेरे लिये दुआ और सबाब ही मिलेंगे। मैं कदमों मे आया हूं बिना दुआ के नहीं लौटूंगा।'

फकीर ठण्डा पड़ गया।

शिहाब से कहा, 'आखिर क्या बात है ? रय्यत को परेशान करते करते अब मेरे सिर आया है ?'

शिहाब बोला, 'हुजूर, दिल्ली पर मुसीबतें आने वाली हैं। बिना आपकी परवरिश के हम लोग नहीं बच सकेंगे।'

फकीर के मुह से यकायक निकला, 'तुम लोग ! तुम लोग कौन ? बादशाह और अमीर लोग !! गरीबों का खून चूसने वाले और इस्लाम को मिट्टी में मिलाने वाले खूँखार भेड़िये और बदकार जालिम !!!'

शिहाब जानता था कि जम्हूरी सल्तनत—जनतन्त्र—को कायम करने वाले इसी प्रकार की भाषा का प्रयोग करते हैं।

शिहाब ने अत्यन्त नम्रता के साथ विनय की, 'मैं तो हुजूर के उसूलों का मुरीद हूँ। बादशाहों को खतम करने का बिलकुल तरफदार। जिस दिन हुजूर का हुकुम हो उसी दिन बादशाह, अमीर उमरा सबको मिटा दिया जाय। और सबसे पहले मैं अपना सब कुछ छोड़ देने को तैयार हूँ। सिर्फ हुजूर के कदमों की धूल मुझको अपने सिर पर चढ़ाने को मिलती रहे।'

शिहाब चुप होकर फकीर के होठों के हिलाने की प्रतीक्षा करने लगा। फकीर भी थोड़ी देर चुप रहा। फकीर ने बिना क्रोध के कहा, सिर्फ थोड़े से दिन की बात और है। ऐसी हलचल, ऐसा इनकिलाब आ रहा है कि तुम लोगों को जहन्नुम में भी जगह नहीं मिलेगी। आम लोगों की मर्जी के खिलाफ अब कोई हकूमत नहीं चल सकेगी, टिकेगी तक नहीं बल्कि आम लोगों की ही हुकूमत कायम होगी।'

शिहाब कई भाषायें जानता था। उसने शाहवली की लिखी हुई कुछ पुस्तकों को पढ़ा था और चर्चा भी सुनी थी। बोला, मैंने हुजूर का कलाम पढ़ा है। मैं तो दिल से हुजूर के उसूलों का हामी हूँ। मगर क्या करता। शुरू से ही ऐसे तूफानों में पड़ गया कि कुछ कर न सका। अब आपका दामन पकड़ा है। जो हुकुम देंगे करूँगा।'

'क्या चाहता है ?

'हुजूर, अहमदशाह अब्दाली के नाम एक फरमान जारी करें कि वे रियाया को परेशान न करें; दौलत वालों का चाहे जो कुछ करें मगर गरीबों को बिलकुल न सतायें।'

'अब्दाली से लड़ाई नहीं लड़ेगा क्या ?'

'नहीं हुजूर। लड़ाई में ज्यादातर गरीब सिपाहियों की ही जान जाती है। कोई फायदा नहीं।'

शिहाब की गांठ में सिपाही थे भी कितने ? और जो थे भी उनमें लड़ने के लिये कलेजा भी कितना था ? परन्तु शाहवली को यही हालत मालूम न थी।

शाह ने शिहाब से कहा, 'वैसे मैं इस झमेले में न पड़ता, मगर गरीबों को बरबादी से बचाना चाहता हूं।

एक ओर जरा सा मुंह फेरकर शाहवली ने अपने स्वर को जरा ऊँचा किया, 'अजीज।'

शिष्यों में से तेरह चौदह वर्ष का एक लड़का तुरन्त पास आ खड़ा हुआ। बोला, 'मैं हाजिर हूं।'

शाहवली ने कहा, 'शाहफना कब तक आयेंगे ? वे मेरा पैगाम लेकर दौरे पर गये थे।'

लड़के ने उत्तर दिया, 'दो दिन में आ जायेंगे, बाबा।'

शिहाब ने देखा छोकरा तेज है, परन्तु अनुमान लगाया कि उतना काइयां नहीं है जितना वह स्वयं इस आयु में था।

शाहवली ने शिहाब से कहा, 'मैं शाहफना को अब्दाली के पास भेजूँगा। शाहफना को अब्दाली जानता है और उसको मानता है। अब्दाली खुद भी तो शाह अब्दल नाम के फकीर की दुआ से ही इतना मशहूर हुआ है।'

शिहाब ने हर्ष-मग्न होकर शाहवली के पैरों पर सिर रख दिया। शाह ने उसका सिर हटाते हुये उद्बोधन किया, 'गरीबों की मदद करते रहना। उन्हीं की हिफाजत के लिये तुम्हारी अर्जी को कबूल किया।

थोड़ी सी फौज भी भर्ती कर लो। राजकाज में आखिर उसकी कुछ न कुछ जरूरत पड़ती ही है।'

शिहाब ने उसके पैरों में सिर रखा और चला गया।

साधारण मुसलमान जनता और सिपाहियों में शाहवली के व्यक्तित्व और जनतन्त्रवादी विचारों का बहुत प्रभाव था। उसने अरबी और फारसी में, जब वह अन्धा नहीं हुआ था, यूनानी और फ्रेंच भाषा से जनतान्त्रिक पुस्तकों का अनुवाद किया था। शाहवली का विश्वास था कि बादशाह और अमीर अपनी चरित्रहीनता और निर्बलता के कारण मुसलमानी राज्य कायम नहीं रख सकते। इसलिये वह भारत में 'इस्लामी जम्हूरी सल्तनत' निर्माण का पक्षपाती था।

शाहफ़ना के लौटने पर उसको अब्दाली के पास शान्ति की बातचीत के लिये भेजा गया। शिहाब के कुछ मुसाहिब भी उसके साथ गये।

शिहाब ने सैन्य भर्ती का जोर के साथ उद्योग किया। भर्ती होने के बाद जब सैनिकों की गणना की गई तब वे केवल तीन सहस्र निकले! और सामान ढोने के लिये केवल छै बैलगाड़ियां!! पांच सौ सैनिकों के पीछे एक बैलगाड़ी!!!

शिहाब के मुसाहिब और शाहफना, अब्दाली के पास से लौट आये। उसने गरीबों को न लूटने और न सताने का शपथपूर्वक वचन दिया। गरीबों का सताना व्यर्थ था, क्योंकि उनके पास लूटने के लिये रखा ही क्या था! अब्दाली दिल्ली की ओर बढ़ा। शिहाब ने उसके वचन का मूल्य आंक लिया।

निश्चय किया--मुगलानी बेगम की शरण पकड़नी चाहिये। वह उसकी कैद में थी।

उसके पास पहुँचा और बहुत पश्चात्ताप करने के बाद मुगलानी से बोला, 'मैं माफ किये जाने के लायक तो नहीं हूँ, पर आप मेरी बड़ी हैं, बुजुर्ग हैं। शाह अब्दाली आपकी बात मानेंगे। उस कमीने नजीब ने

अब्दाली के कानों में मेरे खिलाफ जहर भरा होगा। आप ही उस जहर को साफ कर सकती हैं।'

मुगलानी अपने हृदय के भीतरी रहस्यों और स्वभाव की कटुताओं को प्रकट करने वाली स्त्री न थी, उसको किसी प्रकार अपना छुटकारा अभीष्ट था। वह अब्दाली के पास जाने और वकालत करने के लिये सहमत हो गई। एक दिन अब्दाली के पास जा पहुँची।

(२१)

अब्दाली से मुगलानी का पर्दा न था। रिश्ते में भतीजी लगती थी। मुगलानी ने बातचीत के सिलसिले में अब्दाली से कहा, 'शिहाबुद्दीन इतना झूठा और मक्कार है कि उसका कोई भरोसा नहीं किया जा सकता। उम्दा बेगम के साथ, जमाना हुआ, उसका बाप निजामुलमुल्क सगाई पक्की कर गया था, मगर इस कमीने ने साफ इनकार कर दिया और एक नाचने वाली की लड़की के साथ शादी कर ली!'

अब्दाली ने अपने दोनों कटे हुये कानों पर हाथ रखे,—नादिरशाह ने इसके कान कटवा दिये थे,—और बोला, 'तोबा! तोबा!! मैं मुगलानी तुमको अपनी बेटी के बराबर समझता हूं। उम्दा बेगम मेरी लड़की की लड़की हुई। इसकी शादी बहुत अच्छे अमीर के साथ करवाऊँगा।'

अब्दाली की नाक के ऊपरी नथनों पर कोढ़ था और नाक के भीतर नासूर जिससे कम से कम दो गज की दूरी तक दुर्गंधि आती थी। मुगलानी को भय था कहीं अहमदशाह स्वयं उसकी लड़की उम्दा बेगम के साथ विवाह न कर डाले!

सतर्कता के साथ मुगलानी ने कहा, 'मैंने एक प्रहद किया है बाबाजान। मैं चाहती हूं उम्दा की शादी इसी शिहाब के साथ हो और वह कमीनी गन्ना बेगम उम्दा की टहलनी बनकर रहे। मेरा जो कुछ माल-असबाब शिहाब ने लूटा है वह मेरी लड़की को मिल जायगा।'

मुगलानी को अपनी 'बेटी' और उसकी लड़की को 'अपनी बेटी की लड़की' कहने वाला अहमदशाह दाढ़ी की नोक को टटोलकर कुछ सोचने लगा। मुगलानी इस सोच-विचार को भयंकर समझकर बोली, 'बाबाजान, अभी आपकी उम्र कुछ ज्यादा तो हुई नहीं है।'

'नहीं तो, यही करीब ५०, ५५, कुछ भी नहीं', अब्दाली ने कहा और सांस छोड़ी।

मुगलानी की समझ में स्पष्ट आ गया। बोली, 'शाहन्शाह मुहम्मद' शाह की शहजादी करीब सत्तरह साल की है। बेजोड़ हसीन। देखिये बाबाजान, इस मनहूस आलमगीर को। इस शहजादी के साथ इस उम्र में शादी करना चाहता था। वैसे कोई बात न थी, लेकिन दवामी मरीज है। हालत यह है कि अब मरता है और तब। टूट पड़ा इस छोटे से खूबसूरत फूल पर। मगर मां बड़ी पुख्ता तबियत की है। शादी से इनकार कर दिया। बादशाह ने बिचारी शहजादी को कैद मे डाल रखा है। आपके लायक है। आपके साथ शादी हो जायगी। वह हरम का जौहर बनेगी।'

अब्दाली ने जरा सा मुंह फेर कर कहा, 'मैंने सुना है। हजरत बेगम नाम है न ?'

'जी बाबाजान।' मुगलानी ने तुरन्त उत्तर दिया, 'आपको तो सब मालूम होगा।'

अब्दाली ने कहा, सब तो नहीं मालूम था। कुछ यों ही सुना था ? मगर अब यकीन हो गया है।'

मुगलानी बोली, 'आलमगीर के खुद तीन शहजादियां हैं जो काफी हसीन हैं। उसके हरम मे बहुत सी बांदियां बड़ी खूबसूरत हैं। दुनियां भर के कोनों से खोज-खोजकर लाई गई है। बाबाजान का जरा इशारा पाऊँ तो बात की बात में इन सब को सर कर लूं।'

वह उत्सुकता के साथ अहमदशाह की नासूरी कोढ़ी नाक, बूचे कान और तेज आंखो वाले चेहरे को देखने लगी।

अहमदशाह को किसी भी बात के निर्णय करने में विलम्ब नहीं लगता था उसने उम्दा बेगम की सीधी-सादी सूरत को देखा था। उसने कहा, 'मैं सोचता हूँ आलमगीर की एक शहजादी के साथ तिमूरशाह की शादी हो जाय और हजरत बेगम मेरे हरम को रोशन करे। तुम्हारा क्या ख्याल है, बेटी ?'

तिमूरशाह अब्दाली का लड़का था।

'बिलकुल ठीक है, बाबाजान ।' मुगलानी हर्षोत्फुल्ल होकर बोली, 'आपने बहुत दूर की सोची ! आप ही इतना सोच सकते हैं !! मैं अपनी कोशिश मे कामयाब हो जाऊँगी, लेकिन पहले दिल्ली पर दखल जमाना होगा ।'

अब्दाली ने चैन के साथ कहा, 'मैं जानबूझ कर दिल्ली धीमें धीमें जा रहा हूं । दिल्ली के सब सरदार धीरे धीरे मेरे पास सिमटते चले आ रहे हैं । बिना किसी तरह की लड़ाई भिड़ाई के दिल्ली पर कब्जा हो जायगा । जाटों की तरफ से कुछ अन्देशा था, मगर सूरजमल हमारी ताबेदारी के लिये तैयार है । मराठे दक्खिन और राजपूताने में उलझे हुये हैं । वे महीनों तक हमारा सामना करने के लिये नही आ सकते । मैं इस अर्से मे अपना सब काम कर लूंगा । पन्जाब से पटने तक जो पठान फैले हुये हैं वे सब पठानी हुकूमत की बाट जोह रहे हैं । कहीं कोई मुश्किल सामने नही आयगी ।'

मुगलानी ने अपनी जानकारी प्रकट की, 'बिलकुल सही फरमाया आपने । पठान अब अपनी हुकूमत फिर हिन्दुस्थान मे चाहते हैं । उनसे आपको काफी मदद मिलेगी । एक ख्याल जरूर कुछ दिक्कत पेश कर सकता है । शाहवली नाम का फकीर जम्हूरी सल्तनत कायम करने की फितरत में आम मुसलमानों को अपना चेला बनाता चला जा रहा है । ये लोग शायद लड़ बैठें ।'

'अभी नही बेटी मुगलानी ।' अब्दाली बोला, 'गरीब लोग भर पेट खाना और मन भर आराम चाहते हैं । उनको हुकूमत में और कोई दिलचस्पी नहीं होती । वे लोग आलमगीर और दिल्ली के अमीरों से नफरत करते हैं, हमारे लिये यह अच्छा है । शिहाब ने सुलह के लिये एक फकीर के साथ अपने कुछ मुसाहिब भेजे थे । वे गरीबों के लिये पनाह चाहते हैं । मैं खुद गरीब रहा हूँ । मैंने वादा कर दिया है । शाहवली या शाहफना या किसी शाह और फकीर से खतरा नही है । क्योंकि मुगलों फकीरों के शाहन्शाह शाह अब्दल

की दुआ और बरकत हासिल है। मैं तो चाहता हूं कि दिल्ली से अगर काफी माल असबाब मिले तो उसका बहुत सा हिस्सा गरीबों और फकीरों में बांट दूं।'

मुगलानी ने कहा, 'बाबाजान, दिल्ली में बहुत रुपया है, बड़ा माल है। मुझको राई रत्ती पता है। अभी मालूम करके आई हूं।'

मुगलानी ने अब्दाली की कामुकता को हजरत बेगम और सुन्दर बांदियों की ओर मोड़ ही लिया था, उसके प्रचण्ड धन—लोभ को और भी ज्वलन्त कर दिया। मुगलानी ने दिल्ली और उसके पड़ौस के विख्यात सम्पत्ति-केन्द्रों का सविस्तार वर्णन सुनाया और पते दिये।

अहमदशाह ने दिल्ली अपना दूत भेजा और दिल्ली की बादशाहत से दो बातें मांगी : पहली आलमगीर की लड़की अपने लड़के तिमूरशाह के लिये; दूसरी दो करोड़ रुपये नकद। एक भी शर्त के पूरा न होने की स्थिति में दिल्ली के अधिकारियों का सर्वनाश।

(२२)

इस समाचार के आते ही दिल्ली पर कालिख फिर गई। लोग भागने की तैयारी में जुट पड़े। शिहाब ने सलाह सम्मति के लिये दिल्ली के प्रमुखों को इकट्ठा किया। भागने का जिन्होंने आश्रय चुन लिया था उनकी सम्मति ही क्या हो सकती थी? परन्तु जब किसी से कुछ नहीं बन पड़ता, या जब कोई कुछ करना नहीं चाहता, तब इसी प्रकार के अधिवेशन करता है।

अधिवेशन में कुछ भी तै न हो सका। शिहाब ने मराठा-सहायता के लिये सांडनी सवार भेजे। अपने हरम और सम्पत्ति के अधिकांश को राजपूताने के एक सुरक्षित और विश्वसनीय स्थल—जयपुर—में भेज दिया। स्वयं गन्ना बेगम और कुछ बांदियों को लेकर रात में ही अब्दाली की शरण में चला गया!

जब सामने पहुंचा तब अब्दाली ने एक नाटक रचा।

अब्दाली ने कहा, 'तुम बड़े ही जलील हो! तुमने वजीर होते हुये भी दिल्ली की हिफाजत का कोई बन्दोबस्त नहीं किया!!'

शिहाब ने गिड़गिड़ाकर अभ्यर्थना की, 'आप जब इतने बड़े बचाने वाले मौजूद थे तो मैं क्या करता? मैंने फकीरों का दामन पकड़ा और फौज के भरोसे नहीं रहा।'

'तुमने नजीबखां की बेइज्जती क्यों की?'

'जहांपनाह, मैंने उनकी कोई बेइज्जती नहीं की। वे तो यों ही मुझसे नाराज हो गये। दो करोड़ रुपये मांगते थे। मैं कहां से देता? बुरा मान गये और दिन भर मेरी हवेली को घेरे रहे। मेरे पड़ोस का बाजार लूट लिया!'

'वह बिचारा और क्या करता? तुम्हारी हरकतों से तङ्ग आकर ही उसने ऐसा किया!'

'मैं जहांपनाह से माफी की दरख्वास्त करता हूँ।'

'एक कसूर है जिसको माफ कर दूं ? तुमने मुगलानी बेगम सरीखी पाक, खानदानी और इज्जतदार औरत की भी रुसवाई की ! मुगलानी बेगम की लड़की किस शहजादी से कम हैसियत की है ? तुमने की कराई सगाई को तोड़ा और एक बाजारू नाचने गाने वाली की लड़की के साथ शादी की ! यों ही हरम में डाल लेते तो भी कोई बड़े एतराज की बात न होती, मगर उसके साथ निकाह किया !! तोबा, तोबा !!!'

'मैं मजबूर हो गया था जहापनाह । मुगलानी बेगम ने शर्त रखी थी कि मैं अपनी सारी की सारी निकाहशुदा बीवियों को तलाक दे दूं और उनकी लड़की के साथ शादी करलूं । मजबूर हो गया हुजूर ।'

'और मुगलानी बेगम को कैद करके उसका माल असबाब भी लूट लिया ! यह बदकारी किस मजबूरी से की ?'

'जहापनाह, मुगलानी बेगम मेरी मामी होती है वह लाहौर में खतरे में थी । उनके सरदारों ने चारों तरफ से बगावत खड़ी कर दी थी । मैंने उनको अपने पास बुलाकर रख लिया । उनका माल-असबाब हिफाजत के साथ रखा है ।'

'जानते हो तुम किसके साथ बातचीत कर रहे हो ? बहुत चालाक होशियार और काबिल होते हुये भी मेरे सामने एक नालायक छोकरे ही हो ।'

'मैं जहापनाह को अपना बुजुर्ग न मानता होता तो पनाह में आता ही क्यों ?'

'और अगर मुझको मुगलानी बेगम का लिहाज न होता तो तुम अब तक इस तरह से बात ही न कर पाते । एक लहमे में सिर धड़ अलग कर दिया जाता ।'

'जहापनाह की रहमदिली का एतबार है ।'

'रहमदिली की हद होती है शिहाब । हुकुम दूंगा, मानोगे न ?'

'सिर और आंखों से ।' शिहाब का गला सूख गया था ।

'तो पहली बात यह है कि उम्दा बेगम के साथ शादी करो। तुमको अपनी किसी बेगम को तलाक नहीं देना पड़ेगा।'

शिहाब मन ही मन बहुत प्रसन्न हुआ। उसने सिर झुकाकर स्वीकार किया। हरम को एक और कुमारी मिली।

अब्दाली ने जरा कड़ाई के साथ कहा, 'दूसरी बात यह है कि वह गन्ना बेगम, उम्दा बेगम की लौंडी बांदी बनकर रहेगी। उसको उम्दा का पीकदान, पानदान वगैरह वगैरह उठाने की नौकरी करनी होगी।'

शिहाब सिर झुकाये रहा।

अब्दाली ने कठोर स्वर के साथ पूछा, 'क्या कहते हो ?'

शिहाब ने सोच लिया था, लौंडी बांदी होकर भी गन्ना बेगम रहेगी तो हरम ही में। हाथ जोड़कर बोला, 'खुदावन्द, मैं इस हुकुम को भी मानूंगा।'

अब्दाली के कठोर होठों पर हलकी सी मुस्कराहट आई और स्वर में तरलता। उसने कहा, 'दिल्ली के तख्त पर कोई भी बैठे, लेकिन वजीरुलमुल्क तुम्हीं को रखा जायगा। मन्जूर है ?'

शिहाब के गले में हिलकी सी आ गई और आंखों में आंसू। गद्‌गद् कण्ठ से बोला, 'जहांपनाह अन्धे को एक नहीं दो आंखें मिल जायें तो उसको और चाहिये ही क्या ?'

अफ़ग़ान बादशाह की आंख में काइयांपन था। उसने निगाह फेर ली। एकाध क्षण चुप रहा। प्रस्ताव किया, 'देखो बेटा शिहाब, दिल्ली का पुराना वजीर अभी जिन्दा है, हालांकि वह तुम्हारी कैद में है। उसने अर्जी भेजी है कि अगर उसको वजीर बना दिया जाय तो वह मुझे फौज के खर्चे के दो करोड़ रुपये देगा। तुमसे एक करोड़ ही लूंगा, क्योंकि मुगलानी को मैं अपनी बेटी के बराबर मानता हूं और अब तुम उसकी लड़की के साथ शादी करने जा रहे हो, इसलिये मेरे रिश्तेदार हो जाओगे। क्या कहते हो ?'

शिहाब ने घबराकर गिड़गिड़ाहट के साथ उत्तर दिया, 'जहांपनाह इतने रुपये का बंदोबस्त करना तो बहुत दुश्वार है। मगर बादशाह के पास छिपी हुई दौलत बहुत है। वहां से निकाल लेना मुमकिन होगा।'

अहमदशाह ने अपने मन में कार्य-क्रम बना लिया—यदि पहले से नही बना रखा था तो। इस कार्य-क्रम के अनुसार शिहाब का विवाह उम्दा बेगम के साथ किया गया और गन्ना बेगम को उसके पीकदान, पानदान इत्यादि उठाने की नौकरी लगाई गई,—कमल के फूल को पलाश-वृक्ष का खाद बनाया गया,—मुगलानी को उसका माल-असबाव लौटाया गया और शिहाब को कैद कर लिया गया—ऐसी कैद जिसमें वह अफगान छावनी के बाहर पैर नही पसार सकता था।

दिल्ली में अहमदशाह ने घोषणा करवाई कि दिल्ली को लोग छोड़कर भागें नही, गरीबों को बिलकुल नही सताया जायगा। दूसरा फरमान यह निकाला गया कि हिन्दू लोग तिलक छापा लगाकर निकलें अन्यथा मार दिये जायेंगे। हिन्दुओं ने डर के मारे मुसलमानी वेशभूषा कर ली थी। इस घोषणा के बाद उन्होंने सोचा धार्मिक स्वतन्त्रता मिली। पहले जैसा रहन-सहन कर लिया।

फिर लूटमार, कतल और रक्तपात का आरम्भ हुआ। तिलक छापे से हिन्दू तुरन्त पहिचान लिये जाते थे और समाप्त कर दिये जाते थे। जो स्त्रियां कुयें या नदी मे आत्मघात द्वारा अपनी रक्षा न कर सकीं उनके साथ बलात्कार किये गये, फिर या तो वे गुलाम बना ली गईं या मार दी गईं। इसके बाद मुसलमानो के साथ भी वे ही अत्याचार किये गये। दिल्ली लाशों, खून, आगो की लपटों और चीत्कारो से भर गई।

अब्दाली ने इन चीत्कारो के बीच मे तिमूरशाह, अपने लड़के को आलमगीर की कन्या से ब्याहा और लूट का माल तथा गुलामों को लदवा कर तिमूरशाह के साथ काबुल भेज दिया।

जनवध से बचकर कुछ हिन्दू मथुरा आये और कुछ मुसलमान आगरा। अहमदशाह ने चारों ओर विजन करने की आज्ञा जारी कर दी। उसको दो करोड़ रुपये न शिहाब दे सका और न भूतपूर्व वजीर। परन्तु लूटमार से उसने जो पाया वह दो करोड़ से अधिक था। फकीरों को अवश्य उसने नहीं सताया–उनको खिलाया भी खूब! आलमगीर को गद्दी से उतार कर कैद कर लिया!!

(२३)

दिल्ली में प्रवेश करने के पहले अहमदशाह ने अपनी सेना का एक दस्ता दिल्ली के उत्तर से यमुना उस पार दुम्राव मे भेज दिया था जिससे यमुना के पूर्वीय किनारे की रक्षा बनी रहे। उत्तर-पश्चिम से वह स्वयं आया था। दिल्ली और उसके आसपास का प्रदेश इन दो सेनाओं के शिकन्जे में दबोचा गया। फिर रुहेलों और अफगानों ने बेहिसाब रक्तपात, लूटमार और अग्नि वर्षा की।

जब शिहाब का समाचार ग्वालियर पहुंचा तब वहां एक छोटा सेनानायक अन्ताजी माणिकेश्वर था। राजपूताने से किसी मराठा सेना के आने की आशा न थी। उसने तुरन्त मालवा सूचना भेजी। वहां से उसको मालूम हुआ कि पेशवा कर्नाटक के युद्ध मे बीधा हुआ है और माधव जी सिन्धिया ताराबाई की विद्रोह-शान्ति में।

अन्ताजी केवल तीन सहस्र सवार और थोडी सी हलकी तोपें लेकर दिल्ली की ओर चल दिया। कुछ हाथी भी साथ मे थे।

दिल्ली के निकट पहुँचने पर उसको हृदय दहलाने वाले समाचार मिले।

उस समय तक मराठों में एक बडा भारी सैनिक-गुण था—वे नायक-विहीन या प्रधान-रहित हो जाने पर भी अपनी सूझबूझ से तुरन्त काम करने मे तत्पर हो जाते थे। संकट-पूर्ण परिस्थिति के भांप लेने की भीतरी सचित-शक्ति सामने आने वाले खतरे और खटके को पहले से ठीक समय पर उपचार को जता देती थी।

अन्ताजी और उसके सैनिकों ने ताड़ लिया कि लूटमार और रक्तपात तथा काम-वासना की बलात्-तृप्ति मे फंसे हुये अफगान और रुहेले उनका सहज ही विनाश नहीं कर सकेंगे। दिल्ली में कुछ मराठे रहते थे और उनकी सम्पत्ति भी वहीं थी। इन्हें दिल्ली से बाहर निकाल लाना इन सैनिकों की पहली भावना हुई। योजना बना लेने में उन्हें विलम्ब नहीं हुआ।

अन्ताजी रात की गड़बड़ और गुलगपाड़े मे लड़ते हुये उन सबको उनकी सम्पत्ति सहित निकाल ले आया ! जब दिल्ली से कुछ दूर निकल आया और नहीं हुआ था। मार्ग में अटके भटके विदेशी सिपाही मिले। इनसे मैदान को साफ करता हुआ अन्ताजी अपने पूरे दल सहित और आगे निकल गया। परन्तु इस मराठी 'गनीमी कावा' (छापामार युद्ध) की सूचना अहमदशाह अब्दाली को मिल गई। उसने तुरन्त चार हजार अफगानियों की सेना अन्ताजी के दल को समाप्त करने और उनका सामान झटक लाने के लिये पहुँचाई।

अन्ताजी दिल्ली से पांच कोस की दूरी पर निकल आया था। पीछे करने वाली शत्रु-सेना की सूचना उसके द्रुतगामी अश्वारोही जासूसों ने दी। उसने सोचा, मेरी सेना अपेक्षाकृत छोटी है इसलिये प्रचन्ड तेजी और सावधान पैंतरेबाजी से ही पार पाया जा सकेगा। स्त्री-बालक इत्यादि उसने मथुरा भेज दिये। सौ सवारों की एक टुकड़ी शत्रु सेना को अटकाने और फिर पीछे हटते हुये धोखे में डालने के लिये दिल्ली की ओर दौड़ा दी। निकट ही वृक्ष कुन्जें थीं। आड ओट लेकर उसने तुरन्त मोर्चे बांधे और तोपें गुणाकार (×) लगाईं।

सौ सवारों की मराठा टुकड़ी शत्रु सेना से, पूर्व योजना के अनुसार छिटपुट लड़कर वेग के साथ लौट आई और अन्ताजी के मुख्य भाग के पीछे चली गई। पूरे चार हजार की संख्या वाली अफगानी सेना तेजी के साथ आई। अन्ताजी ने उसके पुष्टकाय घोड़े, झिलम, लोह-कुले जिरह बख्तर और चमकती हुई तलवारें देखी। जैसे ही मराठी सेना की मार में शत्रु सेना आई कि उस पर तोपों के गोलों और बन्दूकों की गोलियों की बाढ़ पर बाढ़ पड़ी। क्रम अटूट था। पीछे से उन पर आ टूटे वे सौ सवार। शत्रु सेना ने कल्पना की कि कोई नई बला आ धमकी है ! अफगानों ने जमकर लड़ने का बहुत प्रयास किया, परन्तु न ठहर सके। चार सौ लाशें छोड़कर और इससे कहीं अधिक घायल लाद

कर वे दिल्ली की दिशा में भागे। मराठों के हाथ चार सौ बढ़िया खुरासानी घोड़े और साज सामान लगे। युद्ध तीन घण्टे हुआ था।

मराठी सेना का जो दस्तूर बन गया था उसने वही किया। वे आसपास के गांवों में नौ दिन तक लूट करते रहे और गांव वालों को अपना अहित-चिन्तक बनाते रहे।

अहमदशाह ने अपनी इस बुरी हार का समाचार सुनकर एक बड़ी सेना अन्ताजी के विरुद्ध भेजी।

अन्ताजी लूटे हुये सामान को मथुरा में अपने साथियों की सुरक्षा में छोड़ कर लौट पड़ा। अहमदशाह ने अबकी बार जो सेना भेजी वह बीस सहस्र अफगानों की थी रुहेले अलग। ये तीन भागों में बंटी। अन्ताजी घिर गया। धैर्य और टंडक के साथ लड़ा। उसके बहुत से नायक और सैनिक हताहत हुये। सन्ध्या समय वैरी की घनी पांतों में से बर्छों और तलवारों द्वारा मार्ग काटता हुआ अपने थोड़े से योधाओं के साथ निकल गया। ऐसी परिस्थिति में भी उसने अब्दाली के साढे सात सौ सिपाहियों और साढे तीन सौ घोड़ों को समाप्त कर दिया था। अब्दाली की सेना ने चार कोस तक उसका पीछा किया परन्तु उसे न पा सकी। लौट पड़ी। मार्ग में फरीदाबाद पड़ता था। वहां के छै सौ ग्रामीणों के सिर काटकर साथ ले लिये और दिल्ली में अहमदशाह के सामने पेश कर दिये। कहा,—'ये दुश्मनों के सिर हैं!'

अहमदशाह ने प्रति सिर आठ रुपये पुरस्कार में दिये!!

अन्ताजी मथुरा आकर सूरजमल से मिला। उससे अनुरोध किया 'अब्दाली से लड़ जाओ। वह हराया जा सकता है।'

सूरजमल ने उत्तर दिया,—'अब्दाली के पास सजी सजाई साठ हजार सेना है। लड़ाई व्यर्थ है।'

अन्ताजी ने आग्रह किया,—'हम थोड़े से मराठे और तुम्हारे वीर जाट अफगानों और रुहेलों को ऐसा पाठ पढ़ा सकते हैं कि वे कभी न भूलेंगे। दिल्ली रक्तपात से मुक्त हो जायगी।'

सूरजमल ने कहा,—'बादशाह के लिये वहां एक भी तो नहीं लड़ा-मरा, किसी ने उंगली तक नहीं उठाई। हमें तुम्हें ही क्या पड़ी जो कोल्ट की विपद सिर पर लें?'

'नहीं महाराज, यह युद्ध बादशाह के लिये नहीं होगा, वरन अपनी रक्षा और अपने धर्म की रखवाली के लिये होगा,' अन्ता ने हठ किया।

उसकी एक नहीं चली।

सूरजमल भरतपुर चला गया। अन्ता कुमुक की बाट में इधर उधर रहने लगा। राघोवा राजपूताने मे कर की वसूली पर जुटा हुआ था। दत्ताजी सिंधिया को बुलाने के लिये पत्र भेजा। उत्तर मिला कि यहां की लड़ाइयो में उलझे हैं, किसी को नहीं भेज सकते। अन्ता के पास कुमुक न आई, न आई।

अब्दाली ने सूरजमल से कर मागा और भरतपूर राज्य का एक बड़ा भाग दिल्ली सम्राट के नाम पर। दरबार मे हाजिर होंने के लिये फरमान भी भेजा।

सूरजमल शिहाब की दुर्गति का ब्योरा सुन चुका था। सोचा दो-चार पखवारों में कोई न कोई मराठी सेना आ जायगी, फिर अब्दाली का सामना कर लिया जायगा। जाट जनता अब्दाली से लोहा लेने के लिये तैयार थी, परन्तु अपने सामन्त नायको और सामन्तराज सूरज की कायरता के कारण मन मसोस मसोस कर रह गई। सूरजमल अपने प्राण, धन और मान की रक्षा के निमित्त कुम्भेर के किले में चला गया।

परन्तु उसके पुत्र जवाहरसिंह ने मथुरा का पडोस नही छोड़ा। वह जानता था कि अब्दाली और रुहेलों का आक्रमण ब्रज पर होने वाला है। वह उस दिन को नही भूला था जब उसने आगरा की एक कोठी के सामने घोड़ा कुदाया था, मार्ग में कोड़ा छोडकर फिर उठाने के लिये लौटा था। और किसी ने स्नेहभरी आखों उसे खिड़की से देखा था। न वह उस रात को भूल पा रहा था जब वह उस कोठी की बगीची की दीवार पर चढ कर भीतर कूदा था और किसी ने उसके कान में कुछ खुसफुस की थी। भरत के वाहर निकला हुआ वह हाथ भी बरावर स्मृति में कौंधता रहता था जिसे उसने अपने क्रुद्ध पिता के सामने सिर नवाये हुये अन्त मे कनखियों से ही देख पाया था। जवाहरसिंह ने जब दिल्ली और उसके आसपास किये गये अफगानी और रुहेली अत्याचारो के समाचार सुने तब प्रेम की उस अनुभूति को उसने हृदय के एक

कोने में ठेल दिया और कल्पना की : कृष्ण के व्रज में रक्त की नदी बहाई जाने वाली है। वह पिता के साथ कुम्भेर या किसी गढ़ में नहीं गया। यदि जवाहर के रहते मथुरा वृन्दावन न रहे तो जवाहर ने जन्म ही क्यों लिया ? अब्दाली ने जाट-जनपद पर आक्रमण कर दिया। पहली मुठभेड़ बल्लभगढ़ में हुई। छोटा सा किला, थोड़े से सैनिक। सभी रक्षक लड़ते लड़ते मारे गये।

अहमदशाह ने घोषणा की—

"...... जाटों की हद में घुस पड़ो। सबको तलवार की धार पर चढ़ा दो'''आगरे तक एक भी घर न खड़ा रहने पावे। हरएक कटे सिर पर पांच रुपया इनाम मिलेगा। लूट में जिस सिपाही को जो माल मिलेगा वह सब उसी का रहेगा।'

अब्दाली के सिपाहियों और रुहेलों ने इस घोषणा का अक्षरशः पालन किया!

'हिन्दू पदपादशाही' का स्वप्न देखने वाले पेशवाई सरदार और सैनिक राजपूताने को निचोड़ने में लगे हुये थे, परन्तु व्रज की रक्षा के निमित्त अपनी छाती अड़ाने और सिर देने एक वह था और उसके निशान साथी - जवाहरसिंह और उसके पांच सहस्र योधा, जवाहरसिंह जिसका एक हाथ अशक्त हो गया था और टांग लँगड़ी।

उन्होंने प्रण कर लिया था कि विदेशी शत्रु हमारी लाशों पर से व्रजराज की नगरियों में प्रवेश कर सकेगा अन्यथा नहीं।

और उन्होंने निभाया।

युद्ध ठन गया, मथुरा से उत्तर में चार कोस चौमुहां पर। नौ घण्टे लड़ाई हुई। नौ हजार अफगान और रुहेले मारे गये। घायलों की संख्या इससे दुगुनी होगी। तीन सहस्र जाट धराशायी हुये और शेष सब घायल। तब जवाहरसिंह शत्रुओं की ठोस कतारों को देखता हुआ निकल गया।

अब्दाली की सेना में दूसरे ही दिन वृद्धि हो गई। व्रज की सारी धरती रक्त से रंग गई। जिन्होंने कभी शस्त्र नहीं उठाया था, जो अंटी-

माला तक ही पुरुषार्थ की इति समझते थे, जो भक्ति और शक्ति के समन्वय को भूल गये थे, रक्त के प्यासे शत्रुओं ने उनका सर्वनाश कर दिया। अधिकांश स्त्रियों ने वही किया जो हिन्दू स्त्री की उस समय तक की परम्परा थी,—कुओं में गिर मरीं, फाँसी पर लटक गई, यमुना के नीले जल में, जहां कभी कृष्ण ने बांसुरी बजा बजाकर नाग को खिलाया और दबाया था, समाकर अनन्त शान्ति पाई।

अब्दाली की बहुसख्यक सेना तो थी ही, नजीबखां भी अपने सहस्रों रुहेलों के साथ आ गया था।

मथुरा में जो विध्वन्स और रक्तपात इन लोगों ने किया उसके बीभत्स का अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि आक्रमणकारियों ने वहां के मुसलमानों को भी न छोड़ा क्योंकि वे हिन्दुस्थानी थे—स्त्रिया, बालक, सम्पत्ति, मान-मर्यादा कोई भी उस बर्बरता से न बच पाये यद्यपि वहां के मुसलमानों ने घिघिया-घिघिया कर अपना पूर्ण परिचय भी दिया था।

इसके उपरान्त वृन्दावन की बारी आई। वहां आक्रान्ताओं ने जो कुछ किया वह मथुरा के अत्याचारों का भीषणतर सस्करण था। वर्णन करने में कलम थरथराती है।

शिहाब अब्दाली के पास दिल्ली में था। भला बनने के लिये उसने अब्दाली को सुझाया कि गोकुल को भी रौंद डालो। अब्दाली ने गोकुल-विध्वन्स की ठानी। मथुरा वृन्दावन जाने की अब आवश्यकता न रही थी, जा भी नहीं सकता था क्योंकि वहां इतनी सड़ांद फैल गई थी कि कुत्तों और गीधों को भी दुर्गन्धि आती होगी।

गोकुल को रक्त में सान डालने के लिये अब्दाली एक बड़ी सेना लेकर पहुँचा।

वहां चार सहस्र नागे थे—जो अपढ़ कुपढ़ होते हुये भी भक्ति और शक्ति का समन्वय जानते थे। वे निराट नगे, जैसा उनका नाम था। विदेशियों ने सोचा इन नगे फकीरों को तो एक सांस में ही चाट

जायेंगे। परन्तु ये नंगे जब तलवार लेकर पिल पड़े तब शत्रुओं का कलेजा कांप गया। बात की बात में उन्होंने शत्रु सेना के दो सहस्र अश्वारोही घोड़ों सहित चीर डाले! नागे भी उतने ही मारे गये। अब्दाली को एक सुझाव समय पर मिल गया: नंगे भड़ंगे नागों के गोकुल में धन दौलत कहाँ? अब्दाली ने स्वीकार कर लिया और वह आगरे की ओर उन्मुख हुआ। उसके पन्द्रह सहस्र सवार लूटमार और जनवध करते हुये जब आगरा के किले के निकट पहुंचे तब वहां के मुसलमान किलेदार ने अपने प्राणों की होड़ लगादी। अगनी तोपों के मुँह से उसने धड़ाधड़ गोले उगलवाये। लुटेरे आगरा छोड़कर लौट पड़े।

आगरा से लेकर दिल्ली तक एक भी गांव न बचा। एक भी गाँव मे एक झोंपड़ी तक खड़ी न रही न कोई किसान मजदूर, न ढोर बैल। सोना चांदी अफगान ले गये, धातु-पीतल रुहेलो ने झपट ली। घोड़े, गधे और ऊँट अफगानो ने बाधे, भैंसें गायें रुहेलो ने पकड़ी। उन सबके कृत्यों से ऐसा भान होता था जैसे पीढ़ियों से क्रूरता और बर्बरता का अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ अध्ययन किया हो और उसके अभ्यास के लिये ही हिन्दुस्तान में आये हों! यमुना में इतनी लाशें पड़ गईं थी कि उसका नीला जल पीला पड़ गया!

फिर प्रकृति ने आक्रमणकारियों को दण्ड दिया। लाशो के सड़ने के कारण हैजा फूट पड़ा और ये अत्याचारी प्रति दिन सैकड़ो की सख्या में मर उठे। अब पड़ी इन सबको लूट का माल लेकर भागने की। अकेले अब्दाली की लूट का माल अट्ठाईस सहस्र ऊँटो, गधो इत्यादि पर था।

बूचे, नाचुरी नकटे और कोढ़ी अहमदशाह के साथ मुगलानी बेगम के षड्यन्त्र ने सुन्दरी हजरत बेगम के साथ ब्याह करा दिया। बहुत से मुसलमान अमीरों और मन्सबदारो की बीवियां, बहुयें और बेटियां निकाल निकाल कर अहमदशाह के साथ करादी गईं।

अस्सी हजार सवारो के साथ लूट का माल लादे और गुलामों तथा बेगमों को लिये अहमदशाह काबुल चला गया। चार हजार बांदियां

भी काफिले मे थी, परन्तु वे एक रात अवसर पाकर निकल भागीं। लूट का माल इतना था कि बोझ ढोने वाले पशुओं की कमी हो गई। अब्दाली ने तोपें ढोने वाले जानवरों पर माल लादा, तोपें दिल्ली के निकट ही छोड़ दी !

अवसर पाकर सूरजमल इन तोपों को उठा लाया और अपने किलों पर चढ़ा दीं। भागे भूत की लंगोटी ही भली ! और पलेथर में आगरे के किले पर दखल कर लिया।

जाने के पहले अब्दाली आलमगीर को फिर से बादशाह, नजीब को अपना नायब और शिहाब को वजीर नियुक्त कर गया था।

(२५)

भारत शिहाब और नजीब की जन्मभूमि न थी, इसलिये उनको इसके लूटे, जलाये और काटे जाने पर कोई परिताप न था। अब वे अपनी स्थिति को दृढ़ करने में लग गये। परन्तु आपा-धापी में उन दोनों को एक दूसरे के मार्ग लाघने पड़े। पुराना वैमनस्य बढ़ता और पक्का होता चला गया। इन दोनों की योजनायें मराठा-विस्तार के मार्गों को काटने वाली थीं। दोनों मराठा-विग्रह से बचना चाहते थे और दोनों मराठा-मैत्री के अभिलाषी भी थे। परन्तु नजीब आत्म-निर्भरता और अहमदशाह अब्दाली की सहायता का विश्वासी था। उसकी तुलना में शिहाब की कुशाग्र कुटिलता, साधनों की संकीर्णता अधम-वासना और नैसर्गिक कन्जूसी थी। शिहाब ने मराठों को रघुनाथराव द्वारा निमन्त्रित किया और नजीब ने मल्हारराव होलकर को मित्र बनाने के उपाय किये। साथ ही अहमदशाह अब्दाली को तैयार रहने के लिये भी लिखा।

रघुनाथराव राजपूताने में था। साथ मे दत्ताजी और जोतीबा सिन्धिया और मल्हारराव होलकर भी।

दिल्ली की बादशाहत ने राजपूताने के द्वार मराठों की चौथ के लिये खोल दिये थे— अपनी बला टालने और राजपूताने को तङ्ग किये जाने की प्रेरणा से।

बाजीराव प्रथम जनता को स्वराज्य प्राप्ति के लिये एक करना चाहता था। जनता का हृदय, तथा कुछ और भी चाहता था, परन्तु उस चाह को अपनी भाषा नहीं मालूम थी और न किसी ने वह भाषा उसे दी। जनता का हाथ यह जानने ही नहीं पाया कि उसको किससे और कैसे मिलायें। पूना दरबार के ऋणों को चुकाने के लिये राजपूताने की मित्रता और सहानुभूति नहीं वरन् इसकी सम्पत्ति समेटने और अशान्ति बिखेरने के लिये मराठे राजपूताना में पहुँचे। राजपूत दिल्ली के

अधिक निकट सम्पर्क में रहने और अपनी निजी ठौर ठिकानों के मोह के कारण पूना की दूरी से और भी दूर जा पड़े। उनका स्वाभाविक स्वाभिमान मराठों की उद्दण्डता और धन-लोभ से कुपित हो गया। ये दोनों कभी एक न हो सके। जब रघुनाथराव के पास बालाजी पेशवा का राजपूताने में पत्र आया, 'क्षय रोग की तरह यह ऋण रोग मेरी और महाराष्ट्र राज्य की जान खाये जाता है, तुरन्त काफी रुपया भेजो जैसे भी मिले,' तब रघुनाथराव ने राजपूताने को और भी रौंदने कुचलने की क्रियायें कीं। अन्त में वह राजपूताना से थोड़ा सा ही धन लेकर पूना पहुँचा।

रघुनाथराव, मल्हार और दत्ताजी पेशवा से मिले। माधव जी भी उस समय पूना में ही थे।

रघुनाथराव ने उत्तर भारत की परिस्थिति बतलाते हुये कहा, 'नजीब और शिहाब दोनों, हम लोगों की सहायता चाहते हैं। क्या किया जाय?'

पेशवा ने उत्तर दिया, 'नजीब बहुत पाजी और दगाबाज है। शिहाब अपने काम का हो सकता है परन्तु अयोग्य है।'

आत्म-विश्वासी दत्ताजी सबको सन्देह की दृष्टि से देखा करता था। बोला, 'नजीब के हाथ में साधन और सेना है, परन्तु वह अब्दाली का भक्त और विश्वासी है और दिल्ली सिंहासन की कामना में वह हमारा प्रबल विरोध करेगा। शिहाब निर्बल होता हुआ भी वजीर है और बादशाह के तन मन पर उसका अधिकार है। इसलिये शिहाब को हथियाना चाहिये। विघ्न बाधाओं का कोई डर नहीं। एक दिन सबसे निबट लिया जायगा।'

पेशवा ने मल्हार की ओर दृष्टिपात किया।

मल्हारराव कुछ सोचने लगा।

मल्हार के पास, पेशवा से मिलने के पहले नजीब की एक चिट्ठी आई थी जिसमें उसने लिखा था : मैं आपका गोद लिया हुआ लड़का

हूं। आप जैसा हुकुम देंगे पालन करूँगा। आप कहेंगे तो मैं दिल्ली छोड़ कर चला जाऊँगा, फिर आप चाहे जिसके हाथ में दिल्ली दे दें। आप का हुकुम हो तो मैं अहमदशाह अब्दाली के पास चला जाऊँ और आप लोगों के बीच से सुलह करा दूं जिससे दोनों रियासतों की हद कायम करली जाय और लड़ाई झगड़ा न हो। मैं अपने लड़के जाबिताखां को पांच सात हजार रुहेलों की फौज के साथ खिदमत में कर दूंगा। यह मेरी वफादारी का सबूत होगा। अगर आपको यह सब पसन्द न हो तो फिर मुझे मजबूर होकर लड़ना पड़ेगा।'

मल्हार को नजीब की चिट्ठी का स्मरण हो आया। बोला, 'नजीब से वैर रखना ठीक नहीं जान पड़ता। नजीब को मिला लेना चाहिये और जाटों राजपूतों को अधीन कर लेना चाहिये। इसी में सुगमता है। इसके बाद फिर नजीब से या किसी से भी निबटा जा सकता है।'

दत्ताजी ने तुरन्त कहा, 'पञ्जाब पर अधिकार कर लेने के उपरान्त समस्या अपने आप हल हो जायगी।'

बालाजी पेशवा सिर खुजलाने लगा। एक क्षण बाद बोला, 'रुपये की इसी समय अटक है। जिस प्रकार हो रुपया पैदा करो।'

मल्हार ने कहा, 'रुपया राजपूताने में कम है, वादे बहुत हैं। रुपया जाटों के पास असंख्य है।'

माधव जी ने धीरे से कहा, 'जिस नजीब और उसके रुहेलों ने मथुरा वृन्दावन का सर्वनाश किया और दुआब की भूमि से मराठा जमींदारों को निकाल भगाया उसके साथ मेल जोल कैसे हो जायगा?'

मल्हार ने युवक माधव के प्रति उपेक्षा से सिर हिलाया।

दत्ताजी ने माधव के संकेत का समर्थन किया, 'बारी बारी से हमको इन सबों से निबटना है। रुपया नजीब की मैत्री से नहीं, सिहाब की मैत्री से मिल सकेगा।'

दत्ताजी को मल्हारराव की सचाई पर सन्देह था। वह अपना सन्देह प्रगट करने से न हिचकता, परन्तु बालाजी ने तुरन्त टोकते हुये कहा

'मुझको तो रुपया चाहिये, कही से भी लाओ। इलाहाबाद और पटना को एक ओर से अधिकार में कर लो, दूसरी ओर से दुआब में पहुंच जाओ। अवध का नवाब चक्की के दो पाटों के बीच मे आ जाने के भय से तुरन्त बहुत सा रुपया देगा।'

मल्हार ने प्रतिवाद किया, 'चक्की के पाटो के बीच मे आने के पहले ही वह नजीब को मिला लेगा। नजीब अहमदशाह अब्दाली की सहायता पायगा। चक्की फिर पीसेगी क्या ?'

'जाट जो है।' बालाजी ने तुरन्त सुझाव दिया।

'यही तो मैं सुझा रहा हूं', मल्हारराव ने कहने मे विलम्ब नहीं लगाया।

दत्ताजी ने कहा, 'परन्तु पहले दिल्ली को हाथ मे कर लेना चाहिये। शिहाब कमजोर और निकम्मा है। कोई बाधा नही पड़ेगी। फिर नजीब जाट, अवध या पजाब किसे ठीक किया जाय तुरन्त निश्चित हो जायगा। मैं स्वय दिल्ली और पञ्जाब को पहले हाथ में कर लेने के पक्ष में हूं। पञ्जाब अधिकृत कर लेने से अब्दाली नजीब को सहायता नही दे सकेगा।'

रघुनाथराव ध्यानमग्न यह सब सुनता रहा था। उसने इस विवाद को समाप्त करने का निश्चय किया।

रघुनाथराव ने अपने स्वभाव में भूत और भविष्य को इतनी प्रबलता के साथ संयुक्त कर रखा था कि वर्तमान प्रस्तुत ही न रहता था और यदि वर्तमान भूले-भटके सामने आ ही गया तो वह भूत और भविष्य दोनों, से कट कर सामने आता था।

उसने कहा, 'साहूकारो से कहिये कि धैर्य रखें। हमको जितने रुपये की अटक पड़े, देते जावें। रुपया मारा नही जा सकता। सारा हिन्दुस्थान हमारे कमाने के लिये सामने पड़ा है। हम वापिस जाकर राजपूताने से कुछ और उगाहते हैं, उसके बाद जैसा दत्ताजी ने सुझाया है दिल्ली, पन्जाब इत्यादि की समस्या का हल करेंगे।'

मल्हारराव की समझ में आ गया कि अपने मत का और अधिक आग्रह करने से नीचा देखना पड़ेगा। बिना उत्साह के बोला,—'करके देख लिया जाय।'

बालाजी को अवगत हुआ कि दिल्ली और पन्जाब के कार्य-क्रम का नायकत्व होलकर के हाथ मे नहीं देना चाहिये, परन्तु वह इस बात को रघुनाथराव के मुह से निकलवाना चाहता था।

उसने पूछा, 'रघुनाथ, किस सरदार के हवाले कौनसा काम किया जाय ?'

रघुनाथराव ने अपने निश्चय को सुनाया, 'दत्ताजी और माधव जी को दिल्ली पन्जाब, होलकर को राजपूताना और मुझको दुआब।'

'तुम प्रधान सेनापति रहोगे ही,' पेशवा ने कहा। उसे रघुनाथराव की बात अच्छी लगी, परन्तु होलकर को पुचकारने के लिये बोला, कार्य-क्षेत्र के बटवारे को किसी कठोर रेखा से विभक्त किया हुआ न समझा जाय। जब जैसे अटक पड़े तब योजना और कार्य-क्रम के रूप को अदल-बदल लेना। मैं कुछ रुपये का प्रबन्ध करता हूं। साहूकारों की हुंडिया लेकर देता हूं। इनको मालवा और उत्तर भारत में भुनवा लेना।'

माधव जी से उसने कहा, 'तुमने दक्षिण के युद्धों मे बहुत नाम कमाया है। ऊँची समझ के हो। तुमको अब उत्तर हिन्द में बहुत काम करने को मिलेगा। अभी तक तुम उस ओर नही गये हो।'

दक्षिण की लड़ाइयां अब उतनी महत्व की नही रही थीं।

उत्तर हिन्द में जाने की बात से उसको ऐसा लगा मानो किसी आकर्षण, किसी कुतूहल, किसी जिज्ञासा के साथ संसर्ग स्थापित करने की घड़ी आ गई हो।

माधव जी ने उमङ्ग प्रकट की, 'मैं पिता जी के सङ्ग उत्तर भारत के अनेक सुहावने स्थान देख आया हूं, परन्तु तब छोटा था। अब बड़े भाई के साथ देखूंगा।'

(२६)

बीस हजार मराठा योधाग्रो की सेना दक्षिण दुग्राब मे कुछ महीने बाद जा पहुँची। जाटो से मेल कर लिया गया। तीन साढे तीन वर्ष पहले सूरजमल ने दो करोड़ रुपये देने का जो वचन दिया उसका पालन प्रारम्भ हो गया। इसके बदले मे मराठों ने सूरजमल के हाल में ही अधिकार मे किये गये इलाको को उसके राज्य का अंग मान लिया। सूरजमल ने आगरे का किला अपने हाथ मे कर लिया था, मराठों ने उसके इस अधिकार को भी स्वीकार कर लिया। राजपूताना में थोड़ी सी सेना छोडकर दत्ताजी और माधव जी भी दुग्राब के निकट आ गये। मराठी सेना यमुना के पूर्वीय किनारे से उत्तर की ओर फैलने लगी।

बादशाह आलमगीर ने अहमदशाह अब्दाली के चले जाने के उपरान्त नजीब को अपने इलाके की मालगुजारी वसूल करने पर नियुक्त किया था। नजीब ने कसकर वसूली की, परन्तु बादशाह को वसूली का पाचवें भाग से भी कम दिया। बादशाह ने तंग आकर गुप्त रूप से मराठों से सहायता मागी।

मराठा को एक दल दिल्ली के उत्तर में, मेरठ के पास, नजीब के एक दस्ते से जा भिड़ा। इस युद्ध मे बहुत रुहेले मारे गये। परन्तु नजीब ने दिल्ली नही छोड़ी। उसने शिहाब से सहयोग मांगा। शिहाब पहले ही मराठो से मिल चुका था। वह मराठो की छावनी में चला गया। परन्तु वह अपने हरम के आधे भाग को ही दिल्ली से बाहर कर पाया था,—इस हटाये हुये भाग में उम्दा बेगम और गन्ना बेगम भी थी,—बाकी हरम दिल्ली मे रह गया। मराठो ने दिल्ली को घेर लिया। नजीब लडने लगा। उसने शिहाब की हवेली को लूटने के लिये आदमी भेजे। हवेली के अङ्गरक्षको ने थोड़ा सा सामना किया फिर रह गये।

नजीब ने अपने कुछ साथियों सहित स्वयं हरम मे घुसकर उसकी बेगमों के साथ अत्यन्त निर्लज्ज अत्याचार किये ।

उम्दा बेगम और गन्ना बेगम अपने भाग्य से ही पहले बच निकली थीं।

अवध के नवाब शुजाउद्दौला ने भी मराठो की मैत्री चाही । परन्तु मित्रता के सिवाय अवध और दुम्राब में भी इस समय उनके लिये रक्खा ही क्या था ?

मुसलमान सरदार और हिन्दू सामन्त एक दूसरे की जमीन और सम्पत्ति के अपहरण मे व्यस्त थे । जले हुये मकानों और वीरान गांवो को आबाद करने के लिये जो थोडे से किसान इधर उधर से आ रहे थे उनके ऊपर लूटमार बरसने लगी और वे स्वयं अपने उदरपोषण के लिये एक दूसरे पर हाथ डालने लगे । दिल्ली का पड़ोस इससे भी गई-बीती अवस्था मे था । और दिल्ली खास की दशा तो भय और बीभत्स से भरी हुई थी । हथियारबन्द गुण्डे चाहे जिसके घर मे घुस पड़ते थे और जो कुछ हाथ पड़ता उठा ले जाते थे । दिन दहाड़े यह सब हुआ करता था । मिलकर दस-पाँच पुरुष भी दिल्ली के एक भाग से दूसरे भाग में बिना ठुके-पिटे और लुटे नही जा सकते थे ।

नजीब से मराठों ने दुआब के उस खण्ड की चौथ मागी जिसको उन्होंने बरसों पहले जागीर मे—या चौथ के बदले में—लिया था । यह खण्ड इस समय नजीब के अधिकार मे था । नजीब ने नाहीं कर दी, इसलिये मराठो ने दिल्ली का घेरा डाला था । यह घेरा रघुनाथराव के नायकत्व में चला ।

नजीब ने विवश होकर सन्धि की प्रार्थना की । मल्हारराव होलकर बीच मे पड़ा ।

इन दोनो का मिलन अकेले में हुआ । नजीब ने होलकर के पैर छुये । होलकर ने उसके सिर पर हाथ फेरा ।

नजीब ने कहा, 'मेरे साथ नाहक लड़ाई छेड दी गई । शिहाबुद्दीन इमादुलमुल्क कितना कमीना है आप लोगो को जल्दी मालूम हो जायगा ।

मैं अपने को आपका गोद लिया लड़का समझता रहा हूं। अब मेरी गर्दन आपके सामने है।'

बूढ़ा सिपाही मल्हारराव काइयाँ था परन्तु नजीब के तौल की कुटिलता उसमे न थी। नजीब के विनम्र स्वर से प्रसन्न हुआ। बोला, 'बेटा, मैं तुमको सचमुच लड़के के बराबर समझता हूं।'

नजीब ने पूछा, 'हुजूर ने मेरी चिट्ठी के जवाब में लिखा था कि सब शर्तें मन्जूर हैं। उसका अमल क्यों देखने में नही आया? मुझको दूध की मक्खी की तरह निकाल कर शिहाब को क्यों सिर पर चढ़ाया गया?

मल्हारराव उस प्रकार के हिन्दुओ मे से था जो किसी बड़े मुसलमान सरदार, विशेष कर हिन्दुस्थान के बाहर के पठान तुर्की या ईरानी सरदार की चिरौरी को अपने लिये कोई देन समझते थे और झुक जाते थे। मल्हार ने उत्तर दिया, 'मैंने श्रीमन्त पेशवा के सामने आपकी बात को बहुत सहेजा था, पर रघुनाथराव और दत्ताजी सिन्धिया के मारे मेरी नही चल सकी।'

नजीब तुरन्त बोला, 'मेरे लिये आपकी नेक-ख्याली और दुआ ही बहुत है। अब मेरे लिये क्या हुकुम है? मैं फौरन अपनी जागीर पर चला जाऊंगा। हुजूर दिल्ली का चाहे जैसा बन्दोबस्त करें मुझे कोई मतलब नहीं।'

मल्हार ने कहा, 'उत्तर दुआब का इलाका तो शिहाबुद्दीन को जागीर में दे दिया गया है। वहां रखने की शर्त रघुनाथराव नही मानेंगे।'

नजीब ने दांत पीसे, परन्तु एक क्षण में अपने को संयत कर लिया। बोला, 'खुदा ने हाथ पैर दिये हैं। कहीं न कहीं खाने को कर लूंगा। गंगा के पूर्व में चला जाऊंगा। वहां और बहुत से रुहेले जा बसे हैं।'

'वहां अवध के नवाब से टंटा होगा।'

'मुझको उसकी जरा भी परवाह नही। देखूंगा। वह आपके साथ शायद ही वफादारी बर्ते।

'देखा जायगा अभी हमको उससे नहीं लड़ना है।'

'जाटो के साथ? इनको तो शायद दोस्त बना लिया गया है?'

मल्हारराव को स्मरण हो आया कि बात आवश्यकता से अधिक बताई जाने की नौबत आ रही है। मुस्कराकर बोला, 'उनके साथ अभी तो कोई बखेड़ा नहीं है।'

नजीब ने तुरन्त दूसरा प्रश्न किया, 'इसके बाद पञ्जाब पर निगाह डाली जायगी क्या? अगर मुझको अपना लिया होता पेशवा ने तो मैं उस सूबे में आप लोगो की कुछ न कुछ मदद करता।'

अब मल्हारराव ने कुछ भी और बतलाने से मन में नाहीं कर ली। उत्तर दिया 'जो कुछ निश्चय किया गया है या किया जायगा मालूम हो जायगा। इस घड़ी तो आपके मामले की चर्चा है। मैं आपका बुरा नही चाहता, इसीलिये आपसे अकेले में मिला। मेरी राय है कि आप रघुनाथराव की शर्तों को मान जाइये और दिल्ली को हम लोगों के हवाले करके चले जाइये।'

नजीब अपने भीतर निश्चय कर चुका था, और जिस भाषा में उस निश्चय को प्रकट करना था यह भी तै कर चुका था, बोला,

'बापूजी, एक शर्त है।'

'क्या?' मल्हारराव ने पूछा।

नजीब ने मिठास के साथ शर्त पेश की, 'अपने इस लड़के पर आपका हाथ बना रहे। और मुझको कुछ नहीं चाहिये। और लोग जो मेरे साथ बदी करेंगे उनको एक एक को देख लूंगा।

मल्हार ने हँसकर कहा, 'जितने मुसलमान सरदार हैं, उनमें सबसे अधिक लिहाज मुझको तुम्हारा ही है।'

नजीब ने फिर पैर छुये और चला गया। दूसरे दिन नजीब ने दिल्ली का किला खाली कर दिया और अपने सिपाहियों तथा सामान के साथ

चला गया। गङ्गा पार जाकर उसने दम ली। परन्तु उसने अहमदशाह अब्दाली को पूरा कच्चा चिट्ठा लिख भेजने में विलम्ब नहीं किया, साथ ही उसने अनुरोध किया कि हिन्दुस्थान पर चढ़ बैठने में देर न लगावे और 'मराठों काफिरों' को दिल्ली से निकाल दे। नजीब ने कर या दण्ड का एक पैसा भी मराठों को नहीं दिया। उसका लड़का जाबिताखां और कुछ रुहेले उत्तरी दुआब के कुछ भाग में फिर भी बने रहे। रघुनाथराव और मल्हार इस भाग मे गये और रुहेलों को भगा कर लौट आये। यह भाग वजीर शिहाब की जागीर में आ गया। वजीर ने अपने कामदार वहां भेज दिये।

रघुनाथराव और मल्हारराव होलकर ने पंजाब की ओर कूच किया। सरहिन्द के अफगान सूबेदार को मल्हार ने लड़ाई मे हराया। दो सेना नायक कैद कर लिये, परन्तु रघुनाथराव ने कैदियों को मारा नहीं, वरन उनके साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया। इस विजय की सूचना पाकर अदीना बेग मराठों से आ मिला। अदीना बेग के साथ काफी सिख सैनिक भी थे।

लाहौर मे अहमदशाह अब्दली का लड़का तिमूरशाह सूबेदार था। मराठी सेना ने उसे लाहौर से भगा दिया। काबुल से अहमदशाह का वह सेनापति लड़ने आया जिसने मथुरा-विनाश किया था। इस युद्ध में उसका लड़का मारा गया और वह स्वयम् घायल हो गया। उसका और तिमूरशाह का सारा सामान लूट लिया गया। बहुत से सिपाही मारे गये और बाकी कैद कर लिये गये।

इस लड़ाई में माधव जी भी थे। लड़ाई की समाप्ति पर अदीना बेग ने कहा, 'इन ईरानियों तूरानियों को तलवार के घाट उतार देना चाहिये। ये बड़े जालिम और बद होते हैं।'

माधव जी ने प्रतिवाद किया, 'सभ्य कहलाने वाले लोगों की लड़ाई की यह रीति नहीं है। ये चाहे जैसे हों, हम लोग तो वैसे नहीं हैं।'

अदीना बेग ने हठ किया, 'इन लोगों ने मथुरा वृन्दावन में खून की नदी बहाई थी।'

माधव जी दृढ़ रहे। बोले, 'क्या मालूम इन लोगों ने बहाई या औरों ने। उस खून को बहाने वाले वहीं घेर कर मार दिये जाते, तो बिलकुल ठीक होता। या, इनमें से जो उस पाप के करने वाले पहिचाने जा सकें वे मार दिये जायें, पर ये तो कैदी हैं, मारे नहीं जा सकते।'

अदीना बेग को मानना पड़ा। वे कैदी मराठी सेना में भर्ती हो गये।

अदीना बेग को लाहौर का सूबेदार नियुक्त करके और मुल्तान इत्यादि बड़े स्थानों पर मराठा-चौकियां स्थापित करके रघुनाथराव दत्ताजी और माधव जी दिल्ली की ओर लौट पड़े, क्योंकि नजीब ने बिहार के कामदारों को उत्तरी दुआब से निकाल भगाया था और वह उस प्रदेश में बराबर अपना अधिकार बढ़ाता और दृढ़ करता चला जा रहा था।

मल्हारराव होलकर को राजपूताने की ओर भेज दिया गया। दत्ताजी और माधव जी को नजीबखां के दमन का कार्य सौंपा गया। रघुनाथराव दक्षिण चला गया।

(२७)

अट्ठारहवीं शताब्दि की मध्यकालीन राजनीति के अनुसार ही था कि बादशाह का एक शाहजादा शाहआलम बल विक्रम के व्यायाम से साम्राज्य का विस्तार करे। निकल पडा दिल्ली के बाहर और कर दी चढ़ाई कुछ निकटवर्ती जमींदारो पर! शिहाब ने बादशाह को साथ लिया और शाहजादे से जा भिड़ा। मराठों की एक टुकडी ने भी सहायता की। शाहजादा हार कर भागा और भटकते भटकते नजीब के पास पहुंचा। नजीब ने उस नासमझ का साथ देने से नाही करदी। शाहजादा अवध के नवाब के पास जा टिका।

दत्ताजी ने पंजाब से लौटते ही समझ लिया कि सिहाब की अपेक्षा नजीब को साथ लगा लेना अधिक श्रेयस्कर होगा।

यमुना उस पार जाकर दत्ताजी ने नजीब को बुलवाया। नजीब को सन्देह था कि कहीं दत्ताजी अपनी छावनी मे उसे धोखे से मरवा न डाले, क्योंकि उसने सुन लिया था कि दत्ता सहसा-प्रवर्ती है, परन्तु आश्वासन मिल जाने पर वह आया। उसके साथ में कुतुवशाह नामक एक फकीर भी था। यह शाहवली के शिष्यो मे से था और अब अपनी जिम्मेदारी पर काम कर उठा था। वह नजीब की सेना में एक अच्छे पद पर था। जब नजीब आया दत्ताजी के पास माधव जी और उसका चिटनीस थे। चिटनीस कागज और कलम दावात लिये जरा फासले पर बैठा था।

शिष्टाचार के उपरान्त नजीब ने कहा, 'मेरे बापू अच्छी तरह हैं?'

दत्ताजी ने आश्चर्य के साथ पूछा, 'आपके बापू कौन?'

नजीब ने उत्तर दिया, 'मैं आपके मशहूर सरदार और बुजुर्ग मल्हारराव होलकर को बाप के बराबर मानता हूं। बापू से मेरा मतलब उन्ही से है।'

'अच्छा ! वह !!' बढ़े हुये अचम्भे को कठिनाई के साथ दबाकर दत्ताजी ने कहा, राजपूताने में हैं। जयपुर और जोधपुर के राजा हमारा रुपया नहीं देते इसलिये वहाँ लड़ाई लड़ रहे हैं। सफल होकर जल्दी लौटेंगे।'

'जयपुर राजपूताने का सबसे बड़ा और सबसे मजबूत राज है', नजीब बोला, और जिस प्रसंग के लिये दत्ताजी ने उसको बुलाया था उसके प्रारम्भ की प्रतीक्षा मे दूसरी ओर देखने लगा।

दत्ताजी ने कहा, 'कितना भी बड़ा राज्य हो, हम उसे झुका कर रहेंगे।'

दत्ताजी जरा नाटे कद का चालीस वर्ष का चौड़ा चकला सावला जवान था।

माधव का रङ्ग-रूप उससे बहुत मिलता था। बातचीत के प्रारम्भ के पहले ही नजीब ने माधव के विषय में जानना चाहा। 'आप कौन साहब हैं ?' उसने पूछा।

दत्ताजी ने उत्तर दिया, 'मेरा छोटा भाई माधव जी। आपके साथ ये कौन हैं ?'

नजीब ने बतलाया, 'आप नामी फकीर शाह कुतुब हैं। मशहूर औलिया, शाहवली की जमात के। आपके यहाँ जैसे नागे सिपाहीगीरी करते हैं, वैसे ही इनकी जमात का भी काम है।'

कुतुबशाह बेधड़क बोला, 'हम लोग दीन इस्लाम की तरक्की के लिये सिर मुड़ाये फिर रहे हैं।'

माधव ने दत्ताजी से. धीरे से कहा, 'रुहेले सरदार से बात कर लीजिये।'

दत्ताजी ने अनसुनी कर दी। फकीर ने पूछा, 'सिपाहीगीरी का काम तो हमारा इनका है। आपका काम दीन धर्म की बातें सिखलाने का है।'

फकीर ने निर्भयता के साथ उत्तर दिया, 'फिर आपके नागों और गुसाइयों को सबक कौन सिखलायेगा ?'

'ये बिचारे तो धर्म की रक्षा करने के लिये सिपाही बन जाते हैं।' दत्ताजी ने बहस बढ़ाई।

नजीब चुप था। माधव जी चिन्तित।

फकीर बोला, 'हमारी जमात अपने लोगों को यह सिखलाने के लिये बनी है कि हिफाजत करने के लिये दुश्मन के वार का इन्तजार मत करो, बल्कि पहले हमला करदो—'

माधव जी ने बहस के दीर्घ होने की प्रतीक्षा नहीं की। तुरन्त कहा, 'दादा जिस काम के लिये इन लोगों को यहां बुलाया है उसकी तो चर्चा करिये।'

दत्ता बोला, 'अच्छा फकीर साहब, इस बहस के लिये अभी समय नहीं है। फिर कभी देखा जायगा।'

नजीब से कहा, 'मैं चाहता हूँ कि आप हम लोगों का साथ दें।'

नजीब ने शिकायत की, 'महीनों पहले मैंने सरदार होलकर की मार्फत अपनी शर्तें पेश की थीं, मगर आप लोगों ने न सिर्फ मेरी कोई परवाह नहीं की, बल्कि शिहाबुद्दीन का पक्ष लेकर मुझसे लड़ बैठे। अब अगर उससे आपका मन ऊब गया हो तो मैं अब भी आपका साथ देने को तैयार हूँ। इससे ज्यादा मैं अपनी सफाई और क्या दे सकता हूँ कि शाहजादा शाह आलम के बहुत कहने पर भी मैं आप लोगों के खिलाफ़ नहीं हुआ?

दत्ताजी ने देखा नजीब के तर्क में सबलता है। बोला, 'मैं आपकी सब शर्तों को स्वीकार करता हूँ।'

नजीब ने बिना किसी अटक के कहा, 'मैं आपका साथ देने को तैयार हूँ। आप शिहाबुद्दीन को फौरन दिल्ली से निकालें।'

दत्ताजी ने तुरन्त प्रस्ताव किया, 'वह निकाल दिया जायगा। आप बिहार की तरफ कूच करें। बिहार और बंगाल दिल्ली से कट गये हैं। इनको दिल्ली में फिर से मिलाना है। श्रीमन्त पेशवा की आपके लिये यह पहली शर्त है। उनको रुपये की बड़ी जरूरत है। दिल्ली के ऊपर

बहुत रुपया चढ़ गया है। वह रकम बिहार और बङ्गाल की मालगुजारी से ही चुकाई जा सकती है।'

बंगाल बिहार की दूरी, वहां के युद्ध की कठिनाई और अनुपस्थिति में अपनी जागीर के खटाई में पड़ जाने की पूरी सम्भावना के समझने में नजीब को एक क्षण भी नहीं लगा। उसने धीमे दृढ़ स्वर में प्रतिवाद किया, 'अभी कुछ महीने हुये जब आपके एक फौजदार गोविन्दपन्त बुन्देले ने मेरे इलाके के एक टुकड़े पर कब्जा कर लिया। बिहार की तरफ जब फौज के साथ चला जाऊँगा तब न मालूम क्या से क्या हो जायगा।'

कुतुबशाह ने कहा, 'पहले पंजाब को उसके असली मालिक बादशाह अहमदशाह अब्दाली को लौटाइये, तब हम लोगों को भरोसा होगा। इसके बाद बिहार की तरफ जाने न जाने की बातचीत हो सकती है।'

दत्ताजी को रोष आ गया, 'जाने न जाने की! पञ्जाब को लौटा दो!! उसका असली मालिक वह डाकू अहमदशाह!!! पञ्जाब के लौटा देने पर बातचीत होगी!!!! फिर भी सन्देह है—जाने न जाने की बात!!!!! ओफ, आप किस प्रकार के लोग हैं।'

नजीब बोला, 'भरोसा, विश्वास दुतर्फा होता है। इकतर्फा नहीं। पञ्जाब आपके हाथ में रहे और मैं बिहार बंगाल के चक्कर काटता फिरूँ! जब अहमदशाह अब्दाली अपनी बेतादाद फौज को लेकर आ कूदेगा तब तो मैं कहीं का भी न रहूँगा।'

अहमदशाह अब्दाली के नाम ने दत्ताजी को और भी क्षुब्ध कर दिया। नजीब से कहा, 'जब अब्दाली आ कूदेगा हम बैठे न रहेंगे। अब की बार अब्दाली कुछ सबक सीखकर जायगा।'

कुतुबशाह ने कुछ कहने के लिये गर्दन आगे की ही थी कि नजीब ने आंख से उसका निवारण किया। मुस्कराकर बोला, 'कुछ जल्दी नहीं है। एकाध दिन में सोचकर तै कर लीजिये। अभी तो आपको गुस्सा आ गया है। शान्त होने पर पर धीरज के साथ सोचियेगा। हिन्दुस्थान की

खैर इसी मे है। पंजाब को अब्दाली शाह की सल्तनत मे रहने दीजिये, और मेरा इलाका आजादी के साथ मेरे और मेरे वारिसो के हाथ में बना रहे। बाकी हिन्दुस्थान मे आप चाहे जो करते रहिये हमको या शाह अब्दाली को कोई वास्ता नही।'

फकीर तुरन्त बहस मे कूद पडा, चाहे जो कैसे करते रहिये ?'

दत्ताजी का क्रोध शान्त नही हुआ। वह कुछ कहने के लिये तड़प-सा उठा, परन्तु माधव जी ने तुरन्त कहा, 'मुसलमानो को हमारे महाराष्ट्र देश में किसी तरह का कष्ट नही है। उनके धर्म मे कोई बाधा नहीं डाली जाती।'

'इतने से हमारा मन नहीं भरता।'

नजीब ने कहा, 'ठहरिये शाह साहब, यह बहस कुछ और है।'

दत्ताजी को एक स्मरण हो आया। बोला 'सरदार साहब, आपके ऊपर हमारा पाच लाख रुपया चाहिये। आप भूले न होंगे कि दिल्ली से आप इस रुपये के चुकाने की ही शर्त पर छूट पाये थे।'

नजीब ने मिठास प्रकट किया, 'मैं पेशवा के भाई साहब रघुनाथराव दादा की नेकी को भूला नही हूं, मगर तगदस्ती की वजह से अभी तक नही दे सका। जल्दी इन्तजाम अब भी नही कर सकूँगा।'

दत्ताजी नजीब को पकड लेना चाहता था, परन्तु वह आश्वासन दे चुका था। कुछ धैर्य के साथ बोला, 'कब तक देंगे आप यह रुपया ? मुझे श्रीमन्त पेशवा को उत्तर देना है। मैं रुपये की वसूली में देर लगाने का अभ्यासी नही हूँ।'

'और न मैं उसके चुकाने का।' नजीब ने हँसते हुये कहा,—'मैं घर का हिसाब किताब देखकर कल ही जवाब भेजूँगा। तब तक आप भी मेरी बातो को ध्यान के साथ सोच लीजियेगा।'

नजीब कुतुबशाह के साथ चला गया।

माधव जी नीचा सिर, किये कुछ सोच रहे थे। दत्ताजी से वे दस बरस छोटे थे, परन्तु बड़े भाई का पूरा आदर और स्नेह पाये हुये थे।

दत्ताजी को लगा माधव को कुछ असर गया है। बोला, 'भैया, सुना इसके प्रस्ताव को ? कहता था पन्जाब को हिन्दुस्थान से काट कर अब्दाली के झोले में डाल दो ! और मुझको दुआब का स्वतन्त्र नवाब बन जाने दो !! श्रीमन्त पेशवा इन दोनों विचारों के बिलकुल विरुद्ध हैं। किसी हालत में भी हम लोग इस प्रकार के प्रस्ताव को नहीं मान सकते। इसका मान लेना आत्मघात के समान होगा। हम लोग दक्षिण से आत्मघात करने के लिये नहीं चले हैं।'

माधव जी ने कहा, 'दादा, श्रीमन्त पेशवा ने वर्जित न भी किया होता तो हम लोग इस प्रस्ताव को कभी स्वीकार नहीं करते।'

दूसरे दिन नजीब का उत्तर आ गया। उसने स्पष्ट कहलवाया, 'पन्जाब को शाह अब्दाली के हवाले करिये, सिहाब को दिल्ली से निकालिये और मुझको पूरे दुआब का इलाका आज़ादी के साथ बर्तने दीजिये तो हमारा आपका मेल मिलाप हो सकता है वरना हरगिज नहीं। मेरे पास एक कौड़ी भी देने को नहीं है।'

इस संदेसे में युद्ध की स्पष्ट चिनोती थी। दत्ताजी ने स्वीकार कर ली।

माधव जी ने सोचा, धैर्य और थोड़ी सी सावधानी से परस्थिति सँभाली जा सकती थी। परन्तु नजीब की शर्तें असम्भव हैं।'

दत्ताजी ने उत्तर की ओर प्रणाम किया। बारा के सय्यदों ने दत्ताजी का साथ दिया। वे शिया थे और नजीब ने उनकी भूमि छीन ली थी। अपने को समझते भी हिन्दुस्थानी थे।

नजीब के साथ तुरन्त लड़ाई आरम्भ हो गई। कई सैयद दत्ताजी की अग्रपंक्ति में लड़ते हुये मारे गये। नजीब हटता हुआ सागरताल नामक स्थान पर पहुच गया। वहां की भूमि बहुत ऊंची नीची और भरकों से भरी हुई थी। नजीब ने खाइयां खोद कर मोर्चे बनाये और किला बन्दी की। दत्ताजी ने घेरा डाल दिया। परन्तु नजीब पूर्व की ओर से सुरक्षित था। उस ओर गंगा थी। वर्षा का आरम्भ हो गया

और नदी वेग साथ चढ़ आई। इसलिये दत्ताजी नदी पार करके उस दिशा से नजीब पर आक्रमण नहीं कर सका। छुटपुट लड़ाइयां होती रहीं जिनमें मराठों की हानि अधिक हुई, क्योंकि नजीब रक्षा और छापा के स्थानों में था, और गंगा के उस पार से नावों द्वारा उसके पास धन धान्य, नये सैनिक निरन्तर आते रहते थे।

नजीब ने अहमदशाह अब्दाली के पास पत्र पर पत्र भेजे। एक में यहां तक लिखा, 'आप फौरन आयें। क्यों देर लगाई जा रही है? जब हिन्दुस्थान में हमारा सब कुछ खतम हो जायगा और वजूद ही मिट जायगा, क्या आप तब आवेंगे? मैं आपके सहारे ही सागरताल की खाइयों में सांस ले रहा हूँ।'

अहमदशाह ने सत्तर हजार अफगानों की सेना और नये साज-सामान हथियार – तोप, बन्दूक – इत्यादि के साथ कूच करने की तैयारी की। नजीब को उत्तर मिला, 'मैं आ रहा हूँ। लड़ाई जारी रखिये।'

अहमदशाह अब्दाली के कूच का समाचार फैलते ही पन्जाब में तहलका मच गया। उसकी विशाल सेना और विराट महत्वाकांक्षा को पञ्जाब की जनता जानती थी एक कहावत में विख्यात हो गई थी—

खादा पीदा लाहेदा
बाकी अहमदशाहेदा

(२८)

दत्ताजी के पास सेना काफी न थी। सूरजमल से सहायता मांगी। उसने अपने छोटे लड़के को पांच सहस्र सैनिकों के साथ भेज दिया। तो भी सागरताल का घेरा सफल न हुआ, क्योंकि गङ्गा को कहीं से भी पार नहीं किया जा सकता था। आसपास के ग्रामीण नजीबखां और दत्ताजी, दोनों से एक समान भयभीत थे। मराठों ने अपनी लूटमार से जनता को इतना प्रतिकूल कर दिया था कि स्थानीय सहायता से बिलकुल वंचित रहना पड़ा।

नजीब को शुजाउद्दौला ने भी सहायता दी, क्योंकि उसको भय था कहीं नजीब के बाद मराठे उसे न रौंद डालें।

पंजाब में मराठों की चौकियां इधरी बिखरी हुई थीं। सिक्खों को किसी भी बाहर वाले का शासन सह्य नहीं था। उनके लिये दोनों—मराठे और अफगान—एक समान लुटेरे थे। मराठों के प्रति उनके हृदय में केवल एक बात के कारण स्थान था: वे सहधर्मी थे, गाय के रक्षक और जनता का वध न करने वाले। केवल इतना ही निमित्त था।

पंजाब को अपने स्वाधीन अधिकार में रखकर, उसको सब प्रकार की राजनैतिक बलाओं से मुक्त करने का वे प्रण कर चुके थे। मराठे उनकी आकांक्षा और भावना के साथ अपनी योजना का समन्वय नहीं कर सके। सिख अब्दाली की गति का निरोध करने के लिये तैयारी करने लगे, परन्तु वे अभी एकनिष्ठ होकर संयुक्त नहीं हो पाये थे।

पंजाब में मराठों की इधरी बिखरी चौकियां हिल उठीं।

कई महीने सागरताल का घेरा डाले हो गये तब दत्ताजी ने दिल्ली से मिहाब को बादशाह सहित बुलाया।

अहमदशाह अब्दाली फिर आ रहा है, यह समाचार मिहाब को भी मिल गया था। उसे भय हुआ कहीं बादशाह को दिल्ली में अकेला छोड़ दिया और वह अहमदशाह से जा मिला तो सब चौपट हो जायगा

यदि दिल्ली से बाहर साथ ले गया और वह अवसर पाकर निकल भागा, नजीब से मिल गया या अहमदशाह के पास जा खिसका तो वही परिणाम होगा, इसलिये उसने एक सहज योजना बनाई।

बादशाह से कहलवाया, 'को हटीले पर एक बहुत पहुँचे हुये फकीर आये हैं। तीनों कालों की बात बतला देते हैं और बात की बात में सब मुरादें पूरी कर देते हैं। जहांपनाह जरूर तशरीफ लावें।'

बादशाह टीमटाम के साथ कोहटीले पर आया। बाहर शिहाब मिल गया। उसने नम्रता पूर्वक निवेदन किया 'जहांपनाह, फकीर साहब शोर गुल और भीड़ भाड़ से बहुत नफरत करते हैं। हजरत सिर्फ एक खवास के साथ उनके सामने चलें।'

बादशाह ने मान लिया। एक वह खवास के साथ भीतर गया एक कोठे में बादशाह को सजाई हुई मसनद पर बिठला दिया गया।

एक क्षण उपरान्त शिहाब का एक तुर्की सशस्त्र अङ्गरक्षक आया।

बादशाह ने पूछा, 'वह फकीर वह कहाँ हैं?'

'पहले एक बात सुनें, जहांपनाह।'

'क्या?' आलमगीर ने पूछा।

शिहाब ने बतलाया, 'हुजूर तवारीखों के पढ़ने का बड़ा शौक है। बहुत पढ़ी हैं। फिरङ्गियों के मुल्क में नालायक बादशाहों के साथ क्या सलूक किया जाता है?'

बादशाह थर्रा गया। अपने अकेले साथी की तरफ एक निगाह डालकर कांपते हुये स्वर में बोला, मैं समझा नहीं वजीरद्दौल।'

वजीर ने कहा, 'अब समझने की उमर और ताकत भी नहीं है जहांपनाह और न वक्त ही।' वजीर ने अपनी जेब से एक कागज निकालकर बादशाह के हाथ में दिया। बादशाह ने पत्र को हाथ में लेते ही उस पर अपने हस्ताक्षर पहिचान लिये। इस पत्र को बादशाह ने अब्दाली के पास भेजा था।

बादशाह ने सिर नीचा कर लिया।

सिहाब बोला, 'जहांपनाह सोचते होंगे कि शाह अब्दाली को बुलाकर दिल्ली का क़त्ल आम करा लिया जाय और सिहाब को धूल में मिला दिया जाय। जहांपनाह को इसी लहमें में मालूम हो जायगा कि हुजूर का यह गुलाम बेवक़ूफ़ नहीं है। न तो हुजूर कुलिया में गुड़ फोड़ने पायेंगे और न बन्दा उस बांस को ही रहने देगा जिसकी बांसुरी बनकर दुनियां में बजती फिरे।'

वज़ीर ने ताली बजाई। बजाते ही दो तुर्क सिपाही कोठे में आ गये।

बादशाह को पसीना आ गया।

सिहाब बोला, 'हुजूर ने फिरंगियों की तवारीख में पढ़ा होगा कि कि नालायक बादशाह को तख्त पर बैठे रहने देने की वजह से सल्तनत में सिवा ख़राबी के और कुछ नहीं होता, इसलिये उसको फ़ौरन क़ब्र में आराम के साथ भेज दिया जाता है।'

सिहाब ने अपने तुर्की अंगरक्षक की ओर संकेत किया। उसने तुरन्त कमर से खन्जर निकाल कर बादशाह की बगल में घुसा दिया। बाकी सिपाहियों ने बादशाह के हवास को पकड़ लिया।

बादशाह की लाश को दीवार के ऊपर से नीचे फेंक दिया गया। विख्यात कर दिया कि पैर फिसलने से गिरकर मर गया, जिस तरह, बहुत पहले उसका पुरखा हुमायूं गिरा था।

दूसरे दिन पुराने वज़ीर इन्तिज़ामुद्दौला की बारी आई। वह उस समय नमाज़ पढ़ रहा था जब सिहाब के सिपाहियों ने उसके गले में फन्दा डालकर मार डाला।

इसके उपरान्त सिहाब ने हरम में घुसकर लूटमार की। बेगमों, शहज़ादियों और बांदियों ने अपना गहना और नक़दी देने में बहुत आनाकानी नहीं की। सब मिलाकर पचास लाख रुपये की लूट उसके हाथ लगी। फिर उसका मन अमानुषिक अत्याचार करने की ओर गया।

परन्तु दत्ताजी के हरकारे जल्दी मचा रहे थे। गिहाब को अभी एक बादशाह को गद्दी पर बिठलाना भी था। औरंगजेब के सबसे छोटे लडके कामबख्श के नाती को कैद की कोठरी से निकाल कर गद्दी पर बिठला दिया। नाम दिया उसको 'शाहजहा सानी।'

महल में नारा लगा, सुल्ताने सलातीन शाहन्शाह बादशाह गाजी-उद्दीन शाहजहा सानी जिन्दाबाद।

(२६)

बरसात की समाप्ति के लगभग दत्ताजी और नजीब के बीच एक मुठभेड़ हो गई। दत्ताजी की असावधानी के कारण बहुत से मराठे हताहत हुये। दत्ताजी और माधव जी कठिनाई के साथ बचकर निकल पाये। इसके उपरान्त बहुत समय तक रुहेलों से खुली लड़ाई नहीं हुई।

एक दिन पंजाब से समाचार आया—अहमदशाह अब्दाली विशाल सेना से साथ चढ़ा चला आ रहा है; मराठी चौकियां अपने अपने ठिये छोड़कर भाग आई हैं; अदीना बेग भी भाग खड़ा हुआ है; सिखों का एक दल भिड़ गया, दो हजार अफगानों को मार कर तितर-बितर हो गया, और अब अब्दाली बेरोक-टोक चला आ रहा है।

दत्ताजी ने तुरन्त अपने दल समेटे। राजपूताने से मल्हारराव होलकर को बुलाया और पूना समाचार भेज दिया।

वह उत्तर की ओर बढ़ा। शिहाबुद्दीन एक हजार तुर्की तूरानी सिपाही लेकर आ गया।

दत्ताजी शिहाब के उन एक सहस्र सैनिकों को लिये हुये और आगे बढ़ा। थानेश्वर के पास अब्दाली की हरावल से टक्कर हो गई।

पहली ही मुठभेड़ में मराठों ने अफगानों को मार कर खदेड़ दिया। परन्तु अनुशासन की कमी के कारण मराठे गर्जन तर्जन करते हुये बेमिसिल होकर कई दिशाओं में फैल गये। अब्दाली के चुने हुये बीस हजार सवारों ने इनके ऊपर धावा किया। बहुत से मारे गये। बाकी सिमट कर अपने प्रधान अङ्ग से आ मिले। दूसरे दिन संभल कर युद्ध हुआ, परन्तु ठीक समय के ऊपर शिहाब का तूरानी या तुर्की सेनापति अब्दाली की सेना से अपने सैनिकों समेत जा मिला। मराठे हार गये।

अब्दाली ने समझ लिया कि मराठे अपने स्वभाव के अनुसार दूसरे दिन फिर लड़ने के लिये सामने आ जावेंगे और दिल्ली के लिये यमुना

के पश्चिमी किनारे वाला मार्ग सङ्कट पूर्ण है। इसलिये तेजी के साथ उत्तर पूर्व की ओर बाग मोड़ो और सहारनपुर के उत्तर में यमुना को सहज ही पार करके दुआब मे होकर यमुना के पूर्वीय किनारे से आया। मार्ग और घात के ठौर बतलाने के लिये नजीब साथ मे हो ही गया था।

दत्ताजी ने जब देखा शत्रु थानेश्वर के आस-पास नही है, तब वह, माधव जी और जयप्पा का युवक पुत्र जनकोजी, तुरन्त दिल्ली की ओर लौट पड़े। दोनो भाइयों ने समझ लिया कि पूर्वीय किनारे से होता हुआ अब्दाली मथुरा के पास यमुना को पार करेगा और उत्तर, पूर्व और दक्षिण, तीन दिशाओं से उसके और रुहेलो के दल मराठों को घर दबायेंगे। दत्ताजी के विरुद्ध अफगानों और रुहेलों की कई गुनी सेना थी। भयग्रस्त जनता की सहानुभूति मराठों को प्राप्त न थी। कहीं कोई भी शत्रु की गतिमति का समाचार देने वाला नहीं था। दत्ताजी ने ऐसी परस्थिति में अपनी सेना के तीन भाग किये। एक भाग बिलकुल पीछे दक्षिण-पश्चिम की ओर भेजा। दूसरे भाग के साथ स्त्री बालक और भारी भरकम सामान कर दिया। उसकी पत्नी गर्भवती थी, जनने का समय बहुत निकट था। इस के साथ उसने अपने भतीजे जनकोजी को कर दिया। इसे बड़े युद्धों का अनुभव न था। चुनी हुई हरावल के साथ दोनो भाई सबसे आगे वाले दल मे रहे। यह दल, भारी सामान और बड़ी तोपें साथ में न होने के कारण चलने फिरने और लड़ाई के लिये हलका था।

दत्ताजी और माधव जी इस दल के साथ दिल्ली के उत्तर में पांच कोस गये होंगे कि उन्हें यमुना के उस पार, पूर्वीय किनारे पर शत्रु की हलचल दिखलाई दी। अब तक किसी से पता नही लगा था कि शत्रु का कौनसा और कितना बड़ा खण्ड उस पार है। दत्ताजी ने अपने जासूस भेजकर पता लगाया। विदित हुआ कि नजीबखा अपने रुहेले यूथ के साथ यमुन पार करने की चेष्टा कर रहा है। इधर से नजीब यमुना को पार करेगा, उधर जरा नीचे से दिल्ली पर अफगानों का कोई बड़ा

दत्ता आक्रमण करेगा। दत्ताजी ने तुरन्त नजीब के ऊपर आक्रमण करने का निश्चय किया। यदि नजीब को वहां से पीछे धकेल सकते तो अहमदशाह की पूरी सेना को उसी मिसिल मे हटना पडता। इसी योजना के सफल होने पर दत्ताजी की सेना विपद से उद्धार पा सकती थी।

उस स्थान पर यमुना मे पूर्व के किनारे के निकट एक टापू था, इस ओर पानी की धार पतली और उथली थी, उस ओर चौड़ी और गहरी। टापू झाऊ के बड़े और सघन वृक्षों से भरा था।

दत्ताजी माधव को एक टुकडी के साथ इसी किनारे पर कुमुक के लिये छोड़कर स्वयं उस झाऊ से छाये हुये टापू मे होकर नजीब के ऊपर आक्रमण करना चाहता था।

माधव ने दत्ता का हाथ पकड़ लिया।

'दादा, जिस लड़ाई में देखो तुम आगे हो जाते हो। इसमें नहीं जाने दूंगा। मैं जाऊंगा। तुम कुमुक भेजने के काम पर रह जाओ।' माधव ने कहा।

दत्ता ने फुसलाया, 'देख माधव, बहुत अवसर आयेंगे। यह नजीब बड़ा चालाक नायक है। उसने यदि ताड़ लिया तो या तो कोई दूसरा घाट जा सकेगा, या झाऊ की झांग में आकर तुझे घेर लेगा। तुझे अभी उतना अनुभव नहीं है। कहीं फस न जाय वहां। मैं वहां नही फंस सकूंगा। या तो जाल को काट कर लौट आऊंगा, या आगे उस पार बढ़ जाऊंगा। जैसे ही हरकारे सूचना दें मेरे पीछे चले आना। बस।'

'नहीं दादा आज मैं ही आगे जाऊंगा। मैं भी आपके प्रताप से नजीब को कुछ सिखा सकता हूं।'

'क्यौंरे क्या हो गया है आज तुझको? लगाऊं एक चांटा?'

दत्ताजी माधव से लिपट गया।

'ले अब छोड़ दे मुझे। देर हो रही है। यह रण-क्षेत्र है, गप-गोष्टी को जगह नहीं है।' दत्ता ने अनुरोध किया।

माधव की बड़ी बड़ी काली आंखें तरल हो गई थीं और होंठ बिर-बिरा रहे थे ।

उसी समय दिल्ली की ओर से घोड़े से सवार दौड़ते आते दिखलाई पड़े । दोनों भाइयों ने देखा । जब वे पास आ गये, सबसे आगे वाले सवार से दत्ताजी ने घटक कर कहा, 'क्यों रे जनको, तू अपना दबीना छोड़कर कैसे आ गया ?'

जनकोजी ने घोड़े से उतर कर उत्तर दिया, 'काका मैं तो आज की लड़ाई में तुम्हारे साथ रहूँगा ।

'मेरे साथ रहेगा !' बनावटी क्षुब्ध स्वर में दत्ताजी ने कहा, यह सब क्या षड़यन्त्र है ? जानता है मैं आज्ञा के उल्लंघन और संयम की अनिष्ठा को नहीं सह सकता ? लौटा जा । तू आया कैसे अपने कार्यभार को छोड़कर ?'

'मैं काकी से पूछकर आया हूं ।' जनकोजी बोला ।

दत्ताजी ने कुछ खिन्नता के साथ कहा, 'अच्छा ! उन्होंने भेज दिया तुझे यहां । डर गई क्या ? जा, लौट जा । माधव तू इसे लौटा देना, मैं अब अधिक बात नहीं कर सकता । बहुत पाजी शत्रु का सामना है ।'

'तभी तो मैं आपके साथ में रहकर लड़ने आ गया हूं ।'

'नहीं ।' केवल एक शब्द दत्ताजी के मुंह से निकला । वर्जन का सिर हिलाते हुये दत्ताजी बिना माधव या जनकोजी की ओर देखे अपने दस्ते को लेकर यमुना में घस गया ।

छोटी धार पार करके जैसी ही दत्ताजी झाऊ के जंगल में घुसने को हुआ कि उसकी तेज आंख ने झाऊ की घनी झुरमुटों में छिपे हुये शत्रु सैनिकों को देख लिया । संकेत मात्र से उसने अपने दस्ते को तीन दलों में विभक्त करके, फैलाकर, झाऊ के समूहों पर हल्ला बोल दिया । माधव जी ने भी सुन लिया ।

मराठों की लम्बी तलवार और लम्बी बर्छी तथा रुहेलों की बन्दूक के बीच में भयंकर होड़ हो उठी । रुहेलों के पक्ष में पहले से पकड़ी हुई

आड़ें प्रोटें और तैयार बन्दूकें थीं, मराठों के सामने मोर्चों का अज्ञान, भ्रम और झाऊ की झुरमुटों की बाधायें थीं। घोड़े को डग डग पर उलझना और रुकना पड़ा। बन्दूकों की बाढ़ों पर बाढ़ें दगीं। प्रत्येक बाढ़ के साथ मराठे सिपाहियों और घोड़ों का हताहत होना प्रारम्भ हो गया।

बन्दूकों की बाढ़ों और आहतों के चीत्कार माधव और जनको ने सुने। झाऊ की एक ओट में शाहकुतुब फकीर बन्दूक भरे बैठा था। दत्ताजी का घोड़ा पास की झुरमुट में अटक गया। उस स्थिति में भी दत्ता ने अपने लम्बे भाले से दो तीन रुहेलों को बन्दूक चलाते चलाते छेद डाला।

कुतुबशाह ने सिर का निशाना लेकर गोली छोड़ी। गोली दत्ताजी की आंख पर पड़ी। बुरी तरह घायल हो गया। मराठा सिपाही चिल्ला पड़े।

माधव जी और जनकोजी कुमुक लेकर टापू के लिये तीर की तरह छूटे। बहुत व्यग्रता में जनकोजी काफी आगे बढ़ गया। लगभग डेढ़ घन्टे तक जनकोजी सेना का संचालन करते हुये लड़ता रहा। फिर एक गोली उस पर पड़ी। कन्धे के मान्सल भाग को फोड़ती हुई निकल गई। एक रुहेला तलवार लेकर घोड़े पर से गिरते हुये उस लड़के पर झपटा, परन्तु उस रुहेले पर एक मराठा सवार की तलवार पहले पड़ गई और वह कट कर गिर गया। मराठा सवार घायल जनकोजी को अपने घोड़े पर लाद कर तुरन्त लौटा। माधव जी भी।

उसके उपरान्त लड़ाई थोड़े समय तक ही और हुई। मराठे लौट पड़े और जहां दत्ताजी की पत्नी थी वहां आकर इकट्ठे हुये।

कुतुबशाह ने हर्षमग्न होकर मरणासन्न दत्ताजी का सिर काटा और नजीब को भेंट कर दिया। नजीब के भी हर्ष का ठिकाना न था।

जैसे ही दत्ताजी के मारे जाने और हार का समाचार सुना शिहाब तुरन्त दिल्ली छोड़कर हरम और सामान के साथ भरतपुर चला गया।

(३०)

नजीब के पास अफगानी सवार भी काफी संख्या में आ गये। रुहेलो ने इनको लेकर मराठी सेना का पीछा किया। जनकोजी और माधव जी पीछा करने वालो से पिछवाड़ी लड़ाई लड़ते हुये मिसिलो में हटते चले गये। भारी सामान और स्त्रियों-बालकों वाला दस्ता दूसरे दस्ते की रक्षा मे तेजी के साथ खिसकाया चला गया और बच गया। शत्रु ने मराठों को बारह तेरह कोस तक पछियाया। अन्त में वे जयपूर राज्य मे पहुँच गये। दूसरे दिन उन्हें मल्हारराव होलकर मिल गया।

बाल बच्चों और भारी सामान को चम्बल पार ग्वालियर की ओर भेज कर मल्हारराव माधव जी और जनकोजी फिर दिल्ली की ओर मुड़े। दक्षिण से किसी भी बडी सेना के आने मे बहुत विलम्ब था। तब तक उन लोगो ने अब्दाली और रुहेलो को 'गनीमी कावा' लड़ाइयो में अटकाये रहने की योजना बनाई। जनकोजी को पीछे रखा गया, क्योंकि वह घायल था।

अहमदशाह अब्दाली ने सूरजमल और राजपूताने के राजाओ को कर देने और 'हाजिर' होने के लिये आदेश भेजे।

राजपूताने के राजा और जन मराठो के हाथों बहुत पीड़न पा चुके थे और उनसे खार खाये बैठे थे, परन्तु उन्हें अत्याचारी और कपटी अब्दाली का विश्वास न था इसलिये वे स्पष्ट नाहीं न करके अब तब करते रहे, और इकट्ठे होकर शत्रु का सामना करना तो उनकी परम्परा में ही न था।

दिल्ली को तीन दिन लूटने के उपरान्त न अहमदशाह अब्दाली ने हिन्दू राजाओ के दमन करने का निश्चय किया। पहले वह भरतपूर की ओर गया। परन्तु डीग के किले के सामने अटक जाना पड़ा। डीग का ले लेना हँसी खेल नही था। कुछ दिनो के घेरे के उपरान्त अब्दाली को प्रतीत हो गया कि डीग मे अधिक समय तक अटके रहने से राजपूतों

को तैयार हो जाने का समय मिल जायगा और मराठे दक्षिण से शीघ्र आने की तैयारी करेंगे। मल्हार और माधव का दाएँ-बाएँ भन-भनाते फिरना भी उसे अखर रहा था। इसलिये डीग-दमन का विचार स्थगित करके वह इस छोटी और चन्चल मराठी सेना के पीछे पड़ गया।

आज मराठे दिल्ली से पचीस कोस पर तो कल दिल्ली की नाक के नीचे महरौली में ! अब्दाली ने अपने अलग अलग दस्तों से इनके घेरने का प्रयत्न किया। लगभग एक महीने तक ये लोग अत्यन्त अल्प साधन रखते हुये भी अब्दाली को भटकते और चिन्तित करते रहे।

अब्दाली ने उनको चारों ओर से घेरने का प्रयास किया तो वे दिल्ली के उत्तर से यमुना पार करके दुआब में घुस पड़े।

फिर माधव जी और उनके साथी चक्कर खाते और वैरी को खिलाते, लड़ते भिड़ते कुछ समय उपरान्त आगरा आ गये, और वहा से सूरजमल के पास भरतपूर। सहायता के लिये सूरजमल और मराठों में परस्पर शपथ सौगन्धों पर शर्तें तै हो गई।

अब्दाली नजीबखा के साथ अलीगढ में ठहर गया। ग्रीष्म ऋतु आने को थी। ऐसी ऋतु में अफगानों के लिये युद्ध करना दुस्सह था। पन्जाब अब्दाली के हाथ में आ ही गया था। वह अपने बिलकुल टटके अनुभवों और इस जानकारी के कारण कि हिन्दुस्थान के नायकों को अलग अलग एक एक करके जीतना पड़ेगा, वह जीत अन्त मे बिखर जायगी और फिर वही क्रम—जीत सहज मे मिल जाने पर सहज ही खो भी जावेगी,—लौट जाने का विचार करने लगा।

नजीब ने अनुरोध किया, 'दक्षिण से काफी तादात में मराठे आते ही होंगे जो अबकी बार पेशावर तक ऊधम मचा डालने पर तुल जायंगे। जहापनाह अभी यहाँ से न जावें। सिहाव को सजा देनी है, सूरजमल जाट से रुपया वसूल करना है।'

अब्दाली ने कहा, 'इतना करके फिर चला जाऊँ ? मराठे आयेंगे तो फिर लौट पड़ूंगा।'

'झंझट बढ़ेगा', नजीब बोला, 'और फिर सूरजमल आप ही की तोपों से आपको दिक करने की कोशिश करेगा।'

अब्दाली को अपनी बड़ी तोपों का स्मरण था ही। सोचने लगा।

नजीब ने घिघियाकर कहा, 'और मेरा क्या होगा? ये दक्षिणी शैतान आपके यों चले जाने से रुहेलों का नाम तक मिटा डालने में कसर नहीं लगायेंगे।'

अब्दाली ने मान लिया। अभी काफी लूटमार नहीं कर पाई थी, इस लोभ ने भी उसे रुक जाने में सहायता दी।

(३१)

फागुन का महीना लग गया था। यकायक ठण्ड कम हो गई। शीशम और नीम के पेड़ों ने पवन के उष्ण होने के पहले ही पत्ते पीले कर के झाड़ दिये थे। अब टहनी टहनी पर केसरिया रंग की चिकनी कुनगियां फूट पड़ीं और प्रात:कालीन किरणों के साथ खेल खेलकर हरी होने लगीं। करोंदी ने अभी किसलय और परिमल भेंट नहीं कर पाये थे कि पश्चिम और उत्तर की दिशा से दिन रात आंधी चली। ठण्ड लौट पड़ी। पहले उसने रात में बसेरा लिया और फिर दिन में भी रहने लगी। मानो माघ का महीना फिर आ गया हो।

भरतपुर किले के एक भाग मे सिहाब और उसके हरम को माधव मिल गया था। सिहाब सूरजमल के साथ होलकर से बात चीत करने भरतपुर के बाहर चला गया था। उम्दा बेगम एक दुशाला ओढ़े अपने कमरे में टहल रही थी।

चिल्लाई, 'गन्ना ! ओ गन्ना !!'

गन्ना आ गई। सिर झुकाकर खड़ी हो गई।

उम्दा बेगम ने अपने स्वर को कर्कश करके कहा, 'अकेले में बैठी बैठी न जानें क्या करती रहती हो !'

'अभी थोड़ी देर पहले तो हुजूर के पास से गई थी, ठण्ड लग रही हो, तो अगीठी ले आऊँ ?' गन्ना ने विनय पूर्वक पूछा।

उम्दा बेगम ने आदेश के स्वर मे कहा, 'अरी हां ले आ न। ठण्ड जान खाये जा रही है।'

गन्ना अगीठी तैयार करके ले आई। उम्दा बेगम अगीठी से जरा दूर बैठ गई। बोली, 'खड़ी क्यों हो ? बैठ जाओ भाई।'

गन्ना ने क्षमा-सी मांगते हुये कहा, 'नहीं हुजूर, ठण्ड नहीं लग रही है।'

उम्दा ने कहा, 'मैं कहती हूं बैठ जाओ, तुमको खड़े रहने में नमालूम क्या मजा आ रहा है।'

गन्ना ने बैठने के पहले पूछा, 'अंगीठी को और नजदीक कर दूं?'

'मुझको अपना बदन जलाना थोड़े ही है जो अंगीठी को अपने पास रखूं।' उम्दा ने प्रतिवाद किया।

गन्ना कुछ दूरी पर सिमट कर बैठ गई। उम्दा ने उसे आंख गड़ाकर देखा। गन्ना बेगम की बड़ी आंखों और लम्बी बरौनियों के नीचे गड्ढे से पड़ गये थे और श्यामता फिर गई थी। गालों के ऊपर हड्डी निकल आई थी। चेहरा पीला पड़ गया था। तीन बरस पहले के स्वस्थ अंग धस से गये थे। बहुत दुर्बल हो गई थी। मुख पर विवाह होने के पहले का कुछ ही सौन्दर्य अवशिष्ट था।

गन्ना ने पूछा, 'पान बना लाऊं?'

मैं चाहती हूँ तुम मेरे पास बैठो, तुम न जाने क्यों भागना चाहती हो। मुझको पान नहीं खाना है। कुछ बातचीत करूंगी।' उम्दा बेगम ने उत्तर दिया।

वह कुछ विलक्षण दृष्टि से गन्ना को देखने लगी। गन्ना ने सिर नीचा कर लिया।

उम्दा ने कहा, 'तुमको मालूम नहीं बेगम, मैं तुम्हारे ऊपर मुहब्बत करती हूं।'

गन्ना ने सिर को जरा सा ऊंचा किया। बोली, 'जी हां।' और फिर नीचा कर लिया।

उत्तर में गन्ना की आंखों मे आंसू आ गये। बोली, 'हुजूर का रहम मेरे ऊपर है और वे भी ऐसा ही कहते हैं। मुझे जिन्दगी के लिये और चाहिये ही क्या ?'

उम्दा ने कुछ क्षोभ के साथ कहा, 'वजीरउद्दौला का कहना सही है। वे तुमको मुझसे ज्यादा चाहते हैं, हालांकि मेरी इज्जत बहुत करते हैं।'

गन्ना ने दुपट्टे के छोर से आंसू पोंछ डाले। आंखें लाल, और चेहरा पहले की अपेक्षा और भी अधिक रूखा हो गया।

उम्दा कहती गई, 'तुम सचमुच बहुत खूबसूरत हो।'

गन्ना ने दृढ़ता के साथ उम्दा से आंखें मिलाईं। एक क्षण मिलाये रही। बोली, 'हुजूर कुछ बातचीत करना चाहती थीं।'

'तुम्हारा मन सुनने को चाहता भी है या यों ही ?'

'मैं हुजूर की दासी हूं। क्यों नहीं चाहेगा ?'

देखो भई मैं यह भेद मिटाना चाहती हूँ। वजीर एक बेकार से आदमी हैं। मुझे इस बात के कहने में कोई झिझक नहीं मालूम पड़ती। तुम्हारे साथ भी दिखावट ही करते होंगे।'

गन्ना ने प्रश्न सूचक दृष्टि से उम्दा की ओर देखा। उम्दा उसकी आंखो मे आखें गड़ाये रही। बोली, 'तुम्ही कहो, वजीर हैं या नहीं बेकार ? मर्द की क्या खासियत है उनमें ?'

गन्ना घबरा गई। क्या उम्दा बेगम कोई जासूसी कर रही है ! क्या उसके लिये कोई जाल रच रही है ? क्या उसके हृदय की छिपी हुई भमक उसे छू गई है ? क्या उसका कोई रहस्य उसे मालूम हो गया है ? गन्ना के माथे पर पसीना आ गया। बोली, 'मैं तो एक अदना गुलाम हूं। मैं क्या जवाब दे सकती हूं ?'

उम्दा ने आश्वासन देते हुये कहा, 'तुम किसी धाक में डूबी हुई हो बेगम, इसीलिये डर रही हो। मैं मुगलानी बेगम की लड़की हूँ इसलिये मुझे कोई डर नहीं। तुम्हारे मां-बाप दोनों शायर थे और

तुम भी शायरी किया करती थी इसलिये तुम्हें भी कोई डर नहीं होना चाहिये ।'

मुगलानी बेगम की असह्य दुश्चरित्रताओं का एक समग्र चित्र गन्ना की आखों के सामने घूम गया और अपनी मा के प्रारम्भिक इतिहास का भी ।

उसने कांपते स्वर मे कहा, 'आपकी मां ने पंजाब सरीखे सूबे की सूबेदारी जिस जवामर्दी के साथ की थी उसे कौन नही जानता ? और मेरी मा–मेरी मा तो अब इस दुनिया मे हैं नहीं ।'

अपने गौरव-गर्व में उम्दा बेगम को अपनी मा के पुरुषार्थ की डींग मारने के बाद अब उसकी और मिस्कीन की तथा कई मिस्कीनों की बातें याद आ गईं । उसने तुरन्त अपने पति–वजीर शिहाबुद्दीन-के प्रति ध्यान दौड़ाया । परन्तु वह वहा न ठहर कर गन्ना की मां के चरित्र पर आ टिका । उसे मालूम था कि गन्ना के बाप का विवाह होने के पहले उसकी मा क्या थी । हीन न समझी जाने की भावना से अपनी और गन्ना की मां के चरित्रों में मनचाही तुलना करके बोली, 'मैं तुम्हारी माँ के बारे मे कोई और इशारा नहीं कर रही थी ।'

गन्ना का कलेजा जल उठा । परन्तु चुप रही ।

उम्दा बेगम ने कहा, 'वजीर मुझको और तुमको चाहने का दिखावा तो बहुत करते हैं, पर उसमें तत्त कुछ नहीं है । इतने बड़े हरम में किस किस पर प्यार बरसाते होंगे ? जिसके पास पहुँचे उसी से कह उठे, मेरा पूरा समूचा दिल तुम्हारे ही कदमों मे तो है, तुम्हारे बिना एक पल भी जिन्दा नही रह सकूंगा ! तुमसे भी इसी तरह की बात करते होंगे ।'

गन्ना ने नाहीं का सिर हिलाया ।

उम्दा कहती गई, 'अरी मेरी प्यारी, सिर मत हिलाओ । मैंने वजीर से साफ सवाल किये थे एक दिन । उन्होंने कबूल कर लिया था कि फुसलाहट भी पेश करते हैं । उन्होंने हम लोगों को बुद्धू समझ रखा है । अच्छा, बेगम, बतलाओ तुम्हारे दिल है या नहीं ?'

गन्ना ने साहस के साथ उत्तर दिया, 'था तो।'

'था ?' उम्दा ने आश्चर्य प्रकट किया, 'था ! कहां चला गया ? वही उमस वही धड़कन है अब भी गन्ना। मेरे तो है। इसलिये मैं तुम्हारे साथ मुहब्बत करूंगी।'

गन्ना बोली, 'आपका एहसान।'

उम्दा ने कहा, 'क्या हमेशा से इतना ही थोड़ा बोलने वाली रही हो ? क्या कभी तुम्हारे ऐसे दिन न रहे होंगे जब तुम बात करते करते अघाती ही न होगी ? जब तुम्हारा मुंह बात करते करते बन्द ही न होता होगा ?'

गन्ना ने उत्तर दिया, 'था हुजूर। जब से मा मर गई, दिल टूट गया।

उम्दा बोली, 'अजी मर के मर जाने से किसी औरत का दिल नहीं टूटता। मेरी मां हाल मे मरी हैं, मगर मेरा तो नहीं टूटा।'

'आप में बहुत बल है।' गन्ना ने कहा।

'उस बल मे से कुछ तुमको देना चाहती हू। उम्दा बेगम ने अनुरोध किया, 'तुम मेरा भरोसा करो। मुझे वजीर का जासूस समझने की गलती न करो। मैं तुम्हें प्यार करती हूं। वजीर प्यार नहीं करते। कोरी बनावट है। निकम्मे हैं, बिलकुल गये बीते। मैं उनके मुंह पर कह सकती हूं।'

गन्ना ने सन्देह के साथ उम्दा बेगम को एक क्षण देखा और कहा, 'औरतों को किसी से कुछ कहने का हक ही नहीं है।'

'क्यों नहीं है ? जरूर है। मैंने तै किया है अब मैं मर्द के भेस मे रहा करूंगी। शिकार खेलूंगी। खवासो को जूती लगाऊंगी, अकेली तुमको अपनी बेगम कहूंगी।'

'मैं कुछ नहीं समझी।'

'शायर होकर भी नहीं समझीं !'

'जरा साफ साफ फरमाइये।'

'साफ ही तो कहा। जैसे मुगल बादशाहों की बेगमे पर्दे में जाकर जङ्गलो में शिकार खेलती थी वैसे ही मैं भी खेलूंगी। फर्क इतना ही है

के मैं मर्दों का लिबास भी करूंगी। यहां महल में भी मर्दानी लिबास में रहा करूंगी। वजीर कुछ नहीं कह सकते। तुम क्या कहती हो?'

'मैं क्या कह सकती हूँ? आपको अख्तियार है।'

'और मैं तुमको अपनी बेगम बनाऊंगी।'

'बांदी तो मैं हूँ ही हुजूर की।'

उम्दा बेगम गन्ना के पास गई और उसका हाथ पकड़कर बोली, 'हम तुम, दोनो, एक दूसरे से प्यार करेंगे।'

गन्ना अलग हो गई। बोली, 'आप गजब करती हैं।'

उम्दा ने कहा, 'ओफ। तुम बिलकुल बोदी हो। कुछ भी नहीं समझीं। मैं मर्द की पोशाक में रहूँगी, देखने में मर्द ही दिखलाई पडूंगी न? तुमको बांदी बनाकर नहीं रक्खूंगी। अपनी बेगम का, अपनी बराबरी का दर्जा दूंगी। वजीर घबराते और डरते रहेंगे। मेरे मन में जो आवेगा करूंगी, वजीर से डरूंगी नहीं। तुम्हारे जी में जो आवे तुम करना। आई मेरी बात तुम्हारी समझ में?'

गन्ना के मुंह से यकायक निकला, 'आप मेरी जांच कर रही हैं', और उसने आह भरी।

उम्दा ने शपथपूर्वक कहा, 'बिलकुल नहीं बेगम! मरने मारने को तैयार हूँ। क्या तुम्हारे ध्यान में कभी नहीं आता कि औरतों का काफिला हरम में रखने वाले मनहूस और जालिम किसी भी वफादारी के हकदार हैं?'

गन्ना ने फिर उम्दा के मुंह की ओर देखा। उम्दा जरा चिढ़कर बोली, 'मैंने कसम खाई, फिर भी तुमको यकीन नहीं आया। मैं किसी दिन अपने पास अपने किसी को दिखला दूं तब होगा तुमको यकीन? फिर चाहे मैं मार ही क्यों न डाली जाऊं, करके दिखला दूंगी।'

'मुझे भरोसा है,' गन्ना ने कहा।

'तब क्या कहती हो?' उम्दा ने दृढ़ता के साथ पूछा।

गन्ना ने बिना किसी संकोच के उत्तर दिया, 'आप जो कुछ करेंगी उसकी हवा तक कहीं फूट कर नहीं जायगी। मुझसे चाहे जैसी कसम ले लीजिये।'

'तुम अपने दिल के लिये क्या करोगी ?' उम्दा ने दूसरा प्रश्न किया।

गन्ना ने उत्तर दिया, 'मुर्दा हो गया है। अगर उसमें कभी जान पड़ गई तो अर्ज करूँगी।'

'क्या मेरी शादी के बाद से तुम्हारी यह हालत हो गई ? आगे वैसा बर्ताव नहीं करूँगी।'

'नहीं तो। आपकी शादी से और मेरे दिल से कोई नाता नहीं है।'

'यह कहिये—तो किसी से नाता था जरूर। इस मुये वजीर से तो रहा न होगा ?'

'मां ने जहाँ शादी कर दी चली आई। इससे ज्यादा और क्या कहूं। आप ही अपने दिल से पूछिये कि क्या आप इन्हीं के साथ शादी करना चाहती थी ?'

'हरगिज नहीं। मां ने विजारत के साथ कर दी, वजीर के साथ नहीं।'

गन्ना ने सोचा अब और अधिक कुछ नहीं कहना चाहिये। चुप रही।

उम्दा बेगम बोली, 'और कुछ बतलाने में तुमको शायद दर्द होगा इसलिये नहीं पूछूँगी। तुम बहुत हसीन थीं।'

गन्ना ने आह को दबाया।

उम्दा ने कहा, 'तुम मुस्कराओ। मैं मर्द की तरह प्यार करूँगी।'

गन्ना मुस्कराई और जरा पीछे हट गई। बोली, 'आप इतनी नेक बनी रहें यही मेरे लिये बहुत है।'

उम्दा ने हठ किया, 'तुम हँसो। आज से तुम मेरी बेगम हुई।'

गन्ना गम्भीर हो गई।

हँसी तो मेरी न जाने कहाँ चली गई। अगर कभी खुदा ने हँसाया तो हँसूगी भी।' गन्ना ने कहा।

उम्दा ने गन्ना को लिपटा लिया। बोली, 'अब तुम अपने को मेरी बांदी न समझना, मेरी बेगम साहब। ऊपर का रवैया चाहे वैसा ही रखना; मुआ वजीर कुछ शक न कर बैठेगा, हालांकि मैं उससे नहीं डरती।'

(३२)

अभी फागुन का शुक्ल पक्ष नहीं आया था। एक पहर रात के अंधेरे में पश्चिम का तारा प्रकाश से दमक रहा था। जिस कमरे में गन्ना बेगम लेटी हुई थी उसकी झिझरियों मे होकर उस तारे की दमक स्पष्ट दिखलाई पड़ रही थी। उन्हीं झिझरियों में होकर कँपाने वाली हवा सर्राटे के साथ आ रही थी। हरम के सदर फाटक पर पहरा था तो भी गन्ना इत्यादि बेगमों और उन बांदियों के कमरों के भी किवाड़ बाहर से बन्द थे जिनकी सेवाओं की उस समय आवश्यकता नहीं थी। रात होने पर किवाड़ों पर ताले डाल दिये जाते थे। शिहाब के हरम का यही दस्तूर था।

झिझरियों के बाहर पटे हुये कंगूर थे। ये कंगूरे नीचे की भूमि से बहुत ऊँचाई पर थे।

गन्ना ने एक झिझरी पर किसी की छाया देखी। छाया हिली। जान पड़ा जैसे झिझरी से चिपक गई हो। कमरे में शमादान के दीपक का मन्द प्रकाश था।

छाया को देखकर गन्ना ने भय के मारे दीपक बुझाने का विचार किया। परन्तु फिर साहस बांधकर झिझरी के पास आई। झिझरी मोटे लाल पत्थर की थी।

छाया से शब्द निकले, 'क्या मुझे गन्ना बेगम के दर्शनों का सौभाग्य मिल रहा है?'

गन्ना हिलकर जरा सी पीछे हटी। बहुत धीमे स्वर में गन्ना ने पूछा, 'आप—आप—कौन?'

'वही अभागा।' छाया ने उत्तर दिया।

गन्ना झिझरी के निकट आ गई।

'अभागिन तो मैं हूँ। क्या महाराजकुमार साहब हैं?' गन्ना ने कहा।

'हां, जवाहरसिंह।' गन्ना को उत्तर मिला।

गन्ना खिड़की से टिककर सिसकियां लेकर रोने लगी।

जवाहरसिंह ने कहा, 'कैसी दुखदायी जगह है यह—खिड़की में होकर मैं अपनी उंगली तक नहीं डाल सकता हूं जिससे आपके आंसू ही पोंछ सकूं।'

गन्ना अपने को सँभालकर बोली, 'आपने मेरे लिये बड़ी बड़ी आफतें झेली हैं। मैं कुछ न कर सकी। अपने को मार भी न सकी। आपके किसी काम में न आ सकी।'

'अब भी एक तरह से आफत में ही हूँ।' जवाहरसिंह ने कहा, 'डीग में रहने के लिये आज्ञा है पिताजी की मेरे लिये। आपको यहां आये लगभग दो महीने होते आते हैं। बड़ी कठिनाई से कहीं आज इस तरह आपके सामने आ पाया हूं।'

'अपने मन में आपकी मूरत रखकर पूजती रहती हूँ, और उस पर अपने आंसुओं का जल चढ़ाती रहती हूं। कुछ और कर भी नहीं सकती। आपके काम की हूँ भी तो नहीं।'

'क्या कहती हो तुम यह? तुम सदा मेरी हो और रहोगी। यही जानने के लिये आज मैं यहां आया था। जल्दी एक दिन आयगा जब मैं तुमको अपने साथ ले जाऊंगा।'

'कन्हैया ऐसा ही करें।'

'इस पूरे महल का मैं कोना कोना जानता हूं। यद्यपि, मेरा एक हाथ कमजोर है और एक पैर में लङ्ग है फिर भी मैं छत पर चढ़कर तुम्हारे कमरे के द्वार पर आ सकता हूं। किवाड़ खोल दो।'

'किवाड़ों पर बाहर से ताला पड़ा है। मजबूर हूँ, महाराजकुमार।'

मैं ताले को तोड़ सकता हूं।'

'बहुत कड़ा पहरा लगा हुआ है। मुझे अपने प्राणों की चिन्ता नहीं है, लेकिन आप किसी नई विपद में पड़ जायेंगे। ऐसा मत करिये।'

'अच्छी बात है पर शमादान के उजियाले को जरा इतना तो बढ़ादो जिसमें अपनी गन्ना को जी भर कर कम से कम देख तो लूं। लोन

वर्ष से ऊपर हो गये जब उस दिन दुपहरी में जरा सा देख पाया था और वह बुड्ढा आ गया था।'

'मैं बत्ती बढ़ाये देती हूं अगर आपका ऐसा ही हुकुम है तो, मगर तेज रोशनी में बाहर से आपको कोई भांप न ले।'

गन्ना ने दीपक काफी तेज कर दिया और झिझरी के पास इस प्रकार जा खड़ी हुई जिससे जवाहरसिंह उसे अच्छी तरह देख ले और वह भी जवाहरसिंह को लख सके।

जवाहरसिंह ने उत्कट कामना के साथ उसे देखा। गालों के नीचे के गड्ढे और भी अधिक गहरे, गालों के ऊपर की हड्डियां और भी अधिक ऊँची और आखों के नीचे स्याही और भी अधिक काली दिखलाई दी। और सारा शरीर कृश। चेहरे का गुलाबीपन चला गया था, गालों पर पीलापन छाई मार रहा था। जवाहरसिंह को ठेस लगी। और अधिक देखने की लालसा न रही।

गन्ना ने जी भरकर देखने का प्रयास किया। वह चाहती थी रात भर देखती रहूं।

जवाहरसिंह ने कहा, 'कुछ आहट मालूम होती है, दिये को बुझा दो।'

गन्ना ने शमादान गुल करके एक ओर रख दिया।

जवाहरसिंह बोला, 'अब मैं जाता हूँ। मौका मिला तो फिर कभी आऊँगा।'

गन्ना ने जवाहरसिंह के स्वर की ठंडक को नहीं पहिचान पाया। कहा, 'मेरा भाग्य। मेरे प्राणों के जौहर, जल्दी दर्शन दीजियेगा। मैं धीरे धीरे मरती जा रही थी अब जी पड़ने मे देर नहीं लगेगी।'

जवाहरसिंह धीरे से बोला, 'जरूर।'

गन्ना ने बहुत मधुर स्वर में कहा, 'यह अंगूठी अब तक मेरे पास है। एक निशानी मेरी भी लेते जाइये।'

गन्ना ने अपनी जेब से एक रेशमी रूमाल निकाला। उसकी पतली बत्ती बनाई और झिफरी के छेद मे होकर बाहर निकाल दी। जवाहरसिंह लेकर चला गया।

दूसरे दिन जब उम्दा बेगम ने गन्ना को देखा चेहरे पर मुस्कानें थीं और माया।

उम्दा बेगम ने गले लगाकर कहा, 'मेरा जादू चल गया न। है न तू मेरी बेगम ?'

गन्ना हँस पड़ी। बोली, 'हूँ तो जरूर कुछ कुछ।'

'एक दिन पूरी बनाकर रहूंगी।' उम्दा ने भी विकट हँसी के साथ कहा।

(३३)

शाहवली के 'तकिये' पर उसके अनेक शिष्य इकट्ठे हुये। इनमे फकीर भी थे और साधारण जन भी। सब शाहवली के चेले। उसके निकट ही अब्दुल अजीज और कुतुबशाह बैठे थे। बहाना एक उत्सव का था, काम राजनीतिक।

बातों के क्रम में शाहवली ने कहा, 'परेशानी की कोई बात नही। अहमदशाह अब्दाली जम्हूरियत को कायम होने से नही रोक सकता है। आंधी की तरह आया और आंधी की तरह चला जायगा।

कुतुबशाह ने निवेदन किया, 'हुजूर इस तरह की आंधी की भी जरूरत पडती है। मराठो, सिक्खो और जाटों को साफ करने के लिये भी तो आखिर कोई चाहिये।'

'इस तरह से भले ही कहलो कुतुबशाह।' शाहवली ने अपना सिद्धान्त पेश किया, 'मगर हमको किसी शाह, सुल्तान, अमीर या राजा को नही रहने देना है। आम लोगो की हुकूमत के रास्ते के ये सब बड़े बड़े काटे है। इनको खतम किये बिना आम लोगो को चैन नहीं मिल सकता।'

कुतुबशाह ने बहस की, 'इसीलिये तो हुजूर, पहले सिपाहियों की जरूरत पड़ रही है। अपने फिरके के तमाम लोग फौज में भर्ती होकर हथियार चलाना, घोडे की सवारी वगैरह सीख रहे हैं।'

शाहवली ने कहा, 'मगर ये लोग अमीरो के हुकुम बजा लेने वाले बन जावेंगे, यह एक बडा खतरा है।'

कुतुबशाह ने जारी रखा 'फौज का उसूली और अमली काम तो इसी तरह सीखा जा सकेगा।'

'मगर लूट मार ? आगजनी ?'

'यह सब हमारे फिर्के के लोग नही करते। पहाड़ी पठान करते हैं।'

'लूटमार छूत की बीमारी की तरह फैलती है। आज पठानो ने किया, कल ये लोग कर उठेंगे। इसके बाद सरदार और नवाब बन

जायेंगे। पठान सोच ही रहे हैं कि हिन्दुस्तान में पठानों की सल्तनत फिर क़ायम की जाय। अम्हूरियत तो उनके इस इरादे की वजह से दूर पड़ जायगी।'

वे लोग ऐसा नहीं करेंगे, मैं हुज़ूर को इत्मीनान दिलाता हूं। अब्दाली या किसी ऐसे होशियार मुखिया की फौजी जानकारी और तजुर्बे का सबक और फ़ायदा उठाये बग़ैर हमारा काम नहीं चल सकता। अपने फ़िर्क़े को अलहदा से तैयार करने में बड़ी दिक़्क़तें पेश आवेंगीं। तैयार होने के पहले ही मराठे, सिख, जाट या राजपूत हम लोगों को मिटा देंगे।'

'नहीं। अब हम लोगों की तादाद लाखों में हो गई है। हिन्दुस्तान में हर जगह हमारे ख्यालों और उसूलों के लोग फैल गये हैं और फैलते जा रहे हैं।'

'मगर फौज और लड़ाई की तालीम के लिये इकट्ठा होते ही मुसीबत सिर पर आ जायगी। आम मुसलमानों को एक करने का मुझे तो यही ज़रिया सबसे अच्छा मालूम होता है।'

'फ़िलहाल ऐसा कर सकते हो, मगर हमें आम हिन्दुओं को भी तो साथ लेना है। उनके राजा और जागीदारों से हमको नफरत है, न कि आम हिन्दुओं से।

'यही नजीबखां कहते हैं और मैं भी मानता हूँ। इसीलिये दत्ता सिन्धिया के मारने में मुझको कोई हिचक नहीं हुई। मगर हिन्दू लोग हमारा साथ शायद ही दें। वे लोग अपने धर्म वालों की तरफ झुकेंगे।'

'यह ख्याल ग़लत है कुतुबशाह। आम लोग इन नवाबों और रईसों से इतने दिक़ हो चुके हैं कि वे इनका साथ नहीं देंगे।'

'वे लोग हमारे उसूलों पर अमल करेंगे ?'

'ज़रूर, उनको करना होगा। हमारी शर्त ही यह है कि इस्लाम और शरियत के उसूलों पर हुकूमत कायम होगी और चलाई जावेगी।

उस हकूमत मे सबको एक से हक हासिल होंगे और सबको एक सा दाना पानी मिलेगा।'

'कोशिश की जाय। हिन्दू लोग हमारे उसूलों के पावन्द हो जावें तो फिर शिकायत ही क्या रहे?'

'ये पीछे की बातें हैं। अभी से इनका उठाना ठीक नहीं मालूम होता।'

'मैंने वैसे ही अर्ज किया।'

इसके बाद, यह 'जम्हूरियती फिर्का' कहां क्या कर रहा है इस विषय पर चर्चा होती रही। 'जम्हूरियत' स्थापित करने के लिये शस्त्र-संग्रह और शस्त्रों के लिये चतुर और चुस्त अमीरों की सहायता लेते रहना त्याज्य नहीं समझा गया। ऐसे अमीरों में सर्व-प्रथम और सर्व-प्रिय नाम नजीब का था। कुतुबशाह ने कहा, 'नजीबखां पठान होते हुये भी, पठान सल्तनत कायम करने की बात नहीं सोचते हैं। बादशाहों के वे कायल नहीं। जब, कुछ दिन हुये दिल्ली का इन्तजाम उस कमीने शिहाबुद्दीन की विजारत मे कर रहे थे तब उन्होने बहुत थोड़ा रुपया बादशाह को ऐश आराम के लिये दिया—बाकी फौज तैयार करने में लगा दिया जिसमें अपने फिर्के के भी बहुत से लोग भर्ती हैं।'

शाहवली को शिहाब का स्मरण हो आया। बोला, 'मैं नहीं जानता था वह इतना फरेबी है।'

'अपने किये का पवेगा।' कुतुबशाह ने कहा।

कुछ सोचकर शाहवली ने अपना एक विचार प्रकट किया, 'मैं बूढ़ा हो गया हूँ और बीमार रहता हू। नमालूम किस घड़ी दुनियां से चल दूं। मैं चाहता हूँ कि अपने उसूलों के फैलाने और अमल के लिये, अपने सामने ही किसी को खड़ा कर जाऊँ।'

सब लोग एक साथ चिल्ला पडे, 'जरूर।' और उनकी आंखें अब्दुल अजीज पर पड़ीं जो अब लगभग अठारह साल का हो गया था।

शाहवली ने कहा, 'अगर तुम सब राजी हो तो मैं अब्दुल अजीज को अपने उसूलों का वारिस बना जाऊँ। इसने तनमन से पढा और सोचा

समझा है। बड़ा होशियार और मिहनती है। तुम लोग अगर दिल से इसकी मदद करते रहोगे तो यह मेरे सपनों को सामने ला देगा।'

सब लोगों ने स्वीकार किया। अब्दुल अजीज 'जम्हूरियती उसूलों' का 'वारिस' बना दिया गया। 'जम्हूरियत' ने उसी भाषा, भाव और वाञ्छा का प्रयोग किया जिससे राजा और नवाब बनाये जाते थे और उन्हीं 'उसूलों' को शिरोधार्य किया जिनमें कट्टरपन्थ के कटीले झाड़ों के बीज छिपे हुये थे।

(३४)

होली के आने के पहले ही अहमदनगर मे धूल धक्कड रङ्ग गुलाल, चन्दन केसर राग रग और नृत्य गान की रेल पेल मच गई।

निजाम को एक बडी लड़ाई मे हरा दिया गया था। कर्नाटक की चढ़ाई बिलकुल सफल हो गई थी। निजाम चित कर दिया गया था। उसने पैंतालीस लाख रुपया वार्षिक आय का प्रदेश पेशवा को लगा दिया था और अपने इलाके पर पन्द्रह लाख रुपया साल चौथ उगाहने का अधिकार दे दिया था। सबसे बडे किले सौंप दिये थे। और बडे बडे उपजाऊ प्रदेश दे दिये थे। अहमदनगर की बहुत भारी युद्ध सामग्री भी मराठों के हाथ लगी थी। वर्षों का युद्ध कदाचित ही कभी इतनी बड़ी सफलता के साथ समाप्त हुआ हो। सदाशिवराव भाऊ के सेनापतित्व में यह युद्ध सचालित हुआ था।

ताराबाई कैद में थी और उसके पक्षपाती सरदारों का दमन कर दिया गया था। धूमधाम के साथ इसलिये महोत्सव मनाया जा रहा था।

अहमदनगर के विशाल किले में एक बड़े मण्डप का आयोजन किया गया। गायन-वादन और नृत्य हुआ। नजर न्योछावर हुई और लड्डू मिठाई की समाप्ति पर कवि-सम्मेलन हुआ। कवियों ने पेशवा के पराक्रमो की प्रशंसा मे आकाश-पाताल एक कर दिये।

एक कवि ने बतलाया, 'सूर्य और चन्द्रमा पेशवा के चमत्कार के मारे झेंप उठे हैं।'

दूसरे ने एक डग और बढ़ाया, 'अब सूर्य चन्द्रमा को मुंह छिपाने के लिये ठौर नही मिल रहा है, इसलिये वे पेशवा से यराई करने के लिये आने वाले हैं कि अपने पराक्रम को पृथ्वी तक ही सीमित रखें।'

तीसरे ने पराकाष्ठा कर दी, 'पेशवा की दृष्टि में वह तेज, वह बल है कि हिमालय पर आख भटकती हुई भी जाकर पड़ जाय तो वह चूर्ण-चूर्ण

होकर शत्रुओं में परिवर्तित हो जायगा, इसीलिये पेशवा अब पूना के बाहर नही जायेंगे।'

इसमें थोड़ी सी सचाई भी थी, क्योंकि बालाजी योधा न था। रास-विलासी था और महल का निवास अधिक पसन्द करता था। उसका चचेरा भाई सदाशिवराव भाऊ अवश्य अच्छा सेनापति था। बालाजी का सत्तरह वर्ष का पुत्र विश्वासराव भी युद्धों में अनुभव और रण-ज्ञान का अर्जन कर रहा था।

दो तीन दिन रागरङ्ग और मस्ती का जोर के साथ दौर रहा।

उत्तर हिन्द से ऐसे समय दत्ताजी के वध, मराठी सेना के विध्वन्स तथा बिखरने, अब्दाली और नजीब के सफलतापूर्वक दिल्ली पर अधिकार कर लेने के समाचार आये। रागरंग सब बन्द हो गये।

जब निजाम ने सुना तो वह हाथ पैर फैलाने की कामना करने लगा। पहली समस्या थी घर और पडोस मे शान्ति बनाये रखना तथा निजाम-युद्ध के सफल परिणाम को हाथ से न सरकने देना। इसके तुरन्त निकट की समस्या थी उत्तर हिन्द की बिगड़ी परिस्थिति का बनाना। इसके लिये पर्याप्त नकद रुपये की आवश्यकता थी। पेशवा को बहुत आशा थी कि उत्तर से रुपया मिलेगा। परन्तु अब कुछ भी न पाकर उल्टा बहुत जन और धन का व्यय होगा, तब कहीं यह समस्या हल होती दिखलाई पड़ेगी।

(३५)

निजाम से आये हुये प्रदेशों का प्रबन्ध करके और निजाम की भविष्य-गति पर अन्दाज लगाकर पेशवा पूना लौट आया। उत्तर से रघुनाथराव इत्यादि भी आ गये थे।

उसकी पत्नी गोपिकाबाई ने रंगमहल में अपने सहज प्रखर स्वर में कहा, 'करा दिया न काला मुंह तुम्हारे इस राघोबा ने ?'

बालाजी ने कनखियों देखा। कोई सुन तो नहीं रहा है। एकान्त था, इसलिये कड़वा घूट पी लेने में कोई बड़ा प्रयास नहीं करना पड़ा।

पेशवा बोला, 'जरा धीरे धीरे। कोई सुन लेगा तो कहेगा सचमुच उत्तर में कोई बड़ी पराजय हो गई है और निजाम-विजय उसके समक्ष कुछ भी महत्व नहीं रखती। दक्षिण के झंझट से अब अवकाश मिल गया है, देखो उत्तर में कितनी द्रुतगति से क्या होता है। सदाशिवराव और रघुनाथराव मिलकर पृथ्वी को कंपा देंगे।'

गोपिका ने कहा, 'पड़ जाओ महल के विलास-कीचड़ में और दे दो सब राजपाट सदाशिवराव को, क्योंकि निजाम को उसी ने तो परास्त किया है। उत्तर का राज्य सौंप दो राघोबा को और तुम फांको राख। करे जाओ इन लोगों का यशगान जिन्होंने भूप बनकर घर में बिल बना डाले हैं। मेरे लड़के ने तो कुछ किया ही नहीं है। उसके लिये तुम्हारे मुंह से एक फूटा शब्द भी न निकला।'

गोपिकाबाई अधेड़ अवस्था की थी। आकृति सुन्दर थी। परन्तु अपने आपको पुरुष समझ उठने के कारण उसका चेहरा मोहरा पुरुष जैसा दिखलाई पड़ने लगा था! चेहरा कुछ लम्बा, स्वर प्रखर, नेत्र तीक्ष्ण। स्वभाव के ऊपर नाम मात्र का नियन्त्रण था। बालाजी में उसकी प्रचण्ड प्रकृति के कारण काफी स्वरासन और आत्म-प्रवञ्चन आ गया था। बोला, 'तुम तो एकदम भड़भड़ा उठती हो; न कुछ सोचो न

समझो। सुना था तुम कुछ अस्वस्थ हो, इसीलिये बहुत आवश्यक काम छोड़कर आया था।'

'कुछ अस्वस्थ हूं !' गोपिका ने कहा, 'तुम्हारे ढोंग ढकोसलों और विलास के मारे मेरे प्राण निकलने को हो रहे हैं। कहते हो, कुछ अस्वस्थ हूं !'

पेशवा बोला, 'और सुना था तुमने महल में बड़ा बवाल मचा रखा है। रघुनाथराव को गाली दी ! सदाशिव को डाटा फटकारा !! राज्य का कार्य कैसे चले ?'

'ओहो ! राजनीति तो तुम जानते हो ! संसार में और सब बुद्धू ही बुद्धू हैं !! बोलो, राघोबा उत्तर से क्या लाया है ? दत्ताजी को मरवा दिया ! पंजाब खो दिया !! राजपूताना गवा दिया, अब और क्या है मन में ? राघोबा से न कहती तो क्या अपने लड़कों से कहती ?'

'तुमको मालूम तो कुछ है नहीं, लगी वैसे ही प्रवचन करने ! राघोबा पहले ही उत्तर से चला आया था। मल्हार राजपूताने में था। मैं और सदाशिव दक्षिण में बीधे थे। कर ही क्या सकते थे दत्ता के लिये ?'

'कहते थे राघोबा, होलकर और सिंधिया को उत्तर से लौट आने दो तुमको दो लाख रुपये दूंगा। पर तुम्हारी गांठ में दो रुपये भी न होंगे। रङ्गमहल वाली उन चुडैल बाइयों के लिये कहां से सोना मोती और हीरे जवाहर आ जाते हैं ? न मेरे लड़कों के लिये कुछ छोड़ेंगे और न मेरे लिये।'

'बड़ी कठिनाई हो गई है रानी साहब। उत्तर के युद्धों में मेरे ऊपर अस्सी लाख रुपये का ऋण और चढ़ गया है। एक बड़ी सेना छिन्न-भिन्न हो गई है, वह अलग। अपने यश में जो धब्बा लग गया है, वह हानियों की अपेक्षा सबसे बड़ा है। अबकी बार रुपया तुमको अवश्य मिलेगा।'

'रेत में से तेल निकालोगे क्या ?'

'रेत मे से नहीं। कैसी बातें करती हो रानी साहब! राजपूताना, हिन्दुस्थान मालवा और दक्षिण के इतने विस्तृत प्रदेश हैं कि तुम्हारे लिये दो लाख रुपये की कोई बात ही नही।'

और पञ्जाब, बिहार बगाल को तो अपनी जागीर में गिनाया ही नहीं! कहते थे बिहार बगाल से दो करोड़ रुपया निकल आवेगा और पञ्जाब तो रुपयों की खान ही है।'

'झूठ नही कहा था। पासा पलट गया। इसलिये थोड़ी गड़बड़ हो गई।'

'थोड़ी गडवड़ हो गई! तुमको लज्जा नही आती! मैंने रोका था पञ्जाब का जुआ मत खेलो। भेज दिया सेना को अन्धा धुन्धी में। अगाडी पिछाड़ी का कोई ध्यान ही नही रखा। मैं कहती हूँ तुम पेशवाई करते किस बिरते पर हो? जो सेना पञ्जाब भेजी थी उसके पीछे की सतर के लिये क्या मिसिल बनाई थी? पञ्जाब मे जो चौकियां बिठलाई थीं उनकी सहायता के लिये कुमुकों का क्या पूर्व-प्रबन्ध किया था?'

'मैं इतनी दूरी से छोटे छोटे ब्योरों को निरख परख कैसे कर सकता था? राघोबा, मल्हार और दत्ताजी को यह सब काम सौंप दिया था।'

'इसीलिये तो राघोबा को बुलाकर मैंने डाटा था। तुम आ गये मेरे स्वास्थ्य की बात पूछने! आ गया समझ मे मेरी अस्वस्थता का कारण? न आया हो तो पूछ लेना राघोबा से मैंने सुन लिया था कि राघोबा को उत्तर की ओर सेनाओं का सेनापति बनाकर भेजने की चर्चा हो उठी है। इसीलिये उसको बुलाकर फटकारा था।

पेशवा सिर झुका कर चिन्तामग्न हो गया। गोपिकाबाई से बालाजी के तीन पुत्र थे—विश्वासराव, माधवराव और नारायणराव। तीनों एक से एक बढ़कर सुन्दर और मञ्जुल। पेशवा अपने पुत्रों को बहुत प्यार करता था। इसीलिये गोपिकाबाई की खरीं-खोटी सहज ही सहन करने का अभ्यस्त हो गया था। अनेक स्त्रियों का हरम रखने वाले

पुरुषों की भाँति बालाजी भी क्षीण सामर्थ्य हो गया था, यद्यपि उसकी बुद्धि बहुत प्रखर थी। गोपिकाबाई का स्त्रीत्व कुण्ठित हो गया था जिसकी प्रतिक्रिया के कारण वह अहपूर्ण और प्रहारशील हो गई थी। पूना दरबार की राजनैतिक समस्याओं, प्रगतियों और षड्यन्त्रों में उसको बहुत रस प्राप्त होता था। पेशवा के लिये वह एक अनिवार्य विभीषिका थी। पेशवा, पूना दरबार और आसपास के सरदारों पर उसका बहुत प्रभाव था। पेशवा यह सब जानता था और इसलिये भी उससे दबता था।

पेशवा ने कहा, 'रानी साहब, उत्तरखण्ड की समस्याओं को रघुनाथराव भली भांति जानता है। वहा के घर-घाट सब उसके देखे और पहिचाने हुये हैं—'

गोपिकाबाई ने टोका, 'रघुनाथ की आयु छब्बीस साल की है इसलिये वह सर्वशक्तिमान है, सर्वज्ञाता है! अस्सी लाख का ऋण इसीलिये तो लाया है!! अबकी बार तुम चाहते हो कि अस्सी करोड़ की हुंडिया तुम्हारे ऊपर ले दौड़े!!! आज मेरे सामने सब बातों का निर्धार करो, नहीं तो मैं अनशन करके अपना प्राण दे दूँगी।'

'किये देता हूँ, परन्तु तुम इतनी गरम तो न हो', पेशवा ने धीरे से कहा।

'अभी करना होगा निश्चय, अभी।' गोपिका बोली, 'तुम अपने अनिश्चय के स्वभाव को छोड़ दो। जैसा निश्चय विलासों के चुनाव में तुर्तफुर्त दिखलाते हो, कम से कम वैसा ही जीवन-मरण के इन प्रश्नों पर भी तो प्रकट करो।'

यही स्थल पेशवा का अत्यन्त निर्बल था। परन्तु बगलें झांकने की अपेक्षा उसने बरबस हँस देना अधिक उपयुक्त समझा। हँसते हुये अनुरोध किया, 'आज धैर्य रखो। आज ही तुमने बिचारे को डाटा-फटकारा है। मैं जरा ठण्डा करलू! कल तुम्हारे सामने ही निश्चय हो जायगा। कल के आगे बात नहीं जाने पावेगी, विश्वास रखो।'

(३६)

दूसरे दिन गोपिका के सामने ही निश्चय हुआ। पेशवा के साथ रघुनाथराव और सदाशिवराव भी थे। सदाशिवराव को भाऊ कहते थे।

पेशवा ने ठण्डा छींटा देते हुये कहा, 'रघुनाथ को उत्तर खंड का जितना परिचय है उतना किसी को भी नहीं है।'

गोपिकाबाई ने चुटकी ली, 'उत्तर खंड के साहूकारों का भी। तभी तो दादा कहलाते हैं। इसीलिये तो रुपयों के लिये दे दे करते रहते हैं। रुपया ले कहने लगें तो मैं भी कुछ समझूं।'

रघुनाथराव ने मुस्कराते हुये कहा, 'भावी,* जीना मरना यश अपयश सब भगवान के हाथ में है जैसा हिन्दी के महाकवि तुलसीदास ने कहा है। धन का देना न देना भी भगवान के ही हाथ में है।'

'ओ हो! महाराष्ट्र के सेनापतियों को अब अपनी त्रुटियों को छिपाने के लिये साधू सन्तों की वाणी की ओट लेनी पड़ती है!' गोपिकाबाई बोली, 'तुम्हारे यशगान करने वाला कवि नहीं है कोई यहां? तुम्हारे बड़े भाई को तो बहुत से मिल गये हैं।'

पेशवा ने आतङ्क बिठलाने के अभिप्राय से मृदुलता के साथ कहा, 'कवियों को कोई बतलाने नहीं जाता कि वे क्या कहें और क्या न कहें। समय और अवसर सब कहलवा लेते है। आज का अवसर उत्तर के विषय को तै कर डालने के लिये है।'

सदाशिवराव तुरन्त बोला, 'रघुनाथ दादा को भेजिये उत्तर की ओर।'

रघुनाथराव को अच्छा लगा। वह उत्तर में जाकर अबकी बार जौहर दिखलाने का आकांक्षी था। इस समय अपना ध्यान एकमात्र वर्तमान पर केन्द्रित किये था, बोला, 'छत्रपति शिवाजी ने, पिता बाजीराव ने जो कुछ

* महाराष्ट्र में 'वहिणी' कहते हैं।

किया था उसको हम लोग फिर कर सकते हैं। भारत भर में अपने एक-छत्र राज्य होने का समय बहुत निकट है। थोड़ी सी बाधा पड़ गई उसकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। बाधायें तो आती ही रहती हैं, परन्तु बाधाओं से भयभीत नहीं होना चाहिये।'

पेशवा के मुह से निकल गया, 'इस समय सबसे बड़ी बाधा रुपये पैसे की कमी है।'

सदाशिवराव से न रहा गया,—'एक और बड़ी बाधा थी, हथियारों और सामान की कमी। वह तो निजाम-विजय से दूर हो गई। अहमदनगर में ही बहुत मिला है।'

गोपिकाबाई सदाशिवराव से और भी अधिक रुष्ट रहा करती थी, क्योंकि वह हिसाब-किताब को बहुत सतर्कता और परिश्रम के साथ रखता था, उसके मारे रुपये पैसे के मामलों में पोलखाता नहीं चलाया जा सकता था। सदाशिवराव की बात गोपिका को कुछ गड़ी, परन्तु निजाम-विजय में उसके जेठे लड़के विश्वासराव का भी हाथ था इसलिये उसने सदाशिवराव से कुछ नहीं कहा। दूसरा सहज सस्ता लक्ष्य रघुनाथराव था जो पहले धन-संग्रह के षड़यन्त्रों में गोपिकाबाई का सहयोगी रहा था और अब अलग हो गया था।

गोपिकाबाई ने कहा, 'तुमने निस्सन्देह काम किया है और विश्वासराव ने भी, परन्तु इनको तो देखो। एक बार पटरा करवा के आ गये हैं, अब फिर पटरा करवायेंगे।'

रघुनाथराव को क्षोभ हो आया। बोला, 'फिर वही! मुझे कुछ नहीं चाहिये। चाहे जिसको भेज दो। मुझसे कहो तो मैं किसी फिरंगी के बन्दरगाह पर चला जाऊँ और वहां अपनी मनमानी करती रहो।'

पेशवा ने हँसकर पूछा, 'फिरंगी की कोठी पर क्या तपस्या करोगे?'

वातावरण जरा ठण्डा हुआ।

रघुनाथराव ने धीमे पड़कर कहा, 'मैं विश्वास दिलाता हूं, मुझको उत्तर खण्ड में फिर से जाने की कोई आकांक्षा नहीं है। दक्षिण ऊपर से

ठण्डा मालूम होता है, पर भीतर भीतर बहुत गरम है। मैं दक्षिण से भलीभांति परिचित हूं, क्योंकि यहां युद्ध किये हैं।'

'और बहुतों में मुंह की खाई है।' गोपिका ने हंसते हुये व्यंग किया।

पेशवा ने गम्भीरता के साथ कहा, 'यह गलत है। समुद्री डाकू आंग्रे को रघुनाथ ही ने दबाया। पुर्तगालियों के होश इसी ने ठिकाने लगाये। कर्नाटक को इसी ने ठीक किया था।'

इसके आगे पेशवा ने कुछ नहीं कहा, क्योंकि इसके आगे कहने से सदाशिवराव भाऊ की कीर्ति पर घात होता।

गोपिका धीरे से बोली, 'इन लड़ाइयों में अपने आदमी भी तो बहुत मरे, और धन की हानि कितनी नहीं हुई ?'

रघुनाथराव ने कहा, 'ताराबाई और उसके सहायक सामन्तों से भी तो उलझते रहना पड़ा।'

पेशवा ने विशयान्तर किया। कहा, 'इन युद्धों से एक सरदार पहिचान में आ रहा है, —माधव सिंधिया दत्ताजी का छोटा भाई।'

गोपिका बोली, 'सिंधिया जैसे सब सरदार होते तो अपनी समस्यायें शीघ्रता के साथ हल होती रहती। सिन्धिया से कुछ रुपया मिल सकता है ?'

रघुनाथराव ने अपने भीतर की जलन दूसरे पर उतारी,—'इन सिंधियों को उनके दीवान रामचन्द्रराव शेण्वी ने फांक कर दिया। फिर उन्होंने कुछ जमा नहीं कर पाया। दत्ताजी बिहार जाने को था कि नजीब से उलझ जाना पड़ा, नहीं तो काफी रुपया मिल जाता।'

यह चोट सदाशिवराव पर थी, क्योंकि रामचन्द्र शेण्वी उसी का अनुचर था। बोला, 'रघुनाथ दादा, इसी शेण्वी ने महाराष्ट्र के माल-विभाग को सम्भाला और पुनः पुराने आदर्शों के निकट पहुँचाया है। होलकर से क्यों नहीं लेते रुपया ? उसने बहुत जमा कर रखा है।'

सदाशिवराव और मल्हारराव होलकर के बीच में काफी अनबन थी।

रघुनाथराव ने उत्तर दिया, 'जितना कर मालवे से मिलना चाहिये उतना होलकर सदा देता रहता है। अब क्या उसकी खाल खींचोगे ?'

गोपिका बीच में कूद पड़ी—'जिस दिन खाल खिचवाने के दण्ड का अपराध करेगा खाल भी खींच दी जायगी।'

सदाशिवराव बोला, 'मैं गिना सकता हूं उसके ढेरों अपराध।'

रघुनाथराव ने तुरन्त प्रहार किया,—तुम कौन से दूध के धुले हो ? गायकवाड़ वाले मामले में जो रुपया आया था उसका हिसाब है तुम्हारे सच्चे बहीखाते मे ?'

पेशवा के विरुद्ध ताराबाई की सहायता करने के कारण जब गायकवाड़ को पेशवा ने बिधो लिया था तब उसने सदाशिवराव को कई लाख रुपया रिश्वत में दिया था। इस रिश्वत का गोपिकाबाई और सदाशिवराव के बीच में बांट बटवारा हुआ था। परन्तु रघुनाथराव के प्रघात में गोपिका के विषय पर संकेत नहीं था। गोपिकाबाई ने सोचा कांटा मुझे भी चुभोया गया है।

बोली, 'खोलकर कहो न भाऊ ने गायकवाड़ से क्या ले लिया और क्या खा लिया। तुम्हारा कथा-पुराण खोलकर बैठूं तो सुनने वालों को एक युग लग जायगा।'

पेशवा ने देखा बात बढ गई और आगे उसके पैर पसरते ही जायेंगे।

'बीती को बिसारना चाहिये और गड़े मुर्दों को नहीं उखाड़ना चाहिये।' पेशवा ने प्रस्ताव किया, 'उत्तर के लिये तुरन्त एक विशाल सेना भेजने का आयोजन करना है। शीघ्र निश्चय करो उत्तर में किसको सेनापति बनाकर भेजा जाय।'

इस प्रस्ताव का गूढ़ अर्थ रघुनाथराव की समझ में आ गया—गोपिका मुझसे रुष्ट है, सदाशिवराव मन में बैर रखता है इसलिये ये यही तै करेंगे कि मैं न जाऊं। पेशवा के प्रस्ताव पर पहले सम्मति उसी ने दी—'भाऊ को भेज दीजिये, मैं दक्षिण में ही रहूंगा।'

रघुनाथराव के अनुभव के कारण पेशवा उसी को प्रधान सेनापति बनाकर भेजना चाहता था, परन्तु वह गोपिका के प्रचण्ड कोप का शिकार नहीं बनाना चाहता था। बोला, 'मैं तुम्हीं को उत्तर भारत के युद्धों का नायक बनाना चाहता हूं। परन्तु तुम्हारी इच्छा नहीं जान पड़ती।'

रघुनाथराव ने और भी कुढ़कर कहा, 'हां नहीं है मेरी इच्छा। जाऊँगा तो भाभी का दम घुटने लगेगा। यह कल कह रही थीं कि उत्तर भारत में मैं अपना कोई अलग राज्य स्थापित करने की कामना कर रहा हूँ।'

'मैंने झूठ नहीं कहा था', गोपिका बोली।

'ठहरो।' बालाजी ने अपनी स्वाभाविक ठण्डक का परित्याग करके आतङ्क दिखलाने के लिये कहा, 'कभी कभी बहुत बढ़ जाती हो।'

'तो रघुनाथ तो उत्तर के सैन्य संचालन के लिये नहीं जा सकेगा।' गोपिका ने हठ किया।

क्षुब्ध स्वर में रघुनाथराव बोला, 'मैं कदापि नहीं जाऊँगा। चाहे कोई कितना भी मनावे। नहीं जाऊँगा, नहीं जाऊँगा।'

पेशवा ने समस्या हल कर दी,—'यह और बात है कि तुम जाना ही नहीं चाहते। यहां का काम संभालो। घर को ठीक हालत में रखने से ही बाहर की व्यवस्था अच्छी रह सकेगी। सदाशिव तुम तैयार होओ जाने के लिये। ठीक है न गोपिका?'

रघुनाथराव का क्षोभ फूट पड़ा,—'ठीक क्यों न होगा? भाऊ उत्तर में अपने लिये राज्य स्थापित नहीं करेंगे।'

सदाशिवराव को विश्वास हो गया कि मैं ही प्रधान सेनापति बनकर जाऊँगा। मन में आनन्द की लहर दौड़ गई। उसको रघुनाथराव की फबती नहीं खली।

बिना किसी विशेष अभिप्राय के उसने कहा, 'जानती हो भाभी दिल्ली के सिंहासन पर अब किसके बैठने की बारी आई है? हिन्दू पदपादशाही का प्रतीक पेशवा पुत्रविश्वासराव दिल्ली का सम्राट बनेगा।'

'ऐं !' गोपिका और बालाजीराव दोनों के मुँह से यकायक निकला। रघुनाथराव चुप था।

बालाजी ने मुस्कराकर कहा, 'अभी सवार गिरा नहीं है पर यहां बहस खड़ी हो गई है कि घोड़ा किसके हिस्से में आयेगा ? इस प्रकार की बात व्यर्थ है।'

'मैं अपने हृदय के भीतर की कह रहा हूँ।' सदाशिवराव ने गोपिका बाई की ओर देखते हुये कहा।

गोपिकाबाई ने हर्ष छिपाने के लिये मुँह दूसरी ओर कर लिया, परन्तु इस प्रकार के छिपाव-दुराव का उसको अभ्यास कम था, इसलिये मुंह फेरे हुये ही बोली, 'तुम सब मनाना उस दिन कोई महोत्सव, अहमदनगर वाले उत्सव से भी बहुत बड़ा। मेरा तो शरीर अच्छा नहीं रहता। न जानूं उस घड़ी तक बचूंगी भी या नहीं।' फिर सामने मुँह करके उसने कहा, 'राघो, क्या तुमको यह बात अच्छी नहीं लगी ?'

उसको सारी की सारी चर्चा बुरी लग रही थी, परन्तु फीकी मुस्कान के साथ बोला, 'इससे बढ़कर और कुछ हो ही नहीं सकता, भाभी। पूना का राज्य भोंसलों के नाम से होता है, दिल्ली का राज्य खुल्लमखुल्ला ब्राह्मणों के नाम से होगा। पर एक बात मेरी भी मानी जाय। भाऊ को सैन्य संचालन के लिये भेजो, किन्तु प्रधान सेनापति का पद रहे विश्वासराव के हाथ में, क्योंकि अन्त में वास्तविक सम्राट तो दिल्ली का उसी को होना है। पहले से ही वह उत्तर खंड से भलीभांति परिचित हो जाय तो बहुत अच्छा होगा।'

सदाशिवराव भाऊ के महत्व को कम करने के लिये रघुनाथराव ने यह अचूक तीर चलाया।

गोपिकाबाई को अच्छा लगा। रस में घुल गई,—'राघो, तुम मेरी छोटी छोटी सी बात पर यों ही बल खा जाते हो। मेरी बातों का बुरा तो नहीं लगा ?'

उसकी आतुर सरसता का कारण इतना स्पष्ट था कि सदाशिवराव को हँसी आने को हुई। आत्मसंयम करते हुये उसने रघुनाथराव को पुटियाने के लिये गोपिकाबाई से विनोद में कहा, 'हम लोगों को तुम्हारी किसी बात का बुरा नहीं लगता, भाभी। तुम्हारा स्वर अवश्य कुछ ऐसा है कि उसका संगीत कभी कभी हमारे कानो को अच्छा नहीं लगता।'

दिल्ली का सिंहासन और उस पर बैठे हुये अपने बेटे विश्वासराव का सुखद चित्र गोपिकाबाई की आंखो के सामने कौंध गया। भाऊ की बात पर खिलखिलाकर हँस पड़ी।

रघुनाथराव ने कुछ अपना फफोला फोड़ा। हँसते हुये कहा, 'अरे भाभी, तुम हँसना भी जानती हो! मैं समझता था सिवाय काट खाने के तुमको कुछ और आता ही नहीं।'

पेशवा विचार-मग्न था।

गोपिकाबाई ने अपना आनन्द पति के मन मे पिरोने के लिये कहा, 'कहां की सोच रहे हो श्रीमन्त पेशवा महाराज? सुनाऊँ एकाध खरी खोटी?'

'यही बाकी रह गये हैं।' रघुनाथराव और सदाशिवराव के मुँह से हँसते हुये एक साथ निकला।

पेशवा भी थोड़ा सा हँस दिया। बोला, 'मैं दिल्ली के सिंहासन का स्वप्न नही देख रहा हूँ, दिल्ली के लेने की बात सोच रहा हूं। खरी खोटी दोनों, तुम लोगों के आने से पहले ही सुन चुका हूं।'

'भाऊ ले लेगा दिल्ली।' रघुनाथराव ने व्यङ्ग को परिहास मे लपेट कर कहा, 'चिन्ता मत करो।'

सदाशिवराव आश्वस्त होकर बोला, 'हां बहुत चिन्ता तो नहीं है। आशा और विश्वास दोनों, मेरे पास हैं।'

गोपिकाबाई को बहुत अच्छा लगा। पेशवा फिर विचार-मग्न हो गया।

(३७)

पंजाब की विजय का प्रयास एक बिलकुल शेखचिल्ली की सी सनक थी। पेशवा ने बिना कुछ आगा-पीछा सोचे उस असह्य बोझ को सिर पर लाद लिया। 'कमाओ और खाओ' इस नीति पर पंजाब की चढ़ाई का आधार रखा गया था। बिना पर्याप्त आर्थिक साधनों के वह प्रयास। दूसरा बड़ा भारी दोष उस योजना में सिक्खों को न मिलाने का था। सिक्खों की भावनाओं का समन्वय किये बिना वह प्रयत्न सफल हो ही नहीं सकता था, रुपया भी उसके ऊपर चाहे जितना व्यय किया जाता। पंजाब को अज्ञान से प्राप्त किया और मूर्खता से खो दिया था।

पेशवा की समझ में यह बात बहुत पीछे आई। परन्तु हाथी के दांत निकलने के उपरान्त फिर जहा के वहाँ भीतर नहीं जा सकते। अब्दाली का कसकर विरोध न करना आत्मघात के समान होता। उत्तर की समस्या से डरकर घर बैठे रहने में फिर दक्षिण की बारी आती और दक्षिण भी हिल उठता। उत्तर का संगठन मुसलमान-साम्राज्य के हित हो रहा था। पठान-साम्राज्य स्थापित करने की चर्चा दस बारह वर्ष से चल रही थी। कहीं उसको फ्रांसिसियों का समर्थन मिल जाता तो पठान-साम्राज्य की स्थापना मे कितना समय लगता? संसार भर कहेगा कि अफगान से मराठा डर गया। मराठा अफगान से डरे! असम्भव।

बालाजीराव पेशवा ने यह सब सोचा। अब्दाली से डटकर लड़ आने के सिवाय और कोई गति नहीं थी। शीघ्र ही एक बड़ी सेना को उत्तर की ओर भेजने की आवश्यकता थी। राजपूत रुष्ट थे, पठानों मे मेल कर सकते थे। अब्दाली ने उनसे लिखा-पढ़ी भी की थी। इसलिये शीघ्र प्रहार करना ही एक मात्र नीति प्रतीत हुई।

परन्तु यथेष्ट रुपया गांठ में नहीं था। सिपाहियों का वेतन बाकी में था और अब एक बड़े प्रयत्न के लिये बड़ी सेना का भेजना अनिवार्य हो गया।

कहीं न कहीं से रुपया हो ही जायगा, ऐसा सोचकर सैन्य संग्रह कर लिया गया। विश्वासराव को प्रधान सेनापति बनाया गया और सदाशिव राव भाऊ को उपप्रधान। अधिनायकों में मुख्य मुख्य थे मल्हारराव होलकर, माधव जी और जनको जी सिंधिया तथा इब्राहीम गार्दी। इन सब को मिलाकर कुल तीस हजार सेना इकट्ठी हुई। पेशवा को निजाम पर नियंत्रण बनाये रखने के लिये बीस सहस्र सेना औरंगाबाद के निकट रखनी पड़ी और दस सहस्र कर्नाटक में। घर सूना नहीं छोड़ा जा सकता था।

पेशवा के पास इब्राहीम गार्दी आया। अधेड़ अवस्था का लम्बा पुष्टकाय मनुष्य। छोटी आँखें, लम्बी नाक, दृढ़ ओठ।

विलायती ढंग का सैनिक प्रणाम करने के उपरान्त बोला, 'श्रीमन्त को मेरी पल्टनों का खर्चा सदा अखरता रहा है। कुछ तो मैंने निजाम वाली लड़ाई में चुका दिया है और कुछ दिल्ली के विरुद्ध चुकाऊँगा।'

पेशवा ने मुस्कराकर पूछा, 'तुम्हारी पल्टनें कुल कितने सिपाहियों की हैं आजकल?'

इब्राहीम ने उत्तर दिया, 'मेरी पल्टनों में, श्रीमन्त, आठ हजार पैदल तिलङ्गे और पन्द्रह सौ सवार हैं।'

फ्रांसीसियों और अंगरेजों ने सबसे पहले तेलुगू भाषी भारतीयों को अपनी पल्टनों में भर्ती करके यूरोपीय तर्ज पर संवारा था। वे सब तिलंगे कहलाते थे। इस ढंग की जितनी भी पल्टनें पीछे बनीं, उन सबके सिपाही तिलंगे कहलाते थे, हों चाहे जिस प्रदेश के निवासी।

परन्तु इब्राहीम गार्दी की पल्टनों और रिसाले में अधिकांश वास्तविक तिलंगे ही थे—आन्ध्र निवासी तेलुगू भाषी सैनिक।

पेशवा ने पूछा, 'वेतन सबका चुका दिया गया है?'

पेशवा को मालूम था कि चुका दिया गया है।

इब्राहीम ने उत्तर दिया, 'कुछ भी बाकी नहीं श्रीमन्त। थोड़ी सी पेशगी भी मिल गई है।'

पेशवा को यह भी मालूम था। उसने इब्राहीम के कृतज्ञता-प्रदर्शन की ही वान्छा से पूछा था। पेशवा ने आशीर्वाद दिया, 'परमात्मा करे तुम्हारी कीर्ति में बट्टा न लगे इब्राहीमखां गार्दी।'

इब्राहीम ने तुरन्त प्रणाम करके उमंग में भरकर कहा, 'श्रीमन्त दिल्ली से मेरा और मेरी पल्टनो का करतब सुनेंगे। अफगानों और रुहेलों को अगर उनके ननिहाल की याद न कराई मेरे तिलंगो ने, तो मेरा नाम इब्राहीम खां गार्दी नही।'

पेशवा ने उसकी पीठ पर हाथ फेरा। इब्राहीमखां गार्दी के बाद माधवजी की बारी आई। जनकोजी अस्वस्थ था।

पेशवा ने कहा, 'सिन्धिया वंश हमारे पितामह के सबसे पहले साथी सरदारों का घराना है। तुम्हारे पिता रानोजी ने जो कुछ पराक्रम किये जगत मे विख्यात हैं। जयप्पा और दत्ताजी का सदा स्मरण किया जायगा। सिन्धिया रण और अपने प्रण से कभी पीछे हटना नही जानता। तुम्हारे भी चोखेपन की परीक्षा की जा चुकी है। तुम्हारी समझ और रण-शास्त्र-कुशलता इतनी बढ़ी चढी है कि कहा नही जा सकता कि यह उससे अधिक है या वह इससे। और क्या कहूँ तुमसे? तुम मेरी दृष्टि में होलकर से कम पद के अधिकारी नहीं हो।

माधवजी ने हाथ जोड़कर आश्वासन दिया, 'सिन्धिया वंश श्रीमन्त के पूर्वजों का और श्रीमन्त का सदा से भक्त रहा है। हम लोग अपने को सरदार या सामन्त नही समझते, हम तो आपके पटेल मात्र हैं। छत्रपति जिस आदर्श को हम लोगों के लिये छोड़ गये उससे किसी सिन्धिया को विचलित होते हुये श्रीमन्त कभी नही सुनेंगे। सिन्धियो मे श्रीमन्त का जो विश्वास है उसको सदा सार्थकता मिलेगी।'

पुचकार कर पेशवा ने माधव को बिठला लिया। फिर मल्हारराव होलकर आया। पेशवा ने आदर के साथ कहा, 'सरदार तुम हम सबके जेठे हो। मेरे पितामह के साथी। इतनी बड़ी लड़ाई लड़ने के लिये ये छोकरे जा रहे हैं। भाऊ तीस साल का ही है, चतुर सेनापति हुआ तो

गया। यह माधव तो अभी लड़का ही है। जनकोजी और भी अल्प-वयस्क और विश्वासराव तो केवल सत्तरह साल का बालक है। इन छोकरों के संभालने का दायित्व तुम्हारे ऊपर छोड़ता हूं। तुम्हें उत्तर खण्ड का चप्पा चप्पा मालूम है और राई रत्ती हाल। तुम वहां के सब राजा रईसों को जानते हो और वे सब तुमको। मैं अपनी सारी चिन्ताओं को तुम्हारी झोली में डालता हूं।'

होलकर ने अपनी भक्ति का भरोसा देते हुये कहा, 'बूढ़ा होते हुये भी जो कुछ कर सकता हूं करूंगा। यदि कहीं आज के दिन खण्डोजी हुआ होता⋯'

मल्हार का कण्ठ रुद्ध हो गया। आगे कुछ नहीं कह सका।

दूसरे अधिनायकों को विदा करके बालाजी अपने महल में आया। सदाशिवराव और विश्वासराव भी आ गये। विश्वासराव की अभी मसें नहीं भीगी थी। रंग खरा गोरा। आंख नाक और सारे चेहरे का बनाव इतना सुन्दर मानो किसी सौन्दर्योपासक कलाकार ने निष्ठा और तपस्या के साथ मूर्ति बनाई हो, जैसे किसी चित्रकार ने कमल सरोवर की धीमी लहरों पर अठखेलियां करती हुई प्रातःकालीन रविरश्मियों के साथ मुस्कराने वाले शिव-कुमार का चित्र खींचा हो।

वहां गोपिकाबाई भी थी। पेशवा ने कहा, 'भाऊ! प्रधान सेनापति यह बालक नाम मात्र का है। प्रधान सेनापति तुम हो। मैं अपनी यह निधि तुम्हारे हाथ में सौंपता हूं।'

विश्वासराव मुस्कराया। गोपिका के चेहरे पर एक आभा बिखर गई। बोली, 'भाऊ मैंने तुमसे बहुत कुवचन कहे हैं। क्या मुझे क्षमा कर दोगे? मैं अपने इस लाल को तुम्हारी गोदी में छोड़ती हूं। मेरे भाग्य की रक्षा करना।'

गोपिका ने अपना अञ्चल पसारा। उसकी आंखें सरल हो गईं।

सदाशिव का कण्ठ अवरुद्ध हो गया। आंख में एक आंसू आ गया। कठिनाई के साथ बोला, 'भाभी, तुम्हारी गाली सुनने की शक्ति तो

मुझ में है, परन्तु तुम्हारे आंसू मैं नहीं सह सकता। क्या कहकर मैं तुमको आश्वासन दूँ ? केवल यह कह सकता हूँ कि मैं तो क्या मेरा रुण्ड तक इसकी रखवाली करेगा।'

विश्वासराव ने गम्भीरता के साथ कहा, 'मां, यह सब क्या हो रहा है ? हम लोगों को आनन्द मनाते हुये युद्ध के लिये जाने दो। अभिमन्यु तो मुझसे भी कम आयु का था।'

सदाशिव ने विश्वासराव को छाती से लगा लिया। बोला, 'हम सब बाजीराव महान के वंशज हैं। भाभी, शान्त हो। विदेशियों को अटक के उस पार भगा कर ही दम लेंगे हम लोग।'

पेशवा ने विश्वासराव के सिर पर हाथ फेरा और गीली आंख सबसे बरकाने के लिये, मुंह एक ओर कर लिया।

(३८)

मुहूर्त शोधकर तीस सहस्र पेशवा के सिपाही सिन्धखेडे से उत्तर की ओर चले। इनके साथ पन्द्रह हजार पिंडारे भी थे। इनका काम था लड़ाई के उपरान्त मरों और घायलों का इकट्ठा करना, और शत्रु का जो कुछ भी हाथ पड़ जाय उसको अपने खीसे मे खोंसना; जब तक युद्ध न हो कायदे वाली सेना के लिये घास दाना एकत्र करना। नियम-संयम इनमें, आपसी व्यवहार में ईमानदारी वर्तने के लिये, केवल कालीमाई की सौगन्ध थी जिसका ये सब—हिन्दू और मुसलमान पिंडारे, पूजन करते थे।

कायदे की इस तीस हजार और बिना कायदे की पन्द्रह हजार पिंडारियों की—सेना के साथ आठ हजार गोले थे—चाहिये थे बीस हजार। इसी प्रकार कम बारूद इत्यादि सारी युद्ध सामग्री थी। परन्तु तम्बू, कनातें, और सारी टीमटाम मुगल बादशाही जैसी और वैसी ही उसकी धीमी गति। यह राजसी सामान इतना बोझिल था कि द्रुतगति से चलने की स्वाभाविक इच्छा रखने वाले सिपाही कुण्ठित हो हो जाते थे।

पूरा डेरा जब आगे के पड़ाव पर पहुंच कर तड़क-भड़क के साथ लग जाता था तब भाऊ और विश्वासराव चुने हुये सरदारों के साथ पिछले पड़ाव को छोड़कर बढ़ते थे। भीमा और नीरा नदियों की कछारों के तेज दक्षिणी घोड़े, देखने मे अरबी और खुरासानी घोड़ों की अपेक्षा छोटे, परन्तु सहिष्णुता, आने वाले संकट को ताड़ लेने की शक्ति और द्रुतगामिता मे कम नहीं थे। और न इन गुणों मे किसी से कम उनके सवार। परन्तु घोड़ो और सवारो की गतिमति की बाधक वह मुगलिया टीमटाम, बनावट और तड़क भड़क थी जिसे मराठा सरदारों ने दिल्ली से सीखा था।

जरतारी के रेशमी कपड़े पहने हुये सदाशिवराव कुछ सवारों और अधिनायकों के आगे आगे जा रहा था—अफसर सब जरतारी कपड़े पहिनने लगे थे।

अभी सूर्यास्त नही हुआ था। पड़ाव सूर्य की किरणों में चमचमा रहा था। ऊँचे ऊँचे तम्बुओं और रंगरंगीली विस्तृत कनातों के ऊपर ऊँचे स्थान पर, लम्बे डाड़े के सिरे से भगवा रंग का जरतारी झण्डा लहरा लहरा कर दमक के साथ फहरा रहा था। महादेव का झण्डा अब त्रिशूल को छोड़कर सोने के तारों के तानों-बानों में पुर गया था।

सदाशिवराव ने घोड़े की लगाम एकायक थामी। पीछे वाले अधिक पास आ गये। बगल में विश्वासराव।

सदाशिवराव ने क्षुब्ध स्वर में कहा, 'झण्डे को केवल इतनी ऊँचाई पर ही फहराया गया है! किस मूर्ख का काम है यह?'

साथियों को मालूम न था।

सदाशिवराव बोला, 'बूढ़े होलकर को सौंपा गया था पड़ाव डालने का काम। वह क्या नही जानता कि झण्डे का डांड़ा इतना ऊँचा होना चाहिये कि पिछले पड़ाव से दिखलाई पड जाय? क्या कहेंगे संसार के लोग? स्वराज्य का, महाराष्ट्र के पेशवा का, यह है बौना झण्डा!!'

विश्वासराव ने कहा, 'काका, झण्डे की ऊँचाई तो हृदय में है।'

उसके निकट ही माधव जी सिन्धिया ने अपने घोड़े को रोक लिया था। उन्होंने विश्वासराव का समर्थन किया, 'इस झण्डे के अर्थ, उद्देश्य और अभिप्राय को सभी जानते हैं। आज्ञा होगी तो अगले पड़ाव पर और भी ऊँचा गाड़ दिया जायगा।'

'चुप रहो।' सदाशिवराव ने डपटा।

विश्वासराव का सौन्दर्य उसका सजीव और सचेत शस्त्र था। माधव जी का पिछला कार्य उसके समर्थन का संबल था, परन्तु सदाशिवराव के ऊपर दोनों में से किसी का भी प्रभाव नहीं पड़ा।

सदाशिव ने राजसी स्वर में कहा, 'तुम लोग अभी अनुभव-हीन लड़के हो। हमारे हृदयों की गहराई में उत्कीर्ण झण्डे की ऊँचाई दूसरों को नहीं दिखलाई पड़ती। उनके लिये उसका वाह्य रूप बहुत आकर्षक होना

चाहिये। मैं यहां से तब आगे बढ़ूँगा जब झण्डे का डांडा अधिक ऊँचा कर दिया जायगा।'

माधव जी ने तुरन्त पडाव मे जाकर झण्डे को ऊँचा करवा दिया, तब पेशवा का प्रतिनिधि, महाराष्ट्र-सेना का नायक आगे बढ़ा।

इब्राहीम गार्दी की पल्टनों का डेरा प्रधान छावनी से जरा सा हट कर था। सिलसिले और मिसिल में था, परन्तु उसके पास कनातें न थीं। सदाशिवराव को अखरा।

मल्हारराव होलकर से पूछा, 'ये पल्टनें क्या हमारी नहीं हैं? इनके चारो ओर कनातें क्यों नहीं लगाई गईं?'

मल्हारराव ने उत्तर दिया, 'उनके अधिनायक इब्राहीमखां ने नही चाहा।'

'उनका अधिनायक कहे कि हम तो घूरों पर लोटेंगे और चिथड़े लपेटेंगे तो करने दोगे?' सदाशिव ने दूसरा प्रश्न किया।

उत्तर मिला, 'सिपाहियों को भरपेट भोजन, रात का आराम और अपने मन का काम चाहिये। इब्राहीम ने कहा था कि कनातों से हवा रुकेगी और फिर मैंने तो वह युग भी देखा है जब हम लोग अपने सिपाहियों सहित दिन की जलती धूप में पेड़ों के नीचे दुपहरी बिलमा लेते थे, छाया के लिये पेड़ न मिले तो भालो पर अपने फटे और छेददार चादरों को तान कर घण्टे भर के लिये मजे मे सो लेते थे, घोड़ों की लगामे कलाइयो पर लपेटे हुये। एक क्षण की सूचना पर बगल में रखी हुई तलवार और सिरहने गढे हुये भाले हाथ में आ जाते थे और हम शत्रु के सिर पर पहुंच जाते थे। साथ मे न कोई रावटी, न कनात, न सामान। न दूसरी बेला के लिये खाने तक को नहीं!'

सदाशिव और भी क्रुद्ध हो गया। बोला, 'क्योंकि तुम लोग उस समय तक यह नहीं जानते थे कि हम विजेता हैं। तुम अब भी नहीं जानते कि गौरव विजय की भूमिका और परिशिष्ट, दोनों हैं।'

'इब्राहीम गार्दी से भी तो पूछ लीजिये', मल्हार ने आग्रह किया।

'इब्राहीम ने अहमद नगर और कर्नाटक में हमारे साथ काम किया है, वह हमारी बात के महत्व को जानता है। तुम क्या जानो पुराने जो ठहरे।'

मल्हार जी मसोस कर रह गया।

इब्राहीम गार्दी आ गया। उसने हँसकर कहा, 'यदि श्रीमन्त को कनातें लगवानी ही हैं तो काफी दूर हटा कर लगाई जायें क्योंकि मेरे सिपाहियों और अफसरों को बेरोक हवा चाहिये।' फिर गम्भीर होकर बोला, 'और आपके जातपात वाले मराठे और ब्राह्मण सिपाही मेरे तिलङ्गों से छुआछूत का परहेज भी तो करते हैं।'

यह तर्क अकाट्य था। गार्दी के सिपाही उस तड़क भड़क के घनिष्ठ साझीदार नहीं बनाये जा सकते थे। होलकर की बात रह गई। सदाशिव को तिलङ्गा छावनी के आसपास कनातें लगाने में गौरव नहीं प्रत्युत हीनता प्रतीत हुई।

तिलंगों में अछूत कहलाने वाले हिंदुओं की ही बहुत बड़ी संख्या थी।

मराठी सेना का वर्गीकरण और संगठन शिवाजी-काल का जैसा ही था। दस सिपाहियों पर एक नायक, पचास पर एक हवालदार, सौ पर एक जुमलेदार, हजार पर हजारी, पांच हजार पर सरनौबत या सेनापति। सवार दो तरह के थे—बारगीर और सिलेदार। बारगीरों के पास घोड़े राज्य के होते थे, सिलेदारों के पास उनके निज के। वर्दी—घुटनों तक का कसीला जाँघिया, पूरी बाहों का अंगरखा, कमर में फेंटा और सिर पर पगड़ी। जूते किसी किसी के ही पास। हथियार लम्बा खाँड़ा–पटा–और लम्बा भाला। बौंड़ादार बन्दूकें और तीरकमान भी। पैदल का वेतन तीन चार रुपया मासिक से दस बारह रुपये तक। बारगीर को छः सात रुपये से पन्द्रह बीस रुपये और सिलेदार को बीस-बाईस से लेकर चालीस-पचास रुपये मासिक तक। लूटमार में जो कुछ मिले उसमें से एक भाग सिपाही का शेष राज्य का।

उस समय एशिया भर में कोई ऐसी सेना नहीं थी जो रणक्षेत्र में हार खाते हुये भी क्षणमात्र की अनुकूल परिस्थिति को पाकर इतनी शीघ्रता के साथ फिर सिमट कर जुट पडती हो और हार को जीत में परिणत कर लेती हो जैसा कि मराठी सेना करती थी।

शिवाजी की प्रतिभा ने दलित, मर्दित, अपमानित जन को न केवल सिर उठाने योग्य बना दिया था बल्कि भारत की राजनीति का नायकत्व करने योग्य भी।

(३८)

कन्नौज के सामने गङ्गा के दूसरे किनारे महदी गंज की नवाबी कोठी में बहुत आवभगत हो रही थी । बरसात शीघ्र हो उठी थी, परन्तु उस दिन बड़ी गर्मी पड़ने के कारण जिसके हाथ में देखो पन्खा था।

एक कमरे में खस की टट्टियों पर गुलाब का अर्क उड़ेला जा रहा था।

नजीब और लखनऊ का नवाब शुजाउद्दौला एकान्त में बैठे थे।

अब्दाली और नजीब को मराठी सेना के कूच का हाल तभी मालूम हो गया था जब वह सिन्धखेड़े से आगे कुछ पड़ाव डाल चुकी थी। अब्दाली ने नजीब को शुजा के पास सन्धि के लिये भेजा। दोनों में शत्रुता रही थी। जब शिहाब ने शुजा के पिता सफदरजंग से लड़ते समय शियों के खिलाफ 'जिहाद' की घोषणा करवाई थी तब नजीब ने भी जिहाद मे प्रचुर सहयोग दिया था। अब्दाली को शङ्का थी शुजा मराठो से मिल सकता है। यदि मिल गया तो अफगानों की हार और रुहेलो के विनाश मे कोई सन्देह नही। थोड़ी देर ऋतु की कठोरता पर बातचीत हुई। फिर नजीब ने कहा, 'शाह अब्दाली की चिट्ठी हुजूर पढ़ चुके हैं। उन्होने हर तरह का यकीन दिलाया है। मान जाने में आपको क्या अब भी कोई अड़चन है?'

शुजा ने अपनी जेब से पेशवा का पत्र निकाल कर दिखलाया। नजीब ने पढ़ लिया।

शुजा बोला, 'हिन्दू दिल्ली की बादशाहत करना चाहते हैं, शाह का और आपका यह ख्याल गलत है। पेशवा ने साफ लिखा है कि असली हकदार बादशाह शाह आलम को तख्त पर बिठला दिया जाय।'

'और सरकार वजीर बनें।' मैंने भी पढ़ लिया है।

'और यह भी लिखा है कि परदेसियों को हिन्दुस्थान से बाहर निकाल देना चाहिये।'

'इनमें तो आपकी भी गिनती हो जायगी।'

'हमें और यहां जन्मे सभी लोगों को अब्दाली और आप लोग नीचा समझते हैं।'

'आप दोती को बिसार दें और मुझे माफ करें। वे हमारे मीत नहीं हो सकते, खास तौर से फरेबी मराठे।'

'ये ऐसे पठानों और रुहेलों से अच्छे जिनके दिल और हाथ, दोनों में छुरी रहती है।'

'और उनके दिल और हाथ, दोनों में लम्बे भाले रहते हैं, जिनका इलाज अगर हम सब मिलकर करना चाहें तो कर सकते हैं, नहीं तो आज दिल्ली और कल लखनऊ पर लम्बी बढ़ियां आयेंगी। आप क्या भूल गये हैं कि इसी पेशवा ने आपके इलाहाबाद और बनारस के सूबों पर घात की थी और उसकी आस अब भी इन उपजाऊ इलाकों पर है?'

शुजा शराब पिये हुये था, परन्तु उसकी स्मृति विलीन नहीं हुई थी। नजीब की बतलाई हुई बात याद आ गई और गड़ गई।

नजीब कहता गया, 'मराठों के टीड़ी दल का सामना करने के लिये हम आप सब अकेले अकेले नहीं के बराबर हैं। और फिर जाट उनसे जा मिलेंगे। अभी उनसे राजपूत किनारा खींचे हुये हैं मगर हो सकता है कि उधर से मराठों और इधर से जाटों के दबाव में पड़कर उन लोगों से जा मिलें।'

'हो सकता है।' शुजा बहस न करने की इच्छा से बोला।

नजीब ने कहा, 'हुजूर को ख्याल होगा कि दिल्ली के औलियों और फकीरों ने मुसलमानों को इकट्ठा करने और मजबूत बनाने के लिये एक बड़ी भारी फितरत बनाई है······'

'जम्हूरी सल्तनत! खां साहब, यह फितरत तो हमारी आपकी जड़ काटने के लिये खड़ी हो रही है।'

'माफ कीजियेगा आपको असली बात का पता नहीं है। रियाया को हुकूमत करने के लिये महज दिल ही नहीं चाहिये बल्कि दिमाग भी

चाहिये। जो फकीर जम्हूरी सल्तनत के उसूलों की बात उठा रहे हैं उनकी गाठ में दिल जरूर है, मगर दिमाग नहीं है। मुसलमानों में जब एक हो जाने की लहर दौड़ जायगी तब पेशवाई और नुमाइन्दगी तो आप और हम ही करेंगे।'

'ठीक है, लेकिन मैं लड़ाई के झंझट में नहीं पड़ना चाहता हूं। मैं इतना कर सकता हूं कि न इधर से लड़ूं और न उधर से।'

'हुजूर से एक अर्ज है, पेशवा ने खत में लिखा है कि हुजूर को दिल्ली का वजीर बना दिया जायगा। क्या आपको इस झूठी बात पर यकीन आ गया है? वह कमीना शिहाबुद्दीन मराठों का बगल-बच्चा है। जाटों की छाया में आज भी है। उसको जाट और मराठे छोड़ देंगे और आपको वजीर बना देंगे? जिन मराठों की मदद के भरोसे इसने दो बादशाहों का खून किया वे मराठे दिल्ली के तख्त पर तीसरा बादशाह बिठला कर आपको वजीर बनायेंगे या उस शिहाब को?'

'आप जो कुछ कह रहे हैं शायद बिलकुल सही हो। मगर एक बात बिलकुल साफ है,—मैं शिया हूं और शाह अब्दाली सुन्नी।'

'हम सब यहां हुकूमत करने के लिये हैं, इसलिये एक दूसरे के बहुत पास। तभी शाह अब्दाली ने हुजूर को वजीर बनाने की कसम खाई है। अपने खत में हुजूर को साफ लिखा है। शाह अब्दाली आपको वजीर बनाने की ताकत रखते हैं। मराठों में यह ताकत नहीं है। वे हुजूर को महज धोखा दे रहे हैं।'

'खां साहब, मैं अफगानों को मराठों से कहीं ज्यादा फरेबी समझता हूं। मेरे साफ कहने को माफ कीजियेगा। दिल्ली में आज एक बादशाह ही कैद है, कल बादशाह और वजीर, दो कैद हो सकते हैं। शाह अब्दाली ने हाल में ही खुरासन के शियों पर जो जुल्म ढाये हैं उनकी कहानी मैंने भी सुन ली है। आपकी खातिर मैं ज्यादा से ज्यादा यह कर सकता हूं कि किसी तरफ न रहूं न इधर, न उधर।'

शुजाउद्दौला को न मराठा-पक्ष का रण-प्रयास पसन्द था और न वह अफगान छावनी में अपना पसीना बहाते फिरने के लिये इच्छुक था। आठ सौ से अधिक गिनती वाला उसका हरम उसे तटस्थता के लिये विवश कर रहा था।

नजीब को क्षोभ हो आया। परन्तु उसने संयत होकर कहा, 'हुजूर शाह अब्दाली के पास तशरीफ ले चलें। मैं इज्जत और हिफाजत की जिम्मेदारी लेता हूं। अगर एक बाल भी बांका हो जाय और इज्जत के एक रेशे में भी फर्क पड़ जाय तो मेरे मुह पर थूक दीजियेगा।'

शुजा बोला, 'मैं तो अपनी लखनऊ मे ही बहुत अच्छा हूं।'

'हुजूर को भरोसा नही है शायद।'

'नहीं खां साहब आपका भरोसा है, मगर शाह अब्दाली की छावनी में बेशुमार सरदार और अजनबी हैं। आप किस किस का हाथ थामते फिरियेगा?'

'उनकी फिकिर आप क्यों करते हैं? खुदा मेरा गवाह है।' नजीब ने कठोर से कठोर और बुरी से बुरी कसमें खाते हुये आश्वासन दिया, 'किसी और की तो क्या कहूं, अगर शाह अब्दाली ने हुजूर के ऊपर अपनी भौंह तक चढ़ाई तो मैं उसकी दोनों आंखें खोदकर बाहर फेंक दूंगा। मगर मैं ऐसा न करूं तो अपने बाप की औलाद नही!'

'इतनी बड़ी बात मत कहिये खां साहब, मैं आपका यकीन करता हूं।' शुजा बोला।

नजीब ने कहा, 'हिन्दुस्थान मे डेढ़ लाख अफगान हैं। ये सब एक उसूल और एक अरमान के हैं। इनको आप अपना गुलाम समझें। अगर आपकी खिदमत में कोई और आया होता और आपने इनकार कर दिया होता तो मुझे उतना बुरा न लगता। अब या तो हुजूर शाह अब्दाली के तरफदार बनें या मेरा खन्जर अपने हाथ में लें।'

नजीब ने खन्जर निकालकर शुजा के सामने रख दिया। शुजा का नशा चूर कर गया।

नजीब कहता गया, 'मेरी गर्दन हाजिर है। हुजूर इसको अपने हाथ से काट डालें। मैं उफ तक न करूँगा। आपकी मर्जी हो तो अपने हाथ से लिखकर और अपनी मुहर लगाकर लिखतम दे दूँगा कि हुजूर मेरे कत्ल के बतई जिम्मेदार या कसूरवार नहीं हैं।'

नजीब का जादू चल गया। शुजा ने अब्दाली का पक्ष ग्रहण कर लिया और सेना के द्वारा सहायता करने का पक्का वचन दे दिया।

नजीब के चले जाने पर शुजा के दीवान और उसके अन्य कर्मचारियों ने समझाया। शुजा कुछ फिसला भी, परन्तु नजीब ने एक बार फिर आकर उसको दृढ़ कर दिया।

(४०)

अब्दाली ने ग्वालियर में भाऊ के पास सन्धि की चर्चा भेजी—चम्बल तक तुम चम्बल से उधर हम—एक दिशा मे दिल्ली-सम्राट के नीचे नजीब, दूसरी दिशा में अवध का नवाब इत्यादि। भाऊ ने इस प्रकार की चर्चा के सुनने से नाहीं कर दी।

इस बीच में गोविन्द पन्त ने सूरजमल के दक्षिणी प्रदेश में छापा मारी करदी। सूरजमल ने उस स्थान पर बहुत बडा किला बनाकर नाम रामगढ़ रख दिया था जिसे नजीब ने अधिकृत करने के उपरान्त अलीगढ़ कहलवाया। गोविन्दपन्त ने इसके आस-पास भी खरोंचा-खराची की। होलकर को सूरजमल के मनाने के लिये जाना था। भाऊ रुपये की प्रतीक्षा मे जेठ के महीने भर पडा रहा। फिर जोर का पानी बरस उठा। तब कहीं चम्बल पार करने का अवसर आया। सेना उस पार उतारकर होलकर सूरजमल को मना लाया। सूरजमल ने इतना अन्न और चारा सेना को दिया कि एक महीना आनन्द और विश्राम में कट गया।

अवध के नवाब का समाचार आया कि मराठों से नही मिल सकते हूं। भाऊ को मालूम हो गया कि नवाब अब्दाली से जा मिला है। भाऊ तुरन्त यमुना पार करके नवाब और अब्दाली के बीच मे धस जाना चाहता था—जिसमें वे एक दूसरे से अलग बने रहें, परन्तु यमुना प्रचण्ड बाढ़ पर थी। गोविन्दपन्त ने नावों का पुल बनवा नही पाया था। भाऊ अवध की ओर न जा सका। तब भाऊ सेना को लेकर मथुरा आ गया। उसने सोचा यमुना जैसी बाधक हमारे लिये है वैसी ही अब्दाली के लिये भी है, दिल्ली पर धावा करना चाहिये।

मथुरा में सूरजमल ने शिहाबुद्दीन को भाऊ से मिलाया। शिहाबुद्दीन माधव जी और जनको जी से भी मिला। शिहाब माधव को अपने निवास-स्थान पर ले गया। उसने माधव के साथ मित्रता बढ़ाने का उद्योग

किया, परिचय तो पहले से था ही। दोनों युवा थे। आयु में बड़ा अन्तर नहीं था।

शिहाब ने माधव के लिये बढ़िया शराब मंगवाई।

माधव ने कहा, 'मैं नहीं पीता।'

शिहाब को आश्चर्य हुआ,—'अरे शराब नहीं पीते!' और पूछा, 'तब क्या खातिर करूं? अफ़ीम का कुसूमा तैयार करवाऊँ या भाग?'

'कुछ भी नहीं।' माधव ने उत्तर दिया।

जिस कमरे में ये दोनों बैठे थे उससे लगा हुआ, शिहाब का रहम था। दीवार में झिलमिली जाली थी। भीतर से किसी के हलके खांसने का शब्द सुनाई पड़ा। माधव ने सुनकर भी उस ओर नहीं देखा।

शिहाब ने घनिष्ठता बढ़ाने के प्रयोजन से अनुरोध किया, 'मेरी कुछ तो लाज रखिये, सरदार साहब। मित्र के घर आकर ऐसे रूखे सूखे!'

माधव ने कहा, 'भोजन मैंने कर लिया है। पान भी खा लिया है।'

'मेरे हाथ का तो कुछ नहीं खाया पिया। यह सब तो ब्राह्मणों का तैयार किया हुआ था। खैर, खाइये पीजिये नहीं तो कुछ और शौक सही जिसमे हम आप दोनो शामिल हो सकें। एक बड़ी खूबसूरत गाने नाचने वाली है। बदली छाई हुई है। रिमझिम मेह बरस रहा है। नदी गरूर और सरूर पर है। ऐसे ही मौके पर तो गाने नाचने का मजा है। फिर आराम करिये।'

माधव ने चुपचाप सुनकर कहा, 'गाना सुन लूंगा। अच्छा लगता है। फिर चला आऊँगा'

नाचने वाली बुलाई गई। वह वास्तव में सुन्दरी थी। नृत्यगान के उपरान्त विदा करदी गई।

माधव जी से चलते समय शिहाब ने प्रार्थना की, 'मेरे ऊपर कृपा बनी रहे। आप मेरे सबसे बड़े मित्र हैं।'

माधव जी ने कहा, 'अवश्य।'

माधव जी को एक खिडकी मे किसी सौन्दर्य की एक क्षणिक झलक दिखलाई पड़ी। शिहाब से बात करने के लिये पैर ठिठका।

शिहाब बोला, 'मैं साथ चलूंगा। आपको लश्कर में पहुँचा कर लौट आऊँगा।'

माधव ने कहा, 'पानी जोरों से बरस पड़ा तो आपको व्यर्थ कष्ट होगा।'

शिहाब नही माना। साथ चला गया। सोचता था मराठे साधारण तौर पर इतने शिष्ट तो नहीं होते।

(४१)

शिहाब के जाते ही हरम में दबी दबी हँसी की फुहारें छूट पड़ीं। और फुसफुसाहट अधिक विकसित हो गई। एक कमरे मे हँसी और बातचीत वहा के साधारण स्तर से कही ऊँची थी। उस कमरे मे उम्दा और गन्ना थी। उम्दा बेगम पुरुष वेश मे थी।

गर्दन को ऊँचा करके उम्दा ने ठहाका मारकर कहा, 'नदी गरूर और सरूर पर है! क्यों मेरी प्यारी बेगम, इन छोटे से दो बोलो में कितनी शायरी वजीर ने भर दी! तुमने मतलब ज्यादा अच्छी तरह पहिचाना होगा।'

गन्ना ने भी हँसकर हां मिलाई, 'मेरे सरकार, भूत सिर पर चढ़कर बोला था! गरूर और सरूर बिचारी नदी में इतना न था जितना उस कमरे में था।'

गन्ना की आखों के नीचे के गड्ढे अब नहीं रहे थे और गाल की हड्डियों की प्रमुखता गालों के सुडौल भराव और लावण्य मे समा गई थी। आखो में सिहरन और होठों पर रसीली फड़कन आ गई थी।

उम्दा ने कहा, 'तुम्हारे वजीर जैसे कुछ हैं सो हम तुम दोनों जानती हैं, मगर वह सांवला जवान?'

गन्ना मुस्कराई—खिली हुई मुस्कान। घडे हुये मोतियो की सटी हुई जैसी दातों की पात और होठो के कोनो के पास लुकने और प्रकट हो हो जाने वाली छोटी छोटी सी लहरिया। बोली, 'आंखें बडी बड़ी हैं और मूछें कैसी ऍठ उमेठदार! रग सांवला है, कुछ गहरा।'

अपने अगरखे का छोर मलते हुये और सिर पर बंधा कुलेदार जरतारी साफा मटकाते हुये उम्दा ने कहा,—

'और वह! वही!! उनका हमारे वजीर का और उस सांवलिया का नापतौल तो करो बेगम।'

गन्ना ने मुस्कान में तान सी लपेटी,--'बांट बखरा सरकार मुझे दें तो तखड़ी पर नापतौल की हिम्मत करू'––'

कुछ प्रखर स्वर में उम्दा बोली,—'वजीर मे दिल और दिमाग दोनों नहीं हैं। सावले सिन्धिया मे दोनो जान पड़ते हैं। देह इसकी सांचे में ढली सी दिखलाई देती है। अब तौलो इसे जवाहरसिंह से। बांट बखरे दे दिये। कहीं डाड़ी न मार देना।'

'हाथ को दिल जहा ले जाय, सरकार।'

'इस घड़ी तुम्हारा दिल कहा है गन्ना ?'

'उसका एक हिस्सा आपके अँगरखे के छोर मे बँधा है दूसरा··'

'हा हा दूसरा ?'

'दूसरा जहा है वह आपसे छिपा नहीं है।'

'ओहो ! दिल के टुकड़े भी होते हैं !'

'सरकार, शायर कर देते हैं। दिल वैसे है तो एक ही लेकिन, चलता-फिरता रहता है। खाना पीना, हँसना खेलना, करता तो सब वही एक दिल है और जो कुछ करता है एक बार मे एक तरफ ढुलकर। बाहर से मालूम होता है जैसे बँट गया हो। है वह भी सही और यह भी।'

'अजी बेगम साहब, यह तो बतलाइये कि उसका कोई टुकड़ा उस सिन्धिया की बड़ी बड़ी मूछों से तो नहीं उलझा है।'

'वहां से लौट आया है और सरकार बहादुर के कुले कलगी मे जा उलझा है।'

'तो अब नहीं जाने दूँगा, याद रखना। कलगी कुले से खिसका तो अपने फेंटे मे बांध लूँगा।'

'सरकार अपना फेंटा कभी तो खोलते होंगे ?'

दोनो हँस पड़ीं।

उम्दा बेगम ने कहा,— अबकी बार महाराजकुमार जब आवें तो मेरा भी सलाम कह देना।'

गन्ना बोली,—'प्रजा अपने मालिक के सामने खुद सिर झुकायगी। उस रात के बाद जब झिर्झरी की ओट मिले थे बहुत दिन बाद आये। फिर अब तब।'

'पहले समझे कि रूप सरूप में फरक पड़ गया। मन न माना, दूसरी बार देखा। कहते होंगे यह तो फूल नहीं फुलवाड़ी है!'

'फुलवाड़ी तो हुजूर हैं जहां एक नन्हा सा पौधा मैं हूं।'

उम्दा बेगम और गन्ना बेगम के बीच मे शील-संकोच न रहा था। उम्दा अपनी माँ के इतिहास से घृणा करती हुई अज्ञात रूप से उसका और ज्ञात रूप से शिहाबुद्दीन का अनुकरण कर उठी थी।

(४२)

भाऊ की सहायता के लिये कुछ सेना बुन्देलखण्ड से आ गई और थोड़ी सी राजपूताना से। अधिकांश राजपूत राजा, मराठों के व्यवहार के कारण अपनी व्यक्तित्व-मग्नता से विवश होकर दूर से ही ताक-झांक करते रहे।

यमुना में बाढ़ पर बाढ़ आने और निरन्तर वर्षा के कारण अब्दाली अपनी सेना के प्रधान अङ्ग के साथ अनूप शहर में ठहरा हुआ था जो नजीब के क्षेत्र में था। अब्दाली ने दिल्ली में अपने किलेदार के अधीन थोड़ी सी सेना छोड़ रक्खी थी। भाऊ अब्दाली से भिड़ने यमुना पार जा नही सकता था। दिल्ली पर आक्रमण सहजतर था। भाऊ में बहुत बुद्धि तो नहीं थी, परन्तु कभी कभी परिस्थितियों को ठीक तौल कर लेता था।

उसने एक बड़ा दल दिल्ली पर धावा करने के लिये मल्हारराव और माधव जी के साथ भेजा। इब्राहीमखां को लेकर वह पीछे पीछे चला।

दिल्ली के किलेदार ने फाटक बन्द करके रक्षा का आयोजन किया। मल्हारराव ने माधव को दिल्ली अधिकृत करने का काम सौंपा। शिहाब माधव के साथ था। सवाल उठा कम से कम समय में दिल्ली का नगर और किला कैसे हाथ मे कर लिये जायें?

शिहाब ने बतलाया, 'किले की बुर्जों पर बड़ी बड़ी तोपें हैं। तीर-कशों के छेदों पर अनगिनत छोटी छोटी।' और सुझाया, 'ऐसी हालत में खाइयां खोदकर घेरा डाल दिया जाय और मौका पाते ही कमजोर जगह से किले के भीतर घुस बैठा जाय।'

माधव जी ने किले की कमजोर जगहों के विषय में पूछा। ब्योरे-वार जानकारी कर लेने के बाद कहा 'बादल हाल में खुल तो गया है, परन्तु किसी दिन मूसलाधार भी बरस सकता है। ऐसी दशा में खाइयां नालों का रूप पकड़ लेंगी और बड़ी भारी हानि हो जायगी।'

शिहाब सोचने लगा।

माधव जी ने अपनी योजना सुनाई,— आपके बतलाये हुये कमजोर स्थानों की जांच करता हूं। उनमें से एक या दो चुन लूँगा और फिर उन्हीं के ऊपर सारी शक्ति लगा दूगा, इस तरह कि दुश्मन को मालूम भी न हो पाय।'

शिहाब बोला, जरा ब्योरे के साथ बतलाइये।'

शिहाब ने कई लड़ाइयों का सफल नायकत्व किया था, और वह कायर भी नहीं था। परन्तु उसकी षड़यन्त्री प्रकृति मित्र और शत्रु, दोनों को सावधान रहने के लिये विवश कर देती थी।

माधवजी को सतर्क रहने का अभ्यास हो गया था। कहा, 'पहले उन जगहों को देख लूँ तब बतलाऊँगा।'

माधवजी ने शिहाब के साथ दूर से उन स्थलों को देख समझ लिया। परन्तु अन्त तक वे उससे और अपने साथियों से कहते रहे, 'अनेक विचार मनमें उठ रहे हैं। सोचता हूं यह करूँ या वह।'

सन्ध्या के होते ही माधव जी ने अपनी बाहरी सतर्कता अलग कर दी। अपने और होलकर के दल से सौ चुने हुये सैनिक और कमन्द लिये। सीढ़ियां भी। इन्हें और शिहाब को लेकर किले की दीवार के नीचे एक स्थल पर पहुंचे। उस समय तक चन्द्रमा का उदय नहीं हुआ था। बदली थोड़ी सी थी जो फुरफुरा कर कभी बिखर जाती थी और कभी सघन हो जाती थी।

माधव जी ने सैनिकों को आदेश दिया, 'इस ठौर से, यहां से, सीढ़ी लगाकर चढ़ जाओ। और भीतर जाकर हम लोगों के लिये फाटक खोल दो।'

'कितने जवानों को साथ ले जाऊँ ?' जुमलेदार ने पूछा।

'सौ के सौ', माधवजी ने उत्तर दिया।

'फिर आप अकेले ही भीतर आ जायेंगे ?' जुमलेदार ने दूसरा प्रश्न किया।

'नही तो । मैं बहुत से सिपाही पीछे छोड़ आया हूँ । चिन्ता मत करो । जाओ ।'

जुमलेदार सीढी पर से चुपचाप चढ़ गया । उसने कमन्द डाला । फिर सीढी और कमन्दो के सहारे वे सौ के सौ मराठा सैनिक किले के भीतर पहुँच गये । पराक्रम करने मे कौन इनकी बराबरी कर सकता है ? शिहाब ने सोचा और मन ही मन अपने मित्र मराठो के प्रति उसका आदर और भी बढ गया । माधवजी और वह पीछे चले गये और पांच सौ सन्नद्ध पैदलों को बिना रोक टोक किले के फाटक के इधर उधर ले आये और सास साधकर दीवार से जा चिपके ।

जुमलेदार और उसके सौ साथी महल के एक खुले स्थान मे पहुँचे । वहा इधर उधर बहुत से छोटे बड़े बर्तन रखे हुये थे । सिपाही उन पर जुट पडे । इसके बाद वे पहरेदारो को मारकर महल के भीतरी भाग में घुस गये और चादी के बर्तन, कपड़े और दूसरा सामान उठाने धरने में लग गये ! उन्हें स्मरण ही न रहा कि फाटक खोलना है और माधवजी के बड़े दल को भीतर प्रवेश कराना है । थोडे से समय मे बहुत सा सामान पहले गाठ मे कर लिया जाय, फाटक तो खोल ही लेंगे । परन्तु किले के रक्षक एकत्र हो गये और उन्होने इन सिपाहियो को घेर लिया । थोड़ी सी लड़ाई हुई । मराठे बेभाव लडे, उन्होने बहुत से रक्षकों को मार दिया, परन्तु वे सबके सब मारे गये ।

फाटक न खोला गया, न खुल सका ।

माधवजी और शिहाब ने बड़ी देर तक प्रतीक्षा की । फिर किले के भीतर हल्ला-गुल्ला सुनाई पडा और बन्दूकों की आवाजें । समझ लिया कि फाटक नही खुल सकेगा और स्वय किसी अप्रत्याशित विपद मे पड़ जायेंगे । फाटक के पास से बाहर चले गये ।

फिर तीन चार दिन घेरा और चला । भाऊ और अधिक प्रतीक्षा नहीं कर सकता था । माधव को बुरा लगा और लाज भी आई ।

माधवजी को किला न ले पाने का इतना खेद नहीं था जितनी चिन्ता असफलता के कारणों के जानने की थी। कारण पीछे मालूम हो गये जब सात दिन उपरान्त भाऊ ने आकर इब्राहीम गार्दी के तोपखानों से किले के ऊपर गोलाबारी करवाई और चार दिन के भीतर किलेदार ने हार मानकर फाटक खोल दिये।

माधवजी ने सबसे पहला काम अपने सौ सैनिकों की विफलता के कारण-शोध का किया।

कई बंधी हुई गठरियाँ अभी जहां की तहां पडी थी। उनका मूक कहानी से बढ़कर किलेदार का कथन था,—'मराठे सिपाही फाटक को खोलने के लिये न बढ़कर लूटने मे जुट गये थे!'

(४३)

दिल्ली के किले पर मराठों ने तीसरी अगस्त सन् १७६० को कब्जा कर लिया। शिहाब ने दूसरे दिन ही अपनी धन-लिप्सा शान्त की। शाहजहां के बनवाये हुये दीवान खास की छत में चादी की मोटी चादरें टकी हुई थीं, जिनमे रंग-बिरंगे पक्के नगों की नक्काशी भी थी। शिहाब ने इतनी जल्दी इस चादी को निकलवाकर इकट्ठा किया कि कुछ देर तक मराठों को पता नही लगा। लगभग दस लाख रुपये की निकाल चुका था तब भाऊ ने निषेध करवाया।

भाऊ ने सुना था कि नादिरशाह और अहमदशाह तथा वजीर शिहाबुद्दीन की पिछली लूटों के उपरात भी बादशाह के हरम में बीसेक करोड का माल और नकदी है। उसने बादशाह और शाहजादों की बहुत आवभगत की, जासूसी करवाई, परन्तु पता नही लगा। इतना बर्बर था नहीं कि हरम मे घुसकर डकैती डालता या खोदा खादी करवाता।

भाऊ दो दिन तक उस आवभगत और जासूसी के पीछे पड़ा रहा, परन्तु हाथ कुछ भी न लगा। उसने पेशवा को पत्र भेजा, सिपाहियों और घोड़ों को भूखों मरना पड़ रहा है, एक सप्ताह से अधिक का प्रबन्ध नहीं है, तुरन्त रुपया भेजो।

शिहाब दीवान खास की चांदी आधी से अधिक निकाल चुका था। भाऊ को भविष्य मे कही से भी कुछ मिलने की आशा न थी। सैनिकों और घोड़ों के सामने अनाहार और दुर्भिक्ष का प्रेत मुह बाये खड़ा था इसलिये दीवान खास की बाकी चादी का पटाव भाऊ ने उखड़वा लिया! उसके नौ लाख सिक्के बने—एक महीने के व्यय भार की समर्थता।

शिहाब के पास एक करोड़ रुपये पहले का और पचास लाख की थोड़े दिन पहले के हरम की लूट थी ही, दस लाख का धन और आ गया। इसमें से उसको कुछ अपनी बेगमों और रखेलियों को भी देना था। पुरस्कार से अपनी अन्य त्रुटियों की पूर्ति।

जब दीवान खास की पूरी चांदी निकाल ली गई तब भाऊ ने दीवारों पर ध्यान पूर्वक एक लेख पढ़ा जिसको शाहजहां ने मूसा पत्थर के टुकड़ों से जड़वाया था—

यदि पृथ्वी पर स्वर्ग कहीं है तो यही है, यहीं है, यहीं है।

भाऊ थोड़ी देर के लिये अपने किये कर्म को भूलकर बोला, 'वजीर साहब यदि आपने चादी का उखाडना आरम्भ न किया होता तो मैं इसको कदापि न छूता, चाहे कैसी भी तंगी हमको कष्ट देती।'

शिहाब ने तुरन्त प्रश्न किया, 'बादशाहों के लिये इज्जत के ख्याल से क्या आप ऐसा कह रहे हैं श्रीमन्त?'

एक उठती हुई भारी सांस को दबाकर भाऊ ने कहा, 'ख्याल कुछ ऐसा ही है अमीर साहब। यहां कैसे कैसे और कितने कितने लोग न उठे बैठे होंगे। शाहजहां वास्तव में बड़ा आदमी था।'

'श्रीमन्त इतना बड़ा ठाठ बाट रखने की वजह थी।' शिहाब ने अपना ज्ञान प्रकट किया जो उसने शाहवली के अड़ोस-पड़ोस से संग्रह किया था, 'बादशाह जिन्होंने यह सब शान शौकत रची थी बड़े चालाक थे। उन्होंने अपने निज को खुश करने के लिये नहीं बल्कि, हिन्दू मुसलमानों पर धाक जमाने के ख्याल से ही यह सब किया था। जो कोई भी यहां आता होगा चकाचौंध के मारे बेवकूफ बनकर लौटता होगा और उसके दिमाग में सिर्फ एक बात याद रहती होगी कि अगर दुनिया मे कहीं स्वर्ग है तो बस इसी जगह है। और स्वर्ग का राजा इन्द्र यहां बैठने वाला बादशाह।'

भाऊ ने कहा, 'यहां जो कोई भी बैठेगा बादशाह कहलावेगा और उसकी बात पाली जायगी।'

'माफ कीजियेगा, श्रीमन्त।' शिहाब बोला, 'यहां बिना आपकी हमरी मर्जी के अब और कोई नहीं बैठ सकता। जो कोई भी बैठ धाक उसकी नहीं रहेगी, क्योंकि तख्त-ताऊस, सोना चांदी वगैरह अब इन दीवारों और पायों को ढकने के लिये नहीं हैं।'

भाऊ के मुँह से निकल पड़ा,—'हम लोगों की आंखें बाहरी टीमटाम या चमक दमक से कभी नहीं चौंधियाती। हमारे यहा जो छत्रपति राजा साहू हुये हैं वे अपने कुत्ते को राजसी ठाठ में रखते थे और सरदारों से उसको प्रणाम करवाते थे। साहू राजा किसी को भी आतंकित नहीं कर सके।'

'तभी आप लोगों का आदर मान बढ़ा।' शिहाब ने टोका।

भाऊ जिस अवसर की प्रतीक्षा में था वह उसे मिल गया। इस बात को जानता ही था कि शिहाब ने बादशाहों को मार कर बहुत लूटा है।

उसने दृढ स्वर मे कहा, 'वजीर साहब रुपये की हमे बहुत ही बड़ी आवश्यकता है। एक एक क्षण कठिनाई से कट रहा है। आपके बनाये हुये बादशाह और आपकी मौरुसी वजीरी की रक्षा के लिये ही हम इतनी बड़ी जोखिमें उठा रहे हैं। आपको रुपये से सहायता करनी चाहिये। दस बारह लाख रुपये की यह चादी तो आपको अभी दे देनी चाहिये।'

रुपये पैसे के मामले मे शिहाब 'चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय' वाला सिद्धान्त मानता था। बोला, 'श्रीमन्त, आप और मैं—हम सब—एक ही नाव में बैठे हुये हैं। पार लगने मे आपका फायदा पहले है, मेरा पीछे। बिजारत देने के लिये अब्दाली कल तैयार था और आज भी है। आपको पंजाब और दुआब की जागीरें दिलवाने में मैं भी तो कुछ सेवा कर सकता हूं और करूंगा। मेरे साथ भी फौज फाँटा लगा हुआ है। लड़ाई झगड़ों के मारे वसूली हो नही पाती। बहुत बेबसी है। माफ कीजियेगा। लेकिन जैसे ही वसूली का सिलसिला जारी हुआ कि श्रीमन्त को शिकायत नही रहेगी।'

भाऊ ने मुंह फेर कर दात भींचे। अपना निर्धार प्रकट नही किया।

(४४)

भाऊ ने सूरजमल से भी रुपये के लिये कहलवाया—सहायता के रूप में पुराने पावने को चुकाने के लिये नहीं। सूरजमल ने प्रचुर धान्य से सहायता की थी। रुपया उसने किसी को देने के लिये जोड़ा नहीं था। कहलवा दिया—'अभी तो मेरे पास नहीं है।'

भाऊ रुपये के लिये बहुत पहले से छटपटा रहा था और पेशवा के पास पत्र पर पत्र भेज रहा था। उसका मथुरा से दिल्ली की ओर आने का समाचार अब्दाली को मिल गया था। मराठों के हाथ मे दिल्ली के पहुँच जाने का भारत की सम्पूर्ण स्थिति पर क्या प्रभाव पडेगा वह इस बात को जानता था। यमुना की बाढ़ के कारण इस पार पश्चिम मे नहीं आ सकता था, और पानी के बरसते रहने के कारण वह अपना भारी भरकम सामान और तोपें दलदली मार्गों मे से ला नही सकता था। इसलिये शुजा और नजीब के द्वारा फिर सन्धि की चर्चा चल उठी।

आर्थिक कठिनाइयों के कारण भाऊ स्पष्ट नाहीं न करके गोलमटोल उत्तर देने लगा। सन्धि की शर्तें थीं—दुआब का इलाका नजीब को, पंजाब अब्दाली को और दिल्ली तथा आगरा का प्रदेश बादशाह की गुजर-बसर के लिये। बादशाह शाहजहां द्वितीय नहीं बल्कि वध किये हुये आलमगीर का लड़का शाहआलम और वजीर शिहाब नहीं, शुजा।

दिल्ली पर अधिकार कर लेने के दो तीन दिन के भीतर ही सन्धि-वार्ता पर अन्तिम निर्णय करने की परिस्थिति आ गई। विशेष लोगों का दरबार हुआ। एक ऊँची लम्बी चौड़ी मसनद पर भाऊ और विश्वासराव बैठे। पास ही जरा निचाई पर होलकर और शिहाब। कुछ हटकर माधव जी और उनका भतीजा जनकोजी। इधर उधर थोड़े से अन्य सरदार।

सूरजमल आया। उसने भाऊ और विश्वासराव को झुक कर प्रणाम किया और भाऊ की बगल में उसी मसनद पर जा बैठा। भाऊ को बहुत

बुरा लगा। ब्राह्मण की बराबरी पर जाट आ बैठे ! और ऐसे दो ब्राह्मण जिनमें एक पेशवा का भाई और दूसरा लडका !! भाऊ उस क्षण किसी प्रकार पीकर रह गया।

भाऊ ने बातचीत आरम्भ की,—'अब्दाली को हम खुली लडाई में हरा सकते हैं, परन्तु और अधिक सैनिकों की, गोला बारूद इत्यादि सामान की, और इन सबसे भी बढ़कर, रुपये की अटक है। मैं अब्दाली से इसी समय लड़ जाता, परन्तु नदी पार नहीं की जा सकती है। अब्दाली ने शुजा और नजीब के द्वारा जो संदेशा भेजा है उससे अब्दाली की घबराहट प्रकट है—'

भाऊ कुछ सोचने लगा।

शिहाब को मालूम था, भाऊ अब्दाली की शर्तें दो महीने पहले अस्वीकृत कर चुका है, और अब उन्हीं शर्तों पर टालमटोल का उत्तर असम्भव है—आर्थिक कठिनाइयों के बहाने उन शर्तों को मंजूर न करले ! बोला, 'श्रीमन्त अब क्या सोच विचार कर रहे हैं ? शर्तें जो पहले थीं वे ही अब भी हैं, कोई अदल-बदल नहीं। साफ इनकार कर देने में क्या दिक्कत है ?'

भाऊ के चिड़चिड़ेपन और स्वाभाविक दम्भ को सूरजमल के उस ऊँची मसनद पर आ बैठने से ठेस लग चुकी थी। शिहाब के बेमौके टोक देने पर जलन बाहर आने के लिये उमगने लगी।

'आपको जानना चाहिये वजीर साहब।' भाऊ बोला, 'राजनीतिक में साम दाम दण्ड और भेद का स्थान बराबर-बराबर है।'

'मगर इस वक्त तो बतलाया जा सकता है या अब भी हम लोगों को अंधेरे में रखा जायगा ?' दिल्ली के वजीर ने सूरजमल का रक्षित होने के कारण पदाभिमान में कहा, 'साफ जवाब देने की घड़ी आ गई है श्रीमन्त। हम लोग कब तक अंधेरे में रहें ? अगर आपका मन उन शर्तों की तरफ झुक रहा है तो अब्दाली को वैसा जवाब दे दीजिये वरना

साफ इनकार कर दीजिये। इस ढीलढाल की वजह से आपके दोस्तों में भ्रम बढ़ सकता है।'

'जिनको भ्रमों में पड़े पड़े ही सड़ने की इच्छा है, उनका मेरे पास कोई उपचार नहीं है।'

'हम लोग पड़े पड़े नहीं सड़ना चाहते हैं। घड़ी आने दीजिये और फिर देखिये मुगलों, तूरानियों और जाटों के करतब।'

'रुपया दीजिये। बहुत तो है आपके पास। कल काम आयगा? लाइये मैं ही आज अब्दाली को नाही लिखे भेजता हूं।'

'मुझ पर आपका चाहिये भी क्या है? हमने जो वायदे किये थे उनको पूरा करने के लिये आपको इलाके लगा दिये हैं।'

'उनसे मिला भी कितना है? आपने और आपके बादशाह ने तो आफतें जागीर में लगाई हैं।'

'राजपूताने से रुपया क्यों नहीं इकट्ठा किया आपने? अकाल पड़ने के बाद अब तो राजपूताना निहाल है।'

'जहां अकाल नहीं पड़ा और जो सदा निहाल हैं वे भी तो लिखपढ देने के बाद भी कुछ नहीं देते!'

यह बौछार सूरजमल पर थी।

माधव जी माथे पर चिन्ता की रेखा आई गई।

सूरजमल रुपये पैसे के प्रसङ्ग पर संकोच को कभी आड़े नहीं आने देता था। उसकी समझ मे आ गया अब रुपये की मांग मुझसे की जायगी। बोला, 'श्रीमन्त को मैंने इतना अनाज और चारा दिया है कि मेरे हाथ रीते पड़ गये हैं और राज्य भर में बुरा हाल है।'

सिहाव ने सकारा, 'बार बार हम लोगों से रुपया नहीं मांगा जाना चाहिये। अन्न, धन, जिससे जितना बना, आपको दिया। माना कि यह लड़ाई हम सबकी है और इसीलिये अकेले महाराज सूरजमल के तीस हजार बहादुर जाट इस लड़ाई में कूद पड़ने के लिये तैयार हैं, मगर माफ

करें श्रीमन्त, जब पूना से चले थे तब रुपये का काफी इन्तजाम करके चलना चाहिये था।'

माधव जी की भौंहें सिकुड़ी।

'हम किसी के सहारे दक्षिण से नहीं चले थे।' भाऊ ने क्षुब्ध स्वर में कहा, 'और न किसी के भरोसे पर यहां हैं। सूरजमल राजा ने जो कुछ भी अन्न-वस्त्र हमको दिया है, वह उन दो करोड़ रुपयों का ब्याज का भी ब्याज नहीं बैठता, जिसकी वसूली श्रीमन्त पेशवा ने मना करदी है।'

माधव जी ने सिर नीचा कर लिया।

सूरजमल के अन्तर्मन में उठा वसूली रोक दी है तो किसी दिन फिर मांग की जा सकती है। इतना अन्न और धारा ब्याज का भी ब्याज नहीं! और वे दो करोड़ रुपये क्या पेशवा ने उधार दिये थे?

बोला, 'उन दो करोड़ रुपयों के दावे में कोई सार न होगा तब तो पेशवा ने मांग करने से रोक दिया है।'

भाऊ ने कहा, 'सार तो उस मांग में इतना है कि सिवाय सार के और कुछ भी नहीं। जब आपने लिखकर वचन दिया था तब आप भी उसकी गम्भीरता को जानते थे।'

सूरजमल का क्षोभ भी करवट लेने को हुआ। बोला, 'श्रीमन्त कभी उत्तर में नहीं आये हैं इसलिये यह की परिस्थितियों को नहीं जानते। क्यों लिखा गया इसे सरदार मल्हारराव होलकर जानते हैं। और देखिये, मैं ठाकुर हूं—कैसे भी दो करोड़ देने का वचन मुझसे लिया गया हो मैं उसे किसी दिन पूरा करूंगा।'

माधव जी के मुंह से धीमें स्वर में निकला—'हां भी।

मल्हारराव ने विवाद गरम न होने देने के प्रयोजन से कहा, 'मुझे वे सब परिस्थितियां मालूम हैं। श्रीमन्त पेशवा भी जानते हैं। उन्होंने कुछ सोच समझ कर ही उस रुपये की वसूली का निषेध किया है।'

भाऊ और भी भड़का,—'अर्थात उन दो करोड़ रुपयों का दावा ही गलत है?'

माधव जी ने मुँह दूसरी ओर मोड़ लिया।

होलकर ने समस्या को सुलझाने के अभिप्राय से अनुरोध किया,—'इस समय इन बातों से कोई लाभ नहीं। यदि अब्दाली के साथ सन्धि करना है तो नजीब को इतना अधिकार मत दीजिये कि वह महाराज सूरजमल के पुराने या हाल के जीते हुये इलाकों में से एक बीघे पर भी हस्तक्षेप कर सके, और मीर शिहाबुद्दीन को वजीर बने रहने देने की शर्त तै कीजिये।'

भाऊ क्रोध को दवाने के लिये कुछ सोचने लगा।

शिहाब बीच में कूद पड़ा,—'जाने भी दीजिये, सरदार साहब, हम आपको—सबको—मालूम है कि श्रीमन्त मर्से से शुजा को विजारत देने की बात सोच रहे हैं। आपने एक चिट्ठी में क्या, कई चिट्ठियों में लिखा है शुजा को। श्रीमन्त है न ऐसा?'

माधव जी की आँखें फैलीं।

'सब कुछ लिख दिया जाता है। पर इससे क्या हुआ?' भाऊ ने क्षोभ में प्रश्न किया।

सूरजमल बोला, 'वह सो तो ठीक ही है, बिलकुल ठीक है। साम दाम दण्ड भेद की बात है। उन दो करोड़ रुपयों के देने की लिखा-पढ़ी भी तो कुछ इसी प्रकार की थी।'

सदाशिवराव के मुँह से फूट पड़ा,—'जाट ही तो ठहरे! वस्तु के यथार्थ रूप को सोचने समझने के लिये कुछ बुद्धि विवेक चाहिये।'

माधव जी कुछ कहना चाहते थे, मगर रह गये।

सूरजमल सन्न रह गया। चेहरा लाल पड़ गया। कुछ कहना चाहता था, मुँह से एक शब्द न निकला। उसकी हुई साँस को दबाने के प्रयत्न में उलझ गया। उस प्रयत्न को छिपाने के प्रयास में केवल एक क्षीण मुस्कराहट ओठों पर आ सका। नीची गर्दन किये हुये उसके मुँह से निकला, 'ठीक कहते हैं, श्रीमन्त।'

मन की बात न कह सकने के कारण वह क्षोभ के आवेश में भरने लगा।

होलकर बीच में आ पड़ा,—'श्रीमन्त इस प्रकार की बातों से कोई लाभ नहीं।'

विश्वासराव ने इस वाद-विवाद में कोई भाग नहीं लिया था। उसको लगा कुछ कहना चाहिये। बोला, 'आप लोग भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुभव वाले हैं और मैं जानता ही कितना हूँ? तो भी कहूंगा आगे क्या करना है और क्या नही करना है, इसी क्षण निर्धारित कर लेना चाहिये।'

शब्द तो कुछ नही थे परन्तु सुन्दर मुख पर खेलने वाली तरल लहर-सी थी। शिहाब ने उमड़ी हुई आंखों उसकी ओर देखा।

सूरजमल ने मानो कुछ सुना ही नहीं। उसके कानों मे कुछ भनभना सा गया।

शिहाब ने वातावरण में ठंडक उत्पन्न करने भर के प्रयोजन से कहा, 'यदि दिल्ली के बादशाहों मे कुछ ऐसा रस होता जैसा श्रीमन्त पेशवा के कुमार में है तो कितनी मुश्किलें सहज न हो जातीं।'

'अवश्य, अवश्य।'—माधव जी कुछ और न कह सके।

भाऊ ने सोचा यों ही बहुत बत-बढ़ाव हो गया। वह भी उस ठंडक को बढाने भर के लिये बोला, 'आप लोग चाहें तो श्रीमन्त विश्वासराव बादशाह भी बन सकते हैं। यहा से उठाकर दीवान आम के सिंहासन पर बिठला दीजिये बस, बादशाह हो गये।'

मल्हारराव होलकर ने हँसकर कहा, 'राज सिंहासन पर बैठने के पहले न जाने कितना यज्ञ करना पड़ता है! ब्राह्मण न जाने कितने ढकोसले करते हैं!! इसके लिये समय ही किसके पास है?'

विश्वासराव हँसा। मोतियों जैसे दांतों की बिजली सी कौंध गई और उसकी हँसी तो एक अलग बड़ी सम्पत्ति थी ही। बोला, 'मैं दिल्ली की गुड़िया नहीं बनना चाहता।'

माधव जी मुस्करा पड़े।

भाऊ को मानो एक छल सा मिला। उसकी वाणी ने फिर गम्भीरता पकड़ी। दक्षिण के युद्धों की निजी विजयों का क्रम आंखों के सामने फिर

गया और अपनी समर्थता का अतिशय रूप। भविष्य में उत्तर के क्षेत्र को दो डगों के नीचे बनाये रहने की भावना कल्पना में कौंध गई।

उसने हलकी मुस्कराहट के साथ अनुरोध के स्वर में कहा, 'यदि विश्वासराव को दिल्ली का सम्राट घोषित कर दिया तो सारी समस्या हल हो जायगी। सिख, राजपूत, हिन्दुस्थानी मुसलमान और जाट भी स्वीकार कर लेंगे। फिर अब्दाली या नजीब को पैर रखने के लिये तिल भर स्थान न रहेगा। अब्दाली को लौट जाना पड़ेगा। काबुल और नजीब को ढूँढना पड़ेगा अपना पहाड़ी बिल--कन्दहार की किसी नन्ही पहाड़ी में।

अब सूरजमल का कान खुला। उसने गम्भीरता के साथ पूछा, 'वजीर किसको बनाइयेगा?'

माधव जी अपनी भौंहें टटोलने लगे।

मल्हारराव ने हंसकर उत्तर दिया, 'और किसको बनाया जायगा? मीर शिहाबुद्दीन को, जो पुश्तैनी वजीर हैं।'

'और जो बादशाहों का पुश्तैनी वध करने वाला है।' अन्तर्मन ने भाऊ के कान में सहसा कहा। उसी समय उसने विश्वासराव के भोले मुस्कराते हुये चेहरे को देखा। शिहाब के सम्पूर्ण जीवन के प्रति घोर घृणा उमड़ पड़ी। वह एक क्षण के लिये शिहाब की उपस्थिति को भूल गया। उसके मुँह से अकस्मात् निकल पड़ा,-- 'शुजाउद्दौला कैसा रहेगा?'

माधव जी सन्न।

जनकोजी कुछ कहने के लिये उनकी ओर झुका। माधव जी ने संकेत से वर्जित कर दिया।

शुजा का नाम लेते ही भाऊ का ध्यान शिहाब की ओर गया। अपनी मूर्खता पर उसे एक क्षण के लिये पछतावा हुआ, परन्तु उसने पश्चाताप को प्रकट करने की आवश्यकता अवगत नहीं की। सोचा उसके दर्प में ही बात दब जायगी। शिहाब के मन में छिद गई।

भाऊ ने प्रायश्चित करने का प्रयास किया,--'वजीर कोई न कोई तो रहेगा ही--मेरा प्रयोजन है मीर शिहाबुद्दीन हैं ही,--परन्तु इन सब

बातों पर विवाद की आवश्यकता नहीं है—अभी तो बादशाह या सम्राट के,—'

मल्हारराव ने तुरन्त बात काटी,—'अभी तो क्या निकट भविष्य में कभी भी अपने किसी को सम्राट बनाने की बात नहीं करनी चाहिये, और न ऐसा होना ही है।'

सूरजमल बोला, 'सरदार साहब, दिल्ली की बादशाहत ब्राह्मण लोग नहीं कर सकते। ब्राह्मणों का काम कुछ और है।' सूरजमल का क्षोभ इस रूप में व्यक्त हुआ।

भाऊ ने क्रुद्ध होकर कहा, 'तो जाट और राजपूत, ब्राह्मणों से बड़े हो गये? पूना की इतनी विशाल व्यवस्था किन लोगों के हाथ में है? प्राचीन काल में इस पृथ्वी को क्षत्रीविहीन किसने किया था?'

माधव जी के मन में आया कि उठकर कहीं चला जाऊँ, आसन पर गड़ा रहना पड़ा। उनको अधीर हो गया।

'ब्राह्मणों की लिखी हुई पुस्तकों ने।' ठंडक के साथ सूरजमल ने उत्तर दिया, अब करके देखें इस पृथ्वी को,—या इसके एक खण्ड को ही निःक्षत्र। सिवाय घमण्ड मारने के और कोई बात ही नहीं!'

सूरजमल ने क्षोभ मे अपनी स्वाभाविक सतर्कता विलीन हो जाने दी। भाऊ मे तो इस प्रसंग के लिये सतर्कता थी ही नहीं। बोला, 'मैं बहुत दूर से सुनकर आया हूँ कि जाट अशिष्ट होते हैं, परन्तु यह आज और अभी जाना कि उनके राजा मे उठने बैठने तक की विनय नहीं। मेरी बराबरी पर बैठ जाते तुम सूरजमल! पर श्रीमन्त विश्वासराव की बराबरी पर भी बैठने का तो गँवारपन नहीं करना चाहिये था तुम्हें। ढोरों के पालने वाले ही ठहरे न!!'

सूरजमल के मन में आग दहक गई। उसने तड़ाक से कहा, 'राजा राजा ही हैं और ब्राह्मण ब्राह्मण ही।'

सूरजमल यह बात नहीं भूल सकता था कि वह तीस हजार वीर जाट सैनिकों का सेनापति और राजा है तथा भारतवर्ष भर में सबसे अधिक रुपये वाला।

'उठो यहां से और बैठो अपनी जगह', भाऊ ने सूरजमल को आदेश दिया।

माधव जी कांप गये।

सूरजमल आसन से हिला। जैसे उठना चाहता हो। मल्हारराव ने परिस्थिति को संभालने के लिये अपनी वृद्धावस्था, पुराने अनुभव और पेशवा की अन्तिम बात के बल पर तुरन्त कहा, 'बैठिये महाराज यहीं। आप हम लोगों के सबसे बड़े मित्र हैं। भाऊ अभी लड़के हैं। बात करना नहीं जानते।

सूरजमल उठ बैठा।

भाऊ ने मल्हारराव को डाटा, 'तुम भाये बड़े पञ्च ! सठिया गये हो, तुम में जाट से ज्यादा अकल थोड़े ही है !!'

सूरजमल मसनद से नीचे उतर गया। भनभना कर बोला, 'अपने भतीजे को बनाइये सम्राट और उत्तर खंड को लूटमार से पूर दीजिये। चौथ, सरदेशमुखी, मुकासा, घासदाना आदि करों से तो आप किसानों और राजा रईसों को लूटते ही रहते हैं अब दिल्ली का साम्राज्य फेंटे में बांधकर कर दीजिये पृथ्वी को लोट पोट। मैं किसान का बेटा हूं और किसानों का राजा भी। मुझे नहीं रहना है आपके साम्राज्य में।'

कड़क कर भाऊ ने कहा, 'आपे से बाहर हुये जाते हो सूरजमल ! मैंने रियायत की है तुम्हारे साथ। अब न करूंगा।'

दरबार में काई-सी फट गई। मालूम होता था कि कोई अनहोनी होने वाली है।

सूरजमल के क्षुब्ध प्रतिवाद की गति और बढ़ी,—'बहुत रियायतें की हैं ! क्या कहना है !! अभी बैसाख जेठ के महीने में तुम्हारे सूबेदार गोविन्दपन्त ने मेरे रामगढ़ किले को हथियाने का प्रयत्न किया था, जब

तुम अवध के नवाब से लिखा पढ़ी कर रहे थे—नवाब साहब, आपको दिल्ली का वजीर बनाना चाहता हूँ ! मीर शिहाबुद्दीन और नवाब शुजाउद्दौला—दोनों—को वजीर बनाना चाहते हैं !! यही है तुम्हारा साम दाम दण्ड भेद !!! राम, राम !!!! कैसा युग आ गया है !!!!!'

माधव जी ने सिर ऊँचा किया।

शिहाबुद्दीन भी खड़ा हो गया। बोला, 'बना लीजिये अपने भतीजे को बादशाह, मुझको नहीं चाहिये आपकी दी हुई विजारत।'

होलकर ने सूरजमल का हाथ जा पकड़ा। मरयिे हुये स्वर में धीरे से उससे कहा, 'शान्त होइये महाराज।'

उस अधिवेशन के भाग्य में शान्ति लिखी न थी।

भाऊ ने दम्भ के साथ कहा, 'अब्दाली-शिविर के कई सरदारों के पत्र मेरे खीसे मे पडे हैं जो हमसे मिल जाने के लिये व्याकुल हो रहे हैं। बहुत से अब्दाली को छोड़कर भाग गये। नजीब को अकेला छोड़कर रुहेले चल दिये। दिल्ली को अधिकार मे कर लेने से तो मानो मैंने अब्दाली की कमर ही तोड दी है। बीस से भी कम मराठे उस दिन हताहत हुये हैं, जिस दिन दिल्ली के किले पर अधिकार किया। तुम्हे यदि अपनी सैना का घमण्ड है तो जा सकेते हो।' फिर तुरन्त बैठे स्वर में बोला, 'अर्थात जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसे मैं कहता नहीं कि चले जाओ।'

सूरजमल मल्हारराव का हाथ छुड़ाकर बिना कुछ और कहे चला गया।

'बना लीजिये शुजा को वजीर' कहता हुआ शिहाब चलता हुआ।

यह सही है कि दिल्ली-विजय से मराठों का आतंक व्यापक रूप में फैल गया है और फैलता जावेगा, यह भी सही है कि अब्दाली के पक्षपाती घर्रा गये हैं और बिखर उठे हैं इसमे भी सन्देह नहीं कि अब्दाली के पैर डगमगा गये हैं, परन्तु भाऊ को ऐसी ओछी बातें नहीं करनी चाहिये—नीचा सिर किये हुये माधव जी सोच रहे थे। होलकर ग्लानि से माथा नवाये खड़ा था।

भाऊ के भी भीतर किसी ने धीरे से काटा—अच्छा नहीं किया। तुरन्त भीतर की इस भर्त्सना को दबाने की भाऊ ने चेष्टा की। जो कुछ किया था उसका समर्थन करते हुये बोला, 'मैंने एक बात भी गलत नहीं कही। कहो सरदार होलकर।'

होलकर माथा नवाये ही खड़ा रहा।

भाऊ माधव जी की ओर मुह करके बोला, 'माधव जी, तुम्हीं कहो मैंने क्या अनुचित या असत्य कहा ?'

'मैं इसको दुर्भाग्य के सिवाय और क्या कहूं।' माधव ने नीचे सिर को बिना ऊँचा किये हुये कहा।

विश्वासराव बोला, 'काका आपने जो कुछ कहा उसकी नाप तौल का न तो मैं अधिकारी हूँ और न उसका समय है। हाथ जोड़कर इतनी विनती अवश्य है कि जैसे बने सूरजमल को मनवा लीजिये। बूढ़े काका मल्हारराव जी समर्थ हैं। वे उसको मना सकते हैं। उसके मान जाने पर मीर शिहाबुद्दीन भी मान जायगा।'

उस दरबार में अपना कोई भी समर्थक न पाकर भाऊ ने अपने घुलते हुये क्रोध की एक झाई प्रकट की,—'वह मराठों का कितना अपमान भरी सभा में कर गया! चौथ, सरदेशमुखी थाम दाना इत्यादि हमारे अधिकारों पर आक्षेप कर गया!! फिर भी मैंने कहा कि तुम्हें चले जाने के लिये नहीं कहता। जाट होकर ब्राह्मण की बराबरी पर आ बैठा!! पर खैर मैं विश्वासराव की बात नहीं टालना चाहता। जाओ मल्हारजी, समझा-बुझाकर उसे लौटा लाओ। श्रीमन्त पेशवा ने स्पष्ट कह दिया है कि उससे दो करोड़ रुपया वसूल नहीं किया जायगा। उसके जी में यह बात बिठला देना और विश्वास दिला देना कि बराबरी से बैठ जाने की धृष्ट अशिष्टता को मैंने क्षमा कर दिया है!';

मल्हार के मुह से शब्द नहीं निकला। उसने हामी का सिर नवाया और भवन से बाहर हो गया। उसके चुप चले जाने पर भाऊ का क्रोध चला गया और आत्मग्लानि ने उभरना आरम्भ कर दिया। इधर-उधर

झांकने लगा। व्यवहार कुशल मराठे सरदार भी इधर-उधर देख रहे थे—समर्थन के लिये किसी का मुह न खुला। माधव जी का सिर अब भी नीचा था।

भाऊ बोला, 'माधव जी तुम भी होलकर के साथ जाओ। उस बुड्ढे को भी शायद कुछ खल गया हो, यद्यपि बात मैंने गलत नहीं कही थी।'

माधव जी ने खड़े होकर कहा, इस समय किसी भी प्रकार सबको एक गांठ में बांधे रहने की आवश्यकता है। मैं अभी आता हूं।'

माधव जी के चले जाने पर भाऊ ने विश्वासराव से कहते हुये अपने सब सरदारों को सुनाया,—'जो कुछ भी हो एक दिन तुम्हें दिल्ली के सिंहासन पर बिठलाकर रहूँगा। सूरजमल आज नहीं मानेगा तो कल मानेगा। जायगा कहां ? वह अब्दाली या नजीब से पा क्या सकता है ? उसे तो असबस हमारे साथ रहना पड़ेगा। रह गया शिहाब सो इस राज-द्रोही, स्वामि-हन्ता और दुश्चरित्र पापी को वजीर बनाकर क्या हम अपने को रसातल भेजेंगे ? इस समय तो हम उसे केवल अटकाये रखना चाहते हैं।'

विश्वासराव ने पूछा, 'श्रो अब्दाली को क्या उत्तर भेजना है ?'

'यही कि श्रीमन्त पेशवा अब्दाली को पञ्जाब देने के लिये किसी दशा में भी तैयार नहीं हैं, क्योंकि भारत के खण्ड नहीं किये जा सकते, शुजा को वजीर बनाने के लिये तैयार हैं और नजीब के पास केवल उतनी जागीर रहने देना चाहते हैं जितनी से सूरजमल के राज्य पर हस्तक्षेप न हो।' भाऊ ने कहा,—'केवल इतना ही उत्तर दिया जायगा। रह गई राजत्व की बात सो अपनी निजी गोष्ठी की है। इस समय कोई भी ऐसा गैरा बादशाह बना रहे, अब्दाली के चले जाने पर तुमको ही बादशाह—सम्राट—बनाऊंगा।'

(४५)

मल्हारराव सूरजमल के पास जाने के लिये तैयार हो ही रहा था कि उसने माधव जी को आते देखा। वह माधव जी को चाहता था। प्यार के साथ बुला लिया। कहा, 'बेटा माधव, मराठों का कोई दुर्भाग्य आ रहा है।'

माधव जी ने जिज्ञासा की आंख उसकी ओर की।

मल्हारराव बोला, 'कितना दुर्बुद्धि है यह भाऊ! समय कुसमय कुछ नहीं देखता है और कितना अण्ड-बण्ड बोलता है!!'

'सूरजमल ने अपने को अवश्य अपमानित समझा है', माधवजी ने कहा।

'अपमानित समझा है! यह जाट सुनकर रास हो गया है। तुम बोले नहीं पर देख सुन तो रहे ही थे।'

'गद्दी पर बराबरी से न आ बैठता तो भी उसका मान कम न होता। गद्दी है तो पेशवा की ही।'

'किसने कहा गद्दी पेशवा की है? गद्दी छत्रपति महाराज शिवाजी की है। मराठों की है। इन ब्राह्मणों की नहीं है।'

'काका, यह समय इन बातों का नहीं है।'

'मैंने कभी महाराष्ट्र के प्रति द्रोह या घात नहीं किया। साथ ही कभी अपने भाव को छिपाया नहीं। ये ब्राह्मण अपने को विष्णु से भी बढ़कर समझने लगे हैं!'

'परन्तु काका, इन सबके साथ रहकर, इन सबको साथ लेकर ही तो भारत में स्वराज्य स्थापित हो सकेगा।'

'माधव, भ्रम में मत पड़ना। अब्दाली की लड़ाई यदि भाऊ जीत गया तो सब मराठों को इन ब्राह्मणों की मैली धोतियां धो धोके जीवन-निर्वाह करना पड़ेगा!'

'जिन मराठों में छत्रपति शिवाजी उत्पन्न हुये उनमें कोई दूसरा और वैसा ही फिर उत्पन्न हो सकता है।'

'बेटा, ये पेशवाई ब्राह्मण अब किसी को नहीं पनपने देंगे।'

'काका, मैं आपके हाथ जोड़ता हू। इस प्रकार का विचार मन में न आने दीजिये।'

'विचारों को मन मे आने से नही रोक सकता, और न तुम सरीखे अपने निजी लोगो से कहने मे रुक सकता हूँ, परन्तु साथ ही विश्वास दिलाता हू कि अब्दाली इत्यादि से लडने मे कोई कसर नहीं लगाऊंगा,— न कभी लगाई है। क्या यह अवसर विश्वासराव को सम्राट बनाने की बात कहने का था? क्या ब्राह्मण सम्राट हो सकते हैं? और, क्या उस मूर्ख को सूरजमल सरीखे बलशाली राजा का इस प्रकार अपमान करना चाहिये था?'

'इस तरह की बात नही करनी चाहिये थी। पर अब जो हो गई सो हो चुकी।'

'सूरजमल के पास सीखी सिखाई कमी कमाई तीस सहस्र सेना है, बड़ी छोटी असंख्य तोपें। बड़े बड़े किले और अटूट धन धान्य। उसका मन इस मूर्ख ने खट्टा कर दिया।'

'तो अब शीघ्र चलकर सूरजमल को मना लीजिये। मुझे भाऊ ने आपसे विनय करने के लिये भेजा है।'

'अच्छा, तो अब भाऊ को कुछ पछतावा हुआ है! अब्दाली को उत्तर देने के बारे में भी कुछ और कहता था?'

'हा काका। यह कि पञ्जाब को अब्दाली के लिये नहीं छोड़ा जा सकता। शुजा को वजीर बनाने के लिये तैयार है; सूरजमल के राज्य को किसी तरह की क्षति नहीं पहुंचनी चाहिये।'

'शुजा को वजीर! अस्तु, हमको उनके उत्तर के इस अंश के सम्बन्ध मे कुछ नही कहना है। शिहाब सूरजमल का आश्रित है।'

वे दोनों सूरजमल को मनाने के लिये गये। बहुत कुछ समझाया-बुझाया, परन्तु उसे अपना और अपनी जाति का अपमान इतना गड़ गया था कि उन लोगों की एक न मानी और वह भरतपूर चला आया। शिहाब भी उसके साथ।

मराठों के हाथ से तीन सहस्र जाट सेना निकल गई।

(४६)

आज उम्दा बेगम के कक्ष में वजीर की अवाई थी। उस लूट की चांदी में से कुछ उम्दा को, थोड़ा सा गन्ना को भी, भेज दिया गया था।

उम्दा बेगम मर्दाना वेश में रहने लगी थी। वजीर पर मेरा रौब है इसलिये उसने सबसे अधिक भेंट मेरे पास भेजी इसकी उम्दा को पूरी प्रतीति थी उसके बिलकुल भीतरी हरम-जीवन का हाल वजीर को नहीं मालूम है यह विश्वास तो उसे था ही।

गन्ना बेगम को अपना बांदीपन उस दिन से नही खलता था जब उसे झिमरी के पास जवाहरसिंह मिला था।

वजीर के स्वागत के लिये दोनों को अपनी साज संवार करनी पड़ी। गन्ना बेगम ने पुरुष वेश और नारी भूषा का सम्मेलन किया। आज वह गहनों, हीरा जवाहरों से लदी और इत्रों से बसी हुई थी।

गन्ना बेगम की वेश-भूषा मे उसका क्रमोत्तर भरता, उभरता और लरजता हुआ सौन्दर्य अब झांकियां सी दे रहा था।

वजीर के आने मे अभी देर थी। कही से बदली आई, घनी हुई, और बरस पडी। वे दोनों सहेलियों और दासियों को छोड़कर एक गोख मे अकेली जा बैठीं। एक दासी वहां पानदान और उगालदान रख गई।

उम्दा ने कहा, 'गन्ना, मेरी प्यारी बेगम, आज तो तेरे रूप की लोचलचक पर मूसलधार नूर बरस रहा है। मैं चाहता हूं तेरी कुन्दी करूं तू मेरे दिल की सबील और अरमान की कन्दील है। सोचता हूँ, तुझे नोच डालूं।'

परेशान का नाट्य करती हुई गन्ना बोली, 'चाहता हूँ! सोचता हूँ!! हुजूर क्या वजीर के सामने भी इसी ढङ्ग पर बात करेंगे? तब आई मेरी आफत। वजीर को बड़ा ताव आयगा—बांदी गन्ना मीर उम्दा बेग की हो गई है!'

अब वह रूखी फीकी गन्ना बेगम न थी और न उसके और उम्दा बेगम के बीच में कोई संकोच रह गया था ।

उम्दा बेगम ने घसीट कर गन्ना को पार्श्व मे बिठला लिया । उसके कान के पास अपना मुंह लाकर कहा, 'और जो सुन लें कि जब से जवाहरसिंह मिल गये हैं और कभी कभी मिलते रहते हैं और यह भी मालूम हो जाय कि तुम्हारा रंग और रगरेशा उस घड़ी से मोतियों से होड़ लगाने लगा है जब से जवाहरसिंह की छाया तुम पर पड़ी तो वजीर का क्या हाल होगा ?'

गन्ना का चेहरा एक क्षण के लिये फक हो गया । धीरे से बोली, 'फिर न आपकी खैर और मेरी ।'

'अजी मैं पूछती हूं उस मुएँ वजीर का क्या होगा ?'

'वजीर का क्या होना है मैं और आप दोनो बिलकुल बरबाद हो जायेंगी ।'

'मालूम कैसे होगा ? इस लम्बे चौड़े हरम में कोई ऐसी है जो अपने मन का घन न करती हो ? वजीर को मालूम हो जायगा तो जवाहरसिंह को भी तो मालूम हो जायगा । ये हजरत मराठों से बिगड़ कर चले आये हैं । अब जाटों से किस बूते रार ठानेंगे ?'

'मगर किसी हब्शी या हिजड़े की छुरी तो मेरे और आपके दिलों की धड़कन को सदा के लिये सुला सकती है ।'

'फिकिर मत करो । वजीर की कन्जूसी की वजह से सारे सिपाही और खवास नाराज हैं । सब अपने हाथ में हैं । जब उस जालिम नजीबे ने दो बार हरम को बेइज्जत और बारबाद किया—सिर्फ हम तुम और दो चार ही तो निकल भाग पाई थी, तब कहा गई थी इस हिजड़े वजीर के हिजड़ो की छुरी ?'

'तो भी सरकार उस चर्चा को न छेड़ा करिये । मैं तो कभी भी आपके अरमानों के साथ छेड़छाड़ नही करती ।'

'मैं तो चाहती हूं । लेकिन तुम बैरागिन-सी बन जाती हो ।'

'कम से कम दस वक्त तो हुजूर माफ रखें। वे आने वाले ही होंगे।'

'इस बरसात की खुमारी में शराब की बोतल और गुलगुली मखमल की मसनद पकड़े होंगे या यहीं सोच रहे होंगे?'

'फिर भी, बेगम साहब!'

'अच्छा गन्ना, एक बात, बस एक बात। फिर कोई और चर्चा। पहली बार झिझरी के पास मिलने से कई महीने बाद वे क्यों मिले? और जब उस वक्त मिले तब उनके चेहरे पर सबसे पहला रंग किस ढंग का और कैसा था?'

'*मैं इतनी मगन थी कि मैंने ख्याल ही नहीं दे पाया।*'

'गलत, झूठ बोलती हो। जब तक औरत इस ख्याल में रहती है कि उसकी सुन्दरता का क्या असर पड़ रहा है तब तक वह अपने आपको कभी नही भूलती और न अपने सामने वाले के बारीक से बारीक हाव-भाव को कभी भूलती है क्योंकि उस घड़ी के लिये तो वह तब तक सांसें भरती हुई बैठी हुई थी।'

'जब तक मैं आपका चाहा हुआ जवाब न दूंगी तब तक आप मानेंगी नहीं। इसलिये इस चर्चा को बन्द करने के लिये सीधी सी बात कह ही दूं—देखते ही उनका चेहरा रो—रोशन सा हो गया था। वे समझते होंगे अधमरी सी गन्ना नजर आयगी मगर सामने आ गई मोटी तगड़ी—'

'हिश! मोटी तगड़ी!! फूलों से लदी हुई फुलवाड़ी; कलियों की चटक को चुहचुहाने वाली बुलबुल। हां तो उन्होंने क्या कहा था? मेरी कसम है छिपाना मत।'

'सच ही तो कह रही हूं, हुजूर। उन्होंने बाद में बतलाया था। पूछते थे झिझरी के पास जब देखा था तब से आज की हालत में फर्क की वजह क्या? मैंने कहा,—आपका दर्शन। लो बस, मेरे सरकार—'

उसी समय एक दासी ने वजीर के आगमन की सूचना दी।

आगत स्वागत के उपरान्त वजीर ने अवगत किया उसका मन पुरुष वेशधारिणी उम्दा बेगम की ओर अधिक खिंच रहा है और जैसे

वह गन्ना के रूप-मद से कुछ झिझक रहा हो। दोनों पर एक साथ ही धाक विठलाना चाहता था। बोला, 'मराठों को हम मुंह की खिलाकर आ रहे हैं। बड़े गवाँर हैं।'

उम्दा ने पूछा, 'क्या कोई बेअदबी की उन लोगों ने ?'

'मेरी तो नहीं की, कर नहीं सकते थे। लेकिन महाराज सूरजमल के साथ बुरी तरह पेश आये।' शिहाब ने उत्तर दिया।

विवश होकर गन्ना की जिज्ञासा भरी आख शिहाब की ओर फिर गई। शिहाब ने उससे आख न मिलाकर उम्दा को उस अधिवेशन की कथा सक्षेप में सुनाई,—परन्तु विश्वासराव को सम्राट बनाने वाले प्रस्ताव का वर्णन नही किया।

उम्दा बोली, 'अच्छा हुआ भरतपूर की फौज लौट आई। अब्दाली हम लोगों से दुश्मनी मोल लेने की जल्दी न करेगा।'

'हां इन दिनों जब यहां बाप बेटे मे अब भी काफी अनबन है।' शिहाब ने कहा।

गन्ना के गालों पर गहरी लालिमा आई और चली गई।

उम्दा ने पूछा, 'बाप बेटे मे अब अनबन क्यों है ?'

गन्ना गड़-सी गई। जी चाहा कही चली जाऊँ। पानी की झड़ी और भी लग पड़ी। वैसे भी उठ जाने के लिये कोई बहाना न था।

शिहाब ने उत्तर दिया, 'उसी पुराने झगड़े का बकाया है। आप तो जानती होंगी ?'

उम्दा ने गन्ना की ओर उन्मुख होकर कहा, 'मुझे मालूम है, मगर शायद गन्ना बेगम को न मालूम हो।

मूसलाधार बरसते हुये पानी की ओर से ठण्डी हवा आ रही थी, परन्तु गन्ना को पसीना आने लगा। चेहरे पर लाली पर लाली दौड़ने लगी। संकोच कर नहीं सकती थी—वजीर को शायद कुछ सन्देह हो जाता। साहस बांधकर उसने सिर उठाया। वजीर ने देखा उसका

सौन्दर्य अत्यन्त मादक है। भीतर कुछ भयभीत हुआ। ऊपर ऊपर उसने ढाढस पकड़ा। आंख मिलाई।

गन्ना बोली, 'सुना था कभी खुली लड़ाई हुई थी, और कुछ नहीं मालूम।'

'मैं बतलाती हूं सारा किस्सा।' उम्दा ने शरारत भरी आंखों गन्ना की ओर देखते हुये कहा,—'मुझे शुरू से आखीर तक सब मालूम है। गन्ना की तरह महज औरत तो मैं हूं नहीं—'

गन्ना को लगा कलेजा धसा जाता है। लाली चली गई। चेहरा पीला पड़ने लगा।

शिहाब ने टोका,—'वह सब किस्सा कभी इन्हें बतला दीजियेगा। लड़के ने रईस तबियत पाई है। बाप कन्जूस है। यही सारे फसाद की जड़ है जो गहरी है और सूरज के मरने पर ही मिटेगी।'

गन्ना ने चैन की सांस ली। बोली, 'तोबा, तोबा, आज तो आसमान फट-सा पड़ा है। इतना पानी तो कभी बरसते नहीं देखा!'

उम्दा बेगम मानने वाली न थी। उसने छेड़ा,—'अगर बाप बेटे में फिर से छिड़ जाय तो आप किसकी तरफ रहेंगे?'

शिहाब ने कहा, 'बाप की तरफ।'

उम्दा ने पूछा, 'लड़के से बाप जीत जायगा?'

शिहाब ने जरा सहमकर उत्तर दिया, 'पहले से बतलाना मुश्किल है, मगर वैसे तो ऐसा ही जान पड़ता है। आप यह सब क्यों पूछ रही हैं?'

उम्दा ने गन्ना की ओर देखते हुये कहा, 'क्योंकि हम लोगों ने आपस में बहस करके तै किया है कि आप किसी तरफ रहें हम लोग तो जवाहरसिंह की तरफदारी करेंगी।'

गन्ना की आंखों में क्षोभ चढ़ आया। शिहाब हँस पड़ा। बोला, 'आप लोग किस तरह से मदद करेंगी जवाहरसिंह की?'

उम्दा ने मुस्कराकर गन्ना से प्रश्न किया, 'कहो गन्ना बेगम, राजकुमार की मदद के लिये किन हथियारों को काम में लाओगे?'

गन्ना ने क्षोभ पचाने का प्रयत्न किया। जरासी खांसी। गला साफ किया। उम्दा की ओर निहोरा-सा करके बोली, 'आप जिन हथियारों को देंगी उन्हीं को तो काम मे ले आऊँगी।'

शिहाब फिर हंसा। 'शायर जो ठहरी,'—शिहाब ने कहा,—'फब्ता हुआ जवाब रहा।'

गन्ना ने जरा सी आड़ लेकर विषयान्तर के लिये कनखियों से प्रार्थना की।

गन्ना के ऊपर हावी होने का उसका प्रयत्न सफल हो गया था। शिहाब की ओर उन्मुख होकर बोली, 'आप मजाक समझते हैं। खैर, मगर आप हम लोगों की मानें तो मैं चाहूँगी कि मौका आने पर आप जवाहरसिंह का साथ दें। बुड्ढा मरने के करीब है। लड़ेगा नहीं, लड़के को राज सौंप देगा; आप जवाहरसिंह से दोस्ती बनाये रखिये। काम उसी से निकलेगा। सोचिये हम लोग दुश्मनों से घिरे हुये हैं।'

शिहाब ने आश्वासन दिया, 'मैं जवाहरसिंह के साथ दोस्ती बराबर बढ़ा रहा हूं और बाप-बेटे मे खुली लड़ाई की नौबत न आने दूंगा।'

उम्दा बेगम बोली, 'कहो, गन्ना, अब तो तुम्हारे मन की हुई!'

गन्ना ने सहमे स्वर मे पूछा, 'मेरे मन की कैसी?'

उम्दा ने तुरन्त उत्तर दिया, 'ऐसी कि तुम बाप-बेटे की आपसी लड़ाई के ख्याल से बहुत घबराती और डरती हो। वह हम सब के लिये खतरनाक होगी भी।'

गन्ना बोलने नहो पाई। शिहाब ने फिर आश्वासन दिया, 'इस वक्त कोई फौज या बड़ा जरिया हाथ मे नहीं है, मगर इन सबसे बड़ी जो एक चीज दुनिया मे होती वह, श्रीमान, तो मेरे पास भरपूर है। होलकर और सिन्धिया से बढकर जवाहरसिंह मेरा दोस्त रहेगा।'

गन्ना मुस्कराई। उम्दा बेगम हँसी।

उम्दा ने कहा, 'सुनती हूँ होलकर और सिन्धिया हाथ हाथ भर की लम्बी मूछें रखे हैं?'

कुछ न कहिये।' शिहाब बोला, 'जितनी लम्बी मूछें उतने ही मक्कार और उससे बढ़कर लुटेरे। मन्देशा था मराठों से पीछा न छुटा सकूँगा, लेकिन जाटों का साथ मुझे ज्यादा नफे की कारर्वाई जान पड़ी। राजपूताने के राजा उनसे नाराज, जाट उनसे बिगड़े हुये। इन लम्बी मूछों का इलाज मेरे पास है—भरतपूर के महाराज, गोहद के राना वगैरह वगैरह।'

गन्ना के मुह से निकल पड़ा,—'भरतपूर के मुकाबिले में तो कोई है नहीं।'

उम्दा बेगम ने अपना ज्ञान प्रकट किया,—'पर पड़ोस अच्छा नहीं है। एक तरफ अवध, दूसरी तरफ नजीब वगैरह।'

शिहाब ने कहा, 'तो भी गोहद राजपूताने से लगा हुआ होने की वजह से दुश्मनों का मुकाबिला करने के लिये अच्छी जगह है। मगर मैं इस बहस के लिये नहीं आया था। गन्ना बेगम कोई गाना सुनाइये। मेह की बूंदों पर आपकी तानें सवार हैं।'

गन्ना ने गया।

(४७)

शरद ऋतु आ गई। उद्यानो मे चमेली और जगलों में हरसिंगार की टहनियो पर फूल लद गये। यमुना नदी का पानी नीला तो हो गया, परन्तु बह रही थी दोनों पाट दाबे। रुहेलों ने दिल्ली के उत्तर में पांच छै कोस चढकर यमुना पार करने की चेष्टा की परन्तु भाऊ दिल्ली की रक्षा के लिये एक दस्ते को छोडकर उत्तर की ओर पहले ही बढ़ गया था। रुहेलों ने यमुना पार न कर पाई।

सन्ध्या हो गई थी। भाऊ की छावनी मे बहुत चहल-पहल थी। एक स्थान पर इतना कोलाहल हुआ कि आसपास के सरदारों और सिपाहियो ने खोली हुई कमरों को फिर कस लिया।

अन्ताजी अब्दाली से पहली टक्कर लेकर दिल्ली से मराठी परिवारों को बचा लाया था, माधव जी का एक सरदार इगले और बालाजी जनार्दन (बाद का नाना फडनीस) अपनी सेना के दो सरदारों और कुछ सिपाहियों को पकडे हुये भाऊ के डेरे पर लिये जा रहे थे। जिन सैनिकों ने युद्ध के लिये हथियार बाध लिये थे उन्होंने फिर खोल डाले। साधारण सी बात समझ कर अधिक ध्यान नहीं दिया।

भाऊ और माधव जी की कुछ बातचीत हो रही थी जब यह भीड़ भाऊ के सामने पहुंची। आगे आगे बालाजी जनार्दन था। छरेरे शरीर का गौर वर्ण युवक। उत्तेजित मन को सयत किये हुये।

भाऊ ने पूछा, 'क्या बात है बालाजी ?'

बालाजी ने तुले हुये शब्दो मे उत्तर दिया, 'मेरे पास आज के भोजन के लिये आध पाव भुने चने और पाव भर ज्वार थी। अन्ताजी और इगले के झोलों में केवल आध-आध पाव चने थे। इन दोनों सरदारों और सिपाहियों ने मिलकर हमारे इस अन्न पर डाका डाल दिया। हमारे पानी के घड़ों को न केवल छू लिया बल्कि जुठार कर उनसे पानी भी पी लिया! हम लोगो की गांठ मे न खाने को अन्न है और न पीने को पानी।'

भाऊ ने चिड़चिड़ाकर टोका,—'इतनी सी बात पर यह सब रोरा ! सिपाही को भूखो प्यासों मरने के लिये सदा तैयार रहना चाहिये और फिर तुम तो ब्राह्मण योधा हो बालाजी, और सरदार भी। सभी सरदार और सिपाही प्राय: उपवास सा किये रहने के लिये विवश हो रहे हैं। इतने अधीर हो गये कि हमारे पास दौड़े आये ! छि !!'

बालाजी जनार्दन बिना सहमे हुये बोला, 'श्रीमन्त, हम लोग जैसे इतने दिनों से भूखो मर रहे हैं आज भी एकादशी समझकर लेट जाते, परन्तु इन लोगों ने हमारे ऊपर आक्रमण भी किया। अन्ताजी और इंगले को तो चोटें भी आ गई हैं।'

'क्यो रे क्या बात है ?' भाऊ ने कर्कश स्वर मे चोरी करने वाले सरदारो और सिपाहियों से पूछा।

उनमे से एक ने उपेक्षा के साथ उत्तर दिया, 'इन तीनो ने सिपाहियो के अन्न में से कटौती करके अपना पेट भरने का आयोजन किया; हम दो दिन से बिलकुल निराहार थे, हमने घुसकर खा लिया। प्यासे थे इसलिये पानी पी लिया। इन्होंने हमे नीच मराठा कहा, हमने इन्हे नीच ब्राह्मण कह दिया। ये हमको मारने की धमकी देने लगे, हमारा हाथ पहले उठ गया। कुल इतनी बात है।'

'डूब मरो चुल्लू भर पानी में !' भाऊ कड़कड़ाया।

अपराधी ने कहा, 'यों ही भूखों मर रहे हैं। मौत आ जाय तो मोक्ष मिल जाय।'

भाऊ का क्रोध चला गया, परन्तु दृढ़ स्वर मे बोला, 'तुमको दण्ड दिया जायगा।'

'यों ही ?' अपराधी ने कड़ककर कहा और कपड़े के भीतर से तुरन्त एक लम्बी छुरी निकाल कर बालाजी पर झपटा। माधव जी ने उछलकर उसके छुरी वाले हाथ पर लात मारी। अपराधी मुड़कर गिरा, इंगले और अन्ताजी ने उसको बांध लिया। अन्य अपराधी भी अपने साथी को छुड़ाने के लिये बढ़े, परन्तु भाऊ के पहरेदार आ गये और उन्होंने पकड़ लिया।

बालाजी ने माधव से धीमे स्वर मे कहा, 'तुमने मुझे बचा लिया। चिर कृतज्ञ रहूंगा।'

भाऊ बोला, 'मन चाहता है कि तुम लोगों को इतना कड़ा दण्ड दूं कि छावनी भर को भविष्य के लिये यह दण्ड उपदेश का काम दे। परन्तु अभी कुछ करना नहीं चाहता। भविष्य में तो नहीं करोगे ऐसा पाजीपन ? यदि तुमने शपथ न ली तो अभी गोली से उड़वा दूंगा।'

अपराधी सिपाहियों और सरदारों ने शपथ ली और वे छोड़ दिये गये। वे चले गये। उसी समय होलकर आया। वह घबराया हुआ सा था। बोला, 'श्रीमन्त, घोड़ों को कई दिन से चना नही मिला है। सूखी रूखी घास से उनका पेट नहीं भरता। बहुत दुबले हो गये हैं।'

भाऊ ने भड़ककर कहा, 'यहा मनुष्यों के लिये चने की टूट पड़ रही है, तुम लगाये फिर रहे हो घोड़ों की।'

होलकर ने जारी रखा,—'सिपाही भूखो मरते मरते भी लड़ जायेंगे यदि उनकी सवारी के जानवर पुष्ट हुये तो, परन्तु जब हमारे घोड़े ही मरणासन्न हो जायेंगे तब हम अफगानों और रुहेलों के अरबी खुरासानी घोड़ों का सामना क्या करेंगे ?'

भाऊ ने संयत स्वर मे कहा, 'थोड़े ही दिन की बात और है। अनाज और चारा प्रचुर परिमाण में आ रहा है। तब तक धीरज धरो।'

होलकर नहीं माना,—'भूखो के मारे तोपखानों के बैल इतने निर्बल पड़ गये हैं कि बेहिसाब मर उठे हैं। आज ही तीन हजार बैल मौत के मुंह में जा चुके हैं। यही क्रम बना रहा तो तोपें ढोने के लिये एक भी बैल न बचेगा।'

भाऊ बेचैन हो गया। परन्तु वह किसी भी तथ्य के एक अङ्ग को उसके सौन्दर्य से अलग खींचकर ऐसी सीमा तक फैलाने, मरोड़ने और प्रकारान्तरित करने का अभ्यासी था कि उसका पुराना सादृश्य और नया असादृश्य एक दूसरे के सामने खड़े होकर और मिलकर हँसी उत्पन्न करने में समर्थ हो जाते थे। वह लगभग हर बात में कुछ ऊनापन, कुछ

विषमता देखता था यहां तक कि सम को भूल जाता था। बोला, 'अब्दाली के तो दस सहस्र बैल, खच्चर और ऊँट मर गये हैं और मरते ही जाना है।'

बालाजी जनार्दन ने सकारा, 'सरदार होलकर, इस अनुपात में दोनों ओर के जानवर मरते चले गये तो मराठा सवार के हाथ से विजयश्री नहीं जाने की।'

होलकर कुढ़ गया। बोला, 'बालाजी, विजयश्री किस तरह मुट्ठी में पकड़ कर रखी जाती है, इसको मराठा सवार खूब जानता है।'

'और मराठा पैदल और तिलगा पैदल भी,' भाऊ ने अपने उसी अभ्यास के अनुसार कहा, 'बूढ़ों की हतोत्साह करने वाली बातों से भी मराठा सैनिकों का मन नहीं गिरता।'

अन्ताजी ने भी समर्थन किया,—'पेट भरा रहे तो मन में कोई कसर नहीं लगती।'

'फिर उन सिपाहियों की शिकायत का रोना लेकर क्यों आये से यहां?' होलकर ने प्रश्न किया।

भाऊ ने हँसते हुये कहा, 'क्योंकि यहां की लम्बी लूट के रुपये में से इन्होंने पूना एक छदाम भी नहीं पहुंचाया। मालूम है अन्ताजी इसका क्या परिणाम होगा? महाराष्ट्र में तुम्हारी जितनी सम्पत्ति है वह सब जब्त करली जायगी।'

'जब्त कर ली गई होगी,' होलकर बोला।

अन्ताजी ने दृढ़ता के साथ कहा, 'महाराष्ट्र में कुछ भी होता रहे, मेरा ध्यान तो इसी ओर विचरता रहता है।'

माधव ने देखा वहां के वातावरण-सरोवर में पत्थर के ढोके फेंके जाने वाले हैं, कहा, 'यहां से उत्तर पश्चिम में कुन्जपुरा का गढ़ कुछ कोस दूर है। वहां लाखों मन अनाज अब्दाली के लिये जमा किया गया है और बहुत रुपया भी। जानवर भी बहुत इकट्ठे किये गये हैं। अब्दाली का यह बड़ा गोदाम है। यहीं होकर अफगान सेना की निरन्तर वृद्धि के

लिये नई भर्ती के अफगानिस्तान इत्यादि देशों से असंख्य जवान आते जाते हैं।'

होलकर बोला, 'हां तुम्हारे जासूस तो गये थे माधव, पता लगाने के लिये—फिर ?'

माधव जी ने कहा, 'मैं स्वयं उनके साथ गया था। यदि हम लोग कुन्जपुरा पर अधिकार करलें तो अब्दाली का सामना बहुत सहज हो जायगा, और हमारी अन्न चारे की समस्या अपने आप हल हो जायगी।'

भाऊ बोला, 'माधव से मेरी बात चीत इसी प्रसङ्ग पर हो रही थी जब ये अन्ताजी इत्यादि पाव भर चने और आधा सेर ज्वार का झगड़ा लेकर आ खड़े हुये।'

अन्ताजी विक्षेप करना चाहता था कि होलकर कह उठा, 'कुन्जपुरा पर अधिकार अविलम्ब करना चाहिये और किया भी जा सकता है, परन्तु भारी भरकम सामान और स्त्री बालकों को या तो झांसी भेज देना चाहिये या ग्वालियर। फिर हम हलके हो जायँगे।'

भाऊ ने व्यंग किया, 'सूरजमल के किसी किले में क्यों न भेज दो सबको ?'

होलकर प्रतिहत नहीं हुआ,—'सूरजमल छोड़कर चला गया है, परन्तु हिन्दू के कर्तव्य को नहीं भूला है, अब भी जो कुछ अन्न हमारे पास है वह सूरजमल ही का दिया हुआ तो है।'

भाऊ ने कहा, 'भाई बालाजी, तुम कहीं लिख लेना यह सब। जब हमारे पावने का हिसाब होगा तब सूरजमल दावा करेगा और हमको यह सब समझाना पड़ेगा।'

वहां के वातावरण सरोवर में फिर पत्थर के ढोके फिंकने को हुये।

'माधव जी ने अनुरोध किया, 'पहले कुन्जपुरा ले लिया जाय। उसके उपरान्त निश्चय किया जाय कि भारी सामान और स्त्री बालकों को साथ मे ही रखेंगे या किसी सुरक्षा के स्थान मे भेज देंगे।'

मल्लाजी जो कुछ कहना चाहता था उसने कह डाला, कुन्जपुरा को अधिकृत करलेने के कारण शायद हम लोगों का घरद्वार जल्दी से बच जाय।'

इङ्गले माधव जी का अधीन सरदार था। माधव के हम को समझ कर बोला, 'किसी की बापौती.को कोई नहीं छीनेगा, पर इस समय हमें अपने चित्त में सिवाय कुन्जपुरा के किसी और विषय को नहीं आने देना चाहिये। मैं तो कल ही आक्रमण करने के लिये तैयार हूं।'

'मैं भी।'

'मैं भी।' मल्लाजी और बालाजी जनार्दन, दोनों ने एक साथ कहा।

भाऊ ने मान लिया।

होलकर ने प्रस्ताव किया, 'एक काम और भी है जो इसी समय कर लेना चाहिये। वह है—मरे बादशाह के लड़के को शाहआलम द्वितीय की पदवी देकर दिल्ली का सम्राट घोषित कर देना। मुसलमान फकीर और अनेक मुसलमान सरदार आन्दोलन कर करके हमारे विरुद्ध उत्तर भारत में अधिक विष नहीं बो सकेंगे।'

माधव जी ने भाऊ को बोलने का अवसर नहीं दिया। कहा, 'और उत्तर भारत को संगठित करके विदेशियों का सामना हम लोग इसी योजना के सहारे कर सकते हैं।'

भाऊ न चूका,—'शुजा को वजीर बना दिया जाय। दिल्ली में न बादशाह और न वजीर।'

माधव जी ने तुरन्त कहा, दिल्ली में कोई और हो न हो आप और हम तो हैं।'

होलकर के मन में फिर कड़वा हुई। सूरजमल उसका मित्र था और शिहाबुद्दीन वजीर सूरजमल का आश्रित। भाऊ ने होलकर को चिढ़ाने के लिये ही कहा था।

होलकर बोला, 'श्रीमन्त का प्रस्ताव बहुत सुन्दर है। श्रीमान विश्वासराव को दिल्ली का सम्राट बनाने की अपेक्षा यह कहीं अधिक लाभदायक है।'

भाऊ के कलेजे पर छुरी सी चल गई, परन्तु माधव ने शाहआलम को सम्राट बनाने के लिये अनुरोध किया था और वह माधव जी को रुष्ट नहीं करना चाहता था। घूंट-सा पीकर रह गया।

उसने बरबस मुस्कराकर कहा, 'हां हां, ठीक है। वह प्रश्न हमारे सामने अभी है भी नहीं। दिल्ली के सिंहासन पर एक बादशाह को उठाकर दूसरे का बिठलाना कोई दुष्कर काम नहीं है। देखा जायगा। कल कुन्जपुरा पर धावा बोल दिया जाय।'

माधव जी ने बहुत नम्रता के साथ अपना अनुरोध दुहराया,—'पहले शाहआलम को बादशाह बनने की घोषणा कर दीजिये। चाहें तो शुजाउद्दौला को वजीर घोषित कर दें। परन्तु कुन्जपुरा पर धावा करने के पहले यह अवश्य हो जाना चाहिये। युद्ध को सही राजनीति का समर्थन मिल जायगा।'

गले को साफ करके भाऊ बोला, 'मैं स्वीकार करता हूं। घोषणा का इसी समय प्रबन्ध करता हूँ।'

घोषणा कर दी गई है। और उसके उपरान्त कुन्जपुरा पर प्रचण्ड वेग के साथ आक्रमण कर दिया गया। माधव जी ने इस आक्रमण में विशेष भाग लिया।

मराठी सेना कुन्जपुरा के निकट सन्ध्या के पहले ही पहुंच गई। सेना ने विश्राम नहीं किया। कुन्जपुरा के चारो ओर कसकर घेरा डाल दिया। किले में दस सहस्र से ऊपर अफगान सेना थी। सैनिक लगभग सबके सब लुटेरे जिन्होंने निरीह जनता के कत्ल किये थे, आगें लगाई थीं और स्त्रियों बालकों का अपहरण किया था।

मराठों के आने पर किले वालो ने तुरन्त फाटक बन्द कर लिये। उनके बहुत से सिपाही बाहर ही रह गये। वे दूसरे दिन मार खाकर किले में घुसने के लिये भागे। माधव जी ने पीछा किया। भागतों के लिये फाटक खुले कि माधव जी घुस पड़े। फिर घोर युद्ध हुआ। सब अफगान मारे गये। लुटेरों के सब सरदार भी या तो मारे गये या घायल हो गये।

इनमें से एक कुतुबशाह फकीर भी था। इसने भीषण अत्याचार किये थे। भाऊ की आज्ञा पर इसका सिर काट दिया गया—इसी ने दत्ताजी का सिर काट कर नजीबखां रुहेले को नजर किया था।

मराठों को कुन्जपुरा में तीन हजार बढ़िया घोड़े, दो लाख मन धान्य और साढ़े छः लाख नकद रुपये मिले। भाऊ बहुत सन्तुष्ट था इस बड़ी भारी बात पर—लुटेरों का अड्डा मिट गया, उत्तर पश्चिम से नई भर्ती का आना बन्द हुआ, अब्दाली की कुमुक टूटी; और सेना को दाना चारा मिल गया।

(४८)

कुन्जपुरा की विजय सहज ही हाथ लग गई थी। भाऊ को आशा थी कि कुन्जपुरा में अफगानों ने लूट का बहुत सा माल गाड़ कर रखा होगा इसलिये सारी सेना को घरो के फ़र्श गहरे खोद डालने का आदेश जारी कर दिया।

'माधव जी ने रोका,—'श्रीमन्त यहाँ से उत्तर की ओर चलकर अब्दाली के सब मार्ग तुरन्त बन्द कर दीजिये; छावनी और चौकियाँ बिठलाकर सेना के प्रधान अङ्ग चंचल और गतिवान बना दीजिये जिससे अब्दाली की विशाल सेना पर चाहे जहा और चाहे जब आक्रमण करने की सुविधा रहे।'

'भारी सामान जो पहले से हमारे पास है और, जो यहां हाथ में आया है, उसका क्या होगा?'

ग्वालियर, झांसी या किसी अन्य सुरक्षित स्थान मे भेज दीजिये,' भाऊ को उत्तर मिला।

भाऊ बोला, 'यह असम्भव है। यदि अब्दाली किसी किले मे चला गया या उसने किसी खाईदार छावनी में डेरा डाला तो भारी तोपो के लिये हम लोग अटक जायेंगे।'

माधव जी ने कहा, 'हमारे सैनिको को यह मालूम है कि वे किस आदर्श और हेतु के लिये लड रहे हैं। उनमे स्वदेश-प्रेम और उत्साह है। संयम और अनुशासन की कमी को उनका यह गुण पूरा करता है। सहिष्णुता धैर्यशीलता और वीरता उनकी पहाडियो और डागो के वरदान हैं ही। इन लोगों को लूट मे पागल मत हो जाने दीजिये।'

'मैं करूं क्या माधव?' भाऊ बोला, 'श्रीमन्त पेशवा रुपया नहीं देते। इनका वेतन बाकी में पड़ा हुआ है। वसूली कहीं से होती नहीं। ऐसी अवस्था मे लूट के सिवाय और साधन ही क्या है?'

माधव ने कहा, 'उनको काफी लूट मिल चुकी है, इब्राहीम गार्दी ने अपने संयम अनुशासन की कठोरता से लगभग दस ग्यारह सहस्र सैनिकों को लूटपाट से वंचित रखा है, इसलिये मवाली इत्यादि सिपाहियों को काफी मिल चुका है। अब और अधिक नहीं ठहरना चाहिये। आप बहुत बड़े नायक और योद्धा हैं। मैं क्या सिखलाने योग्य हूँ। शत्रु चाहे पराजित हो चाहे विजेता उसे एक क्षण भी चैन नहीं लेने देना चाहिये।'

भाऊ ने असाधारण ठसक प्रकट की, 'माधव, मैं तुम्हें इतना अधिक चाहता हूं कि तुम्हारा चाहे जैसा प्रतिवाद झेल सकता हूँ, कुञ्जपुरा मजबूतगढ़ है। इसको अपना स्थायी पड़ाव बना कर यहीं से शत्रु को दिक करते रहना चाहिये। मैं इस समय कोई ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं होने देना चाहता जो हम लोगों को अब्दाली के साथ खुले युद्ध के लिये विवश कर सके।'

माधव जी ने अपना प्रतिवाद जारी रखा, 'उस स्नेह और कृपा को मैं जानता हूँ, इसीलिये हठ कर रहा हूँ। अभी हम लोग रक्षणात्मक नीति ग्रहण कर रहे हैं। इस नीति से आक्रमणात्मक व्यवहार पर बदल पड़ना असम्भव नहीं तो अत्यन्त कठिन अवश्य होगा। यदि हमें दक्षिण की ओर हटना पड़ा तो हमारी एक बाजू और पिछाड़ी खुल जायगी और शत्रु को हटने बढ़ने के लिये तो मानो सारी दिशायें खुली ही पड़ी रहेंगी। मेरी तो एक विनय सबसे बड़ी यह है कि सिपाहियों को लूटमार से रोक दीजिये, किसी भी सेना के सम्पूर्ण विनाश के लिये इससे बढ़कर और कुछ नहीं।'

भाऊ मुस्कराया। बोला, 'यह सब तुम्हारे दिमाग में फ़िरंङ्गियों की भाषा सीखने और इब्राहीम गार्दी की संगति से पहुँचा मालूम पड़ता है। वैसे-बात ठीक हो। परन्तु सोचो तो—पूना से वेतन का आना कई महीनों से बिलकुल बन्द है। हमारे साथ जो देशस्थ ब्राह्मण सरदार हैं। उन्होंने लूट का बहुत ही थोड़ा अंश राज्य को दिया है बाकी सबका सब स्वयं पचा गये हैं। पेशवा कहते हैं उनसे वसूल करके काम चलाओ।

इसीलिये मन्ताजी का घर द्वार भूमि, सब पूना दरबार ने अपने अधिकार मे कर लिया है।

माधव जी ने प्रतिवाद वृत्ति को नहीं छोड़ा,—'ऐसे समय तो यह नहीं करना चाहिये था। मन्ताजी योग्य नायक हैं सिपाही उसके भक्त हैं।'

स्वभाव के अनुसार भाऊ हँसकर बोला, 'तभी तो सिपाहियों ने उसका अन्न चुराकर खा लिया।'

इसी समय होलकर और इब्राहीम गार्दी साथ साथ आये।

इब्राहीम ने आते ही कहा, 'मेरे सिपाही वेतन के लिये झगड़ रहे हैं, श्रीमन्त।'

भाऊ बोला, 'भाई गार्दी तुम्हारे तिलंगों को ही सबसे अधिक वेतन और सुविधा दी जाती है। उनको ही और सिपाहियों की अपेक्षा सबसे पहले पैसा मिल जाता है। फिर भी यह उलहना ?'

इब्राहीम ने उत्तर दिया, 'क्योंकि श्रीमन्त, सबसे कम लूट का माल उन्हीं के पास पहुँचता है। क्योंकि श्रीमन्त किसी भी त्याग या वीरता के काम करने पर मेरा कोई भी अफ़सर या सिपाही यह कहने नही आ खड़ा होता—'मैंने ऐसा ऐसा बड़ा काम किया है," मुझे जागीर लगा दीजिये। मेरे पुरखे ने अमुक लड़ाई में सिर कटवाया था, मुझे कामदार सूबेदार मुकर्रर कर दीजिये !!' श्रीमन्त, मेरी सेना जो कुछ करतब करके दिखलावेगी वह लूटमार करने वाली भम्भड़ नहीं कर सकती !!!'

होलकर बोला, 'अपना यह सबक थोड़े समय के लिये स्थगित रखो। हम लोगों को सीखना कम है, सिखलाना बहुत है। अभी सीखो, तब सिखलाने योग्य बनोगे।'

सदाशिवराव के मन में यही बात थी, परन्तु वह इब्राहीम गार्दी से न कहता। होलकर के मुँह से तो उसे बहुत ही बुरी लगी। होलकर को चिढ़ाने और इब्राहीम का पक्ष करने के लिये उसे अवसर मिल गया। एक बार माधव जी की ओर उसकी आँख गई बोला, 'लूटपाट से

'सरदार होलकर के सिपाहियों का पेट भर गया होगा। इसलिये कुछ सिखलाने पर आ गये हैं।'

होलकर ने क्षुब्ध स्वर में कहा, 'पेट भरने पर तो ब्राह्मण सरदार जुट पड़े हैं।'

भाऊ सहज-कोपी होने पर भी ठठोली करना कराना जानता था। एक बार अपनी जाति पर किया,—'ब्राह्मण लोग सबसे पहले पेट की चिन्ता न करेंगे तो क्या मल्हारराव भीष्मपितामह और अधकचरे इब्राहीम गार्दी करेंगे? परन्तु देशस्थ ब्राह्मण कर रहे होंगे। अन्ताजी किस जगह जुटा है?'

होलकर बोला, 'क्या छत्रपति शिवाजी के समय में, इसी प्रकार का नियम संयम बर्ता जाता होगा?'

भाऊ ने दूसरा व्यङ्ग छोड़ा,—'मुझे क्या मालूम? तुम पुराने हो, जानते होगे। मैं तो इतना जानता हूँ कि जिस काम को शिवाजी नहीं कर पाये या नहीं कर सकते थे उसे हम कर रहे हैं।'

यह होलकर को चुभ गया। न सह सका। बोला, 'ठीक है, ठीक है, श्रीमन्त, तभी छत्रपति शिवाजी ने एक बार विचार किया था कि ब्राह्मणों को ऊँचे पदों पर से बिलकुल हटा दिया जाय और मन्दिरों में बैठ कर उनसे पूजा अर्चा भर का काम लिया जाय।'

भाऊ मुस्कराया।

इब्राहीम के शरीर से चिनगारी सी छूट पड़ी। अपने प्रधान सेनापति का छोटे नायक और सरदार इस तरह अपमान करें यह मैंने नहीं देखा, उसने कहा,—'फिरङ्गी सेना में ऐसे बर्ताव के लिये अपराधी अफसर को फौजी अदालत से प्राणदण्ड दिया जाता।'

भाऊ हँस पड़ा। वातावरण का शान्त करना वाञ्छनीय था और वह मराठा रहन-सहन का जानकार भी था। बोला, 'इब्राहीमखां, हम मराठे-ब्राह्मण और अब्राह्मण आपस में इसी प्रकार बोल उठते हैं, परन्तु हमारे काम में कोई अन्तर नहीं पड़ता।'

इब्राहीम को विश्वास नही हुआ। परन्तु उसने सोचा, मुझे क्या करना है। कहा, 'श्रीमन्त मैं अपने सिपाहियों के पास सदा पांच चीजें तैयार रखता हूं– बन्दूक, दारूगोली, झोला, चार दिन का भोजन और सफर मैना का सामान। इस समय उनके पास खाने का सामान कम हो गया है। वह और बाकी का वेतन तुरन्त मिलना चाहिये।'

'और छठवी चीज है, बुद्धि विवेक के साथ काम करने के लिये सदा तत्पर रहना,'—होलकर बोला, 'मैं केवल यही कहने आया था। अब्दाली ने अपनी सारी सेना के साथ यमुना को पार कर लिया है। हमारे एक सहस्र सैनिक जो घाटों की चौकसी कर रहे थे, मार डाले गये हैं। अब क्या आज्ञा होती है?'

माधव जी के मुंह से निकल पड़ा, 'तुरन्त तैयार हो जाना चाहिये। अब्दाली के यमुना पार करने का हाल मुझे नहीं मालूम था।'

'जासूस अभी अभी आये हैं।' होलकर ने कहा।

भाऊ घबराया नही। एक दो क्षण विचार करने के उपरान्त बोला 'बड़ा युद्ध देर सवेर निस्सन्देह होगा। परन्तु मैं तुरन्त भिड़ जाने के पक्ष में नहीं हूं। शत्रु को थका और छका कर मारना चाहिये। ठहर ठहर कर ही काम करना होगा। इसके लिये रुपया अवश्य बहुत चाहिये। पूना को बार-बार लिखा, परन्तु रुपया नहीं आया। इसलिये अभी तो कुन्जपुरा की खुदाई का काम जारी रखना चाहिये। गार्दी तुम्हारे सिपाहियों को भोजन सामग्री और बाकी का वेतन आज ही दे दिया जायगा।'

इब्राहीम चला गया। अन्ताजी को बुलाया गया। सब कह रहे थे कि उसने और उसके अधिनायकों तथा सिपाहियों ने कुन्जपुरा में सबसे अधिक लूटमार की है। आने पर भाऊ ने पूछा, 'कितना माल हाथ लग चुका है? क्या शव भी जुटे हुये हो?'

अन्ताजी ने उत्तर दिया, 'अभी सूची नहीं बनाई गई है।'

'तब बनाना जब सब का सब पचा डालो।' भाऊ ने कहा।

अन्ताजी बोला, 'वह सवाल बहुत पीछे का है। मैंने और मेरे सैनिकों ने कुन्जपुरा तोड़ने में जो काम किया है उसके लिये यह लूट यथेष्ठ पुरस्कार नहीं है। हम लोगों को जागीरें मिलनी चाहिये। हमारे पिछले और इस समय के लोगों के काम का मूल्य आंका जाना चाहिये। मेरी जो जागीर इत्यादि पूना दरबार ने छीन ली है वह वापिस की जावे।'

'और, तुम चाहे जो कुछ करो वह सब क्षमा होता रहना चाहिये।' भाऊ ने कहा, 'देशस्थ हो न।'

अन्ता नहीं दबा,—'क्षमा हो, श्रीमन्त, कोकणस्थों को मिलती रहती है। हम लोगों को तो भाग्य से ही मिलती है।'

भाऊ ने डांटा,—'तुमको एक एक कौड़ी का हिसाब देना पड़ेगा, अन्ताजी। यों ही नहीं घुटा पाओगे।'

अन्ता बोला, 'श्रीमन्त, हिसाब तो मेरी जीभ पर रखा है। घास-दाने का कर सरकार का होता है। इस मद में जो कुछ मिला है वह मेरा है। चौथ और सरदेशमुखी में जो कुछ भाग मेरी बैठता है वह मुझे अभी तक नहीं मिला! श्रीमन्त पेशवा ने यदि मेरी जायदाद छीन ली है तो पूना लौटने पर पञ्चायत कराऊँगा। न्याय होगा। हिसाब होने पर उल्टा मेरा ही कुछ निकलेगा।'

भाऊ ने कहा, 'अस्तु, देखा जायगा। हो जायगा। यहां का काम निबटा कर आगे बढ़ना है। और, देखो होलकर चिन्ता मत करो। अब्दाली हम से बहुत डरा हुआ है। सन्धि की चर्चा पर चर्चा कर रहा है। शाहआलम को बादशाह और शुजा को वजीर घोषित कर देने से अब्दाली के अनेक सहयोगी मुसलमान सरदार अपनी ओर फूट आये हैं।'

होलकर बोला, 'मैं इसीलिये नजीबखां से अच्छे सम्बन्ध बनाये हुये हूं। शायद वह भी फूट आये।'

माधव जी ने कहा, 'वही मुसलमान संघ का अगुआ है जो पठान-साम्राज्य स्थापित करने की कल्पना कर रहा है। वह फूटेगा नहीं, हम लोगों को चाहे फोड़ दे।'

होलकर को यह बात नही भाई परन्तु वह माधव जी को पहिचानने लगा था, इसलिये बात मोड़ते हुये बोला, 'इस मुसलमान संघ में शुजाउद्दौला भी शामिल है और उसके दस हजार गुसाईं जो मुसलमान नहीं, कट्टर हिन्दू हैं।'

भाऊ ने अपने अभ्यास के अनुसार चुटकी ली,—'हिन्दुओं में विदेशियों का राज्य-भार फेंक देने की वान्छा तो है, परन्तु मिलकर काम करने की भावना नही है। ये गुसाईं तो भाड़े के टट्टू ही हैं।'

होलकर बोला, 'परन्तु ये टट्टू दुलत्ती कसकर झाड़ते हैं। इतना अच्छा है कि वे यहाँ लड़ने के लिये नही लाये गये हैं।'

भाऊ ने कहा, 'तुम्हारा कुछ प्रभाव है इन लोगों पर होलकर। क्या इनको नही मिलाया जा सकता?'

इसका उत्तर माधव जी ने दिया, 'मैं बतलाता हूं श्रीमन्त। अकेले हिन्दुओं को ही नही, यहां मुसलमानों को भी विदेशियों से छड़क है। ऐसा आयोजन कीजिये जिसमे दोनों मिलकर हमारे आदर्श का पालन कर सकें।'

भाऊ ने कहा, 'देखूंगा। यह बात जरा दूर की है। तुम्हारे कहने के अनुसार बादशाह और वजीर के विषय मे तो घोषणा कर ही दी है।'

होलकर बोला, 'अभी तो समस्या दूसरी है।'

(४६)

भाऊ कुरुक्षेत्र की ओर बढ़ना चाहता था, परन्तु अब्दाली के यमुना पार कर लेने के कारण पानीपत पर लौट पड़ा। उसने अपना छबीना कुन्जपुरा में ही रखा। भारी भरकम सामान का प्रबन्ध करने के उपरान्त पानीपत पर रुक जाना पड़ा। अब्दाली उसके मुकाबिले के लिये तेजी के साथ बढ़ आया था। उसे कुन्जपुरा का बदला लेना था। विलम्ब नहीं लगाया। उसका पड़ाव भाऊ की सेना से तीन चार कोस के ही अन्तर पर पड़ा।

एक सप्ताह तक अब्दाली ने मोर्चों का प्रबन्ध करने में लगाया और अपने सिपाहियों को मराठा छावनी की ओर एक डग भी न जाने का कठोर आदेश दिया। कुछ पिंडारियों ने अब्दाली के चार हाथियों को पकड़ लिया—मानो बड़ी तोपें हाथ लगीं। अब्दाली ठंडक के साथ मराठों की रण-योजना समझने की चेष्टा कर रहा था। भाऊ सोच रहा था अब्दाली बिना लड़ाई लड़े भाग जायगा।

भाऊ ने निश्चय किया था कि अपनी सेना का अधिकांश पानीपत के मोर्चे पर रखे और टुकड़ियों को इधर उधर फैलाकर अब्दाली की अन्न-सहायता इत्यादि को नष्ट-भ्रष्ट करता रहे, यदि अब्दाली अभी अपने देश को न लौट पड़ा तो भूखों मरकर और थककर लौट जायगा; जब दुआब और अवध के पड़ोस में मराठी टुकड़ियाँ प्रहार पर प्रहार करेंगी तब नजीब और शुजा को अपने अपने दस्ते पानीपत से हटा लेने पड़ेंगे; अब्दाली यों भी अकेला रह जाने पर, निराश होकर लौट जायगा। कल्पना बढ़िया थी, और एक योग्य सेनानायक के रण-विवेक के अनुकूल। परन्तु रुपया, अन्न और युद्ध-सामग्री अब्दाली की अपेक्षा उसके पास अधिक होनी चाहिये थी, क्योंकि विजय शत्रु के थकने की प्रतीक्षा इसी साधन के सहारे ही तो कर सकती थी। परन्तु पेशवा दवामी दिवालिया था, रुपया दे ही नहीं सकता था। अन्न आसपास के क्षेत्रों का सामास था, कोई खेती

कर ही नहीं सकता था। सूरजमल और राजपूताने के कुछ राजा मनमुटाव हो जाने पर भी कुछ न कुछ अन्न धन बराबर भेज रहे थे, परन्तु थकाने की इस युद्ध-प्रणाली के लिये वह यथेष्ट न था। कुन्जपुरा में पाया हुआ अन्न धन महीने डेढ़ महीने से अधिक नहीं चल सकता था और थकाने की वह प्रणाली कम से कम छः महीने का समय चाहती थी।

परन्तु पेशवा ने रुपया देने से अभी नाहीं नहीं की थी, आशा दिला रहा था; और भाऊ को अन्न-संग्रह करने के लिये अपने पुरुषार्थ का विश्वास था। रण-योजना का अन्तिम निर्धार करने के लिये भाऊ के डेरे पर सरदारों की एक बैठक हुई।

होलकर ने कहा, 'ठंड पड उठी है। दुआब में अनाज काटने का समय आ गया है। खाई बन्द लडाई न लडकर गनीमी कावा लडाई लड़ना चाहिये। फिर न तो हमें अन्न और धन की कमी रहेगी और न शत्रु सेना हम से टक्कर ले सकेगी।'

भाऊ ने आक्षेप किया, 'मैं तुम्हारे इस सुझाव का कई बार विरोध कर चुका हू। भारी तोपें सामान इत्यादि कहा ले जायेंगे ?'

होलकर ने उत्तर दिया, मैं उसे सुरक्षा के स्थान में पहुँचाने का जिम्मा लेता हूँ।'

'क्यों नहीं ?' भाऊ ने व्यङ्ग किया, 'तुम्हारे भीतर नजीब रुहेले के लिये अनुराग का एक कोमल मर्म है, इसलिये बार बार यहां से दूर की बातें करते रहते हो।'

होलकर ने प्रतिघात किया,—'रुहेलों के लिये मेरे मन में कोई स्नेह है या नहीं यह तो रणक्षेत्र ही बतलावेगा, परन्तु मैं तुम सबको सर्वनाश से बचाना चाहता हूँ और साथ ही विजयश्री को तुम्हें भेंट करना चाहता हूँ।'

'सर्वनाश से बचाना चाहते हो बुड्ढे तुम ! अच्छा !! संसार भर की बुद्धि तुम्हारे ही तो बांट में पड़ी है न !!!'—भाऊ भभक उठा,—'जब घुड़सवार सेना तितर-बितर होकर लड़ेगी, तब पैदल पल्टनों का क्या होगा ?'

'पैदल पल्टनें घुड़सवारों की टुकड़ियों के साथ बांट दी जायेंगी।' होलकर ने उत्तर दिया।

इब्राहीम ने रोष प्रकट किया,—'यानी मेरी ब्रिगेड के खंड खंड करके चूरा कर दिया जायगा।'

होलकर ने अपने समर्थन में कहा, 'हमारी सहायता के लिये बहुत से राजपूत देशभक्त अपने अपने बढ़िया घोड़े लेकर आये हैं। उनकी भी यही इच्छा है।'

इब्राहीम बोला, 'क्यों न होगी ? इन सबको अकेले अकेले लड़ने का अभ्यास है। मिलकर लड़ना तो जानते ही नहीं हैं। इन लोगों ने ठोस पांतो वाले तिलगे पैदलों की बन्दूकों की बाढ़ों और संगीनों की मार नहीं देखी है। राजपूत मरना अच्छा जानते हैं, मारना उतना अच्छा नहीं जानते। सवार और तोपें पैदल पल्टनों की रक्षा और मौका आने पर धावा करने के लिये, पैदलों के आगे पीछे और दायें बायें रहती हैं, पर दुसरी-बिसरी छापामारी में तो यह हो नहीं सकता। मैं अपनी ब्रिगेड के टुकड़े नहीं होने दूंगा।'

भाऊ ने व्यङ्ग किया, 'यदि होलकर की बात मान ली जाय तो पैदल पल्टनों को दक्षिण भेज देना पड़ेगा। इब्राहीमखां श्रीमन्त से कह देंगे—मैं सवारों के हाथ में लड़ाई का भार सौंपकर पूना की रक्षा के लिये आ गया हूं। क्या कहते हो इब्राहीमखां ?'

'क्या कह सकता हूं ?'—इब्राहीम ने कहा,—'मैं श्रीमन्त पेशवा को मुंह नहीं दिखला सकूंगा। सब जानते हैं मैं उन्हें क्या भरोसा देकर आया हूं। सरदार होलकर, क्या लड़ाई जीतने के ये ही ढङ्ग हैं ?'

होलकर क्रुद्ध हो गया। बोला, 'हां है, और इन्हीं ढंगों से लड़ाइयां जीती भी गई हैं। मैं जाता हूं अपने सवारों को लेकर और विजय का श्रीगणेश करके दिखलाई देता हूं। तुम्हारे तिलंगे फिरंगी पोशाक पहिनने वाले गुड्डे प्रमाणित होंगे—'

इब्राहीम आपे से बाहर हो गया, उसने होलकर को आगे नहीं कहने दिया, तमककर कहा, 'तुम अपने सवारो को लेकर निकलो तो इस छावनी से—तुरन्त बन्दूको और तोपो की बाढ से भगेडुओं को बिछा दूँगा। उस नजीबखा परदेसी के किसी जाल मे फस गये हो मालूम पडता है। मैं किसी अजीब नजीब और उजा शुजा के घेर मे नहीं हूँ। हुकुम होते ही दिखला दूँगा कि तिलंगे गुड्डे हैं या आफत के पर काले।'

बैठक में सन्नाटा छा गया।

उस सन्नाटे को माधव जी ने बेधा,—'मैं जानता हूं तिलंगों के वीरत्व और रण-विवेक को और काका होलकर भी जानते हैं। उन्होंने किसी का अपमान करने के लिये बात नही कही है। वे अपने सवारों का हौसला ही बखान रहे थे।'

माधव जी ने संकेत से इब्राहीम को विवाद बढाने से रोका और होलकर के प्रति हाथ जोड़कर माथा नवा लिया। भाऊ ने भी सोचा, रार बढने नही देनी चाहिये।

बोला, 'अब तो निश्चय हो गया। मैं सारी जोखिम अपने सिर लेता हूँ। लड़ाई खाईबन्द मोर्चे बाधकर लड़ी जायगी। मोर्चे इब्राहीम गार्दी के सुझावो के अनुसार बाधे जायेंगे। और तोपखानों की चौकियां, मैं स्वय घूम फिर कर बनाऊँगा।'

(५०)

भाऊ ने तीन कोस लम्बी और कोस भर चौड़ी भूमि मे खाइयो वाले मोर्चे वधँवाये और चारो ओर बड़ी बड़ी तोपों की चौकियां बिठला दी। इस भूमि के चारो ओर बीस गज चौड़ी और चार गज गहरी खाई खुदवाली। पानीपत का नगर इसी घेरे के भीतर कर लिया गया।

कुन्जपुरा से प्राप्त अन्न धीरे धीरे विलीन होने लगा।

उस रात ठण्ड थी। चन्द्रग्रहण पड़ा। चन्द्रमा को राहु पीड़ा पहुँचावे और हिन्दू सिपाही हाथ पर हाथ धरे बैठा रहे! अपने अपने चौकी पहरे छोड़ छोड़ कर या शिथिल करके सिपाही अस्त व्यस्त हो गये। भाऊ की छावनी की निरख परख करता हुआ अब्दाली का एक दल पास आ गया।

परन्तु मराठी सेना की एक टुकड़ी ऐसी थी जिसे चन्द्रमा की पीड़ा से बढ़कर अपने शिवर की चिन्ता थी।

माधव जी अपनी टुकड़ी समेत बिलकुल सतर्क थे। अफगानों से भिड़ गये।

अफगानों की टुकड़ी के साथ अब्दाली का प्रधान मन्त्री था। लड़ाई बहुत वेग के साथ हुई। साढ़े नौ सौ अफगान मारे गये। बाकी भागकर लौट गये। मराठों की बहुत कम हानि हुई।

इसके उपरान्त फिर वही प्रतीक्षा, वही ठहर वही ठहरने की थकान और सबके ऊपर अन्न का अकाल। पूना से रुपया नहीं आया। गोविन्द-पन्त अब्दाली के रसद प्रबन्ध को अस्त व्यस्त करता रहा परन्तु एक दिन वह घिर गया और मारा गया। फिर मराठा छावनी में अन्न का आना बन्द हो गया। दिल्ली और मराठा छावनी के बीच में अब्दाली के मोर्चे थे इसलिये यह मार्ग बिलकुल बन्द हो गया।

खाइयों में पड़े पड़े मराठों में बेचैनी हो उठी—यह रहे थे आत्म- संयम के साथ यदि खाइयों के एकरस और नीरस जीवन को बिना

व्याकुलता प्रकट किये हुये, तो इब्राहीम के तिलंगे। एक दिन वह माधव से मिला।

एक योजना के क्रम में इब्राहीम ने कहा, 'खाइयों से बाहर कुछ तोपें लगवा दीजिये। तोपखानों के बाजुओं की रखवाली के लिये घुड़सवार रहें। गोलाबारी की जाय। फिर जल्दी पता चल जायगा कि अब्दाली किस तरकीब की लड़ाई रचता है।'

'उधर से भी गोलाबारी ही होगी। क्या आप अपने कुछ पैदलों को भी बाहर निकालेंगे?' माधव जी ने पूछा।

नही तो। पैदल इस तरह बाहर नही लाये जा सकते।'

'फ्रान्स के नामी जनरलों की बातें घातें भी आपको बताई गई हैं?'

'नहीं बतलाई गईं। मैंने वैसे ही सीखी हैं। फ्रासीसी भाषा की कुछ पुस्तकों में बड़े बड़े जनरलों के अनुभवों को पढ़ा है।'

'मैं भी फान्सीसी सीखना चाहता हू। लड़ाई से लौटकर चलें तब सिखलाना।'

'जरूर, मगर मुझे अपने लौटने की उम्मीद कम है। बहुत कम लौट पायेंगे। खाईबन्द लड़ाई के लिये महीनो का समय चाहिये। और महीनों के लिये खाने पीने की चीजों का पूरा बन्दोबस्त। इस लड़ाई में जो पहले भूखों मर उठेगा वही हारेगा।'

होलकर का कहना ठीक था।'

नही था। वह भागा-भूगी की लड़ाई का जानकार है, लेकिन भागने और दौड़-धूप करने में अफगान और रुहेले कम नही हैं। अब जमाना उस तरह की लड़ाई का जा रहा है। फिरङ्गियों ने जो तर्ज पेश की है वही चलेगी।'

'तो तोपखानों को खाइयों के बाहर मैदान में जमाकर गोलाबारी करना क्या केवल कोई परीक्षा है या उससे शत्रु की कोई हानि भी होगी?'

'हानि भी हो सकती है, लेकिन परीक्षा पहला विचार है।'

'क्या एक बात पूछ सकता हूं खां साहब ? फारसी भाषा पढ़ने से मजहब की ओर से आपके ध्यान पर कोई प्रभाव पड़ा है ?'

'सरदार साहब—'

'सरदार मत कहिये। मैं तो केवल पटेल हूं। और जब तक जिऊंगा पटेल ही रहूँगा। सरदार कैसे होते हैं यह आपने हिन्दू और मुसलमान दोनों में देख लिया है।'

'अच्छा तो पटेल साहब, आपने फारसी पढ़ी है तो क्या हिन्दू धर्म की तरफ से आपका मन फिर गया है ?'

'नहीं तो।'

'सो तो मैं देखता ही हूं। आप तिलक लगाते हैं, पूजा करते हैं। तब फांसीसी का असर मेरे ऊपर खराब क्यों पड़ना चाहिये ? धर्म की भी पुस्तकें फांसीसी में हैं। उदार विचारों की भी बहुत। मैं अपने जनरल से लेकर पढ़ा करता था।'

'मैं भी पढ़ूंगा। अच्छा तो मैं तोपों के ठिये बनाने का उपाय करूं ?'

'आप नहीं। मैं भाऊ से कह कर किसी और सरदार के दस्ते को भिजवाऊँगा। आप अपने को किसी बड़ी लड़ाई के लिये बचाये रखिये।'

भाऊ ने खाइयों के बाहर तोपें के जमाने का प्रबन्ध कर दिया। दोनों ओर से गोलाबारी होती रही। किसी को कोई विशेष क्षति नहीं हुई। इब्राहीम और माधव जी ने सेना को सचेत रहने के लिये कह रखा था, परन्तु एक दिन सन्ध्या होते होते वे सब ढीले पड़ गये—केवल इब्राहीम का ब्रिगेड सन्नद्ध था।

उसी समय पांच हजार रुहेले पैदलों और एक हजार सवारों ने खाई के बाहर वाली तोपों पर आक्रमण कर दिया। रुहेलों के पास बन्दूकें थीं। मराठे सवार तोपों की रक्षा के लिये एक सहस्र की संख्या में ही थे। गोलियों की बौछार न सह सके। हटना पड़ा, परन्तु हटते हटते भी वे अपनी तोपों को साथ खींच लाये। रुहेले मराठा खाइयों में घुस पड़े। भाऊ के शिविर में खलबली मच गई। परन्तु तिलंगों की पल्टनों

श्रौर भाऊ के एक उपनायक के रिसाले ने शिविर को बचा लिया। तिलङ्गों ने रुहेलों को तीन ओर से घेर लिया और उपनायक के मराठा सवारों ने चौथी ओर से आक्रमण कर दिया।

तिलङ्गों की बन्दूकें थोड़ी दूर की ही मार की थीं, परन्तु निशाना बहुत सधा हुआ था। तीन हजार रुहेले मारे गये और बाकी घायल होकर भाग गये। नजीबखां बाल-बाल बचा। परन्तु जाते जाते वे भाऊ के अधिनायक को गोली से मार गये। यह मराठों की बड़ी हानि हुई।

रुहेलों ने यह आक्रमण अब्दाली से पूछकर नहीं किया था, इसलिये वह बहुत क्षुब्ध था, परन्तु वह नजीब का इतना मान करता था कि उसने केवल हलकी-सी भर्त्सना की। उसी समय शुजा ने एक शिकायत कुछ अफगान सिपाहियों के बर्ताव के सम्बन्ध मे की।

अब्दाली डेरे मे बाहर निकल कर आया। उसकी पल्टनों की पोशाकें रंग-बिरंगी थीं, अलग अलग रंगों की। हर एक पल्टन के साथ कुछ गुलाम लगाये रखने का दस्तूर था। परन्तु एक पल्टन का गुलाम दूसरा पल्टन में बिना किसी बड़े पदाधिकारी के अनुमति पत्र के प्रवेश नहीं पा सकता था। एक पल्टन के गुलाम को उसने दूसरी पल्टन की ओर जाते हुये देखा। बुलवाया। पूछा, अनुमति-पत्र कहां है। गुलाम के पास अनुमति पत्र न था। अब्दाली ने उसे इतना पिटवाया कि मरा जानकर छोड़ दिया। फिर बारी आई उन अफगान सिपाहियों की जिन्होने शुजा के शिविर में कुछ उत्पात किया था और जिसकी शिकायत शुजा ने अब्दाली से की थी। अब्दाली ने उनमे से दो सौ को पकड़वाया। तीर की नोक से उनमें से प्रत्येक की नाक छिदवाई और छिदी नाक में डोरे डलवा कर, उसी दशा में, शुजा के पास भेज दिया। कहला भेजा, चाहो तो इन अपराधियों को प्राण दण्ड दो, चाहे बख्श दो !!

एक ओर मराठा सरदारों और सिपाहियों की व्यक्तित्व-मानता, उनका अतिराय व्यक्तिवाद। दूसरी ओर अब्दाली का अत्यन्त कठोर और क्रूर संयम जिसमें व्यक्तित्व पिसकर चकनाचूर हो जाता है। भाऊ के नायकों में सबसे अधिक माधव जी ने अतिशयता के इन दोनों छोरों को बारीकी के साथ परखा था। उन्होंने सोचा, इब्राहीम के तिलंगों जैसा संयम अनुशासन इन दोनों अतिशयताओं के बीच की बात है, अच्छी सेना के लिये क्या यह उपयुक्त और यथेष्ठ नहीं है?

(५१)

अब्दाली के पास अन्न, धन और जन बराबर आते रहे। हिन्दू सेना के पास इन तीनो का आना निरन्तर कम होता चला गया। अब्दाली ने अपनी कुछ टुकड़ियों को चारो दिशाओ मे फैला दिया जो भाऊ के शिविर में किसी प्रकार की भी सहायता का पहुच पाना असम्भव कर रही थी। जो मराठा दस्ते अन्न सग्रह के लिये इधर उधर फैले हुये थे वे घेर कर मार दिये गये। किसान परेशान हो गये थे इसलिये उन्होंने मराठों की कोई सहायता नही की। उधर गोविन्दपन्त अपने साथियो सहित मारा गया इधर पूना मे पेशवा ने उसका घर द्वार जब्त कर लिया ! इस बर्ताव के कारण कई सरदारो का मन टूटने लगा।

बड़ी कठिनाई से एक बार थोडा सा रुपया दिल्ली ओर से आ पाया। फिर बिलकुल बन्द हो गया।

सबसे बडी समस्या सामने आई गोला बारूद की कमी की। अब्दाली को लगातार युद्ध सामग्री मिल रही थी, भाऊ की चुकने को हुई।

इसी समय कुन्जपुरा हाथ से निकल गया। अफसरो की भी कमी हो गई। नई ताजी भर्ती बाहर से नही आ पाई। पानीपत नगर की अधिकांश जनसंख्या अब्दाली के साथ सहानुभूति रखने वालो की थी।

अन्न और चारा नही के बराबर हो गया। एक रात बीस हजार मजदूर और सिपाही चारा और लकडी की खोज मे शिविर के बाहर गये। अब्दाली के बडे बड़े दस्ते गश्त करते हुये आ गये और उनको घेर लिया। लगभग सब के सब मारे गये। ठण्ड बहुत कड़ाके की। कपड़ों की कमी भूखे सिपाही ठण्ड और बीमारी के कारण मरने लगे। मलमूत्र त्याग के लिये सिपाही खाइयो से बाहर नही निकल पा रहे थे। मुर्दों के जलाने तक के लिये ईंधन न रहा। सड़ाँदों के मारे नाको दम आ गई। पूना से अन्न धन तो कुछ न आया, पर इसी समय एक समाचार आया कि पेशवा ने एक ब्याह और किया है। वह यदि नई विवाहता के मोद

प्रमोद में नहीं भी होता तो भी अब सहायता का पहुंचा पाना उसके लिये असम्भव था। कठिनाई के साथ एक महीने मे तो चिट्ठी ही पानीपत से पूना पहुंच पाती थी। एक एक क्षण असह्य हो उठा।

अफगानो ने मराठा शिविर के भूले भटके मनुष्यो को बड़ी बर्बरता के साथ मारना शुरू कर दिया—जिसमें हिन्दुओ के मन पर आतङ्क बैठ जाय।

अब्दाली ने इब्राहीमखां के पास एक पत्र भिजवाया। वह इब्राहीम को फोड़ लेना चाहता था। इब्राहीम ने उत्तर दिया। पत्र और उत्तर शिविर में छिपे नही रहे।

माधव जी इब्राहीम के पास गये। कहा, 'खां साहब मैं फिर भी कहूंगा अब्दाली है बड़ा चतुर। वह हर तरह की नीति काम मे ला रहा है।'

इब्राहीम बोला, 'मैं तो उसे एकदम मूर्ख समझता हूं। उसने इतना न सोचा कि मैं हिन्दुस्थानी मुसलमान हूं, कोई लुटेरा सरहद्दी नहीं हूं।'

'लोभ तो उसने बहुतेरे दिये परन्तु वाह गार्दी साहब!'

'मेरे दीन ने मेरी आत्मा को जो कुछ दे रखा है उससे बढ़कर तो अब्दाली मुझे दे नहीं सकता। और फिर सरदार साहब, मेरा मुल्क तो मेरे लिये किसी भी चीज से बड़ा है।'

'सरदार मत कहिये जनरल साहब। मैं केवल पटेल हूं।'

'अच्छा, अच्छा। पर और लोग तो कहते हैं।'

'और लोगों को रोक नहीं पाता। मैं अपने को अपने साधारण भाइयो में ही गिनवाये रखना चाहता हूं।'

'मैं भी इसी ख्याल का हूं।'

'देश के लिये जैसा विचार आपका है यदि हम सब का होता तो कितनी बड़ी बात होती।'

'पहले मेरा भी रोना झीना था। पूना आने पर कड़ा हो गया।'

'आपने क्या जवाब दिया, अब्दाली को? आप ही के मुंह से सुनना चाहता हूं।'

'सीधा सा और छोटा सा—मैं अपने निमक, ईमान और देश के खिलाफ नहीं लड़ सकता।'

'ऐसे भी जागीरदार और भूमि के भूखे हिन्दू और मुसलमान हैं जो अब्दाली से मिले हुये हैं।'

'हिन्दू कम, मुसलमान ज्यादा। उसका कारण है। ऐसे बहुत से मुसलमान हैं जिन्होंने इस देश को अभी तक अपना नहीं समझा है और हिन्दुओं को काफिर, अपना दुश्मन, और, उनकी जायदाद को अपनी लूट का हक माने बैठे हैं। इनका भी इतना कसूर नहीं है जितना हमारे मुल्क की जागीरदारी, जिमीदारी और मन्सबदारी चलन का है। उखड़े हुये जमींदार हमला करने वाले परदेसी दुश्मन से जा मिलते हैं।'

'नजीबखां के रुहेले इसी तरह के लोग हैं। और दक्षिण में ऐसा ही हिन्दू सरदार करते रहते हैं। आपने निजाम की लड़ाइयों में देखा ही है।'

'बेईमानों और देश-घातियों की कोई अलग जाति नहीं होती। मुझे अपनी छावनी मे होलकर पर बहुत सन्देह है पटेल जी।'

'शायद आपका सन्देह गलत निकले। पुराना जाँचा हुआ आदमी है। बिचारा बुड्ढा और निर्बल है। इसलिये शरीर और मन से अशक्त हो गया है। वैसे पुराने ढङ्ग की लड़ाई मे उसकी बराबरी का कोई नहीं है। बोली अवश्य उसकी कड़वी है।'

'मैं उसके दिल के बाबत कह रहा हूं। बोली तो वक्त से सिपाही की कड़वी होती है हालांकि ऐसा नहीं होना चाहिये। मैंने ही अब्दाली को एक कड़ी बात लिखी है।'

'वह क्या, खाँ साहब ?'

'मैंने उसको लिखा है,—वह मुसलमान मुसलमान कहलाने लायक नहीं जो दूसरे मुसलमानों को बेईमानी करने या अपने मुल्क के खिलाफ कोशिश करने के लिये बरगलावे।'

'क्या आपका यह सिद्धान्त हमारे इस प्यारे अभागे देश में हिन्दू और मुसलमान कभी अपनावेंगे।'

'कोशिश कीजिये । आजकल के लिये कुछ नई सी बात है । आपसी लड़ाई झगड़े, लूटमार, स्वार्थ बहुत हैं । कुरबानी और त्याग के बदले में इनामों के लिये मुँह बाये खड़े रहना और उनके लिये लड़ लड़ मरना इतना बढ़ गया है कि यही नहीं मालूम पड़ता कि हम हिन्दुस्थान में रहते हैं या किसी नरक में ।'

'यदि हम लोग इस लड़ाई से बचकर निकल पाये खां साहब तो इस बुरे चलन को मिटाने के सभी उपाय करेंगे ।'

'जरूर' गार्दी ने कहा, 'मेरा बस चलेगा तो मैं सारी की सारी फौज और शासन को कायदे में बांध दूंगा । मराठों की लुटेरी नियत और आदत छुटवा दूंगा । किसान और मजदूरों को हर तरह का आराम दूंगा—सबसे पहले तो उनकी बेगार बन्द करवा दूंगा । मैं एक बात और चाहता हूं—हिन्दुओं में से छूत अछूत का सवाल हट जाय । मेरे सिपाहियों को आपके ज्यादातर लोग छूते नहीं हैं । मेरी ब्रिगेड भर को इससे आराम भी है, क्योंकि कोई भी उनका अनाज और, कपड़ा लत्ता चुराने नहीं आता, लेकिन अपने साथियों को, जो मरने मारने में किसी से भी कम नहीं हैं और कायदे की पाबन्दी में सबसे बढ़कर, छोटा और नीचा समझा जाते हुये मुझे बहुत अखरता है । इस भेद भाव को दूर करने की बहुतबड़ी जरूरत है ।'

माधव जी बोले, 'इसमें देर लगेगी, गार्दी साहब । बड़ा कठिन सवाल है,—'

गार्दी ने टोका—कठिन तो सभी सवाल हैं । उस बूढ़े सोते होलकर को कोई भी नया सबक सिखलाना क्या कुछ सहज है ? मराठों का मन लूटमार की तरफ से मोड़कर कायदे की तरफ लाना क्या टेढ़ी खीर नहीं है ? पर हम लोगों को हौसला रखना चाहिये । कहते हैं न—हारिये न हिम्मत, बिसारिये न राम नाम ?'

'मैं नहीं भूलूंगा,' मुस्कराकर माधव जी ने कहा ।

(५२)

शीत ने और भी कठोरता धारण की। ईंधन, अन्न और कपड़ों की कमी और बढ़ गई। दूसरे दिन संक्रान्ति के लिये भोजन था ही नहीं! केवल उसी दिन के लिये थोड़ा-सा था। सिपाहियों ने त्यौहार के लिये बचा लिया। बहुत सहा। सिपाहियों—और सरदारों में भी—और अधिक सहने की शक्ति न रही।

इस दुर्गति के कुछ दिन पहले भाऊ ने शुजा की मार्फत सन्धि का समाचार भेजा था। उसे अपने शिवर की मुक्ति का इसके सिवाय कोई और उपाय नही दिखलाई पड़ा था। अब्दाली का जो उत्तर आया उसी की चर्चा भाऊ के डेरे में हो रही थी। उत्तर लाने वाले दूत ने बतलाया, 'सन्धि के प्रस्ताव पर शुजा और अब्दाली झुके। शुजा ने काफी जोर लगाया, पर नजीबखां ने अब्दाली को हठ पर बलपूर्वक आरूढ़ कर दिया।' नजीबखां ने कहा था,—काफ़िरों के साथ सुलह नही हो सकती; मराठों और उनके दूसरे हिन्दू साथियों को खतम किये बिना पठान-राज कायम नही हो सकता; बहिश्त पाने का सबसे बड़ा जरिया इन सबका मारना ही है।

'उनके एक काजी या फकीर ने भी बहुत भड़काया था,—जितनी बड़ी गिनती में इन्हें मारोगे बहिश्त में उतनी ही बड़ी जगह मिलेगी। अब्दाली ने सन्धि करने से इनकार कर दिया है और अपनी सेना को आज्ञा दी है—लड़ाई के लिये नमाज पढ़ो, सुलह का इरादा छोड़ दिया गया है।'

इब्राहीम गार्दी ने पूछा, 'आपने अब्दाली को लिखा क्या था, श्रीमन्त?'

भाऊ ने उत्तर दिया, 'यही कि जिन शर्तों पर कहिये सन्धि के लिये तैयार हैं, क्योंकि हम बड़ी भारी दुर्दशा में ग्रस्त हैं।'

होलकर बोला, 'और लिखते भी क्या?'

इब्राहीम चिल्ला पड़ा,—'ठहरिये ! और लिखते भी क्या !! जब हम लोगों ने मरने के लिये मुंह पर हल्दी पोत ली तब आप सन्धि की चर्चा करने गये !!! हम लोगों से भी तो पूछना था।'

भाऊ ने संयत स्वर में कहा, 'मैं चाहता था, सेना और सामग्री का विध्वन्स न हो, इसलिये चिट्ठी भेजी थी।'

माधव जी ने अनुरोध किया, प्रधान सेनापति के परामर्श और आदेश पर चलना ही चाहिये। इस समय विवाद करना अनुचित है।'

गार्दी अपना नियन्त्रण करके बोला, 'यह सही है, पर अब, इस घड़ी, सन्धि की चर्चा क्यों की जा रही है ? अब तो तुरन्त लड़ जाने की बात तै कीजिये।'

'मैं उसी बात को निश्चित करने जा रहा था—' भाऊ ने वाक्य पूरा नहीं कर पाया था कि डेरे के पास बड़ा हल्ला सुनाई पड़ा। भाऊ ने गार्दी और माधव को देखने के लिये भेजा। उन्होंने लौटकर बतलाया,—'सिपाही अन्न के लिये चिल्ला रहे हैं। कल के लिये खाने को नहीं है।'

भाऊ ने सोचा, इससे तो आत्मघात करलूं तो अच्छा।

सिपाहियों का शोर और तेज हुआ।

एक सामूहिक आवाज आई,—'दो दिन से हमको एक दाना भी खाने को नहीं मिला है।'

दूसरी,—'दो रुपये का सेर भर भी अन्न नहीं मिलता !'

'कितने भी दामों अन्न नहीं मिलता !'

'हमको इस तरह मत मरने दो !!'

'हम शत्रु से लड़ जाना चाहते हैं !!!'

'यहां की सड़ांघ नहीं सही जाती अब एक क्षण !'

'लड़ाई की आज्ञा दो ! लड़ाई की आज्ञा दो !!'

भाऊ ने सिपाहियों को आश्वासन दिया, 'लड़ाई सिर पर आ गई है। हम अब किसी को भी थोड़ी सी भी प्रतीक्षा नहीं करेंगे। सबके लिये

एक बार पेट भर खाने योग्य अन्न हमारे भंडार मे है। देते हैं। रात में आराम कर लो। प्रातःकाल युद्ध के लिये तैयार रहो।'

मानो सिपाहियों और उनके सरदारों को मुक्ति का संदेशा मिला। उस फटियल, सड़ियल, मरियल हालत मे भी वे हर्ष-मग्न हो गये। सिपाही मुक्ति मार्ग पर चलने के लिये उल्लास के साथ तैयार होने लगे। भाऊ के डेरे मे आधी रात तक युद्ध-योजना के ब्योरे पर तर्क होता रहा। किस दल को किस सरदार की अधीनता में रहना है और उसको क्या करना है इसका निर्धार कर लिया गया। भाऊ के मुख पर अधीरता, घबराहट, का लेशमात्र भी चिन्ह न था। उसने पान मँगवाये। सरदारों के सामने रख दिये। ये पान गम्भीर अर्थ रखते थे। पान का बीड़ा उठाने के लिये माधव जी और इब्राहीम एक साथ उठे।

माधव जी ने तुरन्त बैठकर कहा, 'पहला सम्मान आपको। आपके बाद मैं।'

इब्राहीम आगे बढ़ा। भाऊ ने उसको पान दिया। पीठ पर हाथ फेरा। इब्राहीम ने पान माथे से छुलाया। फौजी प्रणाम करके बोला, 'खुदा मेरे ईमान को और इस पान की इज्जत को रखे।'

फिर माधव जी, बालाजी जनार्दन अन्ताजी इत्यादि ने उठाये। सबके चेहरों को उन पानों ने खिला दिया था। रगत सी बरसा दी थी। होलकर ने भी बीड़ा उठाया। इब्राहीम कुछ कहना चाहता था। माधव जी ने वर्जित कर दिया।

एक दो घण्टे सोने, और रूखा सूखा खाने के बाद सबके सब युद्ध के लिये कटिबद्ध हो गये। सबसे पहले, घोड़ा कुदाता हुआ इब्राहीम भाऊ के डेरे के सामने आया। प्रणाम करके बोला, 'श्रीमन्त राम, राम। हर महीने ठीक समय पर सिपाहियों का वेतन लेने में जब अखाड़ा होता था तब कभी बिगड़ भी पड़ते थे। मैंने अपनी ब्रिगेड पर लाखों रुपये खर्च कराये हैं।

फिर हँसकर कहता गया, 'इस महीने का वेतन नहीं मिला है। खैर; जिन्दा रहा तो ले लूंगा। आज सुनियेगा मेरी ब्रिगेड का नाम और काम।'

'राम राम प्यारे इब्राहीमखाँ गार्दी।' भाऊ ने शान्त स्वर में कहा, मेरे हृदय में, तुम्हारा नाम और काम बहुत दिनों से लिखा हुआ है। अब इतिहास के पत्रों में लिखा जायगा।'

प्रणाम करके इब्राहीम घोड़ा कुदाता हुआ चला गया।

(५३)

चौदह जनवारी सन् १७६१—

मकर की सक्रान्ति के सूर्योदय मे अभी ठीक दो घण्टे की देर थी। भाऊ की सेना ने सन्नद्ध होकर युद्ध के लिये कूच किया। मोर्चों पर पहुंचने मे तीन घण्टे लग गये—लम्बी मार की भारी तोपो को लगाने जमाने मे काफी समय व्यय हुआ।

प्रात.काल होते ही सूर्य की रश्मियों ने अकाल पीडित, परन्तु उमगो से भरे सिपाहियों के हल्दी से पुते हुये चेहरो और हाथो पर, मानो, चाव बरसाया।

हिन्दू और मुसलमान सिपाही और सरदार, सब ने हल्दी से मुंह और हाथ रगे थे। इब्राहीम गार्दी की पल्टनों का रग गहरा श्याम था, उनकी लाल आंखों और सावले रंग पर हल्दी सूर्य की रश्मियो के साथ बहुत ऊब रही थी।

भाऊ केन्द्र में, माधव जी जनकोजी-चाचा-भतीजे—और होलकर दाहिने बाजू पर; इब्राहीमखा गार्दी तथा अन्य मराठा सरदार बायें बाजू पर। भाऊ के केन्द्रीय दल के आगे बहुत ऊंचा लहराता हुआ भगवां झण्डा। सब के आगे बड़ी बड़ी तोपो के मोर्चे। पूरी पात की लम्बाई तीन कोस और गहराई आधी कोस थी। भारतीय सेना की कुल सख्या पैंतालीस सहस्र थी। परन्तु पीछे खाइयो और पनीपत नगर में तीन लाख के लगभग नौकर-चाकर इत्यादि थे बाईस हजार स्त्री बालक।

अब्दाली को भारतीय सेना की मोर्चाबन्दी का पता तोपों की खड़बड से लगा। उसका विश्वास था कि ये इतनी जल्दी नहीं लड बैठेंगे और सक्रान्ति के त्योहार के दिन तो कदापि नहीं। पहले वह समझा कि बहुधा छुटपुट युद्ध जैसे होते आये हैं वैसा ही एक यह होगा, परन्तु उसका भ्रम बहुत शीघ्र दूर हो गया।

उसके हाथ में सत्तर सहस्र सेना—खाई पी स्वस्थ—तैयार थी। दो हजार ऊँटों का छोटी तोपों वाला रिसाला, जो अपनी चन्चल गति और सवेग कार्य विधि के लिये प्रसिद्ध था। बेकायदा सेना अगणित।

अब्दाली की तीक्ष्ण दृष्टि ने भारतीय सेना की मोर्चाबन्दी की लम्बाई शीघ्र कूत ली। उसने अपनी मोर्चाबन्दी साढ़े तीन कोस की लम्बाई में की और उसका आकार सामने की ओर मुड़े हुये सींग का रखा। भाऊ की सेना के दायें और बायें बाजुओं से अब्दाली के दोनों बाजू पाव पाव कोस की मोडों मे फैल गये और उन्होंने भाऊ के दोनो बाजुओ को एक प्रकार से ढक लिया। इन दोनो बाजुओं पर अब्दाली ने चुने हुये पांच पाच हजार खुरासानी सवार लगा दिये। बीच में अठारह सहस्र योद्धाओं को लिये उसका प्रधान सेनापति था। इन सब के आगे तोपें। बीच बीच में आगे पीछे सवार और पैदल। दायें बाजू पर, इब्राहीमखा के सामने पन्द्रह सहस्र से ऊपर रुहेले और बाये पर, होलकर और सिन्धिया के सामने नजीबखा और शुजाउद्दौला। अब्दाली स्वयं बाकी सेना को कई दास्तों मे बाटे हुये सबसे पीछे एक रावटी मे। अपने पास ही उसने दो हजार ऊँटो वाले तोपखाने ठीक अवसर के लिये सेंत रखे थे।

उसके प्रत्येक सैनिक के पास रोटी और भुना हुआ मांस तथा चमड़े की सुराहियो मे पीने के लिये जल था। कपड़े गरम, हरएक पल्टन और रिसाले की पहिचान के लिये टोपी और कुले का रंग अलग अलग। सवार सब लोहे के कवचो से रक्षित। हथियार नये और भरपूर। बन्दूकें लम्बी नाल की, गोला बारूद प्रचुर। भारतीय सेना के पास भोजन उतना ही था जितना पेट में डाला जा चुका था। कपड़ों के नाम पर शरीर में चिथड़े, बहुत से केवल धोती पहने और सिर पर फटा हुआ मुड़ासा बांधे हुये। भाले और खांड़े लम्बे। तीर कमान और ढालें भी। घोड़ों को छुडकाने वाली हवाइयां जो भीड़ पर पड़ने से हताहत भी कर सकती थीं। बन्दूकें छोटी जिनकी मार थोड़ी दूर की और गोली की

शक्ति मारने की कम और केवल घायल करने की अधिक। इब्राहीम गार्दी की पल्टनों के पास इसी प्रकार की बन्दूकें थी। अब्दाली के सम्पूर्ण पैदल दस्ते तोपों और घुड़सवारो से ढके और सुरक्षित थे, पर भाऊ के पैदलों को यह रक्षा दुष्प्राप्य थी। इब्राहीम को और भी कम।

युद्ध के आरम्भ होने के पहले इतनी धूल उड़ी कि दोनो पक्ष एक दूसरे को बिलकुल ही न देख सके। धूल के बैठ जाने पर भाऊ की लम्बी मार की तोपो ने गोले उगले, परन्तु ये तोपें इतनी ऊँचाई पर लगा दी गई थी कि उनकी मार ने अब्दाली का कुछ नहीं बिगाड़ पाया—गोले अब्दाली की सेना के ऊपर सन सनाकर पीछे गिर रहे थे। अब्दाली ने थोड़ा-सा उत्तर दिया, परन्तु उसने अपनी गोली बारूद उपयुक्त अवसर के लिये सुरक्षित रखी।

इसके बाद तुमुल ध्वनिया हुई—

हर हर महादेव! या अली!! या अली!!!

हर हर महादेव! अल्ला हो अकबर!!

इनके चेहरों पर मृत्यु के आवाहन की मुहर थी और उनके चेहरों पर विजय-लाभ करने की आकाक्षा।

विश्वासराव हाथी से उतरकर घोड़े पर सवार हो गया। भाऊ के केन्द्रीय दल के एक अश को लेकर अब्दाली के ऊपर टूट पड़ा, जैसे ऊषा की पूजा पाया हुआ बाल रवि अधेरे को छिन्न-भिन्न कर देता है। इस सेना के सिपाही वैसे ही मरने के लिये तैयार थे, विश्वासराव के गोरे सलोने तेज और बड़ी आंखो की लम्बी बरोनियो ने मानो प्रण में गाठ पर गाठ दी। अब्दाली का केन्द्र पहले ही हल्ले में हिल गया। मराठे सिपाहियो ने गोलियो की परवाह न करते हुये, अपने नायक विश्वासराव की ही तरह भाले और खांड़े से मार्ग बनाते हुये, अब्दाली के केन्द्र को छेद डाला।

'हर हर महादेव' की ध्वनि कठों से गूंज रही थी और सूर्य की रिपटती हुई किरणों में से तलवारो की झनझनाहट और भालों की खड़

खड़ाहट। अफगानी गोलियों की बौछारों से विश्वासराव के दल में से खून का मेह-सा बरस पड़ा और लाशों पर लाशें बिछ उठीं, पर मराठा सवार न रुके। अब्दाली का केन्द्र टूट गया। अफगान भाग उठे। उनका प्रधान ऊटों के तोपखानों की आड़ में था। घोड़े से उतरा और जमीन पर बैठकर अपना सिर पीटने लगा। उसने धूल उठाकर मुँह में डाली और अंगेड़ू अफगानों से कहने लगा, 'अपना मुल्क बहुत दूर है भाइयो! कहाँ भागे जा रहे हो?'

अब्दाली के पास यह समाचार पहुंच गया। उसने तुरन्त कुमुक भेजी। भाऊ ने विश्वासराव की सहायता के लिये अतिरिक्त सवार नहीं भेज पाये।

उधर इब्राहीमखां ने अपनी आठ हजार पैदल पल्टनों में से डेढ़ हजार का दस्ता अब्दाली के सींग समाने टेढे फैले हुये दायें बाजू के छोर को ओर भेजा जिसमें वह घूमकर उसके बाकी छः हजार तीन सौ सिपाहियों को बाजू से या पीछे से घेर न ले। इसके बाद उसने सिपाहियों से कहा, 'आज हमारे तुम्हारे ईमान धर्म की जाच है! आज तुम्हारे जनरल को अब्दाली की चिट्ठी का जवाब देना है!! आज साबित करना है कि स्वामि-भक्ति से बढ़कर और कोई भक्ति नहीं!!! आज दुनियां को दिखलाना है कि हम अपने देश के लिये किस तरह लड़ और मर सकते हैं!!!! हा मेरे जवानो, हिन्दुस्थान के नाम पर टूट पड़ो इन जालिम परदेसियों पर!!!!!'

और वे अपने ईमान धर्म और अपने देश की बात के लिये उन रुहेलों पर टूट पड़े।

माथों पर हल्दी। बन्दूकों से चिपटे हुये हाथों पर हल्दी और हृदयों में हल्दी! चमकती हुई सीधी संगीनें। श्यामल मुखों में मोती की तरह दमकते हुए कसे दांत। कदम से कदम मिलाये पातों में कोई तिरछा टेढ़ापन नहीं। अभंग गति से तिलंगों ने भयङ्कर आक्रमण किया। बन्दूक से बन्दूक और संगीन से रुहेलों की तलवार जा टकराई।

धूल के घूमरे कणो को तोपो की बिजलियां छेदने लगी। बन्दूकों की धायँ धायँ और धुयें ने रक्त-प्लावित सैनिको की देहें छिपा लीं। भारतीय सेना अनवरत श्रम से अब्दाली की सेना पर टूट टूट पड़ने लगी।

लगभग तीन घण्टे तिलंगों-रुहेलों की घोर लड़ाई हुई। लगभग नौ हजार रुहेले हताहत हुये। उन्हें पीछे हटना पडा, सरदारो के पास केवल कुछ सैकडे रुहेले योधा रह गये थे, बाकी भाग खडे हुये। उनका प्रधान चिल्लाया, कहा भागे जा रहे हो? रुहेलखण्ड में अपना कोई नहीं है। फैसला यहीं होगा।'

इस भगदड का भी समाचार अब्दाली के पास पहुंचा। उसने तुरन्त तीन सहस्र सवार और हलकी तोपों की कुमुक भेजी।

इब्राहीम को भी घुडसवारों की जरूरत थी। उसने भी मँगवाये। पर वे न आये। इब्राहीम ने चिल्लाकर कहा, 'सिन्धिया कहां है?'

सिन्धिया का पता नहीं मिला।

इब्राहीम चिल्लाया, 'आह! न हुआ दत्ताजी आज की लड़ाई में। नहीं तो बिना भाऊ से पूछे-ताछे वह अकेला अब्दाली की तकदीर का फैसला कर देता!!'

अब्दाली ने अपने पांच हजार सवारों को एक काम और सौंपा— कोई भी अफगान या रुहेला लड़ाई से भागता हुआ दिखलाई पड़े तो उसे तुरन्त मार डालो। इस कारण उसकी सेना मे अधिक स्थिरता आ गई।

अब्दाली के बायें बाजू के सामने होलकर और उसके पीछे सिन्धिया के दस्ते थे—इब्राहीम से लगभग ढाई कोस के अन्तर पर। भाऊ विश्वासराव की खोज में आगे बढ़ गया था और स्वयं युद्ध में भाग लेने लगा था।

माधव जी ने होलकर को शान्त और चुपचाप देखकर पूछा, 'काका, केन्द्र में और अपने उस पार्श्व पर घोर युद्ध हो रहा है, तुम क्यों चुप मारे हो? बढ़ो न!'

होलकर ने उत्तर दिया, 'नहीं, अभी अवसर नहीं आया है।'

एक घण्टे की लड़ाई के बाद फिर वही प्रश्न किया गया। माधव जी को फिर वही उत्तर मिला।

दो घण्टे के बाद फिर वही प्रश्नोत्तर।

तीसरे घण्टे पर अब्दाली के ऊँट तोपखानों-शुतर नालों-का विनाश कार्य प्रारम्भ हो गया। अब्दाली का केन्द्र सम्भल गया। उसने केन्द्र को बचाने के लिये दस सहस्र सवारों का दस्ता भेजा।

जनकोजी ने बढ़कर होलकर को ललकारा, 'काका, आज क्या हो गया है तुमको? क्यों सांस साधे खड़े हो? एक भी बन्दूक नहीं चलाई गई! एक भी तीर न खींचा गया!! एक भाले ने भी टक्कर नहीं ली!!! एक खांड़ा भी नहीं हिला!!!!'

होलकर ने सोचकर उत्तर दिया, 'जरा और ठहरो।'

'कब के लिये? जनकोजी ने तिनक कर पूछा, 'नजीब रुहेले ने कोई जादू तो नहीं कर दिया है?'

होलकर ने बिगड़ कर उत्तर दिया, 'लड़कपन मत बको। मुझको भाऊ के बाल-बच्चों की देखभाल करने की आज्ञा है। तुम लोग काफी हो। मेरे पास केवल तीन हजार सवार हैं। मैं शिविर में जाकर उनकी रक्षा करूँगा।'

माधव जी ने कहा, 'न हुये आज मेरे बड़े भाई दत्ताजी इस पानीपत के मैदान में!! काका, तुमको यदि जाना ही है तो इब्राहीम गार्दी की सहायता के लिये पहुँच जाओ।'

होलकर चला गया। अब्दाली के एक दस्ते से लड़ता हुआ निकल गया। उसके साथ सब सवार भी।

जनकोजी आगे बढ़ा। बराबर बराबर माधव जी। थोड़ी देर में जनकोजी आगे निकल गया और रुहेलों के बीच में फँस गया। उसके दस्ते ने और उसने बड़ी शूरता के साथ युद्ध किया, परन्तु उसका दस्ता समाप्त हो गया और वह घायल होकर पकड़ा गया।

इब्राहीम गार्दी के लगभग अस्सी प्रतिशत सैनिक मारे गये। इब्राहीम गार्दी भी घायल होकर पकड़ लिया गया।

अब्दाली के केन्द्र को पीछे धकेलता हुआ वह बालवीर विश्वासराव बहुत आगे बढ़ गया था। सदाशिवराव उसके पीछे पीछे आया। परन्तु भाऊ के पीछे से आगे बढ़ आने के कारण रण-व्यवस्था बिगड़ गई। आवश्यकता के अनुसार किसी भी आक्रान्त स्थल पर कुमुक नहीं पहुंच पाई। विश्वासराव की बाईं आख की भों पर तीर लगा, जाघ में गोली पड़ी। तलवार का एक वार गर्दन पर भी पड़ा। वह समाप्त हो गया।

इतने में वहाँ भाऊ आ गया। विश्वासराव के शव को हाथी पर रखवाया। उसकी आखें मुद गईं। आसू भरी आखें गोपिकाबाई की, आंसू भरी आँखें बालाजीराव पेशवा की सामने घूम गईं, और उनका प्रण मानसपटल पर कोंध गया। भाऊ ने आखें खोलीं। विश्वासराव का सुन्दर सलोना मुख, अर्धोन्मीलित नेत्र, ओठों पर अप्सरा को लजाने वाली मुस्कान। सत्तरह बरस का बालक। शत्रुओं के और अपने रक्त से रंजित। महाराष्ट्र का लाल, भारत का मोती। भाऊ को उस रण-क्षेत्र में सिवाय विश्वासराव के और कुछ न दिखलाई पड़ा। सिवाय गोपिकाबाई की अन्तिम बात के और कोई कोलाहल न सुन सका। तोपों के गोले सनसना रहे थे, गोलियां भनभना रही थीं; तलवारें खटखटा रही थीं और घोड़ों की टापें पटपटाकर धूल के बादल आकाश में उड़ा रही थीं। भाऊ भूल गया कि मैं प्रधान सेनापति हूँ। जिन्होंने भारतमाता की एक सुन्दर रेखा को नष्ट किया था वह उन पर पिल पड़ा। अपने आस-पास के सैनिकों से कहा, 'जिसको अपने जीवन का मोह हो वह भाग जाय।'

कोई न भागा।

'जिसको अपने देश की आन पर मरना हो वह मेरे साथ आये। विजय दूर है, परन्तु वीरोचित मृत्यु का गौरव पास है।' भाऊ गरजा।

घोर लड़ाई लड़ते सैनिकों को चार घण्टे से ऊपर हो गया था। भूखे थे और प्यासे भी। परन्तु विश्वासराव के शव को देख कर वे सब भूल गये। छापे पर छापा मारने के लिये भाऊ के साथ जुट गये।

सदाशिवराव लम्बा चौड़ा पुरुष था। नियम पूर्वक व्यायाम करने के कारण उसकी देह सांचे में सी ढली हुई थी। गोरा रङ्ग, लम्बी नाक। गले में बड़े बड़े मोतियों का कण्ठा। उभड़ी हुई चौड़ी छाती पर कामदार सलूका। उसको दूर से पहिचाना जा सकता था।

भाऊ के प्रचण्ड आक्रमण से अब्दाली का केन्द्र फिर विचलित हुआ। इस समय भी यदि काफी संख्या में सवार सेना उसकी सहायता को आ जाती और इब्राहीम गार्दी की सहायता के लिये पहुँच गई होती, तो उस दिन के युद्ध का परिणाम भिन्न होता।

अब्दाली की शुतर-नालों, सवारों और पैदलों ने भाऊ के दल को सब तरफ से घेर लिया। उसके साथी क्षण क्षण पर कम होने लगे।

भाऊ को विजय की कोई आशा न थी। वह अब मौत को ढूँढ़ रहा था। मौत उसको नहीं मिल रही थी। उसके घोड़े को गोली लगी। गिरा। दूसरे पर चढ़कर लड़ा। उसको भी लगी। वह भी गिर गया। तीसरे को पकड़ा। यह भी मारा गया। भाऊ की जांघ में गोली पड़ी। फिर जांघ में ही भाला छिदा। पैदल हो गया। हाथ में भाला लिये, लंगड़ाता हुआ, मौत की खोज में पागल। जो शत्रु सामने आया वह उसकी सबल कलाई और प्रबल भुजा के फेंके हुये भाले से समाप्त हुआ। अन्त में पांच अफगान सवार 'उसके डीलडौल और' वस्त्रालंकारों की शोभा से आकृष्ट होकर उसको और झपटे। सिंह घायल हो गया था, परन्तु अभी मरा नहीं था। पांच में से चार अफगानों के कवच छेद कर वक्ष फोड़ दिये। वे गिर गये। मर भी गये। परन्तु एक सवार ने बन्दूक की गोली से उस घायल सिंह को समाप्त कर दिया। वह अफगान सवार अपनी रीति और परम्परा के अनुसार भाऊ का सिर काटकर ले गया।

फिर तो अफगान सेना चारों ओर से टूट पड़ी। उस विशाल सेना का चतुर्थांश मुश्किल से बचकर निकल पाया। भाऊ ने रणक्षेत्र से पराजित होकर हटने की परिस्थिति मे, कोई योजना ही नहीं बनाई थी। दो लाख के लगभग मजदूर और शागिर्द पेशा लोग मारे गये। पानीपत नगर मे घिरे हुये बाईस सहस्र स्त्री बालको और नौकर चाकरों को अफगानों ने गुलाम बना लिया।

लड़ते लडते सरदारो मे जो बचे थे उसमे मे एक बालाजी जनार्दन था, दूसरा अन्ताजी। परन्तु अन्ताजी मार्ग में मार डाला गया। माधव जी ने रणक्षेत्र को सबसे अन्त मे छोड़ा।

उस रात अफगानो और रुहेलों ने बड़ा जशन मनाया—सबके डेरों के सामने भारतीय सैनिको के सिरो के छोटे बडे ढेर लगे हुये थे, जो जशन के लिये ही इकट्ठे किये गये थे।

अफगानो रुहेलो को लूट मे पचास हजार तो घोड़े ही मिले। हजारों की संख्या मे गुलाम। और सामान तो बहुत था ही। फिर जशन मनाने के लिए मनुष्यों के असख्य सिर!

(५४)

पानीपत के लौटे हुये भारतीय सरदारों और सिपाहियों को आसपास बसे हुये मालूकियों और मेवातियों ने बहुत लूटा मारा और सताया। कुछ भाग कर भरतपुर राज्य में पहुँचे। सूरजमल ने इनके साथ बहुत दया का बर्ताव किया—यह कभी नहीं भुलाया गया।

प्रातःकाल होता जा रहा था। सूर्य की रश्मियों को मानो ठंड ठिठुरा रही थी। ऊबड़ खाबड़ भूमि पर एक सवार घोड़े को दौड़ाता हुआ चला आ रहा था। दृढ़ शरीर, रंग सांवला, आँखें बड़ी बड़ी। गले में मोतियों का एक कंठा। वह चिन्तित दृष्टि से मुड़ मुड़ कर देखता जाता था, क्योंकि पांच छः अफगान सवार तेजी के साथ उसका पीछा करते चले आ रहे थे।

वे इस अकेले सवार पर बन्दूकें चला चुके थे। फिर भरने का समय नहीं मिला था, परन्तु वे तलवारें लिये हुये थे। आगे भागने वाले सवार की कमर में केवल तलवार थी—भाला बन्दूक कुछ नहीं।

अफगानों ने अकेले सवार को घेर लिया। वह तलवार से अपना बरकाव करता रहा। शत्रु की तलवार का एक वार उसके घुटने पर पड़ा। हड्डी पर चोट आई। उसका हाथ ढीला पड़ गया। अफगानों के वार घोड़े पर पड़े। घोड़ा काबू से बाहर हो गया। उसने अपने सवार को फेंक दिया। सवार गिरते ही अचेत हो गया।

अफगानों ने उसका कंठा तोड़कर उतार लिया फिर टटोला टटाली करने लगे।

एक ने कहा, 'अभी कुछ सांस है।'

'पहले तलाशी करलो फिर काट डालेंगे।' दूसरा बोला।

वे यत्न पूर्वक तलाशी लेने लगे।

कुछ क्षण बाद एक ओर से एक भिश्ती बैल पर पखाल डाले हुये आता हुआ दिखलाई पड़ा। वह धीरे धीरे आ रहा था। ऊँचा पूरा

पुरुष। काफी लम्बी सफेद दाढ़ी। उसी समय दूसरी दिशा से उड़ती हुई धूल दिखलाई पड़ी और टापों की आवाज सुनाई दी। अफगान उस ओर देखने लगे। एक सवार दिखलाई पड़ा।

एक अफगान जल्दी से बोला, 'यह मर चुका है या मरने वाला ही है। अब और इसके पास कुछ नहीं है। चलो यहा से लौटो। दुश्मन के सवार आ रहे हैं।'

अफगान तुरन्त घोड़ों पर चढ़कर लौट भागे।

नये आने वाले सवार भारतीय थे। वे भागे जा रहे थे। भिश्ती ने उनमे से आगे वाले को रोका,—'उधर देखिये वह क्या है ?'

आगे वाले सवार ने देखा—घोड़ा घायल होकर पृथ्वी पर पड़ा हुआ तड़प रहा है। सवार शान्त पड़ा है। भिश्ती भी पास आया।

भिश्ती ने आगे वाले सवार से कहा,— मैं इस घायल सरदार को पहचानता हूँ और आप को भी। जल्दी करिये, उठाइये इनको। अभी मरे नहीं हैं। बच सकते हैं।'

'तुम कौन ?' हड़बड़ा कर आगे वाले सवार ने पूछा।

उसने उत्तर दिया, 'मैं कौन हूँ यह पीछे मालूम हो जायगा। आप सरदार इंगले हैं, यह अभी बतलाये देता हूँ। और ये—'

'बस भिश्ती रहने दो। सवार ने रोका, 'इनको मैं घोड़े पर रखता हूँ, पर है बहुत संकटपूर्ण काम। मैं थका हुआ हूं, मेरा घोड़ा थका हुआ है। कितनी दूर ढो सकेगा मेरा घोड़ा इतना बोझ ? और जाना बहुत दूर है।'

'चिन्ता मत करिये। वह सामने कुछ झोपड़े दिखलाई पड़ते हैं। इनको वहां छाया मे छोड़ दीजिये एक कपड़े से ढक दीजिये। मैं अभी आता हूँ।'

इंगले ने उस मृतप्रायः सवार को अपने घोड़े पर लादा और भिश्ती के बतलाये हुये झोपड़े पर ले गया। वहां पेड़ों की एक झुरमुट थी। उस झुरमुट में दो तीन झोपड़े मजदूरों के थे। पर उस समय वहां या

कोई भी नहीं। घायल को छाया में रखकर ढक दिया गया। थोड़ी सी व्याकुल प्रतीक्षा के उपरान्त भिश्ती आ गया।

भिश्ती ने कहा, 'सरदार साहब यदि आप लोग ठहरना चाहें तो घोड़ों को चरने के लिये खोल दीजिये और फटे कपड़े पहिन कर वेश बदल लीजिये।'

इंगले बोला, 'मैं अकेला ठहरूँगा, इन सबको जाने दो। पर यह तो बतलाओ कि तुम कौन हो?'

उसने बतलाया,—'एक छोटा सा सिपाही हूं। मुसलमान हूं। सिन्धिया के लश्कर का आदमी। इससे ज्यादा पीछे मालूम होगा।'

इंगले ने कहा, 'खैर, जान पहिचान पीछे हो जायगी। अकेले रह जाने पर हम तीनों की रक्षा ज्यादा सुभीते के साथ हो सकेगी। इन लोगों को जाने दो।'

भिश्ती सहमत हो गया। इंगले के सिवाय बाकी सब सवार चले गये। उस घायल सवार की सेवा सुश्रुषा होने लगी। धीरे धीरे उसको चेत आने लगा। वह कराह उठा।

इंगले ने भिश्ती से अनुरोध किया, 'यह स्थान बिलकुल अरक्षित है, यहाँ से कहीं और चलो। पानीपत के बहुत पास है।'

'इसीलिये तो सुरक्षित है। अफगान और रुहेले लूटमार में लगे हुये हैं बड़े बड़े डेरों की। झोपड़ियों को कोई नहीं पूछे जावेगा। कोई आया भी तो हमारे पास रखा क्या है। मैं मुसलमान हूं ही। कह दूगा तुम लोग भी मुसलमान हो।'

'शायद इस तरह बच जायें। तुम यहां आये कैसे?'

'मैं कल शाम के पहले यहा आ गया था। मजदूरों से कहा कि मैं फौज में भिश्ती का काम करता था। उन्होंने पनाह दे दी और दोस्त बना लिया। कह दूँगा आप लोग मेरे नातेदार हैं, भिश्ती का पेशा करने वाले। इससे ज्यादा पूछने की मजदूरों को न तो इच्छा है और न चिन्ता। दिन में कहीं काम करने निकल गये हैं। रात को आकर सो जायेंगे और

सवेरे फिर निकल जायेंगे। ये लोग मराठों से बहुत घिन करते हैं क्योंकि बरबाद कर दिये गये हैं। इसलिये मराठी में बातचीत न करके रांगड़ी में बोलियेगा।'

'रांगड़ी कहूँगा उस भाषा को जिसके बोलने वाले ने प्राणों की रक्षा की! कभी नहीं कहूंगा इस भाषा को रांगड़ी और न उसके बोलने वालो को रांगडा।'

घायल सवार ने आंखें खोली और बन्द कीं। फिर कुछ अधिक देर तक खोले रहा। उसने पानी के लिये मुँह खोला। इंगले ने पिलाया।

तीसरे पहर उसे अधिक चेत आया।

घायल अपने चारों ओर का वातावरण आंख गड़ा गड़ाकर देखने लगा। क्षीण स्वर में बोला, 'अफगान सवार चले गये?'

भिश्ती ने झुककर धीरे से कहा, 'हां सरकार, चले गये।'

इंगले भी निकट आ गया। घायल ने भिश्ती के चेहरे पर टकटकी लगाई। भिश्ती की लम्बी दाढ़ी घायल के वक्ष पर छहरा रही थी। घायल क्षीण स्वर में बोला, 'मैंने तुमको पहिचाना नहीं।'

भिश्ती ने अपनी दाढ़ी उखाड़ कर हाथ मे ले ली। घायल के मुँह से निकल पड़ा,—'रानेखां! भाई रानेखां!!'

'उसने फिर दाढ़ी लगा ली। बोला, 'हां सरकार मैं ही हूँ। बात मत करिये।'

इंगले न माना। घायल के पास झुक गया। घायल ने आश्चर्य के साथ कहा, 'सरदार इगले! मेरा त्रिम्बक इंगले!!'

'प्यारे माधव! प्यारे माधव!!'

इंगले फूट फूटकर रोने लगा।

रानेखां ने इंगले की भर्त्सना की,—'रो पीटकर बंटाढार मर करवा दीजिये। इनका नाम जाहिर होने पर हम लोगों मे से कोई भी नहीं बच सकेगा।'

इंगले चुप हो गया। थोड़ी देर बाद बोला, 'मेरा घोड़े का क्या होगा?'

रानेखा ने उत्तर दिया, 'सो जायगा या लौट आयगा। सो जाय तो ज्यादा अच्छा है।'

इंगले को चुमा।

रानेखां ने कहा, 'आपका चला जाना हम दोनों के लिये ठीक बैठेगा। आप भरतपूर जायँ। इनको अच्छा करके मैं वहीं लाऊँगा। अच्छा करने मे देर जरूर लगेगी।'

थोड़े से संकोच के उपरान्त इंगले मान गया। रानेखा को कुछ रुपया देकर चला गया।

(५५)

माधव जी का भतीजा जनकोजी घायल होकर पकड़ लिया गया था। एक अफगान सरदार ने सात लाख रुपये देने के वचन पर उसे अपने डेरे में छिपा लिया। परन्तु नजीबखां को पता लग गया। अब्दाली ने नजीब के हठ पर घायल जनकोजी को नजीब के सिपुर्द कर दिया। घायल इब्राहीम गार्दी शुजाउद्दौला के छावनी में पहुँचाया गया था। साढे छः हजार घायल हिन्दुओं ने भी शुजा के यहा शरण पाई। शुजा की ईरानी संस्कृति को विलास-प्रियता ने बिलकुल नष्ट नहीं कर पाया था और उसके मीर मुन्शी इत्यादि प्रधान कर्मचारी हिन्दू थे।

परन्तु नजीब को यह सब बहुत अखरा। अब्दाली शुजा को रुष्ट नहीं करना चाहता था, 'इसलिये उसने इब्राहीम और जनकोजी को नजीब के हवाले करवा के मानो सान्त्वना दे दी।

सन्ध्या होने पूर्व ही विश्वासराव का शव ढूंढ़ लाया गया। सदाशिवराव का सिर तो आ ही चुका था।

विश्वासराव का सौन्दर्य मृत्यु के सिर पर भी खेल रहा था। अध-मुंदी आंखें, ओठों पर स्वाभाविक अर्ध विस्फोत मुस्कान—मानो यमराज को भी मुग्ध करने की ठान रही हो। उसके अनिर्वचनीय रूप की महिमा को सुनकर रक्त में सने हुये अनेक अफगान सरदार और सिपाही ठठ के ठठ बांधकर जमा हो गये।

'क्या मनुष्य इतना सुन्दर हो सकता है ?'—उनकी बर्बरता बार बार प्रश्न कर रही थी।

वे चिल्ला उठे,—'हम हिन्दुओं के शाहन्शाह को काबुल ले जायेंगे। इसकी लाश को हमेशा तेल में रखेंगे।'

इन लोगों के बढते हुये हठ को देखकर नजीब ने आकर अब्दाली को सलाह दी,—'हटाइये इसको, फिकवा दीजिये कहीं।'

यही सम्मति उसने सदाशिवराव के सिर के लिये भी दी।

शुजा से उसके हिन्दू अफसरों ने प्रार्थना की। शुजा ने बीच में पड़कर अब्दाली से अनुरोध किया। अब्दाली ने शव और सिर का फेंका जाना रोक दिया। हिन्दुओं ने उन दोनों का दाह-संस्कार कर दिया।

घायल इब्राहीम गार्दी लाया गया। अब्दाली ने कहा, 'जो कुछ तुमने किया उस पर तुमको तोबा करनी चाहिये और मेरी चिट्ठी का जो जवाब दिया था उस पर तुमको शर्म आनी चाहिये।'

'तोबा और शर्म!' आप क्या कहते हैं अफगान शाह? आपके देश में अपने मुल्क पर मुहब्बत और खून बहाने वालों को क्या तोबा करनी पड़ती है? और क्या सिर नीचा करना पड़ता है?'

'तुम जानते हो किसके सामने हो? किससे बात कर रहे हो?'

'जानता हूँ। और नहीं भी जानता हूँगा तो जान जाऊँगा। इतना जरूर जानता हूं कि आप खुदा के फरिश्ते नहीं हैं।'

'मैं इतनी बड़ी फतह के बाद गुस्से को नहीं आने देना चाहता हूं। ताज्जुब है मुसलमान होकर इस तरह से बर्ते तुमने!'

'तब आप यह जानते ही नहीं है कि मुसलमान कहते किसे हैं। जो अपने मुल्क के साथ घात करे, जो अपने मुल्क को बरबाद करने वाले परदेशियों का साथ दे, वह मुसलमान नहीं है।'

'मुझे मालूम है तुम फिरङ्गियों की शागिर्दी में रहे हो, उनकी जबान सीखी है और उनके और इन काफिरों के कायल हो गये हो। क्या तुम नमाज पढ़ते हो?'

इब्राहीम जानता था कि उसका वध निश्चित है। उत्तर दिया, 'हमेशा। पाँचों वक्त।'

अब्दाली ने व्यंग किया, 'फिरङ्गी या मराठी, जबान में नमाज पढ़ते होंगे! खुदा को राम कहते होंगे!!'

'क्या खुदा सिर्फ अरबी और फारसी या पश्तो जबानों को ही समझता है ? क्या वह मराठी या हिन्दवी नहीं जानता ? क्या राम खुदा नहीं है ? और क्या खुदा राम नहीं है ?'

'क्यों कुफ्र बकता है ? तोबा कर नहीं तो टुकड़े टुकड़े कर दिये जायेंगे।'

'मेरे इस तन के टुकड़े हो जाने से रूह के टुकड़े तो होंगे नही।'

'अच्छा, हम तुमको तोबा करने के लिये वक्त देते हैं। अगर तुम तोबा कर लो तो हम तुमको छोड़ देंगे और अपनी फौज मे बहुत अच्छी नौकरी भी देंगे। तुम फिरङ्गी तरीके पर हमारी फौज के कुछ दस्ते तैयार करो।'

कराहता हुआ घायल इब्राहीम हँस पड़ा। बोला, 'नौकरी मैं अपने मुल्क के सिवाय और किसी की करता नहीं।'

'यो ही छोड़ दू तो क्या करोगे ?'

'अगर किसी तरह छूट पाऊं तो फिर अपने सदाशिवराव की पल्टनें तैयार करूँ, और, अगर आप फिर लड़ने आओ तो इसी पानीपत में, उन अरमानों को निकालूं जिन्हे निकाल नहीं पाया और जो मेरे कलेजे मे धधक रहे हैं।'

'अब समझ में आ गया। तुम मुसलमान का जामा पहिने हुये असल मे बुतपरस्त हो—'

'जरूर हूँ—मैं ऐसी बुत को पूजता हूं जो दिल मे बसी हुई है और ख्याल मे मीठी है। पर जिन बुतों को बहुत से हिन्दू पूजते हैं और आप लोग भी, मैं उनको नही पूजता।'

'हम लोग भी ! खबरदार !!'

'हां, आप लोग भी। मरे हुये सिपाहियों के सिरों के ढेर जो हर तम्बू के सामने लगाये गये हैं और जिनके सामने आपके अफगान और रुहेले सिपाही नाच नाच कर जशन मना रहे हैं, वह सब क्या बुतपरस्ती नही है ? हिन्दुओं की और आप लोगो की बुतपरस्ती मे सिर्फ इतना

ही फर्क है कि हिन्दू जिन बुतों को पूजते हैं उनसे खून नहीं बहता है और न उनसे बदबू आती है।'

'हूँ ! तुम बहुत बदजबान हो। तुम्हारा भी वही हाल किया जायगा जो तुम्हारे सदाशिवराव भ ऊ का हुआ है।'

पीड़ित, चकित इब्राहीम के मुंह से निकला,— क्यों उनका क्या हुआ ?'

उत्तर मिला,— मार दिया गया। सिर काट लिया गया।'

'ओफ !' घायल इब्राहीम बोला। दोनों हाथों से अपने सिर को ढक लिया। उसके घावों में पीड़ा बढ़ी।

अब्दाली को उसकी पीड़ा रुची। बोला, 'और तुम लोगों का वह छोकरा शाहन्शाह भी मारा गया, विश्वासराव।'

इब्राहीम ने कंपित, द्रवित स्वर में कहा, 'विश्वासराव ! विश्वास-राव !! मेरे मुल्क का नाज !!! मेरे सिपाहियों के हौसलों का ताज !!!! खूबसूरती और जवांमर्दी का वह आबदार जौहर !!!!! ओफ।'

इब्राहीम गिर पड़ा।

अब्दाली ने उसे पड़ा रहने दिया। वह और नजीब मार्दी के तड़पने पर प्रसन्न थे। मानो वह उनकी विजय का प्रतीक हो, मानो उनकी विजय पताका लहरा रही हो।

इब्राहीम जरा-सा उठकर भर भराते हुये स्वर में बोला, 'लेकिन विश्वासराव सो जाने पर भी अपने मुल्क वालों की आंख में जागता रहेगा। उसकी सलोनी मुस्कान मौत को शर्मिंदा करती रहेगी; जवांमर्दों की रूह मे रूह फूंकती रहेगी। ओफ पानी !'

'नहीं मिलेगा।' अब्दाली कड़का,—'पहले तोबा कर।'

उस घायल शेर की आंख से चिनगारी सी छूटी। बोला, 'तोबा ! शहीद कहीं तोबा करता है ? तोबा करो तुम लोग बहशी—कैदियों, घायलों और निहत्थों का कतल करने वाले !'

अब्दाली से नहीं सहा गया न नजीब से, और न अफगान सरदारों से। इब्राहीम का टुकड़े टुकड़े करके वध करना निश्चित हुआ।

पहला अंग काटे जाने पर इब्राहीम ने चीखते हुये कहा, 'मेरे मुल्क पर और मेरे ईमान पर यह पहली नियाज हुई।'

फिर दूसरा अंग भंग किया गया। इब्राहीम के मुंह से कराहते हुये निकला,—'दुनिया में वहशी और जालिम नहीं रहेंगे, नहीं रहेंगे। हम हिन्दू मुसलमानों की मिट्टी से ऐसे सूरमा पैदा होंगे जो वहशियों और जालिमों का नाम निशान मिटा देंगे।'

फिर उसके और अंग काटे गये। वह मर गया।

मरने के समय एक शब्द उसके ओठों पर था—'अल्लाह।'

इसके उपरान्त जनकोजी की बारी आई।

इब्राहीम गार्दी के वध का ब्योरा सुनकर शुजा के आंसू आ गये थे। उसने जनकोजी के बचाने के लिये अब्दाली के पास दौड़ लगाई। अब्दाली काफी बड़ी रकम के बदले में छोड़ने को तैयार होता दिखा।

नजीब ने तुरन्त कहा, 'शाहन्शाह, इसको छोड़ देने से हमारी फतह किरकिरी-हो जायगी। यह जनकोजी सांपों की खानदान का है। हमारे दुश्मनों में सबसे ज्यादा बुरा और खतरनाक अगर कोई है तो सिन्धिया घराना। जब तक इनमें से कोई भी बचेगा मुझको, आपको और दिल्ली की सल्तनत को भी चैन न लेने देगा। इसको फौरन खतम करिये। रुपया यों ही बहुत मिल जायगा।'

नजीब के हठ पर जनकोजी का भी वध कर दिया गया।

(५६)

पानीपत संग्राम का समाचार दिल्ली में दूसरे ही दिन पहुँच गया। दिल्ली मराठा किलेदार नारू शंकर के* अधीन थी। वह तुरन्त दिल्ली छोड़कर झांसी चला आया।

बालाजी राव पेशवा को ग्रहणी रोग तो लगा ही हुआ था, क्षयरोग भी लग गया। यह गोपिकाबाई के मारे बहुत परेशान रहता था। उसके दुखी जीवन को सरस बनाने के लिये चाटुकारों ने दिल्ली से कुछ सुन्दर नाचने गाने वाली बुलवाईं और पानीपत संग्राम के सत्तरह दिन पहले एक सुन्दर युवती के साथ उसका विवाह भी करवा दिया!

बहुत दिनों से उत्तर का कोई समाचार न मिलने के कारण बाजीराव ने उत्तर की ओर प्रयाण किया। चलने के पहले निजाम से सहयोग के लिये बहुत कहलवाया कि बाहरी शत्रु का विरोध करने के लिये मराठों के साथ ससैन्य चलना चाहिये। निजाम ने नाहीं कर दी। लड़ाई के दस दिन पीछे जब बालाजी भेलसे में आ गया था, एक साहूकार की चिट्ठी जो उत्तर से बुरहानपुर जा रही थी उसके सामने लाई गई। उसमें लिखा था—'दो मोती खो गये; सत्ताईस मुहरें बिगड़ गई हैं,-रुपयों पैसों की तो कोई गिनती ही नहीं!' बालाजी ने इसका अर्थ लगा लिया और वहीं धक से रह गया। कुछ दिन भेलसे में निश्चित समाचारों के लिये ठहरा रहा। फिर खोये हुओं की खोज में दक्षिण-पूर्व राजपूताने की ओर बढ़ गया। साथ में जानोजी भोंसले की दस सहस्र सेना थी।

लड़ाई के पन्द्रह दिन पीछे अब्दाली ने दिल्ली में प्रवेश किया। सिपाहियों को दो वर्ष से वेतन नहीं मिला था, इसलिये तीन दिन दिल्ली की लूट हुई। उसके सैनिक भारत में लूट के ही मोह में मुग्ध होकर

*झांसी नगर का परकोटा इसी नारू शंकर का बनवाया हुआ है।

भ्राये भी थे। नजीब से सिपाहियों के वेतन के लिये रुपया मांगा गया। उसने सूरजमल का नाम लिया—रुपया उससे वसूल किया जावे। सूरजमल से मांग की गई। जब न मिला तब अब्दाली ने सूरजमल के विरुद्ध अपनी सेना को आगरे की ओर कूच करने की आज्ञा दी। परन्तु कूच करने के पूर्व ही शुजा के शिया सिपाहियों और अफगान सुन्नी सिपाहियों में दङ्गा फसाद हो गया। खून-खराबी बढ़ जाती, परन्तु शुजा अपनी सारी सेना लेकर दूसरे ही दिन लखनऊ की ओर चल दिया। अफगान सिपाहियों ने मथुरा की ओर जाने से बिलकुल नाहीं करदी और बलवा करने के लिये तैयार हो गये। मथुरा की ओर जाट थे, नागे थे और हैजे का भी डर था। इसके सिवाय पानीपत की लड़ाई में उसके भी पच्चीस-तीस सहस्र सैनिक हताहत हो चुके थे। अब्दाली की सेना आगरे की ओर नहीं गई।

अब अब्दाली के सामने प्रश्न आया किसको वज़ीर बनाया जाय। नजीब उसका सहयोगी था, परन्तु रुपया न मिलने के कारण वह मन ही मन उससे अप्रसन्न था। शिहाब मुगलानी बेगम का दामाद था जिसने हजरत बेगम को उसके हाथ करवाया था। मुगलानी न थी, परन्तु उसकी सुखद स्मृति थी।

शिहाब को वजीर नियुक्त करने का अब्दाली ने विचार प्रकट किया। नजीब और शिहाब के बीच में असाम मनोमालिन्य था। नजीब ने यह बात नहीं छिपाई कि यदि शिहाब वजीर बनाया जायगा तो मैं किसी और को दिल्ली के सिंहासन पर बिठला दूंगा। वह जानता था कि शिहाब के वजीर होने पर जाट प्रबल हो जायँगे और मराठे, कुछ समय उपरान्त, बल संग्रह करके उनका साथ पाकर फिर उत्तर हिन्द में आ जायँगे।

(७७)

एक महीने की सेवा सुश्रूषा के बाद कहीं रानेखा ने माधव जी को बैठने उठने योग्य बना पाया। अपने प्राणों की होड़ लगाकर उसने माधव जी की देखभाल की थी। वह एक ही स्थान पर रहा भी नहीं। परवाल पर बाधे हुये माधव को वह कभी इधर और कभी उधर लिये फिरता रहा था। इसके उपरान्त भरतपूर राज्य के एक गांव में पहुंचा। भरतपूर का राजा और भरतपुर राज्य की जनता मराठों की सब प्रकार से सहायता कर रही थी। अनेक घायलों की दवा-दारू और सुश्रूषा की जा रही थी।

रानेखा अपने घायल को भरतपूर के राजा के निकट सम्पर्क में लाना चाहता था।

उसने सूरजमल के पास पहुंचकर अभ्यर्थना की, 'एक मेरे घायल पर भी कृपा की जाय।'

सूरजमल ने भरोसा दिया, 'अवश्य। कहां है तुम्हारा आदमी ?'

रानेखा ने बतलाया।

'कौन है वह ?' सूरजमल ने पूछा।

'एक सिन्धिया।' रानेखा ने उत्तर दिया।

सूरजमल ने आश्चर्य प्रकट किया,—'कौन सा सिन्धिया ! सिन्धिया वंश में तो कोई भी नहीं रहा है। जनकोजी का नजीब रुहेले ने वध करवाया। माधव जी भी लड़ाई ही में मारे गये होंगे।'

'मेरे घायल माधव जी सिन्धिया ही है।' रानेखा ने मुस्कराकर कहा।

'एं ! अच्छा !! माधव जी !!! बड़ी मूछों वाला योधा और सरदार !!!! उनको यहीं बुलाता हूँ।'

'यहां नहीं महाराज। वे अभी उसी स्थान पर छिपे बने रहना चाहते हैं।'

'ठीक है। मैं वहीं चलूंगा।'

परन्तु बात छिपी न रही, जवाहरसिंह को मालूम हो गई। शिहाब को सूचना मिल गई। शिहाब के हरम में भी पहुंच गई।

शिहाब अपनी महत्वकांक्षाओं की सफलता के लिये मराठों का आश्रित था। जाटों का उनसे भी अधिक। और जाट, नजीब इत्यादि से बचने के लिये अपनी रक्षा का साधन मराठों में देखने लगे थे। शिहाब और सूरजमल, दोनों, अपने परम शत्रु नजीब को पहिचानते थे। अब्दाली अभी उत्तर भारत से टला नहीं था। शंका थी कि सूरजमल के ऊपर आक्रमण किया जायगा। शिहाब और सूरजमल माधव जी के पास गये।

× × ×

'तुम्हारा वह बड़ी मूछों वाला मराठा सरदार, लड़ाई में बच गया, पर घायल बेतरह हो गया है।' उम्दा बेगम ने कहा।

गन्ना बोली, 'अच्छा हुआ। सुना था कि उसने तीन ब्याह किये हैं। बिचारी की बीबियां रोने कलपने से बच गईं।'

'हां। अगर इस बीच में कुछ शादियां और करली हों तो रोने वालों की गिनती और बढ़ जाती।'

'उस दिन मथुरा में जब देखा तो लगता तो पक्का था।'

'अरे भाई, इन लोगों का मन उचटते कितनी देर लगती है?'

'सबका तो ऐसा हाल नहीं होता।'

'तुम अपने ही मामले में न देखलो। जब वह भिरूरी के पास मिला तुम्हारी शकल पर हवाइयां सी उड़ती थीं। एक अर्से तक नहीं आया। फिर जब यकायक देखा, चूंकि, शकल बदल गई थी उसका मन फिर फुदकने लगा।'

'ऐसा नहीं है हुजूर। आपका ख्याल सही नहीं है।'

'सही है मेरी बेगम। उसके प्यार बरसाने के पहले मैं तुम्हारे ऊपर रीझ उठी थी, लेकिन मैं शायद तुम्हारी खूबसूरती को वापिस नहीं ला

सकी। वह ले आया और मेरी प्यारी को मुझसे छीन ले गया। अब तो मेरी बेगम के ऊपर सदा बसन्त ऋतु छाई रहती है।'

गन्ना लजाकर हँस पड़ी।

उम्दा बेगम भी हँसी। बोली, 'शायद एक दिन दिल्ली चलना पड़े।'

जरा मुस्कियाते हुये स्वर में गन्ना ने कहा, 'दिल्ली ! दिल्ली से सिवाय नुकसान के अपने लिये फायदा ही क्या है ?'

उम्दा ने हँसते हुये व्यङ्ग किया, 'दिल्ली न तो अरमानों का बगीचा है और न हुस्न का कब्रिस्तान ! यह हजरत शायद फिर असली वजीर बनने वाले हैं। दिल्ली पहुंचने पर फिर तो अकेली होकर रहोगी मेरी।'

'जब यहां से फूल चल देंगे तो भौंरे क्या करेंगे ?'

'वे भी चल पड़ें फूल या फूलों के साथ या मड़राते रहें यहीं। फूलों को दिल्ली में बहुत भौंरे मिल जायेंगे।'

गन्ना ने उम्दा पर कटाक्ष किया था, परन्तु उम्दा ने अपने उत्तर से कसका दिया।

गन्ना बोली, 'दिल्ली चलकर आप मुझे यहीं फिर बदशकल न कहने लगें।'

उम्दा ने कहा, 'अबकी बार हजरत वजीर को रुहेलों का पलड़ा बराबर रखने के लिये मराठों का सहारा न मिलेगा, बल्कि जाटों को काबू में लिये रहना होगा। तुम्हारा वह मूछों वाला, सिन्धिया या सिन्धिया कौन है, देर में पनप पावेगा, इसलिये—' उम्दा ने फुसफुसाकर बहुत धीरे से अनुरोध किया, 'इधर आओ मेरे पास, तुम्हें गले लगालूं। इधर आओ।'

भय और संकोच का नाट्य करती हुई गन्ना मुस्कराकर उम्दा से लिपट गई। उम्दा ने उसके कान में कहा, 'इसलिये तुम्हारा जवाहरसिंह अपनी फौज के साथ दिल्ली में रहेगा, क्योंकि सूरजमल बहुत बुड्ढे हैं और वे भरतपूर नहीं छोड़ेंगे।'

गन्ना उम्दा बेगम के कन्धे पर सिर रखे हुये खुसफुसाती हुई बोली, 'मुश्किल है। शायद और कोई सरदार भेजा जाय। फिर दिल्ली का महल, पहरा वगैरह बड़ी दिक्कतें हैं।'

'तो फूल को क्या और भौंरे न मिलेंगे ?' उम्दा ने कहा।

गन्ना का मन गिर गया। परन्तु प्रतिवाद करना उसने संकटमय और मूर्खतापूर्ण समझा। विषयान्तर के लिये बोली, 'खुदा करे हम लोगों का वह मूछों वाला जल्दी अच्छा हो जाय और अपने लिये काफी फौज इकट्ठी करले —'

'ताकि', उम्दा ने वाक्य पूरा किया, 'भरतपूर की फौज का कोई भी सरदार दिल्ली न जावे। यही न प्यारी गन्ना ?'

'यह तो मेरा मतलब न था।'

'मैंने तो यही मतलब लगाया।'

'वहम बेकार है। हम लोग चाहें भी तो रुहेले हमें अभी दिल्ली में घसने नही देंगे।'

'हां, इस वक्त तो कोई फिकिर भी नहीं।'

दोनों हँसने लगी।

गन्ना बोली, 'दिल्ली भी गये तो हम लोगों को भरतपूर भूल नही सकता।'

उम्दा ने कहा, 'वाह मेरी शायर !'

(५८)

परस्पर अभिवादन के उपरान्त सूरजमल ने माधव जी से पूछा, 'क्या आप अकेले ही रानेखां के साथ आये हैं ? यहां भी अकेले ।'

माधव जी को बिस्तर तकिये और आराम का सब सामान सूरजमल ने भिजवा दिया था । बिस्तरों में बैठे बैठे उत्तर दिया, हां महाराज । इंगले, यहां पहले आ गया था, परन्तु हम लोगो को मिला नहीं ।'

मुझे भी स्मरण आता है। परन्तु वह यह कहकर चला गया था कि ग्वालियर की तरफ होलकर से मिलना है । आपका उसने कोई जिकर ही नहीं किया था ।' सूरजमल ने कहा ।

'रानेखां ने मना कर दिया होगा । मैं अभी गुप्त बना रहना चाहता हूँ । इंगले शायद मुझे खोजता फिरता हो ।'

'उचित ही है । क्योंकि दिल्ली की ओर अभी संकट के बादल छाये हुये हैं । आप से वह रुहेला बहुत रुष्ट है ।'

'देखूंगा । यदि बचा रहा तो आप सब की सहायता से कुछ करूँगा ।' माधव जी ने अपने घाव पर धीरे से हाथ फेरा और सिर थोड़ा सा मोड़ लिया ।

शिहाब बोला, 'अगर नजीबखां रुहेले और शुजाउद्दौला ईरानी की अकल ठिकाने न लगाई तो बात काहे की ।'

सूरजमल ने कहा, 'शुजाउद्दौला उतना बुरा नहीं है ।'

'एक बड़ा साप है, दूसरा छोटा । कोई फर्क नहीं ।' शिहाब बोला ।

सूरजमल जिस बात को नही कहना चाहता था, उसे कह गया,— 'शुजा ने जनकोजी को बचाने की बहुत कोशिश की थी, परन्तु उस बर्बर नजीब ने मरवा दिया ।'

माधव जी बिस्तरों मे हिल पड़े । फटे हुये स्वर में पूछा, 'क्या जनकोजी घायल हो गया था ?'

सूरजमल ने और अधिक कहना ठीक नहीं समझा। परन्तु शिहाब ने उत्तर दे दिया, 'जी हां। नजीब ने घायल कैदी को मरवाया। अब्दाली ने इब्राहीमखां गार्दी के टुकड़े टुकड़े करवाये।'

सूरजमल यह चर्चा नहीं करना चाहता था। माधव जी फफक पड़े। परन्तु उन्होंने अपने को शीघ्र संयत कर लिया। तकिया के सहारे लेट गये। बोले, 'सुना है अब्दाली ने दिल्ली को फिर लूटा?'

सूरजमल ने वातावरण को ठंडक देने के लिये कहा, 'अभागिन दिल्ली को शायद लूटमार के लिये ही सृजा गया है।' फिर विषयान्तर करने के उद्देश्य से तुरन्त बोला, 'अब जाटों, राजपूतों और मराठों को एक हो जाना चाहिये।'

माधव जी को इब्राहीम गार्दी की याद आ गई। एक क्षण बाद बोले, 'जनता और सरदारों को एके के सूत्र में बांधने की जरूरत होगी। ऐसे हिन्दू मुसलमानों को एक करना होगा जो अपने देश को चाहते हों, जो इस पर बलिदान होने के लिये तैयार हों।'

सूरजमल ने बिना स्वर की खनक के अपना विश्वास प्रकट किया, 'यह सब सम्भव है। काम अवश्य समझदारी के साथ किया जाना चाहिये। ऐसे लोगों को मिलाने का प्रयत्न नहीं किया जाना चाहिये जो कपटाचार करते हैं और केवल अपने स्वार्थ के लिये ही जीवित हैं।'

शिहाब ने इस विश्वास को खनक दी,—'यदि महाराज सूरजमल की बात उस दिन मान ली गई होती तो आज यह नौबत न आती।'

माधव जी ने दोनों की ओर देखकर सिर नीचा कर लिया। एक क्षण बाद कहा, 'महाराज सूरजमल का एहसान हम लोग कभी नहीं भूलेंगे। उस तरह से सभा छोड़कर चले आने पर भी बराबर अन्न धन से सहायता करते रहे, और अब भी अत्यन्त स्नेह और कृपा का बर्ताव कर रहे हैं।'

सूरजमल ने अनुरोध किया, 'यह सब छोडिये। आगे की बात करिये। आप पूना जाकर ऐसी सन्धि करवाइये कि हमारे मित्र और शत्रु आपके भी मित्र और शत्रु रहें।'

शिहाब ने जोर लगाया,—'बेशक यह जल्दी से होना चाहिये। जल्दी करने की पड़ी है।'

माधव जी ने कहा, 'मैं पूना जाकर देखूंगा वहां का अब क्या हाल है। पानीपत के परिणाम का हम सब पर भीषण प्रभाव पड़ेगा। फिरंगी प्रबल हो उठेंगे, कुछ मराठे सरदार और सिलेदार आपस के पुराने झगड़ों को बढ़ायें-चढ़ायेंगे। परन्तु मुझे आशा और विश्वास है कि हम लोग सब विघ्न बाधाओं को पार कर जायेंगे। देखना है बिचारे पेशवा का क्या हाल है।'

चर्चा को पानीपत विषय की दिशा में जाते देखकर सूरजमल बोला, 'गोहद का राजा हमारा सम्बन्धी और मित्र है। मैं चाहता हूँ कि उसे अपने संघ में रखा जाय।'

शिहाब ने समर्थन किया, 'वह मेरा भी दोस्त है।'

माधव जी ने कहा, 'हमारे मित्र और शत्रु आपके भी मित्र और शत्रु।'

शिहाब बोला, 'आपकी सलाह के बिना हम लोग कोई ऐसा काम न करेंगे जिसके लिये आगे चल कर पछताना पड़े। अभी तो आपको बहुत दिन यहां ठहरना पड़ेगा, तब तक आपकी खैरियत की खबर पूना न भेज दी जाय?'

माधव जी ने एक क्षण सोचकर उत्तर दिया, 'मैं अभी यहीं पड़ा रहना चाहता हूँ। चलने फिरने योग्य होने पर ही पूना जाऊँगा। आप मेरा समाचार किसी चतुर दूत के हाथ भिजवा दीजिये। वहां मैं अब मेरी सौतेली मां ही बची हैं।'

सूरजमल ने स्वीकार किया।

(४१)

अब्दाली ने दिल्ली को दो महीने ऐश आराम के बाद छोड़ा। चलने के पहले अफगानों ने दिल्ली को फिर तीन दिन लूटा।

नजीब दिल्ली के खाली सिंहासन का मीरबख्शी, वली, मुख्तार सब कुछ हो गया। वह अपने लडके जाबिताखा को दिल्ली का शासक बनाकर अपने इलाके में चला गया और अपनी स्थिति दृढ करने में लग गया।

अब्दाली को पजाब की बमूली प्यारी थी। उसका विश्वास था कि पूरा दुआब–अन्तर्वेद–और गङ्गापार का पूर्वीय प्रदेश रुहेलो और लखनऊ के नवाब के हाथ मे दृढतापूर्वक रहने से ही मराठो और जाटो से पजाब की वसूली सुरक्षित रह सकती है। जाट विघ्न बाधा अधिक डाल सकते थे, इसके लिये उसने शिहाब को फिर से खड़ा करने का प्रयत्न किया। वह जानता था कि शिहाब जाटो और मराठो को प्रभावित कर सकता है, और नजीब को यदि बिलकुल स्वतन्त्र और निष्कण्टक छोड दिया जायगा तो उपद्रव बढ़ेगा और अबकी बार भारत पर आक्रमण करना महँगा सौदा हो जायगा। इसलिये उसने अपने दूतो को आगरा होकर पूना भेजने का निश्चय किया।

पेशवा को लिखा कि पानीपत मे जो कुछ हुआ सो हुआ, भूल जाना चाहिये; मैं लड़ना नही चाहता था। पजाब मेरे अधिकार मे, उत्तरी दुआब रुहेलों के पास अवध शुजाउद्दौला के पास और दिल्ली आगरा के आसपास का प्रदेश दिल्ली के बादशाह के हाथ में रहेगा—बाकी सब मराठो का! इन दूतों के साथ उसने शिहाब के लिये वजीर की नियुक्ति सम्बन्धी खिलत पोशाक इत्यादि भी भेजी।

सूरजमल, शिहाब और माधव जी मथुरा मे आ गये थे। होल्कर का भी एक नायब आ पहुंचा था। अब्दाली के दूतो को यही छेड़ लिया गया। सन्धि पत्र की शर्तों की चर्चा हुई।

माधव जी अब बिलकुल स्वस्थ हो गये थे, परन्तु घाव खाई हुई टांग में लङ्ग सदा के लिये पड़ गई थी।

शर्तों के वाद-विवाद में सूरजमल ने कहा, 'दुआब के दोनों तरफ रुहेले ! दुआब के निचले भाग के दोनों तरफ अवध का नवाब !! फिर हम लोग कहां जायंगे ?'

दूतों ने सुझाव दिया, 'भरतपुर, डीग और कुम्हेर के आसपास ही रहें जाट। बादशाह की ओर से जागीरदार हो तो हैं न ? जैसे हरियाने के इलाके में मेवाती और बलूच बादशाह के जागीरदार हैं वैसे ही आप लोग बने रहें।'

होलकर का नायब बोला, 'इस शर्त के कारण इलाहाबाद और बनारस के जिले, बुन्देलखण्ड ये सब अवध की नवाबी में गिन लिये जायेंगे। यही न ?'

दूत ने व्यङ्ग किया, 'शायद ऐसा ही होगा। आप सोचते होंगे पानीपत में लड़ाई हुई ही नहीं !'

मिहाव ने कहा, 'यह सुलह पानीपत की लड़ाई के नतीजे को सामने रखकर की जा रही है ! हम लोग ऐसी शर्तों को मन्जूर नहीं कर सकते। अगर करते हैं तो महाराज सूरजमल का आधा राज यों ही हाथ से चला जायगा, जिसकी रखवाली के लिये हजारों आदमी अपना सिर कटवाने को तैयार बैठे हैं।'

होलकर का नायब बोला, 'इलाहाबाद, बनारस और बुन्देलखण्ड को मराठे किसी हालत में नहीं छोड़ेंगे। हम लोग एक पानीपत क्या कितने भी पानीपतों के सामने सिर झुकाना नहीं जानते। फिर उठेंगे और चार चार हाथ करेंगे।'

दूत ने पूछा, 'इन इलाकों पर मराठों का दावा क्या है ?'

होलकर के नायब ने उत्तर दिया, 'जिस इलाके पर हमारा एक बार पांव पड़ जाय वह परम्परा से हमारा हो जाता है। केवल रुहेलखंड अपवाद में आ सकता है।'

दूत ने फिर प्रश्न किया, 'रुहेलखण्ड के साथ क्या सलूक करेंगे आप लोग ?'

उत्तर मिला, 'कुछ नही । नजीबखा से हमको कोई मतलब नहीं ।'

सूरजमल तुरन्त बोला, 'हमे तो लड़ना पड़ेगा नजीब से ।'

दूत ने समझाया, 'इन्ही लडाई झगडो को बन्द करने के लिये शाहन्शाह ने ये शर्ते आप लोगो के पास लिख भेजी हैं। इलाकों के बटवारे के बिना फसाद बन्द नही होगे ।'

अभी तक माधव जी चुप थे। उन्होने नपे तुले शब्दो मे कहा, 'आप लोगों का पूना जाना बिलकुल व्यर्थ है। इन शर्तो मे हम केवल वजीर की नियुक्ति वाली बात मान सकते है और दिल्ली के बादशाह की रक्षा की योजना को भी। लेकिन हम भारत के खड खड नही कर सकते चाहे कितने भी समय तक हमे दबे रहना पडे । रह गई बात हमारे आपसी इलाकों की उसको हम अपने सुभीतो के अनुसार निपटा लेंगे।'

यह उत्तर सूरजमल, शिहाब इत्यादि को पसन्द आया। दूत लौटकर चले गये। पूना जाने की नौबत नहीं आई।

(६०)

पानीपत के परिणाम का समाचार जैसे ही राजपूताना में पहुंचा जयपूर के राजा ने मराठा चौकियों को हटाना प्रारम्भ कर दिया। उसने राजपूताना के राजाओं को एक करके फिर कभी मराठों को राजपूताना में प्रवेश न करने देने की योजना बनाई।

पानीपत संग्राम के होने के पहले ही से जयपूर का राजा मराठों को राजपूताना से निकल देने की चिन्ता में था। पेशवा को मालूम हो गया। पेशवा ने उसे लिखा था कि यदि हम लोग अहमदशाह अब्दाली से हार गये तो उत्तर से चले आयेंगे, नर्मदा फिर भी हमारी सीमा बनी रहेगी, परन्तु तुम्हारा क्या हाल होगा ? अब्दाली तुम लोगों को कुचले बिना नहीं रहेगा।

मराठों के एक इखरे-बिखरे दल से जयपूर राजा की लड़ाई हुई। मराठे हट गये। पेशवा इस लड़ाई में नहीं पहुंच पाया। हीन क्षीण होने के कारण पूना लौट आया। बुन्देलखण्ड के राजा रईसों ने उपद्रव प्रारम्भ कर दिये। होलकर ग्वालियर होता हुआ इन्दौर गया। वहां से राजपूताना गया और एक युद्ध में सफल हुआ।

नजीबखां ने बादशाह के निजी इलाके हरियाना के प्रदेश, पर अपना दखल जमा लिया। बादशाह शाहआलम द्वितीय अवध में था। उसने शुजा को अपना वज़ीर घोषित कर दिया और शुजा भी अवध के बाहर हाथ पैर फैलाने की धुन में रम गया।

बंगाल में अंग्रेजों का प्रभुत्व बढ़ने लगा। पानीपत संग्राम के चार वर्ष पहले इन लोगों ने बंगाल और अवध के नवाबों को पलासी के युद्ध में षड्यन्त्र, चालाकी, चतुराई, रण-कुशलता और अच्छे हथियारों की सहायता से हरा दिया था। उन्होंने अब फ्रान्सीसियों से पांडुचेरी को छीन लिया।

पन्जाब में सिक्ख स्वावम्लबी बनकर अपना सगठन कर रहे थे। उनको पीसने चबाने के लिये उधर काबुल था और इधर दिल्ली।

इधर उधर फैले फूटे मराठा सैनिक, ग्वालियर मे एकत्र होने लगे। लगभग सब अच्छे नेता, नायक, पानीपत के युद्ध मे समाप्त हो चुके थे। मथुरा से अब्दाली के दूतो के लौट जाने पर माधव जी को समाचार मिला कि ग्वालियर मे भाऊ की भग्नावशेष सेना और नई भर्ती मिलाकर लगभग चालीस सहस्र सैनिक इकट्ठे हो गये हैं। तब वे रानेखां के साथ ग्वालियर आये। यहा उनको इगले भी मिल गया। इनके पहले होलकर आया था और थोडे दिन ठहर कर इन्दौर चला गया था। माधव जी को पूना से समाचार मिला कि पानीपत युद्ध मे जो सरदार और सिलेदार मारे गये हैं उनमें से अधिकाश के घर द्वार जब्त कर लिये गये हैं क्योंकि उन्होने अपने आय-व्यय के हिसाब का भुगतान नहीं किया था! यह भी सुना कि सोतेली मा पेशवा के सामने अपना दावा पेश कर रही है और रघुनाथराव उनके अल्प-वयस्क भतीजे केदारजी का समर्थन कर रहा है। ऐसी अवस्था में वे ग्वालियर-स्थित सेना के किसी भी अंश का नायकत्व न कर सके। पूना गये।

पेशवा का क्षय रोग से देहान्त हो गया। उसका मझला पुत्र, विश्वासराव से छोटा—माधवराव पेशवा हो गया और रघुनाथराव उसका अभिभावक।

लगभग उसी समय सूरजमल ने आगरा के किले पर अधिकार कर लिया। उस समय नजीब उससे लड़ने के लिये नहीं आया।

(६१)

बालाजीराव पेशवा का मरण पानीपत पराजय और विश्वासराव के वध के कारण शीघ्रतर हुआ था।

पानीपत की हार ने, महाराष्ट्र भर को मानो, शोकसागर मे डुबो दिया। हर्ष-मग्न यदि कोई था तो ताराबाई, और उसका दल। वह अब छयासी वर्ष की थी। इस दल को निजाम की सहानुभूति प्राप्त थी।

जिनका घर द्वार जब्त कर लिया था उनके वंशज उखड़ खड़े हो गये। माधवराव का अभिभावक न बन पाने के कारण गोपिकाबाई आग बबूला हो गई और उसने अपना एक दल संगठित किया। रघुनाथराव ने सोचा, मैं स्वयं पेशवा क्यों न बन जाऊं? वह अलग षडयन्त्र रचने लगा। होलकर वृद्ध हो गया था फिर भी सैन्य-संग्रह करके वह राजपूताना गया और उसने जयपुर के राजा को बुरी तरह हराया। परन्तु घायल होकर लौटा और बीमार होकर पड़ रहा। जनता सिलेदारों और सरदारों के संघर्ष मे पिसने लगी। महाराष्ट्र भर मे एक विष और व्याप्त हो गया—अब्राह्मण कहते थे कि ब्राह्मणो ने अपनी दुर्बुद्धि मे पानीपत का युद्ध हरवाया; ब्राह्मण अपनी उपजातियो और उपवर्गों पर दोषारोपण कर रहे थे।

माधव जी उन बहुत थोडे व्यक्तियो में अन्यतम थे जो इन विवादो और अपवादों से दूर थे। रघुनाथराव इनकी योग्यता और दृढ़ता को जानता था इसलिये उसने बिलकुल निष्क्रिय रखा। जनता मे अभी इतनी तत्परता आई नही थी कि अनाचारियों और षडयन्त्रकारियो को दूध की मक्खी की तरह निकाल फेंक कर देश का काम आगे बढ़ाती। रघुनाथराव के विरोधियों को उसने कुछ मन्बल दिया तो वह अपना पाया मजबूत बनाने के लिये खुल्लम खुल्ला निजाम से जा मिला। पूना को लूटने और ध्वस्त करने के लिये उसने निजाम को उकसाया!

ताराबाई मर गई परन्तु उसका पोषक दल बना रहा।

माधव इस काल अपने मामा के गांव चले गये और वहां से परिस्थिति को निरखने लगे। यही उनका एक ब्याह और हुआ।

पूना में अंधेरा-सा छा गया। केवल एक दीप वहां था जो बुझाया नही जा सका। माधव जी इसके पास गये।

पूना के एक छोटे से, परन्तु साफ सुथरे, घर मे बांस की चटाई पर अधेड अवस्था का एक व्यक्ति बैठा हुआ था। भस्म का त्रिपुण्ड लगाये। सिर घुटा हुआ, चोटी लम्बी, गांठ बँधी हुई। बहुत मोटे कपडे का स्वच्छ उत्तरीय और मोटे कपडे की ही स्वच्छ धोती पहिने हुये। न तकिया, न मसनद, न बिछाने पर चादर। पास मँजे हुये लोटे में जल, जिस पर मंजी हुई कटोरी रखी हुई थी। कमरे में और कोई सामान नही। चेहरे पर ओज और आंखो मे तेज। यह व्यक्ति परम विख्यात राम शास्त्री था।

माधव जो प्रणाम करके बिना आसन की नगी धरती पर बैठ गये। राम शास्त्री उनको पहले से जानते थे।

राम शास्त्री ने कहा, 'तुम उत्तर के युद्धों में नहीं गये? सुना था राघोवा ने तुम्हारे दल का नायक किसी और को बना दिया?'

माधव ने उत्तर दिया, 'हां शास्त्री जी। मैं राजाज्ञा का उल्लंघन नही कर सका।'

'इन सरदारों और शासको मे इतनी भी बुद्धि नही कि राजपूताना इत्यादि को स्नेह से वश में करना चाहिये न कि उन्हे रौंद कुचलकर। तुम पूना की रक्षा के लिये भी नहीं आये?

'मैं क्या करता शास्त्री जी? मेरे पास कोई साधन ही न था।'

'अब कैसे आये हो?

'यह पूछने कि मैं क्या करूँ'।

बुराइयो और अनाचारो से अकेले लड जाने की समर्थता प्राप्त करो। तुम्हारे अधिकार वाले मामले मे मैंने स्पष्ट कह दिया है कि तुम्हारे भाई के लड़के का जागीर पर कोई हक नही है।

जागीर बापौती नहीं है, राज्य की धरोहर मात्र है—प्रजा-जन की व्यवस्था और शान्ति सुख का भार जागीर का प्रबन्ध करके राज्य को समर्थ और सशक्त बनाया जाय जिसमें बाहर के शत्रु स्वतन्त्रता का अपहरण और प्रजा का पीड़न न कर सकें।'

'मैं आपके उपदेश से अपने प्रण में अधिक दृढ़ हो रहा हूँ। श्रीमन्त पेशवा ने आज्ञा दी है कि जागीर के दो टुकड़े कर दिये जायें। एक का प्रबन्ध मैं करूं, दूसरा केदारजी को दे दिया जाय। मैंने कह दिया है कि सम्पूर्ण जागीर का प्रबन्ध केदारजी को सौंप दिया जाय, क्योंकि जागीर खण्डित करने से वह बापौती का रूप धारण कर लेगी।'

'तुमने अच्छा किया, 'परन्तु क्या यह आज्ञा माधवराव पेशवा की है? तुमको किसने बतलाया?'

'बालाजी जनार्दन ने, जो अब पेशवा का फड़नीस है, उसी ने बतलाया कि श्रीमन्त रघुनाथराव ने पेशवा के नाम से जारी की है।'

'यह नहीं हो सकता। राघोबा की आज्ञा नियम विरुद्ध है।'

उसी समय एक किसान आ गया। राम शास्त्री के यहां कोई भी आ सकता था। किसी के लिये भी बाधा नहीं थी।

चिल्ला कर बोला, 'महाराज, एक ब्राह्मण सरदार ने मुझसे काम कराया, पर मजदूरी नहीं दी। मेरे रोने चिल्लाने पर मेरी फसल कटवा कर नष्ट कर दी।'

शास्त्री ने कहा, वह ब्राह्मण नहीं पिशाच है। राजकार्य में ब्राह्मण का प्रवेश केवल एक कर्तव्य और एक ही कर्तव्य के लिये हो सकता है—वह निस्पृह होकर जनता के सुख का सम्पादन करे अन्यथा उसे राजकार्य से अलग रहना चाहिये। तुम्हारा न्याय किया जायगा। ब्राह्मण सरदार की सम्पत्ति छीन ली जायगी और तुम्हारा सम्पूर्ण घाटा पूरा करवा दिया जायगा।'

किसान प्रसन्न होकर चला गया।

राम शास्त्री ने काशी में विद्याध्यन किया था। बालाजीराव पेशवा ने इनको खोज निकाला। बालाजीराव ने अपने जीवन मे दो महत्कार्य किये थे—एक राम शास्त्री को पूना का न्यायाधीश नियुक्त करना, दूसरा महाराष्ट्र की किसान जनता का लगान—भार कम करके लगान वसूल करने वालो पर नियन्त्रण रखना।

माधव जी ने कहा, शास्त्री जी, आप बिना किसी सम्पत्ति और जागीर के स्वामी होते हुये भी महाराष्ट्र भर के हृदय के स्वामी हैं। मैं केदारजी को सिन्धिया वश के सारे के सारे हक दिये देता हूं। बिना जागीर या सम्पत्ति के भी बहुत कुछ कर सकूंगा।'

शास्त्री मुस्कराकर बोले, 'मैं हा भर के पाप का भागी नही बनूंगा। तुमको अपने दायित्व से पलायन नही करना चाहिये। परस्पर लड़ाई झगड़ा हो नही और अपने कर्तव्य का पालन करके स्वराज्य और स्वदेश को दृढ बनाओ। पानीपत के उपरान्त अब और भी आवश्यक हो गया। मराठो में सयम अनुशासन नहीं रहा है। लूटमार की वृत्ति ने उन्हे भ्रष्ट कर दिया है उन्हें सुधारो। जनता का कल्याण करो।'

माधव जी ने उत्साहित होकर कहा, 'मैं इसका प्रण पहले ही कर चुका हूँ। परन्तु अपने को अधेरे में पा रहा था। अब आपसे उजेला मिल गया है। भटकने की कोई आशंका नही रही।'

माधव जी प्रणाम करके चले गये।

शास्त्री की पत्नी उदास मुख लिये आई। बोली, 'कल के लिये भोजन सामग्री बिलकुल नही है, कल ही आयगी। परन्तु एक भिखारी आकर अड गया है। उसको क्या दूं ?'

शास्त्री की पत्नी मोटे वस्त्र पहिने थी। उसके तन पर सिवाय सधवा-शृङ्गार चिन्हों के और कुछ नही था।

शास्त्री ने मुस्कराकर कहा, 'कह दो उससे कि मेरा ब्याह ऐसे नगे के साथ हुआ है जिसके घर में दूसरे दिन के लिये एक दाना भी नहीं रखा जाता।'

शास्त्री की पत्नी खिलखिलाकर हँस पड़ी। उसकी उदासी न जाने कहाँ चली गई। बोला, 'पर उसे हटाऊँ कैसे ? कहता है पूना के न्यायाधीश के द्वार से झोलो मे बिना कुछ लिये नहीं टलूँगा।'

शास्त्री ने हँसकर कहा, 'उसे समझा दो कि पूना का न्यायाधीश *हरिश्चन्द्र सरीखा मूर्ख नहीं है* जो दूसरो से पैसे खींच खीचकर किसी क्रोधी या लोभी ब्राह्मण या भिखारी को अपनी कीर्ति की रक्षा के लिये लुटा दे। उससे यह भी कह दो कि मैं अपने को या अपनी स्त्री को भिखारियों की तृष्णा शान्ति के लिये किसी के हाथ नहीं बेचने का। वह क्यों नहीं परिश्रम करता है या राजा से खाने को मांगता ?'

'मैं तुमसे हार गई।' कह कर हँसती हुई शास्त्री की पत्नी चली गई।

(६२)

'भारत का अङ्ग अङ्ग नानाप्रकार के आघातों से कराह रहा है।' माधव जी सिन्धिया ने माधवराव पेशवा से कहा।

माधवराव पेशवा अपने को रघुनाथराव के शिकन्जे मे छुटा चुका था और राम शास्त्री को अपना गुरु मान कर दृढ़ता के साथ जन-पालन कर रहा था।

विश्वासराव का छोटा भाई माधवराव भी सुन्दर आकृति का युवक था—वैसा अद्वितीय सौन्दर्य तो उसमे न था, परन्तु तो भी बहुत कुछ।

बोला, 'पञ्जाब से अब्दाली तो चला गया है, परन्तु सिक्खों के शरीर को घावों से भर गया है।'

'श्रीमन्त, अब सिक्खो का कोई भी दमन नहो कर सकता है। नजीब ने अब्दाली की दाढ लपकाई है। वह बार बार भारत पर आक्रमण करेगा और सिक्ख बार बार उसका सामना करेंगे।'

'यदि कहीं हम लोग सिखो को मिला सकें।'

'असम्भव है श्रीमन्त, परन्तु उनके सरदारो के स्वार्थ और परस्पर झगड़ों के कारण सिक्खों को मिला पाना हम लोगो के लिये कठिन पड़ेगा।'

'इधर हम लोगों ने अत्याचारी निजाम को सदा के लिये दबा दिया है तो हैदरअली खड़ा हो रहा है।'

'इन सबसे बढकर एक अत्यन्त भयंकर शत्रु शीघ्र सामने आवेगा—अंगरेज। अंगरेज ने फ्रांसीसी को दबा दिया है, वह एक एक करके हम लोगों को समाप्त करने का प्रयत्न करेगा। अब्दाली इत्यादि की तरह की मूर्खता नहीं करेगा, क्रम क्रम से और शनैः शनैः फैलेगा। देखिये न, काका राघोबा इस जाति के लोगों से प्रायः मिलने लगे हैं। अपना कुछ स्वार्थ बनाने के लिये।

'काका राघोबा की कुनीति और भ्रष्टता को मैं जानता हूँ। अवसर मिलते ही मैं उनको ठीक भी करूँगा। ऐसे स्वार्थी और देश-द्रोही सरदारों से लदा हुआ महाराष्ट्र मेरे लिये सबसे बड़ी समस्या है।'

'श्रीमन्त ने, वसीन के सूबेदार को किसानों से बेगार कराने के अपराध में जब से जायदाद जब्ती इत्यादि का कठोर दण्ड दिया है, तब से इस प्रकार के अन्य सरदार भयभीत तो हो उठे हैं।'

'सिन्धिया! मैं चाहता हूं राज्य करने वाले, राज्य को ईश्वर की धरोहर समझें। राम शास्त्री गुरु को देखो।'

मेरा दृढ़ विश्वास है कि यदि जनता के नायक अपनी अपनी जागीर और रियासत स्थापित करने की लालसा का त्याग कर दें तो पूरे भारत को हम छत्रपति शिवाजी की देन दे सकते हैं।'

'उपाय करो, मुझे तुमसे आशा है। तुम्हारी योजना सफल बनाने के लिये जागीर मैंने पूरी की पूरी तुम्हें दे ही दी है।'

'हां श्रीमन्त, वह धरोहर है।'

'चाहता हूँ कर्तव्यपालन में पूरी तौर पर दृढ़ रहो। मल्हार बूढ़ा हो गया है। उसके कोई सन्तान नहीं उसका प्रधान अफसर तुकोजी कुल-संकल्प तो जान पड़ता है।'

'हां श्रीमन्त अच्छा सेना नायक है। मानव भी अच्छा निकले तो परम हर्ष होगा।'

'मुझे कुछ सन्देह है—वह नजीब रहने से मिला हुआ है और मन ही मन जाट राजाओं के विरुद्ध है। तुमको इससे सावधान रहना पड़ेगा।'

'हम सब का परम शत्रु नजीब इसी समय कुचला जा सकता है यदि मराठे, जाट और राजपूत आपस में न लड़ें, और, सिक्खों की थोड़ी-सी भी सहायता कर दें। सिक्ख अब्दाली का निरन्तर सामना करते रहे हैं और इस समय बराबर नजीब के घोर त्रास का कारण बने हुये हैं। परन्तु जयपुर का राजा माधवसिंह हम लोगों के विरुद्ध कभी नजीब का साथ पकड़ने का प्रबन्ध रचता है, कभी भरतपुर के राजा को उकसाता

है और राजपूताने के सम्पूर्ण राजाओं का संघ बनाकर हम लोगों पर आघात करना चाहता है।'

'क्योंकि राजपूत राजाओं के वंश बहुत पुराने हैं। इन पुराने खंडहलों की ओर बार बार उनकी दृष्टि जाती है। ये पुराने खंडहल हमारे प्राण खाये जा रहे हैं। ये इतने ऊबड़-खाबड़ हैं कि इनका गिराना दूभर और उन पर कोई भी नया भवन खड़ा करना दुष्कर है।'

(६३)

नजीब अपनी सक्रियता और महत्वाकांक्षा में दृढ़ था। उसने अपने को दिल्ली का बादशाह घोषित किये बिना ही बादशाहत ले ली। सूरजमल को उससे टक्कर लेना अनिवार्य हो गया। वह नजीब से लड़ा। जाट संग्राम में विजयी होने को ही थे कि सूरजमल गोली से मारा गया और जाट मैदान से हट आये। मरने के पहले सूरजमल ने जवाहरसिंह को मेवात जागीर में लगा दिया था। मेवाती युगों से ठगी डकैती के लिये कुख्यात थे। जवाहरसिंह उनके दमन में लगा रहा। पिता की मृत्यु के उपरान्त गद्दी के लिये उसके भाई नाहरसिंह से झगड़ा हो गया। नाहरसिंह साधारण सी लड़ाई के बाद अपनी पत्नी के साथ, जो एक विख्यात सुन्दरी थी, जयपुर के राजा के राजा माधवसिंह की शरण में चला गया।

माधवसिंह ने नजीब के सहयोग से नाहरसिंह को सहायता देने का वचन दिया।

नजीब को सिक्खों और जाटों के विरुद्ध राजपूत सहायता की आवश्यकता थी। वह उसे माधवसिंह से मिली, परन्तु सिक्खों को ये सब मिलकर भी नहीं दबा सकते थे। पानीपत की लड़ाई के तीन वर्ष पीछे ही सिक्खों ने अब्दाली को एक विशाल सेना को खुली लड़ाई में बुरी तरह हराया। अब्दाली पानीपत के धोखे में था।

अब्दाली ने इस लड़ाई के पहले सिक्खों के साथ घोर अत्याचार किये थे। सिक्खों ने विकट बदला लिया, परन्तु स्त्रियों बालकों के साथ अत्याचार नहीं किये।

हिन्दुस्थान में इस प्रकार की प्रतिहिंसा पहली ही बार हुई थी। अब्दाली और नजीब चौंके। अब्दाली ने सोचा पञ्जाब पर अफगानी हुकूमत असम्भव है। नजीब के ध्यान में आया यदि सिक्ख, जाट और मराठे मिल गये तो रुहेले हिन्दुस्थान के एक खण्ड पर भी राज्य नहीं

कर सकेंगे। उसके ध्यान में यह भी आगया कि मन्दिरों का तोड़ना-फोड़ना, कैदियों का वध करना और स्त्री बालकों का गुलाम बनाना अब लाभदायक व्यवसाय नहीं रहेगा।

नजीब, अपनी स्थिति दृढ़ करने के लिये शाहआलम के पास लखनऊ आया जो शुजा के आश्रय में था। नजीब का विचार शाह आलम को दिल्ली लाने का था, परन्तु उसके सुन्नी और शुजा के शिया सिपाहियों में फिर दगा हो गया। खुली लड़ाई की नौबत आई। नजीब लौट आया।

मरने से पहले सूरजमल ने निचले दुआब के उस प्रदेश पर आक्रमण किया और अपने हाथ में कर लिया था जो पानीपत के युद्ध के पहले मराठों की जागीर में था और जिस पर इस समय कुछ रुहेले—पठान सरदारों ने अधिकार कर लिया था। मराठों को, विशेषकर होलकर को यह खटका। परन्तु सूरजमल के देहान्त पर जवाहरसिंह ने होलकर को मिला लेने का प्रयत्न किया। उसको नजीब से अपने पिता के वध का बदला लेना था। उसके पास सूरजमल के तैयार किये हुये पन्द्रह सहस्र सवार और पचीस सहस्र पैदल थे। जवाहरसिंह ने पन्द्रह सहस्र सिक्खों को और मल्हारराव होलकर की बीस सहस्र सेना को, रुपये के बदले में, सहायता देने के लिये सहयोगी बनाया और दिल्ली पर आक्रमण कर दिया।

मल्हारराव ने आक्रमण की योजना का ब्योरेवार हाल 'अपने गोद लिये लड़के' नजीब को पहले ही लिख भेजा था! मल्हारराव ने नजीब से काफी रुपया पाया!! नजीब को जयपुर के माधवसिंह की सहानुभूति तो प्राप्त थी ही।

जवाहर के साथ शिहाबुद्दीन भी दिल्ली गया। अपने हरम को भी साथ ले गया।

परन्तु इतनी बड़ी सेना और जवाहरसिंह के ऐसे संगियों से नजीब को कुछ भय नहीं था। सूरजमल के मरने के बाद जाट सरदारों में

असीम वैमनस्य उमड़ पड़ा था। सूरजमल के पिता को सुन्दरियों से अपना महल भरने का बड़ा व्यसन था। पुत्र भी इतने उत्पन्न हुये थे कि वह उनमें से अनेक के नाम तक न जानता था! इन सबको छोटी मोटी जागीरें लगादी गई थीं। जागीर के गाव और अपनी माता के नाम से जब पुत्र परिचय देता था तब बाप उनको चीन्ह पाता था!! ये सब सूरजमल के भाई होते थे और जवाहर सिंह के असह्य चाचे। उस पर जवाहर को अपने भाई नाहरसिंह और उसके आश्रयदाता जयपुर-नरेश माधवसिंह का भी खुटका था।

परन्तु सफलता का क्षीण विश्वास होते हुये भी किसी भी महत्वाकांक्षा की प्रचण्ड आंधी मे उड पड़ना उसके स्वभाव मे था।

शिहाब का साथ उसे बड़ी आशा दे रहा था। यह न जानता था कि शिहाब की कतरनी अलग चल रही है!

(६४)

रात तो भीगी भीगी रहती ही थी दिन भी कुछ भीना-सा लगने लगा। धूप की प्रखरता कम हो गई। वायु की ठंडी हिलोड़ों पर उसका प्रभाव नहीं पड़ रहा था।

जवाहरसिंह ने दिल्ली पर घेरा डाल दिया था। युद्ध चल रहा था।

जवाहरसिंह की रावटी से थोडी दूर हटकर शिहाबुद्दीन का डेरा, था। शिहाब दिल्ली के पूर्वोत्तर से लूटमार करके लौटा था। जवाहरसिंह के डेरे पर आया।

उसने जवाहरसिंह से कहा, 'नजीब के होश जल्दी ठिकाने लगे जाते हैं। आपके सिपाही, मेरे सिपाही और मराठे जुट पड़े हैं।'

जवाहरसिंह उस समय कुछ सन्देह-मग्न था। बोला, 'मीर साहब, होलकर लड़ाई को बरकाता बचाता हुआ-सा चला रहा है। मैं उससे जिस तरफ से लड़ने को कहता हूँ लड़ता ही नहीं है।'

'बुड्ढा हो गया है, लेकिन है अब भी बडी दम वाला।' शिहाब ने टटोलती निगाहो कहा, 'वह अपने यहा नजीब के काइयाँपने का पूरा जवाब है। जो कुछ कर रहा है सरफ कर ही कर रहा होगा।'

जवाहरसिंह खिसया कर बोला, 'मेरी समझ मे उसका कतर-ब्योंत नहीं आ रहा है। मैं तो यहां यह सोचकर आया था कि दिल्ली के किले को दस पाच दिन में समाप्त कर दूँगा, पर लड़ाई खिचती हुई सी दिखती है।'

शिहाब ने जवाहरसिंह की आशा को उत्तेजित किया, 'देर सवेर दिल्ली हाथ लगेगी ही। कितना अटूट खजाना दिल्ली के महलों में है! अबकी बार इस बादशाह को भी खतम करके किसी ऐसे को बिठलायेंगे दिल्ली के तख्त पर जो गाठ की कुछ अक्ल रखता हो और हम लोगों के कहने मे चलता रहे।'

जवाहरसिंह की उदासी थोड़ी सी कम हुई। बोला, 'आपके ही दबाने पर मैंने ऐसे समय में दिल्ली पर हल्ला बोला है जब मेरे कुछ जाट भाई बगावत कर बैठे हैं। पिता के वध का बदला नजीब से लेना है, चार छः महीने बाद भी लिया जा सकता था, पर मैं आपके कहने से जल्दी कर गया। अब तो, कैसे भी हो, नजीब से निबटना है।'

शराब मँगवाई गई। दोनों पीते थे। पीने लगे।

शिहाब ने कहा, 'दिल्ली के महलों में अटूट खजाने के अलावा आपके हमारे लायक कुछ और भी है।'

जवाहरसिंह की आशा किसी मनोहर धुँधले स्वप्न की तरह मन को जगाने लगी। उसने पूछा, 'आप तो कुछ पहेली सी बूझ रहे हैं, मीर साहब। साफ साफ कहिये तो कुछ समझ में आवे।'

शिहाब ने आंख मटकाते उत्तर दिया, 'जेबुन—जेबुन्निसा। बादशाह शाहआलम सानी की निज भतीजी। जैसे पूनों का चांद जमीन पर उतर आया हो। बड़ी बड़ी आंखें। बहुत भोली भाली। बहुत ही प्यार करने काबिल—शिहाब ने प्याले की चुस्की ली।

चुस्की लेते हुये जवाहर ने दूसरा प्रश्न किया, 'क्या आपने देखी है?' और उसका ध्यान तुरन्त पन्ना बेगम के महा-मोहक सौन्दर्य पर गया।

साथ ही तीसरा प्रश्न किया, 'क्या सचमुच ऐसी है जैसी और कोई भी दुनियां में न हो?'

. शिहाब ने उत्तर दिया, 'आपके पहले सवाल का जवाब यह है कि मैंने देखा है। बहुत दिन नहीं हुये जब देखा था। अपने एक ख्वाजा से उसके आजकल के हुस्न की तारीफ सुनी। मेरा ख्वाजा कभी झूठ नहीं बोलता है। आपके दूसरे सवाल का जवाब देने के पहले पूछना चाहता हूं कि आपने कभी कोई ऐसी शकल देखी है जिसके सामने आप सारी शक्लों को हेच या मामूली समझते हों?'

चुस्कियां लेते लेते बातें चल पड़ीं।

जवारसिंह ने मुस्कराते हुये कहा, 'देखी हैं। अनेकों देखी हैं।'

'हिन्दुओ मे या मुसलमानो मे ?'

'दोनो मे।'

'जरा मुझे भी बतलाइये। नाम, गाँव, पता ठिकाना—'

'आप जान कर क्या करेंगे ?'

'यो ही। कौन है ?'

'मेरी एक नातेदार।'

'प्रेम के उस देवता के नाम पर फूल चढा कर मन को मना लूंगा। उसका नाम तो बतलाइये।'

शराब का दौर और चला।

'मेरे भाई नाहरसिंह की पत्नी जो इस समय राजा माधवसिंह के यहा अतिथि है।'

'इनके नाम पर मैं फूल चढाऊँगा और चाहूगा कि वह आपकी जिन्दगी को सुख चैन दें।'

कुछ समय उपरान्त शिहाब चला गया।

(६५)

नजीबखां चतुर सेनानायक था। दिल्ली के घेरे का सामना डटकर करता रहा। घेरा पड़ते ही अहमदशाह अब्दाली को फिर आग्रह पूर्वक निमन्त्रण दिया। सिक्खों के उत्थान के कारण अब्दाली का लाहौर वाला मार्ग निरुद्ध हो गया था, क्योंकि लाहौर को सिक्खों ने अपने अधिकार में कर लिया था। परन्तु कश्मीर को अब्दाली ने दबा लिया था; जम्मू का मार्ग खुला था।

मल्हारराव होलकर नजीब से मिला हुआ था ही। सिहाव को उसने वजीर मान लेने का बार बार वचन दिया, क्योंकि शुजाउद्दौल वजीर बनाया नहीं जा सकता था। उससे झगड़ा हो चुका था।

लड़ाई को कई महीने हो चुके थे। उसकी समाप्ति जवाहरसिंह को दृष्टिगोचर नहीं हो रही थी। उसे अपने विद्रोही सरदारों को दबाना था और जयपुर राज्य पर भी चढ़ाई करनी थी।

ठण्ड कठोर थी। सिहाव ने उस दिन कुछ ज्यादा पी डाली थी, परन्तु वह अचेत नहीं था। वह उन पीने वालों में से था जो बहुत ज्यादा पीकर भी चेत पूरा नहीं खो बैठते। उस समय स्वप्नागार वाले तम्बू में उम्दा बेगम के साथ गन्ना भी थी।

उम्दा बेगम पुरुषों का सा स्वभाव बनाते बनाते पुरुष जैसी हो गई थी। चेहरे पर पुरुषों जैसा आतङ्क, आंखों में वैसी ही संकोचहीनता, कण्ठ किंचित कर्कश और बर्ताव में निर्भीकता। उसका विश्वास था कि चेहरा भी पुरुषों जैसा रोबीला हो गया है।

गन्ना का सौन्दर्य और भी अधिक मादक हो गया था। वह अधिक सतर्क हो गई थी, और उसके चेहरे पर मुस्कान और हृदय में संगीत मानो सदा ही कलोल करते रहते थे।

सिहाब का ध्यान उस मुस्कान की ओर नहीं गया, और हृदय के संगीत को न तो वह जानता था और न समझता था। आते ही बोला,

'आपको दिल्ली का महल जल्दी मिलेगा। इन तम्बुओं की तकलीफों को सहते सहते नाकों दम आ गया होगा।'

उम्दा बेगम ने झटका सा दिया,—'लड़ाई तो खतम होती नजर नहीं आ रही है, आप लगे महलो के सपने देखने।'

'जल्दी टूटेगी।' शिहाब ने कहा, 'जवाहरसिंह को अपने जाट सरदारों के दबाने की जल्दी पड रही है और उससे भी ज्यादा उनका जी चाह रहा है जयपुर पर धावा बोलने का। जानती हैं क्यों?'

'मुझे क्या मालूम।' उम्दा उपेक्षा के साथ बोली।

गन्ना ने साथ दिया, 'इसमे क्या तुक है? एक झगड़ा टूटा नही दूसरा सिर पर लेने को तैयार!'

शिहाब ने तुरन्त कहा, 'अरे भाई जवाहरसिंह को राज की भूख है और खूबसूरत औरतो की प्यास। जयपुर मे उसके भाई नाहरसिंह की रानी जो है। कहते थे उसके बराबर दुनिया मे कोई और औरत हसीन है ही नही। गोया आप लोगो से भी बढ़कर! गन्ना बेगम ऐसी बात को सुनकर सह नही सकती। क्या वह इनसे भी बढकर खूबसूरत होगी?'

शिहाब गन्ना की ओर देखने लगा। गन्ना लाल पड़ गई। उसने अपना मुंह दूसरी ओर कर लिया। मुस्कान ने बिदा ले ली। हृदय में एक वेदना हुई। उसने लाज की ओट में उस वेदना को छिपा लिया।

उम्दा बेगम ने उसकी सहायता की। बोली, 'आप यों ही गन्ना को और मुझको सताया करते हैं। मेरा नाम न लेकर आपने गन्ना को सरोंचा। असल में मेरे ऊपर हमला किया है। मगर खैर जाने दीजिये इन बातों को। मुएँ जवाहरसिंह की इन बातों से हम लोगो को कोई मतलब नहीं। हमें तो यह बतलाइये कि महलों में पहुँचने की बात आपने कैसे की?'

शिहाब ने गन्ना पर से अपनी दृष्टि हटा ली थी। उत्तर दिया, 'शुजा दिया है, उसे वजीर कबूल करने के लिये यहां कोई तैयार नहीं है। नजीब मजबूर होकर मुझे वजीर मानने के लिये तैयार है। होलकर की बीस

हजार मराठा फौज जवाहरसिंह के खिलाफ होकर नजीब से मिल जायगी।'

गन्ना के मुह से अचानक 'ओफ !' निकल पड़ा।

शिहाब ने जरा चौंककर पूछा, 'क्या बात है ?'

गन्ना ने अपने को सभाल लिया। परन्तु उसके गले मे कम्प बना रहा। कांपते हुये स्वर मे उसने उत्तर दिया, 'मैं सोच रही थी अगर मराठे नजीब की तरफ होकर आपसे लड़ने लगे तो हम लोग मुश्किल में पड़ जायेंगे।'

उम्दा बेगम ने सकारा,—'और फिर यह शैतान नजीब आपके हरम की तीसरी वार बेइज्जती करेगा। मैं तो यह खबर सुनकर काँप उठी हू। मैं मर्दों जैसा हौसला रखती हूं, लेकिन बिचारी गन्ना तो औरत तबियत की ठहरी, इसलिये बहुत डर गई है।'

अब शिहाब का नशा कम हुआ। आश्वासन देता हुआ कह गया, 'मेरा और मल्हारराव होलकर का भी काफी मेल हो गया है। मल्हारराव ने नजीब से लिख पढ कर सब तै कर लिया है। बड़ी बड़ी कसमे हो चुकी हैं। नजीब बदल नहीं सकता, मराठे और इर्द-गिर्द के मेवाती जो मेरे साथ हैं।'

गन्ना ने पूछा, 'वह लंगड़ा मराठा सरदार कहां है, जिसको देखने आप उस दिन गये थे जब वह पानीपत से घायल लौटा था और जिसको आपने पानीपत की लड़ाई के पहले मथुरा में दावत दी थी।'

'मुझे याद है।' शिहाब ने अपना महत्व और ज्ञान प्रकट करते हुये उत्तर दिया, 'वह लगड़ा ! माधव उसका नाम है, पूना की ओर अपनी घरू उलझनों मे पड़ा हुआ है। पेशवा खुद अपने चाचा राघोबा के मारे परेशान है। इसलिये यहाँ होलकर ही सब कुछ कर सकते हैं।'

गन्ना ने साहस करके फिर पूछा, 'तो हम लोग महल में कब तक पहुंच जायेंगे ?'

शिहाब ने उत्तर दिया, 'तारीख तो कोई तै नही, मगर जल्दी एक आखीरी सदेसा नजीब जवाहरसिंह के पास भेजेगा कि समझौता करलो और अपने घर जाओ वरना लड़ाई बहुत सख्त कर दी जायगी।

उम्दा बेगम ने कहा, 'लिखा पढी भव हो गई है या नहीं, या आप कच्ची गोलियां खेल रहे हैं? ऐसा न हो कि फिर दिक्कत में पड़ जावें और पीछे पछताना पड़े। जवाहरसिंह से क्या कहेंगे? या उससे यह सब छिपाये रहेंगे?'

'थोड़ा-सा बतला दिया जायगा।' वह बोला, 'उससे कह दूगा कि मजबूरी है, मान जाओ और सुलह करलो। हम और वे दोनो, फिर भी दोस्त बने रहेंगे।'

'और अगर जवाहरसिंह ने न माना तो? सुना है जिद्दी हैं।' उम्दा बेगम ने कहा।

तुरन्त शिहाब ने अपना भाव प्रकट किया,—'तब मुझे होलकर का साथ देना पड़ेगा और मजबूर होकर नजीब की तरफ से जवाहरसिंह के खिलाफ लड़ना पड़ेगा। लेकिन शायद यह नौबत न आवे। जवाहरसिंह मेरी बात मान लेंगे।'

थोड़ी देर बाद शिहाब सोने के लिये अपने कक्ष में चला गया। उम्दा और गन्ना अकेली रह गईं। खुसफुस बातें होने लगी।

उम्दा ने कहा, 'तुम्हारा दिल बहुत गिरा हुआ दिखलाई पड़ रहा है। अगर तुमको मर्दानी पोशाक की आदत होती तो दिल तोड़ने की कोई बात ही न थी।'

'आप ठठोली करती हैं।' गन्ना ने प्रतिवाद किया।

'ठठोली नही करता हूँ—करती हूं मत कहो मेरी बेगम,—मर्द की पोशाक पहिन कर जाओ अपने जवाहरसिंह के पास और करदो उसे होशियार।'

'कैसे? क्यो कर? रास्ता तक नहीं मालूम, गैर मुमकिन है।'

'दिल वाले के लिये सब कुछ मुमकिन है। सुनो कान मे। तुम समझती हो मैं काट खाऊंगा। आओ पास।'

गन्ना उसके पास सिमट गई। उम्दा ने उसके कान मे कहा, 'जवाहरसिंह के साथ सिक्ख फौज भी है। तुम सिक्ख सरदार जैसे कपड़े पहिनकर जाओ। मैं अपने खास दो हिजड़े साथ किये देती हूं। उन्हे रास्ता मालूम है। उनका पूरा भरोसा किया जा सकता है। वे लोग भी सिक्ख बनकर जायेंगे।'

× × ×

कपाने वाली ठण्ड थी और रात भी बहुत ढल चुकी थी। जवाहरसिंह एक नींद लेकर जाग पड़ा था। था बिस्तरो मे परन्तु फिर से निद्रा नहीं आ रही थी।

पहरेदार ने सूचना दी, 'महाराज, तीन सिक्ख सरदार किसी बड़े आवश्यक काम से आये हैं। दर्शन करना चाहते हैं। सबेरे के लिये मिलने को कहा, परन्तु माने नहीं, हठ कर रहे हैं।'

जवाहरसिंह ने झल्लाकर कहा, 'सिक्ख सरदारों के मारे हैरान हूं। क्या चाहते हैं?'

पहरेदार ने निवेदन किया, उन्होने बतलाया नहीं। आज्ञा हो तो कल दिन मे आने के लिये कह दूं?'

'कह दो' जवाहरसिंह ने आज्ञा दी। फिर विचार बदलकर बोला, 'अच्छा भेज दो, परन्तु कह देना कि थोड़े मे अपनी बात सुना कर चले जायें।'

'जो आज्ञा' कह कर पहरेदार चला गया।

भीतर तीनों सिक्ख सरदार आ गये। जवाहरसिंह ने उनकी ओर जरा-सा देखकर बैठने के लिये संकेत किया। वे तीनो बराबरी से बैठ गये।

'क्या बात है?' धीमे स्वर में जवाहरसिंह ने पूछा।

तीन सरदारों में से दो सफेद दाढ़ी वाले थे और एक काली दाढ़ी वाला। सफेद दाढ़ी वाले ने उत्तर दिया, 'हमारे साथ जो यह सरदार है ये आपसे अकेले में एक बड़े मार्के की बात कहना चाहते हैं।'

जवाहरसिंह अपने हथियार बिस्तरों में ही रखता था। धीरे से उन पर उसका हाथ गया। फिर कुड़मुड़ाकर बैठ गया। उसने ध्यानपूर्वक उन तीनों सरदारों को देखा। काली दाढ़ी वाले की बड़ी बड़ी मस्त आंखों पर टक लगाई। पहिचानने की चेष्टा की। कुछ सादृश्य पाया, परन्तु उसने सादृश्य को अङ्गीकार नहीं किया। असम्भव उसने सोचा।

उससे जवाहर ने पूछा, 'आप अकेले में बात करना चाहते हैं?'

काली दाढ़ी वाले ने हामी का सिर हिलाया, मुँह से कहा कुछ नहीं।

जवाहरसिंह ने उसके साथियों से कहा, यदि ये अकेले में ही बात करना चाहते हैं तो आप लोग पहरे वालों के पास जाकर बैठ जाइये।'

वे दोनों बाहर चले गये।

जवाहरसिंह बोला, 'अब कहिये।'

बारीक स्वर में सरदार के मुंह से निकला, 'जी।' और वह जवाहरसिंह के पास आया। चारों ओर सतर्कता के साथ देखकर वह चकित जवाहरसिंह के बिस्तरों पर बैठ गया।

'आप बहुत सङ्कट में हैं,' मृदुल मनोहर स्वर में सरदार ने कहा।

सरदार की ढिठाई पर जवाहरसिंह चकित था और क्षुब्ध भी, पर, उसके मिठास ने क्षोभ बहा दिया और आश्चर्य बढ़ा दिया।

सरदार को बहुत ध्यानपूर्वक देखते हुये जवाहरसिंह ने पूछा, 'कौनसा संकट? कैसा संकट?'

उसी मधुर स्वर में उत्तर मिला, 'होलकर नजीब से मिल गया है। वजीर शिहाबुद्दीन भी। शर्तों की लिखा पढ़ी और शपथ सौगन्ध हो

चुकी है। होलकर को बहुत सा नकद रुपया दिया जायगा और शिहाबुद्दीन को वज़ीर का पक्का पद। आप से दो एक दिन में ही कहा जायगा कि घर वापिस जाइये। अगर आप न माने तो मल्हारराव होलकर और शिहाबुद्दीन नजीब का साथ देकर आपकी फौज पर छापा मारेंगे। यह है आपका संकट।'

मन मसोस कर जवाहरसिंह ने कहा, 'इन मराठों को मैं जान गया हूं। ये किसी के मीत नहीं होते हैं। इन्हें रुपया सबसे ज्यादा प्यारा होता है। परन्तु शिहाब ! ओफ शिहाब यह !! आस्तीन का साँप निकला !!! मेरा मन इस लड़ाई से वैसे ही उकता रहा है। अपने राज्य का प्रबन्ध करने जाना चाहता हूं। पर मन में कसक रह जायगी इस नजीब को दण्ड न दे पाया—'

टोक कर सरदार बोला, 'कसक को जयपुर में जाकर मिटा लीजिये।'

'तुम्हारा क्या मतलब सरदार जी?' चौंककर जवाहरसिंह ने पूछा। मन उसका सवेदना मथित रहता था, सक्की-सा और वास्तव में ईर्ष्यापूर्ण। उत्तर मिलने से पहले ही बोला, 'जयपुर के राजा ने मेरे विरुद्ध बहुत षड्यन्त्र रोप रखा है। उसको बहुत जल्दी ठिकाने लगाना है।'

सरदार ने कहा, 'जयपुर के राजा ने कुछ और भी तो रोप रखा है अपने यहां।'

जवाहरसिंह के मन में एक कुलबुलाहट सी हुई। सोचा यह सरदार कुछ जरूरत से ज्यादा बातें जानता है, कौन है यह?

'आप कौन हैं पहले यह बतलाइये? जयपुर के राजा ने और क्या रोप रखा है?' जवाहरसिंह बोला।

सरदार ने अपनी मद भरी आंखों को नीचे किये बिना ही उत्तर दिया, 'संसार का सबसे अधिक आकर्षक पौधा! सबसे अधिक सुन्दर फूल!! हुस्न का खजाना!!!'

सरदार खड़ा हो गया। एक हाथ और एक टांग से निर्बल होते हुये भी जवाहरसिंह बहुत सशक्त और बड़ा फुर्तीला था। बिस्तरों में से उछलकर सरदार के पास आ खड़ा हुआ।

'क्या कहा आपने ?' जवाहरसिंह ने प्रश्न किया।

सरदार ने एक हाथ से साफा और दूसरे से दाढ़ी उतार कर रख दी।

'मैं क्या गलत कहती हूँ ?' सरदार रूपी गन्ना बेगम ने सवाल किया।

'प्यारी गन्ना !' जवाहर के कम्पित कण्ठ से निकला, और वह गन्ना को बाहों मे समेट लेने के लिये बढ़ा। गन्ना पीछे हट गई।

निवारण करती हुई बोली, 'इतना घोर मत करिये। ठहरिये। मुझे धोखे में मत डालिये। समझ लूंगी दुनिया भर के पुरुष सब एक से ही होते हैं।'

जवाहरसिंह सन्न-सा रह गया। परन्तु वह देर तक इस अवस्था में रहने वाला मनुष्य न था। 'मुझे बचाने आई हो या मारने ?' उसने पूछा।

गन्ना ने कहा, 'अपने दिल से पूछिये।'

'मैं बड़ी से बड़ी और बुरी से बुरी सौगन्ध खाता हूँ।' जवाहरसिंह झूठ बोला, 'तुमसे बढ़कर इस ससार मे मैं किसी दूसरे को नहीं चाहता। न मालूम तुम्हारे मन मे इस तरह का सन्देह कैसे आ बैठा है !'

गन्ना को शिहाब के झूठे, छलपूर्ण और भ्रष्ट व्यवहार स्मरण हो आये। उसने जवाहरसिंह के कथन का विश्वास किया। लजाते हुये शिथिल स्वर में कहा, 'सुना था जयपुर में आपकी कोई नातेदार हैं जिन पर आप रीझ गये हैं और उन्ही के पाने के लिये जयपुर से तकरार करना चाहते हैं।'

जवाहरसिंह ने दृढ़ता के साथ आश्वासन दिया, 'तुम से किसी ने गलत कहा है। तुम्हारा बिलकुल भ्रम है। जयपुर के राजा ने मेरे खिलाफ षड्यन्त्र रच रखे हैं। इसलिये मुझे जयपुर से लड़ना है।'

गन्ना ने बड़े दुलार के साथ मधुर स्वर मे कहा, 'तो क्या आप मुझे क्षमा कर देंगे ?'

'मैं क्षमा करूँगा !' जवाहरसिंह बोला, 'अपने बचाने वाले को क्षमा दूँ या क्या दूँ समझ में नहीं आता, पर यह तो बतलाइये ये सब खबरें आपको कहां से मिली ?'

उसी स्वर में गन्ना ने मुस्कराते हुये, थोड़ा-सा पीछे हटते हुये उत्तर दिया, 'और कहां से मिलतीं ? बशीर ने उम्दा बेगम को सब बातें बतलाई थीं। मैंने खुद सुनी।'

'और जयपुर वाली गलत बात ?'

'हरम के एक हिजड़े से।'

'हरम मे हिजड़े ही हिजड़े तो भरे हैं।'

वे दनों हँस पड़े।

गन्ना ने अनुरोध किया, 'अब मुझे जाने दीजिये, रात बहुत जा चुकी है।'

जवाहरसिंह ने नाहीं का सिर हिलाते हुये पूछा, 'साथ में ये कौन से सरदार लोग हैं ?'

गन्ना ने उत्तर दिया, 'विश्वास वाले हिजड़े।'

'हिजड़ों का क्या डर ?' जवाहर ने कहा और हँस पड़ा। बोला, 'कितने दिनों बाद आज मिल पाये हैं ! अभी नहीं जाने दूगा।'

'इसमें मेरा क्या कसूर ?' गन्ना ने कहा, आप मुझसे भी ज्यादा उस बदसूरत पर लट्टू रहते हैं जिसका नाम है लड़ाई। मैं आपका पता कहां कहां लगती फिरूँ ?'

जवाहरसिंह बोला, 'मैं लड़ाई के पास आपसे पूछकर जाना चाहता हूँ, लेकिन आपके दर्शन हो तब तो।'

गन्ना प्रात: के पूर्व ही अपने स्थान पर पहुँच गई।

(६६)

कुछ ही दिन पीछे जवाहरसिंह को नजीब का सन्धि-सन्देश मिला। उसमें कोई भी ऐसी शर्त नहीं थी जिसमें जवाहरसिंह को किसी प्रकार का भी लाभ, गौरव या मान मिलता हो। परन्तु उसे गंगा बेगम का बतलाया हुआ रहस्य मालूम था। इस युद्ध में उसका डेढ़ करोड़ के लगभग रुपया बिगड़ चुका था। बहुत से सैनिक मारे गये थे। अब सर्वनाश की आशङ्का थी, इसलिये उसने सब शर्तें स्वीकार कर लीं।

नजीब ने शिहाब का आदर सम्मान किया और होलकर की खातिर दारी में तो मानो अपना सिर तक डुबो दिया। जवाहरसिंह नजीब का साधारण शिष्टाचार और मराठा नाम तक के प्रति घोर घृणा लेकर दिल्ली से अपने घर चला आया और अपने विद्रोही सरदारों के दमन में लग गया।

दिल्ली की मुसलमान जनता, विशेषकर शाहवली के अनुयाइयों को, शिहाब के स्मरण मात्र से परहेज था। शाहवली का दो तीन वर्ष पहले देहान्त हो चुका था। जवान अब्दुल अजीज, जो शाहवली का प्रधान शिष्य था; शाहवली के शासन, आदर्श और असख्य चेलों का अधिकारी हुआ। शाह अब्दुल अजीज ने शिहाब के विरोध में प्रबल प्रदर्शन किया। इसमें नजीब का उसे प्रोत्साहन प्राप्त था।

शिहाब इस शोरे से न घबराता, परन्तु नजीब ने इस प्रदर्शन को एक बड़ा प्राण दिया—ज़ोर के साथ समाचार फैलाया कि अहमदशाह अब्दाली बहुत बड़ा कटक लेकर काश्मीर के मार्ग से आ रहा है!

मल्हारराव ने कूच कर दिया—काफ़ी रुपये मिल चुके थे। वह इन्दौर में राज्य स्थापित करना चाहता था। इस महत्वाकांक्षा के लिये उत्तर के एक बड़े मुसलमान सरदार की उसको पूरी सहानुभूति मिल गई थी। शिहाब ने भरतपुर-राज्यान्तर्गत डीग के किले में अपने हरम को भेज दिया और कुछ समय उपरान्त दिल्ली छोड़कर स्वयं भी चला गया।

नजीब को बादशाह के नाम पर दिल्ली का शासन चलाने की निर्बाध सुविधा मिल गई। केवल एक कांटा था—सिख। इसे कभी न निकाल पाया। वह उसे सालता रहा और उसके शरीर को अन्त अन्त तक सड़ता रहा।

दिल्ली को बङ्गाल बिहार की वसूली की आशा सदा लगी रहती थी। कुछ दिन पहले बक्सर की लड़ाई में अवध और बंगाल के नवाबों की फौजें अङ्गरेजों से हार गई थीं। इन नवाबों के साथ शाहआलम बादशाह भी था। अंगरेजों ने एक ही हथकंडे में बंगाल बिहार की दीवानी का अधिकार और इलाहाबाद प्रदेश का एक खंड शाहआलम से ले लिया। अगरेजों से कुछ रुपया शाहआलम को मिल सकता था, परन्तु नजीब उसमें से कुछ नहीं पा सकता था। इसलिये नजीब ने अपना ध्यान दिल्ली के आसपास के उस क्षेत्र पर जमाया जो बादशाह का खालसा—निजी इलाका—कहलाता था। इसमें से गुजर भर के लिये दिल्ली-स्थित शाही कुटुम्ब वालों के लिये, बाकी सब नजीब की जेब में।

(६७)

'मेरी गन्ना तुम कितनी भली हो ! क्या तुम मुझे क्षमा न करोगी ? उपाय करने पर भी मैं तुमसे इतने दिनों बाद मिल पाया हूँ।' जवाहरसिंह ने डीग के एक अंधेरे कमरे मे गन्ना के पास आते ही कहा।

'शिकायत करने के लिये आप गुञ्जाइश ही नहीं मिलने देते।' गन्ना बोली, 'ये महीने मेरे लिये बरसो के बराबर गुजरे हैं। चिट्ठी भेज नही सकती थी। खबर पर खबर आदमियो के हाथ भेजी। जब सुनूँ तब वही पुरानी बात, आज इससे लड रहे है, कल उसको सजा दे रहे हैं। आखिर मैंने आपका क्या बिगड़ा है जो एक बार दूर से ही दर्शन देने की कृपा नही की ?'

जवाहरसिंह ने गन्ना को फुसलाने का पूरा प्रयत्न किया। उसकी हर एक सांस में पुचकार थी और हर एक शब्द में प्यार। उसने कहा, 'तुमने यह भी तो सुना होगा कि मुझे परेशानियों के मारे दम मारने तक का समय नहीं मिला। मेरे भाई और ससार में सबसे बड़े वैरी नाहरसिंह ने धौलपुर अधिकार में कर लिया है। होलकर गोहद के राजा के ऊपर चढ़ बैठा जो मेरा मित्र और सहयोगी है। उसकी सहायता के लिये मुझे तुरन्त जाना चाहिये था और नाहरसिंह को धौलपुर से निकाल बाहर करना चाहिये था। परन्तु यहां के बागी सरदारो के कुचलने मे बहुत समय लग गया। अब होलकर और नाहरसिंह से जाकर निबटना है। न मालूम वहां कितना समय लग जाय, इसलिये आज किसी प्रकार अवसर निकाल कर तुमसे क्षमा मांगने आया हूँ।'

'तो फिर चल देंगे आप ?'

'क्या करूँ मेरे हृदय की रानी, नहीं जाता हूँ तो होलकर और नाहरसिंह अब भरतपुर और डीग पर चढ़ाई करेंगे। यहां के मेरे संबंधी-कुटुम्बी फिर उठ खड़े होंगे और तब मैं शायद कहीं का न रहूँ।'

'डीग, भरतपुर ग्रौर कुम्हेर के किलों को तो कोई भी नहीं जीत सकता। अपने इस डीग के किले की दीवारों की रत्ती रत्ती जगह पर तोपें लगी हुई हैं और भीतर अटूट गोलाबारूद और खाने पीने का सामान है। दुश्मन कर ही क्या सकता है ? यहीं होकर लड़िये, बाहर मत जाइये।'

'यह सब होते हुये भी डीग का मुझे भरोसा नहीं है।'

'क्यों मेरे महाराज ?'

'क्योंकि प्यारी गन्ना यह वजीर शिहाबुद्दीन होलकर से मिला हुआ है और किसी मौके पर भी डीग और उसके सामान को शत्रु के हाथ में सौंप सकता है।'

'आपने दिल्ली में कहा था 'हिजड़ों का क्या डर ? याद है ?'

जवाहरसिंह हँस पड़ा। बोला, 'तुम कवि हो तुम्हें बहुत याद रहता है।'

गन्ना ने धीमी हँसी के साथ तुरन्त कहा, और आपको सब बातों की याद दिलानी पड़ती है—यहां तक कि मुझे अपनी भी।'

'मैं चाहता हूं हमेशा साथ बनी रहो ताकि तुम हर घड़ी मुझे कुछ न कुछ याद कराती रहो।'

'क्या सचमुच ? मैं तो अभी तैयार हूँ। चलिये न।'

'चाहता तो मैं भी हूं। परन्तु लड़ाई से पहले निबट लेना चाहता हूं। बगल में मराठों और नाहरसिंह वाले कांटों के होते हुये चैन नहीं मिल सकता।'

'मेरे ख्याल में सब मराठे एक से नहीं होंगे। पूना को लिखा पढ़ी करिये। सुना करती हूं कि अब जो पेशवा हुआ है बड़ा समझदार और कड़ा आदमी है। उस लँगड़े सरदार का क्या हुआ ? वह तो अच्छा आदमी मालूम होता था।

'आपने देखा है ?'

'हां, हां, मथुरा में देखा था। उसकी कुछ बातें भी सुनी थीं। पक्के स्वभाव का जान पड़ा था मुझे तो वह। वहां भी देखा था जब वह घायल होकर आया।'

'देखूंगा। परन्तु दिल्ली की हानि, बदनामी और नजीब से बदला न ले पाने का पहला कारण और आजकल की विपत्ति का भी पहला कारण होलकर है, उसे मिटाये बिना मुझे चैन नहीं मिलेगा। इसके बाद नजीब को समझूंगा।'

'समझने के लिये फिर मैं बचूंगी अखीर में या यों ही?'

'गन्ना, मेरी बात तो पूरी सुनो। शिहाब ने मेरे साथ बड़ा घात किया है इसलिये उससे सचेत रहने की जरूरत है। मैं तुमको यहां से अभी बाहर ले जाकर कल ही शिहाब को पकड़ सकता हूं, पर मैं यह नहीं करूंगा। तुम एक काम मे सहायता करो तो बतलाऊं।'

'कहिये। मैंने आज तक कोई भी बात खाली डाली?'

'कभी नहीं। इसीलिये कहता हूं। मैं शिहाब को लिखकर भेजूंगा कि डीग को खाली करके चले जाओ। अपनी खास फौज चिट्ठी के साथ भेजूंगा। जब वह यहां से जायगा, रास्ते में से तुमको ले जाऊंगा। किसी को मालूम न पड़ेगा। बाप अब है नहीं जो वहां रोक टोक के लिये आ जाये।'

गन्ना सुनकर कुछ क्षण चुप रही। बोली, 'फिर कहीं कोई और उसी तरह की विपद हम लोगों के लिये पैदा न कर दे?' वैसे आपकी तरकीब अच्छी है। मैं अब एक पल भी आपसे जुदा नहीं रहना चाहती हूं। मालूम नहीं किस तरह वियोग के दुःख काटती रहती हूं। कब तक होगा वैसा?'

जवाहरसिंह ने कहा, 'होलकर और नाहरसिंह को धूल चटाने के बाद मुझे देर नहीं लगेगी। मेरे पास निज की काफी फौज है। सहायता के लिये सिक्खों के एक बड़े दल को बुलाऊंगा। फिरंगियों की भी कुछ

पल्टनें श्रा गई है मेरे हाथ में। होलकर को तुरन्त दण्ड देने का एक कारण और भी हो गया है—वह मेरे राज्य में लूटमार कर उठा है।'

'खैर; हामीं भरने के सिवाय और उपाय भी मेरे पास क्या है? जरा यह और बतला दीजिये कि अगर श्राप अपने गोरखधन्धे में ज्यादा देर के लिये उलझ गये तो मैं आ सकती हूं आपके पास या नही?'

'भूखा क्या चाहे पेट भर खाना। आप जरूर आयें मगर किसी दिक्कत में न पड़ जायें नहीं तो मेरे लिये सिवाय मर जाने के और कुछ नहीं रहेगा। मैं सौन्दर्य की पूजा के ही लिये तो जीवित हूं।'

'कवि कौन है,? मैं या आप!'

'अबकी बार मिलने पर साबित कर दूंगा कि कवि आप हैं, मैं तो कोरा योधा हूं।'

'तो अबकी बार मैं बाहर आकर मिली तो किसान के वेश में मिलूंगी।'

'नहीं, नहीं। उसी सरदार जी वाले वेश में।'

(६८)

लड़ पड़ने के पहले जवाहरसिंह ने पेशवा से होलकर की शिकायत की, परन्तु उसने पूना के उत्तर की प्रतीक्षा नहीं की।

उसने सपाटा भर के मल्हारराव और नाहरसिंह की संयुक्त सेनाओं का सामना किया और चम्बल की घाटियों में काफी नर-संहार के बाद उन दोनों को हरा दिया।

वहां से हटकर जवाहरसिंह अपने मित्र गोहद के राजा की सहायता के लिये जाना चाहता था, क्योंकि होलकर की कुछ सेना गोहद-राजा को अटकाये हुये थी।

पेशवा माधवराव रघुनाथराव-राघोबा-के षडयन्त्रों, कुकृत्यों और अनाचारों के मारे व्यस्त रहता था। उसने राघोबा को मल्हारराव-जवाहरसिंह वाली गुत्थी के सुलझाने के लिये पूना से शीघ्र भेजा। जवाहरसिंह वाली चिट्ठी पकर पेशवा ने माधव जी से कहा था, 'जिन जाटों ने पनीपत के दारुण दुख के उपरान्त मराठों की इतनी रक्षा की थी, उनके साथ यह मल्हारराव इस प्रकार का बर्ताव कर रहा है। तुम राघोबा के साथ जाओ और मेरे तथा अपने आदर्शों का पालन करो।'

'श्रीमन्त,' माधव जी ने उत्तर दिया, 'राघोबा दादा असंमय में बहुत काम लेते हैं। मुझको कुछ बाधा पड़ेगी।'

पेशवा—'तुम राघोबा के असंयम और अपनी बाधा—दोनों—का नियन्त्रण करना। तुम्हीं कर सकोगे। मैं जानता हूँ।'

माधव जी—'मुझको आपका सम्बल ही तो चाहिये।'

जिस समय जवाहरसिंह ने होलकर और नाहरसिंह की लड़ाई से निस्तार पाकर गोहद जाने का निश्चय किया था उसी समय उसने सुना कि एक बड़ी सेना के साथ पूना से रघुनाथराव आ गया है और वह भी गोहद पर आक्रमण करने की सोच रहा है।

रघुनाथराव को गोहद की ओर बढ़ने में देर लगी। जवाहरसिंह गोहद पहुँच गया और उसने उत्तरी मालवा के खंड पर आक्रमण कर दिया जो होलकर की जागीर में था।

परन्तु नाहरसिंह भरतपुर राज्य के जागीरदारों को जवाहरसिंह के विरुद्ध चिट्ठियां लिख-लिखकर बगावत के लिये उत्तेजित कर रहा था। उसे लौटना पड़ा। ज्ञात हुआ कि जागीरदारों के उकसाने में शिहाब का भी हाथ था। यह भी विदित हुआ कि शिहाब ने रघुनाथराव को दिल्ली पर आक्रमण करने के साथ ही भरतपुर के ऊपर भी आने के लिये न्योता दिया है। जवाहरसिंह ने क्रुद्ध होकर शिहाब को अपने एक सैन्यदल द्वारा आज्ञा भेजी, डीग को तुरन्त खाली करो। डीग के किलेदार को आदेश दिया कि शिहाब को अविलम्ब हटाने का प्रयत्न करे।

(६६)

आगे आगे हाथी । कुछ पर सामान लदा था । एक पर शिहाब । पीछे ऊँट । फिर पालकियां, पीनसें और रथ । इनके पीछे फिर कुछ हाथी । अगल-बगल सवार और पैदल सिपाही ।

पीनसों की भीड़ लगी थी । उनमें से एक में गन्ना जा रही थी और बिलकुल पास वाली में उम्दा । पीनसों के चारों तरफ ख्वाजों, हिजड़ों का पहरा लगा चला जा रहा था जो नङ्गी तलवारें लिये हुये थे ।

शिहाब डीग छोड़कर आगरा होता हुआ फर्रुखाबाद जा रहा था । कड़ी धूप और लू के दिन थे । रात की यात्रा में बहुत जोखिम था इसलिये थोड़ी-सी यात्रा सवेरे, दुपहरी में छाहं के नीचे विश्राम फिर सन्ध्या के पहले सुरक्षा के स्थान में बसेरा ।

डीग से दूर एक स्थान पर जहां वह छाहं बिलमा रहा था कई दिशाओं से यकायक आक्रमण हो गया । शिहाब को तैयार होने में देर नहीं लगी ।

शिहाब में अधिकारों की भूख प्यास, धन-लोभ और शारीरिक निर्बलता के साथ युद्ध का साहस भी था । अदूरदर्शी, विवेक भ्रष्ट, घमंडी परन्तु अपने हठ से न हटने वाला ।

उसने तुरन्त मोर्चा बांधकर आक्रमणकारियों का सामना किया

एक कनात के भीतर अन्य पीनसों के बीच में गन्ना और उम्दा बेगम की पीनसें बिलकुल पास पास लगी हुई थीं ।

उम्दा बेगम ने धीरे से गन्ना से पूछा, 'तैयार हो न? घड़ी आ गई है ।'

गन्ना ने धड़कते कलेजे से उत्तर दिया, 'तैयार हूं ।'

गन्ना एक बार अपने सामने परोसी हुई थाली का यकायक छीन लिया जाना देख चुकी थी, इसलिये वह आक्रमणकारियों की सफलता की कामना करती हुई भी निराशा से टकरा टकरा जा रही थी । मुंह सूख रहा था और बार बार पानी पी रही थी ।

थोड़ी देर युद्ध होने के बाद लगा मानो शिहाब की हार होती है और आक्रमणकारी लूटमार के लिये हरम में घुसने ही वाले हैं।

उम्दा और गन्ना ने अपनी पीनस के झरप द्वारों को खोल लिया। और मुँह उघाड़ कर बैठ गईं। पास नङ्गी तलवारें लिये हिजड़े पहरेदार और बहुत-सी सशस्त्र स्त्रियां भी।

लड़ाई हरम की कनात के बिलकुल निकट आ गई। एक ओर से कनात कट गई और कुछ जाट सिपाही हरम में आ घुसे। उनको घुसता देखकर कुछ हिजड़े उन पर लपके और कुछ भाग कर गन्ना और उम्दा की पीनसों के बिलकुल समीप आ गये। एक हिजड़े ने गन्ना को भाग का इशारा किया। गन्ना पीनस के जरा बाहर सिर निकाल कर देखने लगी। एक स्त्री अङ्गरक्षिका उम्दा बेगम के पास जा खड़ी हुई। कुछ जाट सिपाही और आ गये। स्त्री अङ्गरक्षिकायें उनसे भिड़ने लगीं, कुछ हिजड़े भी। घमासान हो पड़ा और दोनों ओर के लड़ाके हताहत होने लगे। एक स्त्री अंगरक्षिका के ऊपर जाट सिपाही की तलवार का वार पड़ा। वह कट गई और गिर गई। गिरने पर उसके माथे के बनावटी बाल भूमि पर बिखर गये और छाती पर से एक गेंद नीचे जा गिरी।

उसी समय शिहाब कुछ सैनिकों सहित हरम में आ गया। भीषण युद्ध हुआ। परिणाम का रूप बदल गया। कनात के भीतर आये हुये जाट सिपाही मारे गये। शिहाब ने हरम में से ही लड़ाई का परिचालन किया। आक्रमणकारी काफी संख्या में नहीं आये थे, इसलिये हार गये और लौट गये।

लड़ाई की गति बदलते ही शिहाब का ध्यान उस कटे हुये स्त्री-योधा की ओर गया जिसकी छाती से गेंद टपककर भूमि पर गिर गई थी। उसका वक्ष स्पष्ट प्रकट कर रहा था कि वह योधा स्त्री नहीं पुरुष है—स्त्री वेश-धारी पुरुष। शिहाब के साथी योधाओं ने भी देखा। लड़ाई के जीतने का जो हर्ष शिहाब को हुआ था वह लाज में डूबने लगा।

उसने अपने योधाओं को आज्ञा दी, 'पहरा बहुत कड़ा कर दो। न कोई भीतर से बाहर जाने पावे और न कोई बाहर का भीतर आने पावे।'

उसने पुरुषों को कनात के बाहर हटाकर हिजड़ों का पहरा लगवाया और प्रत्येक स्त्री अङ्गरक्षिका की तलाशी ली। एक जो उम्दा बेगम के पास खड़ी थी पहले पीली पड़ी और फिर पृथ्वी पर धम से जा रही।

उम्दा ने चिल्लाकर कहा, 'देखो तो यह कौन है?'

शिहाब का ध्यान गया। उसकी परीक्षा की गई तो वह पुरुष निकला! ऐसी कई अंगरक्षिकाएँ पुरुष निकल पड़ीं!

गन्ना अचेत नहीं हुई थी। पर पीली पड़ गई थी। वह सब देख सुन रही थी—समझ मे कुछ नहीं आ रहा था। एक बात अवश्य उसके चेत में स्पष्ट थी कि आक्रमणकारी जाट थे और वे हार कर लौट गये हैं।

उम्दा बेगम बिलकुल सचेत थी। उसने चिल्लाकर शिहाब से कहा, 'यह है आपका बन्दोबस्त! इतने मर्द, औरत बनकर कैसे हरम मे दाखिल हो गये?'

शिहाब का गला बैठा हुआ था। उसने उत्तर दिया, 'जांच पड़ताल करूँगा। इस वक्त तो इन सबको हाथी के पैर तले कुचलवाता हूँ।'

'जरूर।' कड़ककर उम्दा बेगम ने समर्थन किया।

गन्ना उम्दा की ओर केवल एक दबी आंख से देख सकी। फिर पीनस मे तड़पकर लेट गई।

शिहाब ने स्त्री वेशधारी सब पुरुषों को जो हरम के भीतर पकड़े गये थे हाथी के पैर तले कुचलवा डाला। फर्रुखाबाद पहुंच कर उसने हरम का कठोर नियन्त्रण आरम्भ कर दिया, परन्तु हिजड़े वे ही न रहे।

फर्रुखाबाद पहुंचते ही उम्दा ने गन्ना से कहा, 'अब?'

गन्ना बोली, 'अब और रहा ही क्या है?'

'मैं वजीर का होश ठिकाने लगाऊँगी।'

'मैं जिन्दगी भर उस दिन की लड़ाई नहीं भूलूंगी। मुझे उस दिन से किसी भी बसेरे में नींद नहीं आई।'

'तुम्हारा दिल बहुत कमजोर है। जरा हिम्मत करो।'

'आपका सा दिल कहां से लाऊँ? वे बिचारे कितने मुफ्त में मारे गये।'

'वे न मारे जाते तो हम तुम कतल कर दिये जाते।'

'अब तो मेरी अकल बिलकुल काम नहीं करती।'

'न कभी करेगी। शायद हो न। बिलकुल बेवकूफ।'

'तो बतलाइये क्या करूँ?'

'तुम मेरे लिये यहां एक अलग मुसीबत हो। मैं अकेली रह जाऊँ तो बहुत कुछ कर गुजरूँ। तुम यहाँ से टलो।'

'कैसे?'

'कैसे! जैसा तुम्हारा सिर। ऐसे कई हिजड़े अपने कब्जे में हैं जो अपना सिर तो दे देंगे, मगर हमारे साथ बेवफाई नहीं करेंगे।'

'मैं समझी नहीं।'

'समझा दूँगी। अभी आराम करो। वजीर आयेगा। उन सौदों की बाबत कुछ भी पूछे किसी तरह का भी भेद मत देना। मुझे तुम्हारी कमजोरी का बहुत डर है।'

'कोई भेद नहीं दूँगी। और असल में मुझे मालूम भी तो कुछ नहीं है।'

'यानी अगर मालूम होता तो बतला भी देती?'

'इतनी कमजोर तो नहीं हूँ।'

'मैं दिल से चाहती हूं कि तुम यहां से टल जाओ। अब तुम्हारे यहां रहने से सिवाय नुकसान के कोई फायदा नहीं।'

'पर टलूं कैसे?'

'मेरी हिम्मत से काम लो। यहां से खिसक जाओ

(७०)

उतरते जेठ का महीना था। भाडेर की पहाड़िया दिन भर तपी थी। सोन तलैया वाली पहाडी से सट कर बहने वाली पहूज नदी में पानी की एक क्षीण रेखा भर थी जो दूर दूर और फैले फूटे छोटे बड़े डाबरो मे होकर गई थी। पहूज नदी के पूर्वीय तटवर्ती भरकों से लगा हुआ दुर्गा देवी का पर्वत, निकट वाले जगल के पवन से, अपनी सेंक को बुझा रहा था। भाडेर की बस्ती भी, रात बीत जाने पर, उस गरमी में थोड़ी-सी कमी पाने लगी थी, परन्तु बस्ती के ऊपर सिर उठाये हुये पहाडी की चोटी और चोटी पर फैली हुई सोन तलैया दिन भर की लू के ताप को झाड पोछ चुकी थी। सोन तलैया के ऊपर एक मन्दिर था और यात्रियो के ठहरने के लिये कुछ घर। इन घरों के सामने और बगल में मराठा सेनापति रघुनाथराव और उपनायक माधव जी सिंधिया के तम्बू तने हुये थे। पहाडी के नीचे दूर दूर तक फैली हुई मराठी सेना के डेरे लगे थे। यह सेना मोठ के गुसाइयो का, जो शाहआलम और शुजाउद्दौला की ओर से मोठ पर अधिकार किये हुये थे, दमन करके गोहद की ओर जा रही थी।

पहाडी के नीचे छावनी मे सिपाही और उनके अफसर भाग-बूटी इत्यादि के आमोद-प्रमोद मे मग्न थे और पहाडी की चोटी पर सेनापति तथा उपसेनापति विचार विमर्श कर रहे थे।

राघोबा ने दम्भ के साथ कहा, 'मैं तो वर्तमान को यथार्थ और वास्तविक बनने के पक्ष मे हूँ, तुम भविष्य के अन्धकार मे भटकना चाहते हो।'

'जो कुछ भी हो दादा, भरतपूर को हम अपना शत्रु नहीं बना सकते।' माधव जी ने स्मरण दिलाया, 'भरतपूर ने शरण न दी होती तो कितने और मराठे स्त्री पुरुष न मारे जाते और अपमानित होते!

हमारे घायलों की उन लोगों ने कितनी सेवा की !! सूरजमल की रानी किशोरी तक ने !!!'

'वह सब हमारे करोड़ो रुपये ऋण के ब्याज बराबर भी नहीं बैठता, और फिर मल्हारराव की जागीर मे जवाहरसिंह ने लुटेरी की सो ?'

'मल्हारराव ने भरतपुर राज्य मे लूटमार पहले प्रारम्भ की थी।'

'मल्हारराव क्या करता ? उसके सिपाही नही माने।'

'सिपाहियों के आचरण का दायित्व तो सेनापति के ऊपर रहता है। सेनापति ने नियन्त्रण नही किया तो सिपाही डाके डालने लगे। मल्हार ने न केवल नियन्त्रण नहीं किया, बल्कि स्वयं उस लूटमार में सहयोगी बने।'

'बिचारा बीमार पड़ा है इन्दौर मे। उसके पीठ पीछे यह सब क्या कह रहे हो ?'

'मुँह पर कह दूँगा।'

'तो तुम गोहद पर आक्रमण करने में सहमत नहीं हो !'

'बिलकुल नही।'

'गोहद तुम्हारी जागीर से लगा हुआ है, उसमे होकर कई बार निकल चुके हो, इसलिये गोहद तुम्हारी जागीर का अंश हो गया है। तुम्हारा वह जागीरदार है न ?'

'जी।'

'तो तुम्हारा जागीरदार मल्हाराव से क्यों लड़ पड़ा ?'

क्योंकि मल्हार ने उसके ऊपर आक्रमण किया था। उसने अपनी रक्षा के लिये तलवार उठा ली।'

'नाहरसिंह से भी लड़ा जो हमारा मित्र है।'

'देखिये दादा, नाहरसिंह भरतपुर का राजा नहीं है। छीनाझपटी में उसने धौलपुर को अधिकार मे कर लिया। वह जवाहरसिंह का शत्रु है। जवाहरसिंह से हमको वैर बिसाना नही है, इसलिये आपको

और मल्हार को गोहद, धौलपुर और भरतपूर के घरेलू झगड़ों से अलग रहना चाहिये ।

'परन्तु जवाहरसिंह ने मल्हार के बहुत सैनिक मारे है ।'

'मैंने पहले ही विनती की कि मल्हारराव ने गलत काम किया था। एक गलती का बदला दूसरी गलती से नही लिया जाना चाहिये ।'

'शिहाबुद्दीन ने दिल्ली पर आक्रमण करने और भरतपूर के असीम खजाने से अपने करोड़ों रुपये ले लेने के लिये सुझाव भेजा है । मालूम है न ?'

'स्मरण है। परन्तु भविष्य की सब बातो को टटोलकर फिर आगे बढ़ने की सम्मति दूंगा मैं तो। एक शक्ति और खड़ी हो गई है। उसे निरन्तर ध्यान मे रखने की आवश्यकता है। वह है अंगरेज। उसने फ्रांसीसियों को दबा लिया है। बंगाल बिहार और इलाहाबाद के बड़े बड़े क्षेत्र अपने अधिकार मे कर लिये हैं। व्यापार-लोभ के साथ उसका राज्य—सीमा—विस्तार—मोह बराबर बढ़ता चला जायगा। भरतपूर सरीखे दृढ़ और सम्पन्न राज्य को मित्र बनाये रखने की आवश्यकता है। दिल्ली पर आक्रमण न करके नजीब पर आक्रमण करना है और शाहआलम बादशाह को अंगरेजो के चंगुल से छुटाकर दिल्ली वापिस लाना है। स्वराज्य इसी साधन से स्थापित हो सकता है ।'

'अंग्रेज मेरे मित्र है। मैं उनसे मिलता रहता हूँ। स्वराज्य-स्थापना मे वे मेरे सहायक होंगे ।'

'अंग्रेज आपसे अपना स्वार्थ साधने मे अधिक सफल होंगे, आप उनसे स्वराज्य या किसी प्रकार का राज्य स्थापित करने मे सहायता नही पा सकेंगे ।'

'स्वराज्य तो नर्मदा और तुंगभद्रा नदियो के बीच की व्यवस्था है। नर्मदा के उत्तर और तुंगभद्रा के दक्षिण मे मुल्कगीरी कहलायगी, स्वराज्य नही कहलायगा, इसे मत भूलो। इसमे अंग्रेज हमारे सहायक होंगे ।'

'मैं तो भारत भर के ऊपर सदयों के राज्य को स्वराज्य कहता हूं। मुल्कगीरी अव्यवस्था का दूसरा नाम है।'

'वही भविष्य के अन्धकार में अन्धों की टटोल ! मैंने अपना निश्चय दृढ़ कर लिया है। मैं गोहद, भरतपूर पर आक्रमण करता हुआ दिल्ली पर धावा मारूंगा।'

'मैंने भी निश्चय कर लिया है। मैं यह सब कुछ नहीं करूंगा। मैं तब तक विध्यखण्ड में स्वराज्य के प्रति खोई हुई श्रद्धा को फिर से स्थापित करने में लगूंगा।

रघुनाथराव क्रोध के मारे बौखला उठा। माधव उस लोहे के सदृश्य थे जो ऊपर से ठंडा और भीतर भीतर आग की तरह लाल रह सकता है।

रघुनाथराव बोला, 'तुम उस छोकरे माधवराव के बिगाड़े हुये हो जिसको महाराष्ट्र के दुर्भाग्य ने पेशवा बनाया है।'

ठण्डे स्वर मे माधव जी ने कहा, 'महाराष्ट्र का क्या भारत भर का सौभाग्य है जो उसे एक नहीं दो महापुरुष एक समय में एक साथ मिले है—राम शास्त्री और माधवराव पेशवा।'

माधवराव के सम्बन्ध में राघोबा कुछ और अपशब्द कह डालता, परन्तु राम शास्त्री के नाम ने तुरन्त ऐसा आतंक उत्पन्न किया कि उसने मन की कसर स्वयं माधव जी पर निकाली। बोला, 'तुम्हारा यही सब ढङ्ग रहा तो एक दिन सारी जागीर से हाथ धो बैठोगे; हाथ भर भूमि भी पल्ले में रहेगी।'

'मेरी पटेली और अन्न देने वाली मेरी जोत की भूमि कहीं नहीं गई। मेरी या आपकी जागीर जनता की धरोहर मात्र है। उस धरोहर की रक्षा मैं करूंगा, मेरी जनता करेगी।'

राघोबा ने भयानक उत्तेजित स्वर मे प्रश्न किया, 'तो तुम गोहद पर आक्रमण नहीं करोगे ?'

ठण्डे स्वर में माधव ने उत्तर दिया, 'न। पहले ही कह चुका हूं।'

राघोबा का क्रोध माधव जी की ठण्डक मे और भी बढा, परन्तु वह भीतर भीतर भभकने लगा। दोनों चुप हो गये।

उसी समय एक समाचार-वाहक ने सूचना दी,—'इन्दौर से सूचना आई है कि सरदार मल्हाराव होलकर का देहान्त हो गया है।'

राघोबा ने अपनी सेना मे सूतक मनाने की आज्ञा देदी। उसने सोचा, माधव जी का दल मल्हारराव का सूतक मनाने से मल्हारराव की नीति और परम्परा का भक्त भी हो जायगा!

एकान्त हो जाने पर रघुनाथराव ने कहा, 'मरे हुये सरदार की बात को अब तो कुछ निभाना ही पड़ेगा।'

माधव ने अपने मत को दूसरे शब्दों मे दुहराया, 'मेरे निश्चय पर किसी के मरने जीने का कोई बड़ा प्रभाव नहीं पड़ता।'

राघोबा का ध्यान वर्तमान की एक और समस्या की ओर गया। 'मल्हार के कोई सन्तान नहीं है।' भविष्य का संकेत करते हुये उसने वर्तमान की बात कही।

माधव ने वर्तमान और भविष्य को सजोया,—'मल्हार की विधवा पुत्रवधू अहिल्याबाई तो है।'

'हां है तो, परन्तु स्त्री ही तो है। उसका नातेदार तुकोजीराव बहुत चतुर नीतिज्ञ और रण-प्रवीण है।'

'तुकोजी अहिल्याबाई के आदेश मे अधीन रहकर काम करता रहेगा। अहिल्याबाई अनेक प्रसिद्ध पुरुषों की भी अपेक्षा अधिक योग्य और धर्मज्ञ है।'

राघोबा वर्तमान के यथार्थ में इन्दौर को अपनी शिकार समझ रहा था। माधव से उसको इस आकांक्षा मे ठेस भी मिली।

(७१)

न सरदी, न गरमी। रात उजियाली। भरतपुर के भीतर का कलरव बाहर के एक पड़ाव में भी सुनाई पड़ रहा था। जयपुर से आये कुछ दूत पड़ाव पर विश्राम करने के लिये उस सन्ध्या ठहर गये थे। दूसरे दिन उन्हें जवाहरसिंह से मिलना था। रात बहुत नहीं भीगी थी। पड़ाव में चहल-पहल थी। जयपुर वालों की टोली में दो सिक्ख भी थे। वे मार्ग में साथ हो गये थे। इन्हें जवाहरसिंह के पास नौकरी की खोज में जाना था।

भरतपुर के वैभव की बात करते हुये एक जयपुरी ने कहा, 'थोड़े ही समय में भरतपुर बड़े बड़े राज्यों की टक्कर लेने लगा है। एक दिन वह था जब जवाहरसिंह का आजा बदनसिंह अपने महाराज की कुर्निसें करता था और दशहरे को राम राम के लिये हाजिरी देने में कभी न चूकता था।'

'इसका बाप सूरजमल भी पुरानी रीति का पालन करता रहा, पर यह जवाहरसिंह तो बस—राम राम।' दूसरा बोला।

'इसे तो नित्य नई सुन्दरियां चाहिये और नित्य नई लड़ाइयां दूसरों की भूमि दबा डालने के लिये।'

'पर सबसे बुरा तो यह काम है इसका।'

'वैसे कोई बात न थी। जाटों में विधवा भावज के साथ विवाह होने की पुरानी प्रणाली है, परन्तु स्त्री मान जाय तब तो।'

'जवाहरसिंह उस विधवा की सुन्दरता और सम्पत्ति, दोनों को छीन लेना चाहता है।'

'उस बिचारी का पति नाहरसिंह इस जवाहरसिंह की करतूतों के मारे विवश होकर विष खाकर मर गया।'

'जवाहरसिंह में दया नहीं है।'

'कल यदि उसने उत्तर दिया कि नहीं मानेगा, तो जयपुर भरतपुर के बीच में युद्ध छिड़ जायगा।'

वे दोनों सिक्ख उठकर बैठ गये और चादर से हवा करने लगे।

एक जयपुरी ने इनसे कहा, 'गरमी तो ऐसी कुछ अधिक नहीं है। चादनी ठण्डक दे रही है।'

एक सिक्ख हृष्ट-पुष्ट था, दूसरा छरेरे शरीर का। हृष्ट-पुष्ट सिक्ख बोला, 'हमें तो मालूम होती है।'

दूसरे सिक्ख ने मानो कुछ सुना ही नहीं, मुंह तक नहीं फेरा।

उसी सिक्ख ने कहा, 'हमने तो यह बात नहीं सुनी।'

'कौन सी बात?' जयपुरी ने पूछा।

सिक्ख ने उत्तर दिया, 'वही जो अभी आप कह रहे थे।'

'हम राजपूत लोग झूठ नहीं बोलते।' जयपुरी ने दम्भ किया, 'और फिर नाहरसिंह की विधवा की चिट्ठी के साथ हम अपने महाराजा जी का पत्र भी लाये हैं।'

दूसरे जयपुरी ने हंसकर कहा, 'यदि आप लोग जवाहरसिंह की सेना में भर्ती हो गये तो ऐसा न हो किसी दिन रणक्षेत्र में हमारा आपका सामना हो जाय।' हंसते हुये बोला, 'और, यात्रा में उत्पन्न हुई हमारी आपकी मित्रता लड़ाई में तलवार के घाट उतर जाय।'

दूसरे सिक्ख ने अब भी मुंह नहीं फेरा।

उसी सिक्ख ने हंसते हुये कहा, 'बुरा होगा, पर हम तो जिसका निमक खायेंगे उसी की बजावेंगे।'

'तो ऐसा निमक खाओ ही क्यों?'

'फिर क्या करें? हम हैं, हमारे नगर में हमारा एक दल और है। उसके लिये भी नौकरी ढूढनी है। जवाहरसिंह सिक्खों की भर्ती कर रहे हैं। उनको सिक्ख बहुत प्यारे हैं। देखना यह है कि उस प्यार में गहराई कितनी है।'

'वह और बात है—मगर क्या वह जो आपने कहा सचमुच ठीक है?'

'उसका एक अक्षर भी गलत नहीं है। कल जब जवाहरसिंह के सामने चिट्ठी पेश हो तब सुन लेना।'

'जवाहरसिंह का यह बर्ताव तो अच्छा नहीं लगता।'

'बर्ताव ! पूरा दुराचार है, दुराचार !! हमारी बात सची निकले तो आप क्या करेंगे ?'

'कुछ तै नहीं किया अभी तो।'

'तो आप हमारे महाराज के यहा नौकरी करेंगे ?'

'सोचेंगे।'

'ये आपके साथी सरदार जी क्या कहते हैं ? ये तो बिलकुल गुमसुम रहते हैं !'

'ये बहरे हैं—ऊँचा सुन पाते हैं। इनसे अकेले में बात करूँगा। अभी बात करूँगा तो सारा पड़ाव हम लोगों की बातचीत सुन लेगा, और यह शायद आपको पसन्द नहीं होगा।'

'कोई जल्दी नहीं है। कल तै कर लेना।'

'जब आप जवाहरसिंह के सामने जायेंगे तब क्या कृपा करके हम लोगों को भी ले चलेंगे ?'

'क्यों काहे के लिये ? हम लोग तो जवाहर के पास नौकरी के लिये आये नहीं हैं।'

'यह देखने के लिये कि उनका दरबार कैसा है और यह कि वह बात कहां तक ठीक है।'

'चलना। हम चलेंगे। हमारे सिपाही बनकर चले चलना।'

दूसरा गुमसुम, अडिग-सा, बैठा हुआ था।

उस सिक्ख ने चिल्लाकर कहा, 'अब लेट जाओ, भाई जी।'

धीरे से 'हूँ' कह कर वह लेट गया, और करवटें बदलता रहा।

दूसरे दिन जवाहरसिंह के सामने जयपुर के दूत उपस्थित हुये। उनके साथ छः सात व्यक्ति और थे। उनमें वे दो सिक्ख भी। लगभग समवयस्क। ये दोनों अपने साथियों के पीछे खड़े थे।

जवाहरसिंह ने दूतों के दिये हुये दोनों पत्र पढ़े थे। दूतों से उसने कहा, 'जान पड़ता है तुम्हारे महाराज माधवसिंह हमसे लड़ना चाहते हैं। छोटी मोटी लड़ाई लड़कर उन्होंने देख लिया होगा कि वे हमसे पार नहीं पा सकेंगे। अबकी बार हमारी जो विशाल सेना जयपुर पर धावा मारेगी उसे उनके मराठे सहायक भी नहीं निवार पायेंगे। सुन लिया होगा कि मैंने मल्हारराव होलकर को कैसी मुंह की खिलाई थी ?'

दूत ने नम्रता पूर्वक कहा, 'महाराज ने आज्ञा दी है। हम लोग उसका भुगतान अपने महाराज के सामने कर देंगे, परन्तु क्या यह अनीति नहीं है कि आप एक निस्सहाय विधवा स्त्री के साथ जबरदस्ती करने के लिये यह युद्ध करेंगे ?'

'वह मेरी भावज है, उससे विवाह करने का मुझे अधिकार है। तुम दूत हो, यदि कोई और ऐसी बात कहता तो मैं उसकी जीभ कटवा कर फेंक देता।'

'महाराज ने ठीक कहा, परन्तु महाराज राजपूत प्रणाली जानते हैं। आपके जेठे भाई नाहरसिंह की विधवा रानी जयपुर नरेश की शरण में है। राजपूत शरणागत के लिये अपना सब कुछ खो देता है, नाश करा लेता है, परन्तु अपनी बान पर अटल रहता है।'

'वह विधवा ही जयपुर महाराज की शरणागत है या उसका रुपया पैसा गहना पत्ता भी ?'

'विधवा के साथ उसका सब कुछ।'

'अच्छा ! अच्छा !! तब लड़ाई होगी। महाराज से कह देना जाट और सिक्खों की तोपों का सामना करने के लिये तैयार रहें।'

अपने दीवान को जवाहरसिंह ने आज्ञा दी, 'लिख दो कि मुझे नाहरसिंह के रुपये पैसे से ज्यादा सरोकार नहीं है। वह मेरी भावज ही

के पास रहेगा। परन्तु मैं उसके साथ विवाह करूँगा। यह मेरा अधिकार है। वह अभी बिलकुल थोड़ी आयु की है। विवाह नहीं करेगी तो यों ही कहीं भ्रष्ट हो जायगी; मैं ऐसा नहीं होने देना चाहता हूं।' मावज को भी ऐसा ही लिख दो। मैं दोनों पत्रों पर हस्ताक्षर कर दूंगा।

दीवान लिखने लगा। जवाहरसिंह बिना ध्यान के दूतों और उनके साथियों को एक एक करके फिसलती हुई दृष्टि से देखने लगा। सिक्खों को कुछ अधिक गड़ कर देखा। बोला, 'तुम्हारे यहां सिक्ख कहां से आ गये ? ये लोग कहां के हैं ?'

हृदय पुष्ट सिक्ख ने आगे बढ़कर विनय के साथ उत्तर दिया, 'हम लोग पानीपत के रहने वाले हैं। जयपुर में नौकर हैं।

'कितने सिक्ख हैं जयपुर में ?' जवाहरसिंह ने पूछा।

उसने उत्तर दिया, 'बहुत हैं। गिनती नहीं मालूम।'

'यह तुम्हारा साथी कहां का है ?'

'पानीपत का ही है जी। बड़े घराने का है, पर बहिरा है, इसलिये सिर नीचा किये खड़ा है।'

वह सिक्ख नीचा सिर किये खड़ा था।

जवाहरसिंह हंसकर बोला, 'जयपुर में अन्धे और बहरे ही ज्यादा मालूम होते हैं।' तभी महाराज को न तो कुछ दिखलाई पड़ता है और न सुनाई पड़ता है। लूलों लँगड़ों को और इकट्ठा कर लो।'

दूत ने कहा, 'महाराज ने उचित आदेश किया। हमारे मराठा सहायकों में एक है।'

'कौन ? अच्छा ! वह !! जवाहरसिंह बोला, 'वह सिंधिया ? राघोबा के साथ वहीं फिर रहा है। अबकी बार दूसरी टांग के टूटने की बारी आ रही है। पानीपत के घायल को भरतपूर ने शरण दे दी थी, इसीलिये दूसरी टांग के बल हमारे सामने आयगा। निज़ामुद्दीन को और बुला लेना जिसके हरम पर नजीब हाथ फेरता रहा है और नजीब तो तुम्हारे महाराज का मित्र है ही। भाई वाह ! कैसा बढ़िया संग-साथ रहेगा !!'

मनीसिंह ने उत्तर दिया, 'हुजूर, पटेल जी, हम लोग पानीपत के रहने वाले हैं पानीपत की लड़ाई के समय हम लोग दिल्ली में नौकर थे। घर द्वार बिगड़ जाने पर लखनऊ चले गये, क्योंकि नजीबखां को सिक्खों से बहुत घृणा है। पानीपत की लड़ाई के बाद वह दिल्ली का अधिकारी हो गया, इसलिये लखनऊ में नौकरी कर ली।'

'फौज में काम करते थे?'

'नही पटेल जी। दिल्ली में मीरबख्शी के दफ्तर में थे, लखनऊ में दीवान के दफ्तर में।'

'क्या पढ़े हो तुम लोग?'

'मैं थोड़ी सी फारसी, उर्दू और हिन्दवी जानता हूँ। गुनीसिंह अरबी, फारसी, तुर्की और हिन्दवी के बहुत अच्छे जानकार हैं।'

हम लोग हिन्दवी नहीं कहते उसे हिन्दी कहते हैं।'

'माफ करें पटेल जी, हमारी तरफ इसी तरह का चलन है, इसलिये कह गया। गुनीसिंह मारवाड़ी भाषा भी जानते हैं।'

'वह कोई अलग भाषा नही है। हिन्दी की एक बोली ही है। खैर। ये गुनीसिंह कुछ बातचीत भी कर सकते है या चुप रहते हैं! इन्होंने तो अभी तक कुछ कहा नही।'

'हुजूर, पटेल जी, ये बहिरे—नहीं, कुछ ऊँचा सुनते हैं, इसलिये अभी तक नही बोले। मैं चिल्लाकर बात बतलाऊँ इन्हे तो बोल उठेंगे।'

'कोई बात नही। पर काम कैसे चलेगा? चिल्लाते चिल्लाते मेरा तो गला बैठ जाया करेगा।'

माधव मुस्कराये।

'नही महाराज—पटेल जी—ये काम के समय पुङ्गी कान में लगा लेते हैं। आपको किसी तरह की भी दिक्कत नही पड़ेगी।' मनीसिंह बोला।

माधव ने कहा, 'अच्छा भाई मनीसिंह, इनसे कहो अपना नाम बतलावें।'

मनीसिंह ने गुनीसिंह के कान के पास आकर माधव जी की इच्छा को जरा जोर के स्वर में प्रकट किया।

गुनीसिंह ने दोनों हाथ जोड़े। सिर उठाया और कहा, 'महाराज, मेरा नाम गुनीसिंह है। लिखने पढ़ने की नौकरी चाहता हूं।'

गुनीसिंह का बारीक मिनमिनाता हुआ सा स्वर माधव जी को अच्छा नहीं लगा। पर उन्होंने इन दोनों को नौकरी दे दी। और डेरा निवास-स्थान के पास दे दिया।

(७२)

अहमदशाह अब्दाली पजाब मे सिक्खो से बेहद परेशान था। उसने सिन्ध नदी के पश्चिम में अपने राज्य की सीमा निश्चित करने की योजना बनाई। सिक्खो ने स्वतन्त्रता घोषित करके पजाब मे अपने राज्य का निर्माण करना आरम्भ कर दिया। नजीब दिल्ली के निकटवर्ती प्रदेश की बादशाहत का वास्तविक बादशाह था। शुजा अवध मे स्वतन्त्र था। नाम-मात्र के लिये दिल्ली के नाम-मात्र के बादशाह शाहआलम का वजीर था जो इलाहाबाद के किले मे अङ्गरेजो का मिहमान और विलास का दास था। राजपूताना मे जयपुर और जोधपुर राजस्थान की रियासतों का एक स्वतन्त्र सघ बनाकर उत्तर से मराठो को दक्षिण की ओर हटा देने की चिन्ता मे थे।

दक्षिण में हैदरअली मैसूर को दबाकर उठ खडा हुआ था। वह एक ओर मराठों से और दूसरी ओर अगरेजो से टक्कर लेने की तैयारी में था।

उत्तर मालवा में राघोबा अपने प्रपन्चो मे निरत था। माधवराव पेशवा ने माधव जी को उत्तर से बुलाया। वे शीघ्र दक्षिण की ओर चले गये। अपनी सेना का एक छोटा-सा खड उज्जैन मे छोडकर शेष सेना और अपने कर्मचारियो को साथ लेते गये। गुनीसिंह और मनीसिंह भी साथ थे।

पूना पहुँचने पर माधव को मालूम हुआ कि माधवराव पेशवा उस छोटी आयु में ही जपतप मे लीन रहने लगा है, लोगो से कम मिलता है और राज्य कार्य अधिकतर बालाजी जनार्दन फडनीस करने लगा है। फडनीस राघोबा के प्रपञ्चो के अधिकांश समाचार पेशवा को दिया करता था। दीवान न होने पर भी वह पेशवा का विश्वासपात्र था। पेशवा का विश्वासपात्र होने के कारण वे उसे 'बड़ा भाई' कहते थे।

माधव जी पहले पहल नाना फडनीस से मिले।

बालाजी जनार्दन फड़नीस 'बड़े भाई' का शरीर लम्बा, दुबला पतला सा, गर्दन लम्बी, चेहरा लम्बा, नाक लम्बी, और सिर लम्बा। दृष्टि भी काफी लम्बी। परन्तु देखने के लिये अभी लक्ष्य अनेक और विविध नहीं मिले थे, कम से कम ऐसे नहीं मिले थे जिन्हें भांप देखकर हाथ को सौंप दे।

फड़नीस ने माधव से कहा, 'पटेल बुवा*, मेवाड़ से रुपया अभी तक नहीं मिला है। तुम कहते हो कि राजपूत राजा अपना संघ बनाने जा रहे हैं। यह रुपया खटाई में नहीं पड़ना चाहिये।'

माधव जी ने आश्वासन दिया, 'बड़े भाई, खटाई में तो नहीं पड़ेगा। जयपुर जोधपुर की गुत्थी को सुलझाने के बाद मिल जायगा, पर मिलेगा किश्तों में, क्योंकि मेवाड़ के पास रुपया नहीं है।'

'राजपूतों के पास दरिद्रता, अभिमान और लम्बे चौड़े कुलीनताओं के सिवाय और है ही क्या? परन्तु कुछ रियासतें काफी रुपया दे सकती हैं; जैसे जयपुर, कोटा इत्यादि।'

'रुपया न देने के लिये ही संघ बन रहा है। यह संघ नजीब खाँ का साथ देगा।'

'भरतपुर को इस संघ से अलग रखा जाय तो नजीब रहेगा और राजस्थान के राजा एक नहीं हो सकेंगे।'

'अंग्रेज और अवध मिल गये हैं। सिक्खों के बीच आ जाने के कारण 'अहमदशाह अब्दाली से सहायता न पाकर नजीब अंग्रेजों के साथ मैत्री बढ़ाने की चेष्टा कर सकता है।'

'अंग्रेजों की शक्ति का केन्द्र बंगाल नहीं है और न बम्बई। उनकी शक्ति का केन्द्र मद्रास है। हैदरअली और अंग्रेज दोनों, स्वराज्य के लिये एक से कंटक हैं। इनका संघर्ष करा दिया जाये या किसी प्रकार हो जाय तो कांटे से कांटा कट जायगा। फिर नजीब या अवध को

---

*बुवा—साहब (आदर सूचक)

अंग्रेजों का सहारा दुर्लभ होगा। तब हम लोग अंग्रेजों की शक्ति समाप्त कर लेंगे। रहे बाकी के प्रदेश, सो हमारी अधीनता में सहज ही आ सकते हैं।'

यह सब यथेष्ठ क्रम के अनुसार होता जाये तो बहुत अच्छा है, परन्तु निकट में इसकी सभावना नहीं दिखती, बड़े भाई। हमें अपने इतिहास की एक बड़ी भूल नहीं दुहरानी चाहिये। बिना समर्थ साधनों के एक साथ सबका सब समेट उठने की वान्छाओं से कार्यकर्ताओं पर नियन्त्रण नहीं रह पाता है, व्यय भार असहनीय हो जाता है, प्रयत्न बिखर जाते हैं और असफलतायें मुँह बाकर खड़ी हो जाती हैं।'

'सेनापति तो अपने हाथ में बहुत अच्छे अच्छे हैं—तुम हो; तुकोजीराव होलकर है, राघोबा इत्यादि।'

'हा राघोबा भी, यदि वह निजाम का फिर से सहयोगी बनकर हमारे घर में ही आग लगाने को न आ दौड़े तो।'

'अच्छा तो तुम्हारी योजना क्या है?'

'भारत के अदमनीय राजाओं और नवाबों का एक संघ बनाकर स्वराज्य के आदर्श को कार्यान्वित करना जिसमें न्याय और नियम से काम लिया जाये और जनता सुखी हो। यही संघ अंग्रेज इत्यादि विदेशियों को भारत से दूर रख सकेगा।'

'यह दाकर की कल्पना की भांति मधुर तो अवश्य है, परन्तु इसका विस्तृत ब्योरा, साधन और समय-क्रम तो बतलाओ। सिक्ख, हैदरअली इत्यादि इस संघ में कैसे मिल जायेंगे?'

'हैदरअली दमनीय है, सिक्ख अदमनीय हैं। दिल्ली के पुतले—शाह-आलम को हाथ में करके दिल्ली ले आना चाहिये। योजना की सफलता और आदर्श की प्राप्ति का मार्ग और सुगम हो जायगा।'

किसी ने उसी समय आकर कहा, 'राम शास्त्री श्रीमन्त पेशवा के पास गये हैं। वहीं बुलाया है।'

वे दोनों तुरन्त पेशवा के महल पर गये।

राम शास्त्री मोटी धोती, मोटा अंगरखा पहिने और सादी पगड़ी बांधे ऊँचे आसन पर बैठे थे। परस्पर अभिवादन के उपरान्त इन दोनों को पेशवा ने बिठला लिया।

राम शास्त्री ने मुस्कराते हुये कहा, 'श्रीमन्त पेशवा जप ध्यान बहुत करने लगे। मुझे बहुत अच्छा लगा। मैं इनसे अनुरोध करने आया हूँ कि हिमाचल के एकान्त में चलो, मैं साथ में रहूँगा। तुम लोग भी चलो न; इसी के लिये बुलाया है।'

माधव जी ने पूछा, 'शास्त्री जी, देश की, भारत की राजनीति का क्या होगा।'

'उँह,' शास्त्री ने व्यङ्ग किया, 'राजनीति छोड़ दो त्यागों का दाम मांगने वाले लफंगों के हाथ मे, जिनका पेट किसी भी दाम या पुरस्कार से नहीं भरता और जो पुरस्कारो की सदा रट लगाये रहते हैं।'

फड़नीस ने नम्रता पूर्वक कहा, 'शास्त्री बुवा, त्याग या बलिदान करने की कामना को पुरस्कारो की ही आशा तो उत्तेजित करती है।'

शास्त्री ने अपना व्यंग जारी रखा,—'तभी तो कहता हू देते जाओ पुरस्कारों का बढ़ावा और बाटते जाओ भूमि और भोजन जिसमें किसान मजदूर जन्म भर बेगार करते करते सुख पूर्वक मर जायें और तुम्हारे इनामदारो और जागीरदारों से यह देश भर जाये। चलें न हम सब हिमालय की किसी गुफा में जिसमे यह क्रिया सहज ही सफल हो जाये, किसी के लिये कोई बाधा न रहे। राघोबा राज्य करें और तुकोजी होलकर फौजदारी, दीवानी, न्याय, सब।'

माधवराव पेशवा हँस पड़ा। बोला, 'शास्त्री महाराज यदि मैं जप-तप छोड़छाड़ दूँ तब तो आप पूना को अनाथ करके हिमालय न चले जायेंगे ?'

शास्त्री भी हँसे। सभी उपस्थितों ने सहयोग किया।

शास्त्री ने कहा, 'तब मैं क्यों पूना छोड़ने लगा ? और न कदाचित्त ये लोग ही छोड़ेंगे। क्या कहते हो पटेल ? नाना तुम ?'

उन दोनो ने हंसते हुये नाहीं का सिर हिलाया ।

शास्त्री ने गम्भीर होकर कहा, 'मैंने पेशवा के जपमोह को भंग करने का निश्चय कर लिया है । इसी के लिये तुम दोनों को भी बुलाया। तुम लोगों को धर्माचरण के साथ कर्तव्यपालन में सदा दत्तचित्त रहना चाहिये ।'

माधवराव पेशवा ने प्रण किया, 'शास्त्री देवता, यदि आप मुझे आगे कभी आलस्यरत या कर्तव्यच्युत पावें तो चाहे जो दण्ड देना ।'

शास्त्री बोले, 'जो स्वस्थ पुरुष आठ घंटे काम नहीं करे उसे भोजन का अधिकार नहीं है ।'

'और शास्त्री जी !' माधव जी सिन्धिया ने हँसते हुये पूछा, 'जो पुरुष दस घंटे नित्य काम करे ?'

शास्त्री ने हँसकर उत्तर दिया, 'उसको तीन बार भोजन मिलना चाहिये ।'

(७३)

राघोबा दक्षिण मालवा में ठहर कर इन्दौर के ऊपर दांत लगा रहा था। उसकी इच्छा अहिल्याबाई को अधिकारों से वंचित करने की थी और तुकोजीराव होलकर से, जो मल्हारराव का केवल एक नातेदार था परन्तु मल्हारराव का विश्वासपात्र और कुशल सेनानायक था, तुक लगा रहा था। इस मामले में राम शास्त्री ने पेशवा को सम्मति अहिल्याबाई के पक्ष में दी। उस सम्मति को कार्यान्वित करने के लिये पेशवा ने माधव जी को इन्दौर भेजा। उन्होंने राघोबा के प्रपंचों को विफल करके अहिल्याबाई को होलकर-जागीर और होलकर-सेना का अधिकारी स्थापित कर दिया। तुकोजीराव अहिल्याबाई का नायब नियुक्त किया गया मल्हारराव ने भी मरने के पहले कुछ इसी प्रकार की इच्छा प्रकट की थी।

माधव जी पूना लौट आये। पूना से छैः सात कोस की दूरी पर वनवाडी नाम का एक खेरा था। जंगल, खेत, ऊँचाई-निचाई और जल से सम्पन्न। पास ही सलिल-वाहिनी मनोहर पतली नदी। गाँव के बाहर आमों की कुंज थी और वहीं एक साफ-सुथरा भवन। माधव को यह रमणीक स्थान प्रिय था। इससे लगे हुये खुले स्थान में सेना का डेरा पड़ गया और वे उस भवन में जा ठहरे। भवन के बाहरी भाग में उनके मुख्य कर्मचारियों को स्थान मिल गया। वहीं मनीसिंह और गुनीसिंह ठहर गये थे।

उज्जैन से माधव जी के दीवान का पत्र आया। उसका उत्तर भिजवाना था। पेशवा से सलाह ली जा चुकी थी। माधव ने मनीसिंह और गुनीसिंह को बुलाया।

माधव ने कहा, 'तुम लोग जयपुर दरबार के दफ्तर में कुछ दिन रहे हो, बतला सकते हो भरतपूर वाले नाहरसिंह की विधवा की वहां क्या स्थिति है?'

'हां जी, पटेल जी, थोड़ा बहुत तो मालूम है।' मनीसिंह ने बतलाया।

गुनीसिंह ने एक बार माधव जी की ओर देखा, दूसरी बार मनीसिंह की ओर—सुनाई नही पड़ा था इसलिये समझने की कोशिश कर रहा था।

संकेत द्वारा समझाते हुये भी माधव जी ने जरा चिल्लाकर कहा, 'पुंगी लगा लो गुनीसिंह।'

गुनीसिंह ने कपड़ो में से पुंगी निकाली और कान मे लगा ली।

माधव जी ने पूछा, 'तुमको नाहरसिंह की विधवा का कुछ हाल मालूम है?'

गुनीसिंह की मुख-मुद्रा सगमरमर की मूर्ति की तरह स्थिर थी। केवल ओठ फड़के। बारीक मिनमिनाते हुये स्वर मे शब्द निकले, 'हां जी।'

माधव ने मुस्कराकर कहा, 'ससार मे जितने बहरे हैं स्वयं बहुत धीमे बोलते हैं पर दूसरो का गला चिल्लवाते चिल्लवाते बिठला देते हैं।'

उसी स्वर में और बिना किसी भाव के गुनीसिंह के ओठों से निकला,—'हां जी।'

माधव जी हँस पड़े। मनीसिंह मुसकराया, परन्तु गुनीसिंह के चेहरे की एक रेखा भी विचलित नही हुई।

'अच्छा बतलाओ तुमको क्या मालूम है?' माधव जी बोले।

अपनी भाषा को किसी भी भाव का समर्थन दिये बिना गुनीसिंह ने बतलाया, 'पटेल जी, नाहरसिंह की विधवा एक सुन्दरी है। जवाहरसिंह उनके साथ जबरदस्ती विवाह करना चाहता है। जयपुर का राजा माधवसिंह उस पर स्वयं मुग्ध है। इतना मालूम है और कुछ नहीं।'

माधव ने कहा, 'हूं। वह उसे अपने भवन में शरण और हृदय में स्थान दिये हुये है। उन दोनों का युद्ध अवश्य होगा। दोनों आधे पागल हैं। हम इनकी लड़ाई के बीच में नहीं पड़ना चाहते।'

उन दोनों के मुँह से एक साथ निकला, 'हां जी।'

एक स्वर बारीक, दूसरा भारी जैसे षड्ज और पञ्चम स्वरो का मेल हो। माधव एक क्षण चुप रहे।

माधव ने जेब से एक चिट्ठी निकाली। पढ़ते पढ़ते बोले, 'जवाहरसिंह सावन महीने की घोर वर्षा और यमुना की प्रचण्ड बाढ़ में बिजली की तरह चलता हुआ कालपी आ गया। सूबेदार बालाजी गोविन्द खेर को प्राण बचाने की मुश्किल पड़ी; फिर गोंठ और भासी को अधिकार में करता हुआ ग्वालियर निकल गया। वहा एक थाने पर दखल कर लिया। ग्वालियर से नरवर गया और नरवर से गोहद के राजा के पास। फिर उत्तर पूर्व की ओर मुड़ गया है। उसका कहना है कि दक्षिण से कोई कुमुक न आई तो मालवा से मराठों को हटा दूगा।' चिट्ठी को बन्द करके कहा, 'अद्भुत वीर है! प्रचण्ड दृढ़ योधा।'

'जी नही।' उन दोनो के मुंह से एक साथ निकला।

'क्यों नहीं?' माधव ने बिना आश्चर्य के पूछा।

क्षण के एक खण्ड के लिये मनीसिंह की ओर दृष्टिपात करके गुनीसिंह ने कान की पुङ्गी संभाली।

मनीसिंह ने उत्तर दिया, 'जी पटेल जी, उन दिनों सब लोग अपने घरों में बन्द रहते हैं। जवाहरसिंह ने अवसर ढूंढ़ लिया और निकल पड़ा। कहीं न ठहर कर बिजली की तरह कौंधता हुआ विलीन हो गया।'

माधव बोले, 'तुम लोग सिपाही होते तो ऐसा न कहते।'

'हां जी', दोनों ने कहा।

माधव ने आदेश दिया, 'लिख दो कि जवाहरसिंह की चिन्ता न करें। मैं शीघ्र आता हूँ। जयपुर भरतपुर के झमेले मे हमें इस समय नहीं पड़ना है।'

'हां जी,' गुनीसिंह ने कहा।

माधव ने और आदेश दिया, 'मेवाड से छत्तीस लाख से ऊपर का पावना है। इसे मैं अबकी बार के दौरे मे वसूल करूँगा। अभी वह माग भर कर लें।'

'हाँ जी,'—गुनीसिह ने एक मे पुञ्जी लिये हुये दूसरे हाथ से कागज पर टीप लिया।

माधव जी ने कहा, 'नजीब खा बहुत चतुर और दृढ है—'

गुनीसिह के मुँह से निकल पडा,—'नही जी।'

'टीपे जाओ।' माधव जी बोले, 'और शिहाबुद्दीन बहुत काइयां, स्वार्थी—'

उन दोनों के मुँह से शब्द निकले,—'हां जी।'

माधव जी कहते गये, 'परन्तु प्रभाव वाला है—'

फिर गुनीसिह के मुह से निकल पड़ा, 'नहीं जी।'

'चुपचाप लिखे जाओ।' माधव जी बोले, 'राजपूताने के दौरे के उपरान्त फिर इन समस्याओ को सुलझाया जायगा। बस।'

'हा जी', गुनीसिह ने कहा।

माधव जी ने मुस्कराकर पूछा, 'सिक्ख लोग पजाब मे दृढता पूर्वक सगठन कर रहे हैं? कुल कितने बड़े बड़े सरदार हैं वहा? हैं बड़े हठी प्रण वाले और वीर, अदम्य।'

'हा जी', उन दोनो ने सम्मिलित उत्तर दिया।

माधव जी ने कहा, 'ये अपने को पजाब के भीतर ही रखकर उन्नत होते रहें, तो अच्छा होगा। बाहर वालों के हाथ में अपने को किराये पर सौंप देते हैं, यह अच्छा नही है।'

'नहीं जी,' गुनीसिह का बारीक स्वर बोला।

माधव जी ने मानो सुना नहीं। एक क्षण सोचकर बोले, 'यह दुर्गुण मराठों मे भी आ गया है—'

'हां जी,' गुनीसिह ने कहा।

'माधव जी ने पूछा, 'क्या ? क्या समझे ?'

'नहीं जी', गुनीसिंह ने उत्तर दिया ।

माधव जी हँस पड़े । बोले, 'हां जी ! नहीं जी !! हां जी, नहीं जी के सिवाय कुछ और भी कहना जानते हो ? फिर गम्भीर होकर उन्होंने कहा, 'कोई बात नहीं । मैं तुम लोगों के काम से बहुत सन्तुष्ट हूँ । चिट्ठी तैयार होने पर हस्ताक्षर के लिये ले आना ।'

(७४)

गुनीसिंह ने अपने कमरे में जाकर चिट्ठी तैयार करली और माधव जी के हस्ताक्षर कराने के लिये रख ली। सन्ध्या होने को आई। पश्चिमी घाटों की पर्वत माला के पीछे सूर्य लालिमा बिखेरता हुआ बैठने लगा। ठन्डी मन्द समीर के झोके आने लगे। माधव जी इस समय घोड़े की सवारी के लिये निकल जाते थे। आज कुछ विलम्ब हो गया था। वे निकले। गुनीसिंह ने अपने कमरे की छोटी खिडकी मे से उनको टकटकी लगाकर देखा। एक टाग से लंगड़े होते हुये भी शरीर मे बड़ी शक्ति और स्फूर्ति। शरीर लोहे की लचीली जाली से कसा हुआ-सा।

माधव जी के चले जाने के बाद गुनीसिंह ने आमो की झुरमुट में एक बन्दूक वाले को आड ओट लेते छिपते हुये देखा। वह उसे देखता रहा। पहले कल्पना की, कोई सिपाही अपने ही लश्कर का होगा, परन्तु वह इस प्रकार दबा छिपा आ रहा था कि गुनीसिंह को सन्देह हो गया।

गुनीसिंह के कमरे से लगा मनीसिंह का निवास-गृह था। दोनों के बीच में दरवाजा था जिसके किवाडो पर गुनीसिंह ने साकल लगा रखी थी। गुनीसिंह ने किवाड खोलकर मनीसिंह को सकेत से बुलाया और अपने कमरे मे ले गया। कान से पुगी लगाई और उससे कहा, 'एक आदमी बन्दूक लिये इन पेड़ों के पीछे जा छिपा है। उसकी नियत मे कुछ बुराई जान पडती है।'

मनीसिंह ने गुनीसिंह की पुंगी के पास मुह लगाकर खुसफुस की, 'इतने अच्छे और भले होते हुये भी पटेल के भी शत्रु हैं! इनको बचाना चाहिये।'

गुनीसिंह ने भी खुसफुस के स्वर में कहा, 'जरूर।'

उन दोनों ने अपने लम्बे कृपाण उठाये और सावधानी के साथ बाहर निकल आये। संकेत मे अपनी अपनी दिशाओं का निश्चय करके वे

संदिग्ध स्थल के पीछे चुपचाप जा छिपे। उन्होंने जाते हुये धुंधले प्रकाश में अपने आसामी और कर्तव्य को समझ लिया।

दो घड़ी पीछे नितान्त अन्धकार हो गया। दूरी पर घोड़े की टापों का शब्द सुनाई पड़ा। फिर वह शब्द शीघ्र निकट आता गया। भवन के पास माधव जी घोड़े पर सवार आ गये। उनके दो सईस पीछे पीछे दौड़ते हाफते हुये आ रहे थे। घोड़े से फासले पर थे। माधव जी घोड़े की गर्दन पर हाथ फेरने के लिये झुके। पेड़ों की झुरमुट के पीछे एक व्यक्ति ने बन्दूक कन्धे से लगाई और निशाना साधने के लिये नाल ऊँची नीची की।

उसके पीछे से दबे पाव झुके झुके कोई पहले से आ रहा था। बन्दूक वाला निशाना साध चुका था। छिपे हुये बोंडे को निकाल कर बन्दूक की रंजकदानी पर छुलाने ही को था कि पीछे वाले ने उसके हाथ को ऊपर की ओर उचका दिया। बन्दूक की नाल ऊँची हो गई। 'धायँ'—जोर का धड़ाका हुआ। गोली माधव जी के ऊपर होकर निकल गई। सईस आ गये। उन्होंने घोड़ा थामा। माधव जी घोड़े पर से कूद पड़े।

उधर बन्दूक वाले में उस व्यक्ति की धर पकड़ मच गई। बन्दूक वाले के ऊपर एक व्यक्ति और आ टूटा। इसने चिल्लाकर कहा, 'गुनीसिंह, जाने न पावे बदमाश।'

बन्दूक वाले ने बन्दूक फेंक दी। एक लम्बी छुरी से उसने मनीसिंह के ऊपर वार किया। यह बगल में था और दूसरा, गुनीसिंह, उसके पीछे कमर में हाथ डाले था। मनीसिंह ने अपना कृपाण नहीं संभाल पाया था कि आक्रमणकारी की छुरी ने उसको एक पसली से दूसरी पसली तक चीर दिया। वह आह करके गिर पड़ा। आक्रमणकारी ने गुनीसिंह को झकझोर कर फेंकने की कोशिश की, परन्तु वह लोहे की रस्सी की तरह लिपटा हुआ था। तो भी आक्रमणकारी ने बगल से गुनीसिंह की कांख के ऊपर वार किया। छुरी भीतर तक नहीं घस सकी। उसने फिर से वार करने की कोशिश की। इतने में वे दोनों सईस नङ्गी तलवारें लिये

हुये उस आक्रमणकारी पर आ झपटे। रस्सी की तरह लिपटे हुये गुनीसिंह का उनको बरकाव करना था। इसलिये कुछ क्षण का विलम्ब हुआ। परन्तु उन्होंने अवसर पा लिया। एक ने ताककर तलवार का वार किया। आक्रमणकारी भरभराकर गिर पड़ा। माधव जी आ गये।

माधव जी ने तीनों घायलों को उठवाया—गुनीसिंह सबसे कम आहत हुआ था और पूरे चेत में था।

(७५)

कमरे तक लाने के पहले ही मनीसिंह मर चुका था। आक्रमणकारी का सिर बगल मे थोड़ा सा कटा था, परन्तु कन्धा उसका बिलकुल चिर गया था। कुछ होश मे था, लेकिन मरणासन्न।

'तुम कौन हो ?' माधव जी ने उससे पूछा।

गिड़गिड़ाकर घायल ने उत्तर दिया, 'राघोबा दादा का सिपाही। मे···रा···अपराध···नही···है। उन्हीं की आ···ज्ञा···से···आ··· या। पा···नी।'

माधव जी ने तुरन्त उसके लिये पानी मँगवाया। पानी थोड़ा सा मुँह में गया, बाकी बाहर फैल गया।

घायल के मुह से निकला, 'दा··· दा···' और वह थोड़ा सा छटपटा कर मर गया।

गुनीसिंह को पानी पिला दिया गया था। छाती के ऊपर के घाव से काफी खून निकल रहा था, परन्तु उसके प्राण संकट मे नहीं थे। वह तकिया के सहारे लेटा हुआ था।

माधव जी ने चिल्लाकर पूछा, 'भाई जी, कष्ट अधिक तो नहीं है ?'

'नहीं जी', बारीक स्वर में गुनीसिंह ने उत्तर दिया।

'कपडे उतार डालो, तुम्हारी मरहम पट्टी कर दी जाय', माधव जी ने उसी स्वर मे कहा।

गुनीसिंह तुरन्त खड़ा हो गया। खून से तर हो जाने के कारण गुनीसिंह के एक तरफ के कपड़े शरीर से चिपट गये थे।

'नहीं जी,' सकपका कर गुनीसिंह ने कहा।

'नहीं जी, नहीं जी क्या ? विलक्षण आदमी हैं !'—माधव बोले,—'इस हत्यारे के पास पहले मनीसिंह पहुंचा था ?'

'नहीं जी।'

'पहले तुम पहुंचे थे ?'

'हां जी।'

'उसकी बन्दूक का निशाना चूकने पर तुम आ चिपटे ?'

'नही जी।'

'तो क्या बन्दूक का निशाना तुम्हारे आ लिपटने से उचट गया ?'

'हा जी।'

'इस हत्यारे के बारे मे तुम कुछ जानते हो ?'

'नही जी।'

'इसको सबसे पहले तुमने कब देखा था ?'

'शाम को जी। जब आप घूमने गये।'

'तुम केवल मुन्शी ही नही हो, तुमने मेरे लिये अपनी जान जोखिम में डाली। बहादुर हो।'

'नही जी।'

'इन दोनों लाशो के दाह का प्रबन्ध सवेरे किया जायगा। तुम तुरन्त कपडे उतार कर मरहमपट्टी करवाओ। तब तक मैं आता हू।'

'हा जी—नहीं जी।'

'हा जी, नही जी ! खैर, जाओ। मरहमपट्टी करवाओ। अभी घाव गरम है।'

माधव जी भीतर चले गये।

गुनीसिंह ने माधवजी के उपचारको की एक नही सुनी और वह लपककर अपने कमरे मे चला गया। थोडी देर मे माधव जी भीतर से आ गये। गुनीसिंह तब तक मरहमपट्टी करके, कपड़े बदल कर आ गया था। पुर्जी हाथ में थी।

माधव जी मसनद पर बैठ गये। गुनीसिंह खडा रहा। कमरे में और कोई नही था।

माधव ने अनुरोध किया, 'बैठो मेरे प्यारे भाई, तुम्हारे इस उपकार को कभी नही भूलूंगा।'

गुनीसिंह हाथ जोड़कर बैठ गया।

माधव ने कहा, 'मुझे मनीसिंह के मारे जाने का बडा दुख है। इसके घर मे कोई है ? उसके एहसान का बदला कुछ तो दूँ।'

'नही जी। मेरे सिवाय कोई नही है।' वह बोला।

'तब मेरे ऊपर तुम्हारा दुगुना भार है। मैं तुम्हे अपना भाई बनाना चाहता हू।' माधव ने प्रस्ताव किया।

'नही जी। मैं किसी योग्य नही।' उसने प्रतिवाद किया।

माधव ने खड़े होते हुये कहा, 'तुम हा जी नहीं जी के सिवाय कुछ और भी कह सकते हो ?' और वे हँसे। हाथ फैला कर बोले, 'आज से तुम मेरे भाई हुये गुनीसिंह। आओ मैं तुमको अपनी छाती से लगाऊँगा।'

गुनीसिंह सिकुड़ गया। उसने बैठे ही बैठे माधव जी के पैरो की ओर हाथ बढाये। उङ्गलिया कमल-कलिकाओ जैसी।

कैसे चिपटा होगा इन उङ्गलियो वाला यह गुनीसिंह उस आक्रमण-कारी से ? माधव ने मन मे प्रश्न किया। उन्होंने झुककर उसके हाथ पकड़ लिये। गुलाब के फूल की तरह कोमल। बहुत आराम में पाला-पोसा गया है बिचारा—माधव जी ने सोचा।

गुनीसिंह कराह उठा।

माधव ने चिन्तित स्वर से पूछा, 'क्या घाव मे पीडा है ?'

'हा जी,' उसने उत्तर दिया।

माधव उसके पास बैठ गये, एक हाथ बढ़ाकर बोले, 'देखूँ कहां चोट लगी है तुम्हे।'

गुनीसिंह थोडा सा पीछे हट गया। उसने कहा, 'नही जी। यो ही है।'

'तब खड़े हो जाओ। मैं तुम्हे अपना भाई बनाऊँगा।'

माधव ने हठ किया, और धीरे से उसका वह हाथ पकड़ा जिसकी तरफ वाले वक्ष भाग में चोट नही लगी थी।

गुनीसिंह सिकुड़ा हुआ-सा खडा हो गया। उसने नीचे नीचे से ही अपनी बडी आखो की लम्बी बरोनियो को ऊपर उठ कर माधव जी की ओर देखा।

उसका चेहरा लाल था और देह थर्रा रही थी। माधव जी ने उसके गले में हाथ डाला और उस ओर के कन्धे को अपने कंधे से लगा लिया जहां चोट नही लगी थी। गुनीसिंह ने पीछे हटने की कोशिश की। असफल रहा। तब उसने माधव जी के चौड़े कंधे पर अपना सिर रख दिया। वह सिसकियां लेकर रो पड़ा।

उसके मुंह से निकला, 'मेरा साथी! मेरा साथी!!'

माधव जी ने पुचकार कर गुनीसिंह को बिठला लिया। बोले, 'रन्ज मत करो, भाई गुनीसिंह। मैं मनीसिंह के शव का दाह, क्रियाकर्म इत्यादि बहुत गौरव के साथ करूंगा।'

गुनीसिंह ने कान से पुड्डी लगा कर कहा, 'नहीं जी।'

'नही जी, क्यो?' माधव जी ने पूछा, 'उसने इतना बड़ा काम किया है कि उसको बड़े से बड़ा मान सम्मान मिलना चाहिये। क्यो नही मिलना चाहिये?'

गुनीसिंह के गले मे कुछ अटक गया। उसको साफ करके उत्तर दिया, 'उसका कारण है. मनीसिंह को दफनाया जायगा।'

'दफनाया जायगा!' माधव ने आश्चर्य के साथ कहा। 'सिक्ख को दफनाया जायगा!! क्या कहते हो भाई तुम?'

वह बोला, 'क्या आप मुझे क्षमा कर देंगे? क्षमा करें तो बतलाऊंगा।'

'अवश्य, अवश्य।' माधव ने आश्वासन दिया, 'कहो भाई गुनीसिंह। रुको मत। सकोच मत करो।'

गुनीसिंह ने कहा, 'बहुत छोटा था तब उसका पुरुष चिन्ह जड़ से काट दिया गया था। हिजड़ा बनाकर उसे हरम मे रखा गया। बहुत दिनो रह कर यह हरम से भाग निकला। इसके बाद मेरा उसका साथ हुआ। हम दोनो एक दूसरे को बिलकुल भाई की तरह मानते थे। वह सिक्ख कभी नही हुआ, सिक्ख के वेश मे रहा जरूर। बाल उसके नकली हैं। दिल उसका देवताओं का जैसा था।'

'और तुम्हारे बाल? तुम तो सिक्ख हो?' माधव जी ने पूछा।

'बिलकुल जी। मेरे बाल नकली नहीं हैं जी।' गुनीसिंह ने उत्तर दिया।

माधव ने कुतूहल-शान्ति के लिये गुनीसिंह के सिर पर हाथ फेरा।

गुनीसिंह बोला, 'बाल उखाड़ कर देख लीजिये जी।'

माधव ने हाथ खींच लिया। बोले, 'तुम्हारे बालों के नीचे कुछ अत्यन्त पवित्र और पूज्यनीय है। एक भी नहीं उखाड़ा जायगा। मुझे तुम्हारा विश्वास है।' फिर एक क्षण बाद उन्होंने कहा, 'मैं तुम्हारे अनुरोध और मनीसिंह के व्यक्तित्व-त्याग का आदर करता हूँ। जैसा ठीक समझो करो। परन्तु कठिनाई बहुत पड़ेगी। कैसे निभाओगे?'

गुनीसिंह ने कहा, 'लश्कर में कुछ मुसलमान तो हैं?'

'हैं तो, परन्तु बात छिपेगी नहीं, उघड़ेगी।'

'तब मैं उसको पास वाली नदी में जल-समाधि दिये देता हूं। मुसलमानों में भी होता है यह और सिक्खों हिन्दुओं में भी। सब कपड़े पहिने हुये ही उसे जल समाधि दे दी जाय।'

'यह ठीक है। प्रातःकाल हो जायगा।'

'मैं अब जाऊं जी। सोना चाहता हूँ।'

'अकेले बुरा लगे तो यहीं रह जाओ। मैं तुमको अपने पास ही रखना चाहता हूं। कभी दूर न होने दूगा।'

'नहीं जी। मैं अकेले ही पड़ जाऊँगा अपने कमरे में। आप दूर हटायेंगे भी तो मैं नहीं हटूँगा।'

वह चला गया। माधव जी ने नहीं देखा कि गुनीसिंह ने एक बार उनकी ओर देखा था—आंखों में करुण, मादकता और कृतज्ञता एक साथ ही घुल गई थीं।

(७६)

जवाहरसिंह ने ग्वालियर से मुडकर जोधपुर की ओर कूच किया। उसका विचार था कि राजपूत और जाट राजाओं का सघ बनाकर सिक्खों की सहायता से नजीब को कुचल डाला जाय और इसी सघ की सहायता से मराठों को नर्मदा के दक्षिण की ओर धकेल दिया जाय। जोधपुर का राजा हो गया, परन्तु जयपुर का राजा इस सघ मे शामिल होने को तैयार नही हुआ। जवाहरसिंह पुष्कर तक पहुच गया। वहां उसने जोधपुर-नरेश का आदर सम्मान और भ्रातृ-भाव भी पाया। जयपुर-नरेश को भी बुलाया गया। जवाहरसिंह को अपनी भावज के रूप सौन्दर्य की भूख और उसकी सम्पत्ति की प्यास सबसे ऊपर थी इसलिये उसकी न पट सकी। एक अधिवेशन में उस सुन्दरी की मांग खुल्लमखुल्ला और हठ पूर्वक की गई। परन्तु स्त्री के सौन्दर्य, शरणागत की रक्षा के भाव, जवाहरसिंह के अभद्र बर्ताव और राजपूत अभिमान ने जयपुर-नरेश को विवश कर दिया। सघ न बन पाया। जवाहरसिंह ने जोधपुर की ओर से लौटकर जयपुर पर भयङ्कर वेग के साथ आक्रमण कर दिया। उनके पास एक फ्रांसीसी की तैयार की हुई कुछ पल्टनें किराये पर थी। राजपूत घोड़े तलवार इत्यादि पुराने हथियारों और अपने पुराने विख्यात शौर्य के साथ लडे। जवाहरसिंह की तोपों के गोलों के सामने वे दीवार बनकर डटे रहे और दीवार की तरह ही टूट कर भूशायी हुये, परन्तु उन्होंने मैदान नही छोडा। जवाहरसिंह मुश्किल से अपनी सेना को बचा ले जाकर निकल पाया। उसे बहुत-सी तोपें और सामान वहीं छोड़ आना पडा। बचकर निकल आया इसलिये उसने इस लड़ाई के परिणाम को विजय का नाम दिया, परन्तु लगभग ढाई महीने उपरांत जयपुर-नरेश ने जवाहरसिंह के ऊपर धावा किया और उसे हरा दिया। इन दोनों लडाइयों के पहले ही मराठों ने जवाहरसिंह के अधिकार से बुन्देलखण्ड का प्रदेश छीन लिया था। राघोबा ने जयपुर, रुहेला,

अवध अपनी मराठी सेना और अंग्रेजो का एक संघ बनाकर जवाहरसिंह से आगरे का किला छीन लेने की योजना बनाई। इस योजना में शाहआलम को फिर से दिल्ली के सिंहासन पर बिठलाने और भरतपुर राज्य को छिन्न भिन्न करके आपस में विभक्त कर लेने की बात को मुख्य स्थान मिला था। शाहआलम को अंग्रेजों से इलाहाबाद के किले में पड़े पड़े बंगाल बिहार की दीवानी का छब्बीस लाख रुपया साल बिना प्रयास के मिल रहा था और शाहआलम को इलाहाबाद में अपने फन्दे में लटकाये रहने से अंग्रेजो ज्यादा सुभीता था, इसलिये वे दोनों राजी नही हुये और योजना बनते ही बिगड गई।

माधवराव पेशवा को भी यह योजना नही रुची थी। पेशवा ने माधव जी और तुकोजी होलकर को पहले मेवाड़ से कर वसूल करने और फिर उत्तर हिन्द की समस्याओ को सुलझाने के लिये भेजा।

(७८)

माधव जी ने गुनीसिंह को बुलाकर कुछ चिट्ठियों के लिये टीपें लिखवाईं। इनमें से एक मेवाड़ के महाराना के लिये थी।

दूसरी चिट्ठी भरतपुर के लिये लिखवानी थी। माधव जी ने कहा,— 'भरतपुर के राजा जवाहरसिंह को मार डाला गया है।'

गुनीसिंह का चेहरा लाल पड़कर फिर तुरन्त पीला हो गया।

माधव जी ने देख लिया। बोले, 'भाई एक नहीं दोनों मर गये हैं— जयपुर का राजा माधवसिंह और भरतपुर का यह जवाहरसिंह भी। धक्का केवल इस बात से लगता है कि वे दोनों वीर थे, परन्तु दुःख इसलिये नहीं होता कि दोनों उद्धत हठी थे। और क्रूर भी।'

'हाँ जी', धीरे से गुनीसिंह ने कहा।

'तुमको नहीं मालूम था, गुनीसिंह ? बात तो पुरानी पड़ गई है।' माधव जी ने पूछा।

'नहीं जी। मैं लोगों मे बहुत ही कम उठता बैठता हूं।' गुनीसिंह ने उत्तर दिया।

माधव जी कहते गये, 'जवाहरसिंह के मरने पर रतनसिंह गद्दी पर बैठा। एक नवलसिंह उसके मुकाबिले में खड़ा हो गया। रतनसिंह को किसी धूर्त गुसाईं ने मार डाला। अब रतनसिंह का लड़का राजा घोषित किया गया है। वह अल्प-वयस्क है। इसके और इसके अभिभावक के बीच में छिड़ पड़ी है। हम रतनसिंह के पुत्र का समर्थन करना चाहते हैं। ठीक है न ?'

बारीक स्वर मे उत्तर मिला, 'हा जी।'

'होलकर का विचार उसके प्रति पक्षी नवलसिंह का पक्षपात करने का है। क्या यह ठीक हो रहा है ?' माधव जी ने कहा।

गुनीसिंह बोला, 'हां जी।'

माधव ने आश्चर्य प्रकट किया, 'वाह ! होलकर समस्या को बहुत उलझा देगा ।'

'ना जी ।'

'नजीबखां रुहेला भरतपुर पर आख लगाये हुये है । होलकर नजीबखां से लड़े और न लड़े । यदि न लड़ा तो क्या यह अच्छा होगा ?'

'हां जी ।'

'खूब ! खूब !! पेशवा की, स्वदेश की, स्वराज्य की इससे बड़ी हानि होगी ।'

'ना जी !'

'निस्सन्देह होगी । नजीब हिन्दुस्थान मे पठानो का राज्य कायम करना चाहता है । फकीरो से प्रेरित दिल्ली के आस पास की मुसलमान जनता उसका साथ दे रही है । उसके निवारण का एकमात्र उपाय बादशाह शाहआलम को हाथ मे करना है । वह इस समय शुजा और अंग्रेजों के हाथ में है । जो जाट राजा या सरदार सबसे अधिक प्रबल हो उसे अपना मित्र बनाये रखना अत्यन्त आवश्यक है । अन्यथा उत्तर मे अपना कोई नहीं । शाहआलम को एक वजीर भी देना ही पड़ेगा । शुजा अत्यन्त आलसी और अंग्रेजो के हाथ की कठपुतली है । ऐसी परिस्थिति मे शाहआलम का वजीर ऐसे व्यक्ति को बनाना पड़ेगा जिसके और शाहआलम के बीच में बड़ी गहरी खाई हो । बुरा होगा न उसको वजीर बनाना ?'

'ना जी ।'

'ना जी ! परिस्थितियो से विवश होकर उसे भले ही वजीर बनाना पड़े, परन्तु शिहाबुद्दीन को वजीर !'

ऐं ! क्या जी ?' गुर्नासिंह ने अपनी बड़ी बड़ी आखों को ऊपर उठाकर पूछा जैसे कोई नशा टूटा हो । उसके गोरे माथे पर पसीना था ।

'तुम अभी तक क्या सो रहे थे ?' माधव जी ने मुस्कराकर कहा, 'देखूं तुमने अभी तक क्या लिखा है ?'

'कुछ भी तो नही जी !' गुनीसिंह तुरन्त सजग, सचेत होकर बोला।

माधव ने कागज हाथ में ले लिया। कागज पर फारसी में एक अधूरी कविता लिखी गई थी। माधव जी फारसी जानते थे। उन्होंने पढ़ा। कविता का अर्थ था,—

'रे हृदय, तू ने उस हरी-भरी रंग-बिरंगी फुलवाडी को देखा ! उस लू को भी देखा जिसने फुलवाडी के सुरभित पुष्पों को तोड कर फेंक दिया और सारी फुलवाडी तथा उसमें चहकने वाली बुलबुल को भी खाक कर दिया ! अब ऐ लू, तू भी समाप्त हो गई ! रे हृदय, तू अब और क्या क्या देखने के लिये बच रहा है ?'

जब माधव जी कविता पढ रहे थे, गुनीसिंह बगलें झाकता हुआ-सा सकुच रहा था। कविता पढ लेने पर माधव जी हँस पड़े। हँसते हँसते उन्होंने कागज को गुनीसिंह के हाथ मे दे दिया बोले, 'मुझे आज मालूम हुआ कि तुम कवि हो भाई गुनीसिंह ! मुन्शी, सिपाही और कवि सब एक साथ !! तुम्हारा कान अच्छा होता तो मैं तुम्हें पेशवा की ओर से किसी बड़े राजदरबार मे राजदूत बनाकर रखता।'

गुनीसिंह ने हाथ जोड़कर क्षमा प्रार्थना की, 'क्या मुझे इस मूर्खता के लिये क्षमा किया जायगा ?'

'किस मूर्खता के लिये ?' माधव ने कहा, 'तुमने सुन्दर कविता बनाई, पर इसका विषय कौन है ? यह किसका हवाला है ?'

गुनीसिंह बोला, 'पटेल जी, दूसरों की बात न सुन पाने के कारण मैं अपने मन के साथ प्रायः बातचीत किया करता हूँ। कविता करने का मेरा पुराना दुर्गुण है। इस समय मन मे एक लौ जागी और मैं अपने को बिलकुल भूल गया। अपराध के लिये क्षमा चाहता हूँ।'

'मैं कह चुका हूँ और मान चुका हूं कि तुम मेरे भाई हो,' माधव ने सान्त्वना दी, 'इसलिये तुम बिलकुल चिन्ता मत करो। इस समय मन न लगता हो तो कविता को पूरा करने के बाद फिर थोड़ी देर में

आ जाओ। मैंने उत्तर भारत की समस्याओं के बारे में आरम्भ में जो कुछ कहा था क्या तुमको याद है?'

'जी बिलकुल नहीं पटेल जी', गुनीसिंह ने कहा, 'आगे कभी ऐसा न होगा।'

'पर देखो,' माधव जी मुस्कराते हुये बोले, 'तुम कविता करना कभी मत छोड़ना। और—और— केवल हां जी ना जी में मुझसे बातचीत मत किया करो। तुम काफी गहरे जान पड़ते हो।'

गुनीसिंह भी मुस्कराया। माधव जी ने उसे पहले कभी ऐसा मुस्कराते हुये नहीं देखा था, बालों से ढकी हुई भी उसकी सुन्दर, मनोहर मुस्कराहट को देखकर माधव जी प्रसन्न हुये। उन्होंने कहा, 'सोचता था, तुम को भगवान ने संगमरमर से काट तराश कर बनाया है, परन्तु मैं तुम्हारे बारे में अब कुछ और सोच रहा हूँ। भाई तो तुम मेरे हो ही गये हो, आज से गहरे मित्र भी हुये। कभी किसी बात का संकोच मत करना। तुम थोड़ी देर में आ जाओ। चिट्ठी लिखने की बहुत आतुरता नहीं है।'

गुनीसिंह ने निवेदन किया, 'नहीं जी, पटेल जी, मैं इसी समय लिखूंगा। मनमें एक सनक उठी थी, वह चली गई। आगे कभी नहीं उठेगी।'

माधव ने फिर कहा, 'तुम हां जी नहीं जी के आगे तो निकले! तुम्हारी कविता मुझे अच्छी लगेगी, करते रहना। क्या अरबी, तुर्की और हिन्दी में भी कविता करते हो? मैं भी कभी कभी हिन्दी में लिखता हूं।'

'जी नहीं।' उसने उत्तर दिया, 'हिन्दी में कभी कभी कुछ ही वैसे फारसी में ही अभ्यास और शौक है।'

'अच्छा अब चिट्ठी लिखो,' माधव जी ने का।

(८१)

पूना में न पेशवा के पास रुपया था और न बाहर होलकर, सिन्धिया इत्यादि के पास। बरस बरस दो दो बरस तक सिपाहियों का वेतन बाकी में पड़ा रहता था। सिपाही लूटमार की आशा पर अटके रहते थे और सरदार जागीरदारों के कर पर या राजाओं और नवाबों के अस्थायी प्रदानों पर। इस तरह लूटमार और जागीरदारी गहरी जड़ें पकड़ती चली गईं।

माधव जी की सेना उदयपुर की ओर गई और होलकर की कोटा की दिशा में।

राजपूताना के रजवाड़े जब किसी बाहर वाले से नहीं लड़ना होता था तब वे आपस में लड़ते थे। जब आपस में लड़ाई नहीं होती थी तब वे अपने घर में ही जूझ बैठते थे।

व्यक्तित्व और बापौती की धारणा इतनी प्रबल हो गई थी कि उसके सामने धर्म, देश, समाज सब तुच्छ हो गया था। उदयपुर का घेरा डाले हुये माधव जी कुछ इसी प्रकार की बात सोच रहे थे।

महाराना का देहान्त हो गया था। इस समय मृत राजा के कुछ महीने की आयु वाले पुत्र और उतरती अवस्था के चाचा में गृह युद्ध हो रहा था। देने के लिये रुपया किसी के पास न था। पेशवा का बहुत बाकी पड़ा था। एक पक्ष ने होलकर को बुलाया, दूसरे सिन्धिया को। झगड़ा निबटाने के लिये माधव जी ने तुकोजी को कोटा पत्र भेजा।

उदयपुर से दूर माधव जी ने खाइया खोद रखी थीं, पर उदयपुर के ऊपर सिन्धिया का एक गोला भी नहीं छूट रहा था। तुकोजी आया। यह सब देखकर उसे आश्चर्य हुआ।

होलकर ने कहा, 'खाइयों को आगे बढ़ाओ और गोलाबारी करो। इस तरह घेरा डालने से काम नहीं चलेगा।'

घेरे के भीतर वह पक्ष वाला बन्द था जिसने माधव जी को बुलाया था, परन्तु उनके आ जाने पर वह रुपया देने से नट गया था ।

'उदयपुर के भीतर अकाल पड़ रहा है । सैनिक और जनता त्रस्त हो उठी हैं । उनका नेता शीघ्र हमारे लिये फाटक खोल देगा । गोलाबारी की आवश्यकता नहीं है ।' माधव जी ने कहा ।

तुकोजी गरम हो पड़ा । बोला, 'तुम्हारा घेरा काफी मजेदार है । घेरे के भीतर से सहज ही लोग बाहर निकल जाते हैं और अन्न-सग्रह कर के ले आते हैं ! यह सब क्या है ?

'कुछ कड़ा कर दूंगा घेरे को ।'

'कुछ कड़ा । क्या इस घेरे को युगों तक चलाना है ?'

'इसे निपटाने के लिये ही तो तुम्हें बुलाया है । दोनों दलों में समझौता करवा दो ।

'ऐसे समझौता नहीं होगा । भीतर अन्न मत पहुंचने दो । विवश होकर घेरे के भीतर वाले उद्धार के लिये प्रार्थना करेंगे तब होगा समझौता ।'

'तब तुम आज तक न समझे कि राजपूत किसको कहते हैं । मैं उदयपुरियों को न तो कंकाल बनाना चाहता हूँ और न उदयपुर की इमारतों के खंडहल । बहुत दबाये जाने पर ये लोग तलवार लेकर निकल पड़ेंगे और मर मिटेंगे ।'

'यह बात है ! इतने युद्धों के कारीगर होते हुये भी यह तो डरते हो या पोचे खोखले भ्रमों में हो ।'

'डरता हूँ और भ्रम में भी हूँ । डर है राणाप्रताप की स्मृति के अपमान का और भी अनेक वीर आत्माओं के निरादर का, जो विदेशी आक्रमणकारियों के सामने न झुककर तलवार लेकर निकल पड़े और अपनी बात पर आहुत हो गये । भ्रम है ये सब हमारे दुखद वर्ताव के कारण कहीं एकत्र न हो जायें और पठानों की साम्राज्य-कामना का साथ न दे उठें ।'

'तुम्हारी जितनी योजनायें हैं सब नजीब को सामने रखकर बनाई जाती है।'

'नहीं, एक और को भी उसके साथ ही रख लेता हू। वह है अंग्रेज। नजीब अफगानिस्तान इत्यादि विदेशों से लूटने और आग लगाने वालों को बुला सकता है, अंग्रेज अपने देश से सेना, नये हथियार और षडयन्त्र-कारिणी बुद्धि बहुतायत के साथ ला सकता है जो हमारे यहा के अनेक राजा नवाबों और सरदारों को अपनी ओर फोड लेने में सहज ही समर्थ हो जाती है।'

'जो कुछ भी हो शीघ्र तै करो पटेल बुवा, मैं अपना समय नष्ट नही कर सकता यहा। मुझे जटवाडे पर हमला करना है।'

'परिस्थिति ऐसी है कि दीर्घकालीन योजनायें बनाई नही जा सकतीं। राजनीति से उत्पन्न होने वाली परिस्थितिया पल पल पर बदलती हैं। पल पल पर उनका उपचार सोचना पडता है। सन्ध्या काल के सूर्य की किरणें मन्द पवन द्वारा उद्वेलित किसी सरोवर की लहरों पर जब पड़ती हैं तब उनके चमत्कारपूर्ण रहस्य का चित्रित करना जिस प्रकार अच्छे से अच्छे चित्रकार के लिये कठिन है उसी प्रकार भारत की वर्तमान राजनैतिक परिस्थितियो के वेग के साथ परिवर्तन पर परिवर्तन का मन में ग्रहण करना, आंकना और उन पर अपने आदर्शों के अनुकूल निर्णय करना कठिन है। उस निर्णय को कार्य का रूप दे पाना और भी अधिक कठिन।'

'ह! ह!! ह!!! अब तो दादा तुम कवि हो गये हो!'

'तो भी तुम्हे नहीं मना पाता हू। जटवाड़े की तरफ गये थे?'

'नही तो। पर जाना है। रुपया तो असल में इकट्ठा वहीं है। वहीं से प्रचुर रूप मे मिलेगा। जवाहरसिंह के बाद रतनसिंह ने चार हजार वेश्याओं का नाच गान करवा के वृन्दावन मे उत्सव मनाया था। हर वेश्या के साथ सफरदाई नायिका पीकदान वाले इत्यादि दस दस! लगभग पचास हजार सब मिलाकर। इन पर कितना रुपया न खर्च हुआ होगा? पर

जब हम अपना पावना इन जाट राजाओ से मांगते है, तब ये दुनियो भर की टालबाजी करने लगते है। और फिर ये लोग राजपूतो को साथ लगाकर मराठो के विरुद्ध संघ बनाने के भी प्रपंच रचते हैं।'

'इसीलिये तो कहता हू इन्हें मोड़ना है। क्योंकि नाच पर अपना उत्साह और रुपया फूकने वाले जाट या राजपूत जब लड़ने के लिये खड़े हो जाते हैं तब कोई उनको पीछे नही हटा पाता है। मन चाहने लगता है इन सबको अपनी सेना मे रख लूं, और आदर्श को बढाऊं।'

'तो फिर क्या तै किया ?'

'बतलाया न।'

'कुछ भी तो नही बतलाया। जान पड़ता है तुम अनिश्चय मे कविता के धुंधलेपन में हो अभी।'

'शायद।'

होलकर के मन मे अवहेलना ने स्थान पकड़ा। बोला, 'घेरा दृढ और सकीर्ण करोगे या नही ?'

'देखूंगा।'

'उदयपुरियो के बाहर निकलकर अन्न सग्रह के प्रयत्नों को रोकोगे या नही ?'

'शायद रोकना पड़े।'

'मेवाड़ को अधिकार-वृत्त मे लाना है या नही। उसका दमन करोगे या नही ?'

'नहीं।'

'रुपया कैसे मिलेगा ?'

'दोनो पक्षों मे समझौता करा लेने मे।'

'कैसे होगा ?'

'कराओ। प्रयत्न करो। मैं सहायता दूंगा।'

होलकर ग्लानिमग्न होकर चला गया। उसने पेशवा को लिखा कि सिंधिया की राय क्षण क्षण पर बदलती है, अनिश्चय से भरे हुये हैं,

जाटों पर हमला करने में ढीले राजस्थान के राजाओं से कर वसूल करने में शिथिल और किसी भी काम के करने में तत्पर नहीं। सिन्धिया-शिविर में पेशवा का एक समाचार-दाता नियुक्त रहता था। उससे भी यही लिखवा दिया गया।

दक्षिण में राघोबा उत्पात कर उठा था। निजाम अंग्रेज और हैदरअली ने भी समस्यायें उत्पन्न कर दी थी। पेशवा ने होलकर और सिन्धिया को पूना बुलाया।

× × ×

अधिकांश मराठी सेनायें दक्षिण की ओर चली गई। जाट परस्पर लड झगड रहे थे। राजपूताने में घरेलू युद्ध चल रहे थे। नजीब सिक्खों से लड़ते लड़ते थक चुका था। अंग्रेज शाहआलम बादशाह को इलाहाबाद में बन्दी सा बनाये हुये थे। नजीब ने अवसर प्रत्येक प्रकार से उपयुक्त समझकर अपने बडे लडके जाबिताखाँ को दिल्ली स्थित शाही परिवार का मुख्तार, अभिभावक, शासक, वकील इत्यादि सभी कुछ एक साथ बना दिया था।

शाहआलम का लड़का दिल्ली में था और कई लड़कियां भी। एक दिन नजीब शाही महल में आया। बड़ी आवभगत की गई। जाबिता का लड़का—नजीब का पोता—गुलाम कादिर जो दिल्ली में रहने लगा था। उस समारोह में सम्मिलित हुआ। महल के हिजड़ों को रिश्वत देकर समारोह के दूसरे ही दिन वह स्त्री वेश में हरम में पहुंचा और बादशाह की एक शाहजादी के पास एकान्त में जा मिला। शाहजादी ने उसे पहिचान लिया और शर्बत पिलाने लगी। उसी समय उसकी मां कुछ बांदियों सहित आ पहुँची। लडकी घबराकर रोने लगी। उसकी मां—बेगम—ने विकट प्रायश्चित करवाया, - उस बिचारी के हाथों गुलाम कादिर के सिर पर गिन कर ग्यारह जूते लगवाये। गुलाम कादिर चुपचाप चला आया।

इस घटना का समाचार विराट रूप लेकर चुपचाप चारों दिशाओं में फैल गया। गुलाम कादिर का हरम में ही वध कर दिया गया होता परन्तु दिल्ली की बादशाहत और शाही कुटुम्ब को जाटों, सिक्खों और मराठों से बचाने वाला नजीबखां रुहेला ही समझा गया था इसलिये रह गया। केवल जूतों की मार का दण्ड इसे मिला। परन्तु इस दण्ड ने आगे चलकर इतिहास के पन्ने काले कर दिये।

(८२)

दक्षिण मे अंग्रेजो की शह पाकर निजाम फिर चंचल हो उठा था और हैदरअली महाराष्ट्र के दक्षिणी भाग पर नख गडाने की चिन्ता मे था। राघोबा ने फिर षडयन्त्र रचा था, परन्तु उत्तर की ओर से मराठी सेना के अधिकाश और मुख्य सेनापतियों के आ जाने के कारण स्थिति संभल गई।

माधवराव पेशवा ने उत्तर में अधिकार की पुन. स्थापना के लिये एक विशाल सेना का सग्रह किया। पेशवा के आदेशानुसार सेना के कई अश कूच कर चुके थे। केवल माधव जी का दल बनवाडी मे रह गया था। उनका खास कलम—सचिव—गुनीसिंह ज्वर ग्रस्त हो गया था। पेशवा की आज्ञा के पालने के लिये केवल तीन दिन की अवधि रह गई थी। माधव जी गुनीसिंह की दशा और उस आज्ञा की अवधि के कारण चिन्तित थे।

गुनीसिंह चारपाई पर बिस्तरों में पडा था। वह मुह तक कपडे से ढाके था।

माधव जी ने कपडो के भीतर हाथ डालकर उसका शरीर टटोलना चाहा। गुनीसिंह ने घबराकर अपना हाथ बाहर निकाल दिया। हाथ टेहुनी तक बाहर निकल आया। स्वस्थ दशा मे लगता जैसे कमलों से से बनाया गया हो,—माधव को भासित हुआ। परन्तु इस समय पीला और कुछ कृश था।

माधव ने कहा, 'हाथ भीतर कर लो। हवा न लगने पावे।'

'ना जी। अब तो ठीक हो रहा हूँ।' वह बोला।

माधव ने हाथ देखा। ज्वर था। हाथ भीतर कर दिया। माथे को छुआ पसीना आ रहा था। माधव ने अपने दुपट्टे से पोछ दिया। गुनीसिंह के चेहरे पर क्षीण मुस्कराहट आई।

माधव जी ने दुपट्टे को हाथ मे लिये हुये कहा, 'तुम्हारे पेट, छाती और गर्दन पर पसीना होगा, मैं पोछ दूं,' और वे भुके।

गुनीसिंह घुटनों को पेट की ओर समेटकर तुरन्त बैठ गया और कपडे से गर्दन तक अपने को छिपाने का प्रयत्न करने लगा। मुस्कराकर बोला, 'ना जी, पटेल जी कष्ट मत करिये; मैं पोछ लूगा। अभी तो थोड़ा-सा ही आया है। ज्यादा आने पर सब कर लूगा।'

माधव जी ने सावधानी के साथ उसकी ओर देखते हुये कहा, 'अच्छा मैं किसी को भेज दूं तुम्हारी सेवा के लिये ? तुम अपने नौकर से ही पसीना पुछवा लो।'

'नहीं जी मैं स्वयं कर लूंगा। आप काम देखिये', उसने अनुरोध किया।

माधव जी मुस्कराकर बोले, 'इस ज्वार से तुम्हें कुछ लाभ भी हुआ है—तुम बहुत ऊँचे सुनते थे, आज तो बिना पुंगी की सहायता के बहुत काफी अच्छा सुन लिया है। पुंगी कहा है ?'

माधव जी ने आख गडा कर उसकी ओर देखा। पीले चेहरे पर और ढली हुई आखों मे एक लहर-सी दौड गई।

गुनीसिंह ने एक दो क्षण खासा, फिर स्थिर स्वर मे कहा, 'हा जी, कुछ अच्छा तो सुनाई पड़ा है। ज्वर के चले जाने पर देखू कैसा क्या रहता है।'

माधव जी ने उसके सिर पर हाथ फेरा। फिर कन्धा पकड कर बोले, 'लेट जाओ। बैठे बैठे कष्ट होने लगा होगा।'

गुनीसिंह ने घुटनों पर सिर रख लिया। उसी दशा मे उसने कहा, 'नहीं जी।'

माधव ने देखा वह हँस या मुस्करा रहा था।

'क्या बात है गुनी भाई ? लेट क्यों नहीं जाते ?' माधव ने पूछा।

उसने उत्तर दिया, 'जब तक आप खड़े है मैं ऐसे ही बैठा रहूगा।'

'तो मैं चारपाई पर बैठा जाता हूँ।' माधव जी ने कहा और वे चारपाई की पट्टी पर सिरहाने की ओर बैठ गये। उन्होंने देखा गुनीसिंह घुटनों पर सिर रखे हुये हँस रहा है।

'सिर उठाओ गुनीसिंह,' माधव जी ने हँसकर कहा, 'मैं रहस्य को समझना चाहता हूँ।'

गुनीसिंह का हँसना बन्द हो गया। उसने सिर उठाया। उसकी आखें ज्वर, पसीने और हँसने के कारण लाल और तरल थीं।

'गुनीसिंह', गम्भीर स्वर में माधव जी ने कहा, 'तुम बहिरे हो या न हो, तुम कोई भी हो कभी मेरे पास से दूर नहीं होगे। पटेल सदा तुम्हे अपना समझेगा।'

गुनीसिंह की आखो मे आसू उमड़ आये। उसने सिसकते हुये कहा, 'पटेल जी, मैं बडा दुखिया हूँ। जब मुझको संसार मे अपना कोई नहीं दिखलाई पडा तब यकायक आत्मा ने कहा कि आपका सहारा मिलेगा और मैं बच जाऊँगा।'

'बस बस अब और अधिक बात मत करो', माधव जी स्नेह के साथ बोले, 'वही हा जी, ना जी का क्रम चालू रखो। पुगी को मत छोड़ना चाहे कान बिलकुल अच्छा भी सुनने लग जायें। अच्छा अब हँसो। तुम्हारा हँसना तो केवल आज ही देखा है। मुस्कराना भी एक घड़ी के भीतर दो बार!'

'हां जी पटेल जी', कहकर वह जरा सा मुस्कराया और लेट गया।

माधव जी ने उसके सिर पर हाथ फेरा और चले गये। उनके पीठ फेरते ही गुनीसिंह ने उनकी दिशा में करवट ली और वह एकटक देखता रहा।

तीन दिन हो गये। गुनीसिंह ने पूरा स्वास्थ्य लाभ न कर पाया। ज्वर तो चला गया, परन्तु उसे काफी निर्बल छोड़ गया। सेवा सुश्रूषा के लिये कुछ नौकर थे वह उनसे बहुत कम काम लेता था। शिविर के

लोगों ने सुन रखा था कि सिक्ख बहुत कष्ट सहिष्णु और परिश्रमी होते हैं। वह नौकरो का बहुत कम आसरा पकडता था।

माधव जी शिविर को उठा कर उत्तर की ओर ले जाने की तय्यारी मे व्यस्त थे। गुनीसिंह के स्वास्थ्य का समाचार मगवा लेते थे, परन्तु आ नही सके। गुनीसिंह का जी चाहता था उन्हे बुलाऊँ। साहस नही हुआ।

चौथे दिन माधव जी सन्ध्या के पूर्व घूमने के लिये घोड़े पर निकले मार्ग में पेशवा से मिलाप हो गया। वह भी सवार था।

पेशवा ने आश्चर्य प्रकट किया—'अरे! तुम अभी तक यही हो!! गये नही?'

माधव ने कहा, 'श्रीमन्त, शिविर मे मेरा खास कलम बीमार पड़ गया है। वैसे तैयारी तो सब हो गई है कूच करने को। उसके स्वस्थ होते ही चल पड़ूगा।'

'बहुत विलक्षण होगा यह खास कलम!' पेशवा के क्षुब्ध कण्ठ से निकला।

माधव जी चुप रहे।

पेशवा ने कहा, 'यदि तीन दिन के भीतर तुम्हारे शिविर का कोई भी अश यहां दिखलाई पड़ा तो उसमे आग लगवा दूँगा और तुम्हारा सब सामान लुटवा लूंगा!' यह था माधवराव पेशवा! चाहे कोई हो अनुशासन मे कसर नही लगाता था।

पेशवा चला गया। माधव जी कुछ क्षण स्तब्ध रहकर घूमते फिरते लौट आये। वे शिविर मे नही पहुँच पाये थे कि पेशवा की धमकी पहले पहुंच कर फैल गई।

माधव घोड़े को सईसों के हाथ में देकर सीधे गुनीसिंह के कमरे में पहुचे। गुनीसिंह चारपाई से उठकर चादर ओढे आ गया। उदास था।

'बैठो।' माधव जी ने कहा, 'अभी एकाध दिन बाहर न निकलो। कही ठण्ड न लग जाय।'

वह बोला, 'नहीं जी, पटेल जी, आप चिन्ता नहीं करें। मैं अच्छा हूं। कूच कर दीजिये।'

क्यों, तुमने कुछ सुना है?' माधव जी ने पूछा।

'हां जी, चर्चा हो रही है। छोटे से आदमी के लिये आप इतनी बड़ी जोखिम न लें।' उसने उत्तर दिया।

माधव जी ने मुस्कराकर कहा, 'छोटा-सा आदमी! हां कद में तो कुछ छोटा अवश्य है, परन्तु—परन्तु—देखो गुनीसिंह तीन दिन तक और नहीं जाऊंगा। तब तक तुम बिलकुल स्वस्थ हो जाओगे। फिर कूच कर दूंगा। सब तैयारी कर ली है। तीन दिन लग गये। इसी कारण तुम्हें देखने के लिये नहीं आ सका। जाओ, आराम करो।'

'अच्छा जी,' वह बोला।

माधव जी ने मुस्कराते हुये ही कहा, 'अब तो कान तुम्हारा खुल गया है। पुङ्गी का क्या होगा?'

'वह मुस्कराते हुये बोला, 'हुकुम तो हो गया है पुङ्गी के बारे में पहले ही।'

'हां हां ठीक है। किसी समय वह काम आयगी। लोगों को छलते रहो अभी।' कहते हुये माधव जी चले गये।

गुनीसिंह मुस्कराता रहा। चेहरा पीला हो गया था। मुस्कान ने पीलेपन पर आभा फेर दी।

तीन दिन के भीतर वह कुछ स्वस्थ हो गया। चौथे दिन सवेरे ही माधव जी ने कूच कर दिया। पेशवा देखने आया! माधव जी के शिविर का एक अंश भी वहां न था।

(८३)

माधवराव पेशवा दूरदर्शी था, बुद्धिमान, वीर, दृढ़ परन्तु क्रोधी था। क्रोध उसे क्षय रोग ने दिया अथवा क्रोध ने क्षय को उत्पन्न किया यह उसके वैद्य निश्चित नहीं कर पाये। परन्तु उसने रोग ग्रस्त रहते हुये भी किसानों की भलाई के लिये अनवरत प्रयत्न किये। जब निजाम राघोबा से मिलकर उससे लड़ा तब उसे हराया, जब राघोबा भोंसले से मिलकर लड़ा तब उसने निजाम को ठण्डा करके उन दोनों को परामूत किया। और अन्त में राघोबा को पकड़कर बन्दीगृह में डाल दिया। भोंसले मराठों के उस विद्रोह का प्रतीक था जो ब्राह्मणों के प्रति ताराबाई के समय से लेकर अन्त तक शान्त नहीं हुआ। और, राघोबा महाराष्ट्र के सरदारों की उस स्वार्थतन्मयता का प्रतिबिम्ब था जो भारत भर को अंग्रेज की कूटनीति के समुद्र में ले डूबा।

माधवराव पेशवा ने मैसूर के वंचक हैदरअली को बुरी तरह हराया। इसके पहले हैदरअली अंग्रेजों को कई लड़ाइयों में हरा चुका था। अंग्रेजों को उसके साथ उस पराजय के परिणामस्वरूप रक्षा और आक्रमण की सन्धि करनी पड़ी थी। परन्तु अंग्रेजों ने हैदरअली—मराठा युद्ध में हैदरअली की कोई सहायता नहीं की। हैदरअली मराठों और अंग्रेजों से खार खा गया। ऐसी परिस्थिति में पेशवा ने पानीपत की लड़ाई के दुष्परिणाम को सुधारने के लिये उत्तर की ओर सेना भेजी।

सेना के कूच करने के पहले ही उत्तर की ओर नजीबखां, फर्रुखाबाद के नवाब, जाट और राजपूत राजाओं को मराठा अधिकार की मान्यता स्वीकार करने और आठ नौ वर्ष के बाकी पावने के लिये चिट्ठियां भेज दी गईं।

आई है। आप की इस मित्रता से काफी लाभ पहुंचता रहा है। आप इस मित्रता को बनाये रखिये। हम तो तैयार हैं ही।'

इस सेना के मालवा में पहुंचते पहुँचने होलकर को नजीब का उत्तर मिल गया—मैंने तो संसार ही त्याग दिया है। मेरा पुत्र जाबिताखां सब काम संभाले है। वह आपके परामर्शों को कभी नहीं टालेगा।

नजीब ने अपने लड़के के द्वारा बादशाह के दिल्ली-स्थित शाहजादे को लिखा—हिन्दुस्थान में अब कोई ताकत ऐसी नहीं दिखती जो मराठों के टीड़ी-दल का मुकाबिला करे, क्योंकि अपनी मदद के लिये अहमदशाह दुर्रानी नहीं आ सकता। इसलिये मैं खुद मराठों में जाकर मिलूंगा और बुरी घड़ी को टालूंगा।

उत्तर मालवा में पहुंचने पर मराठा सरदारों में भविष्य के कार्य-क्रम पर विचार विमर्श हुआ। प्रधान सेनापति रामचन्द्र गणेश, उप सेनापति और दीवान विसाजी कृष्ण, सहायक सेनापति माधव जी सिन्धिया और तुकोजी होलकर। सिन्धिया और होलकर के पन्द्रह पन्द्रह सहस्र सैनिक दो दो तीन तीन सहस्र उन दोनों प्रधानों के और बीस सहस्र पिंडारे!

तुकोजी ने कहा, 'पहले जटवाड़े पर आक्रमण करना चाहिये। अन्तिम राजा रतनसिंह के नाबालिग लड़के केशरीसिंह की अभिभावकता के लिये रतनसिंह के दोनों भाई नवलसिंह और रंजीतसिंह लड़ रहे हैं। हम लोग पहले एक से और फिर दूसरे से लड़ जायें यदि हमें करोड़ों का पुराना बकाया नहीं दिया गया तो।'

प्रधान सेनापति रामचन्द्र गणेश बोला, 'है तो ठीक। रुपये की पूना को, हम लोगों को सबको, पहले आवश्यकता है।'

विसाजी ने परामर्श दिया, 'इलाहाबाद से बादशाह शाहआलम को हाथ में लेकर फिर जटवाड़े पर धावा बोलो।'

माधव जी ने प्रतिवाद किया, 'नवलसिंह और रंजीतसिंह परस्पर लड़ रहे हैं इसलिये हम लोगों को सीधे दिल्ली पहुंचने में कोई बाधा नहीं

पड़ेगी। नजीबखां रुहेला लड़ेगा। हम लोग उसे हराने की समर्थता रखते हैं। दिल्ली को हाथ में लेने से जाट समस्या सहज ही हल हो जायगी। बादशाह इलाहाबाद छोड़कर दिल्ली आ जायगा। वैसे वह अंग्रेजो के छब्बीस लाख रुपया वार्षिक वजीफे को क्यों यो ही छोडने लगा?'

'यह भी ठीक है।' रामचन्द्र गणेश ने समर्थन किया।

तुकोजी बोला, 'नजीब के ऊपर आक्रमण करने मे अहमदशाह अब्दाली फिर हम लोगो के खिलाफ आ सकता है।'

रामचन्द्र गणेश ने कहा, 'यह कठिनाई अवश्य है।'

'कोई कठिनाई नही है।' माधव जी बोले, 'हम लोग उन गलतियो को नही दुहरायेंगे जो पानीपत संग्राम के समय हो गई थी। और फिर इस बात को नहीं भूलना चाहिये कि पञ्जाब मे सिक्ख बहुत संगठित और सशक्त हो गये हैं।'

रामचन्द्र गणेश ने माथा टटोलते हुये कहा, 'बात तो ठीक है।'—

माधव जी ने अपनी बात पूरी की,—'रुहेलों से तुरन्त भिड़ जाने के कारण अवध का नवाब शुजा भी सहम जायगा और अंग्रेजों पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा। वैसे शाहआलम उनके बहकाने फुसलाने मे बराबर पडा रहेगा। हमको उत्तर के काम के लिये इस आड़ ओट की बराबर अटक पड़ेगी।'

'क्या कहते हो तुकोजी?' प्रधान सेनापति ने पूछा।

'मेरे मत में कोई भी अन्तर नहीं पड़ा।' होलकर ने उत्तर दिया, 'घर की रोटी छोड़कर बाहर के टुकडो के लिये भटकना बड़ी भारी भ्रान्ति हैं। जाट राजाओं के पास जितना रुपया है उतना किसी के पास नहीं। इनको ही पहले समझना चाहिये। रुहेलो से पहले लड़ाई लेने पर हम लोग रुहेलों और जाटों के बीच में दब से जायँगे। नवलसिंह और रजीतसिंह की सहायता करने न रुहेले आयेंगे, न गंगापारी पठान और न अवध का नवाब।'

अन्त में यही मत मान्य रहा। माधव जी का प्रतिवाद खाली गया।

(८४)

नजीब के पास प्रधान सेनापति रामचन्द्र गणेश ने तुकोजी द्वारा मित्रता का आश्वासन भेजा।

माधव जी ने रोका था,—'यह मनुष्य अपना सबसे बड़ा शत्रु है। दस वर्ष से मराठी प्रदेशों का रुपया चबाये चला जा रहा है। दत्ताजी, और जनकोजी का रक्त अभी सूखा नही है और तुम लोग उसे अपना मित्र बनाने जा रहे हो! इसने मथुरा वृन्दावन और पानीपत मे कितने हिन्दू मुसलमानों का सहार किया और करवाया !! मैं भी पेशवा को लिखूगा।'

तुकोजी ने यह बात भी गुप्त रूप से नजीबखा को लिखा भेजी।

यह सेना भरतपुर राज्य के विरुद्ध बढी। नवलसिंह युद्ध में हार गया। अब नजीब भी आ गया और उसने जाटो के गाव के गांव और किलों पर किले दबा लिये। यमुना के पश्चिमी तट पर मराठे थे और पूर्वीय तट पर रुहेले। गगापार के पठानों ने इस लडाई मे कोई भाग नहीं लिया।

नजीब से मिलने के लिये सबसे पहले तुकोजी गया। नजीब मल्हार का 'गोद लिया हुआ लडका' था और तुकोजी मल्हार के वश का न होता हुआ भी अहिल्याबाई के उपरान्त इन्दौर की गद्दी का मनोनीत अधिकारी था। दोनो बडे चाव के साथ भाइयों की तरह मिले।

चार दिन पीछे नजीब मराठा सरदारों से मिलने के लिये आया। मराठा शिविर यमुना के इस किनारे था। तुकोजी नजीब को रामचन्द्र गणेश के डेरे पर माधव जी समेत सब मराठा सरदारो का परिचय करवाया। माधव जी के मन मे दाह हो रहा था, परन्तु शिष्टाचार वश उन्होंने अपने को सयत रखा। नजीब को कुछ कहना था। उसने पहले कुरान की गम्भीर शपथ लेकर भविष्य मे मराठो का निरन्तर मित्र और अटल सहयोगी बने रहने का आश्वासन दिया। फिर माधव जी की ओर उन्मुख होकर बोला, 'सिन्धिया सरदार, मुझे बीती हुई का रन्ज है। आप भी भूल जाइये'

'कौन सी बीती हुई ? मैंने तो कुछ कहा नहीं', माधव जी ने प्रश्न किया।

माधव के मुंह से निकली हुई तत्सम्बन्धी सभी बातों को तुकोजी नजीब को पहले ही लिख चुका था।

उसने कहा, 'देखिये सरदार साहब, खुदा जो कुछ चाहता है वही होता है। मैंने दत्ताजी पर हमला नहीं किया था, वे खुदा मेरे ऊपर टूट पड़े थे—'

माधव ने टोका,—'आगे कुछ मत कहिये, मैं स्वयं था उस लड़ाई में। मुझे सब मालूम है।'

नजीब कहता गया, 'नहीं, बात कह देने से दिल साफ हो जाते हैं। मुझे आज तक कभी मौका ही नहीं मिला कहने सुनने का। मैं दत्ताजी का दोस्त बनना चाहता था, लेकिन खुदा की मर्जी कुछ और हो गई।'

माधव को जनकोजी की याद आ गई। अपनी टांग के टूटने की, रानेखां के कष्टों की और नजीब के समर्थन से इब्राहीम गार्दी का निर्दयता-पूर्वक वध किये जाने की। दाह के मारे उनका गला सूख गया। वे चुप रहे।

नजीबखां बोला, 'अब मैं आप लोगों के साथ हूँ। देखिये क्या क्या करके दिखलाता हूँ। खुदा ने चाहा तो आपके सारे दुश्मनों को पामाल कर दूंगा।'

केवल 'हूं' माधव जी के सूखे कण्ठ से दबी हुई फुफकार में निकली।

नजीब ने फिर परमात्मा की दुहाई दी,—'मैं फिर दुहराता हूँ सरदार साहब, बीती को बिसार दीजिये।'

माधव ने उसी की भाषा और भाव को संयत स्वर में कहा, 'जरूर भगवान की मर्जी से ही सब कुछ हुआ, पर देखिये नवाब साहब, आगे क्या होता है।'

नजीब माधव जी के व्यङ्ग को समझ गया। फिर उसने इस विषय की चर्चा नहीं की।

इसके उपरान्त आगे के कार्यक्रम की योजना बनी। नजीब ने उसकी रचना को पूरा किया,—'नवलसिंह के सारे इलाके को छीन लिया जाय। रजीतसिंह से रुपया लिया जाये और फिर गंगापारी पठानों के ऊपर हमला किया जाये। ये लोग बादशाह से बिलकुल फिरे हुये हैं। इनकी और लखनऊ के नवाब की शरारतों की वजह से बादशाह अंग्रेजो के हाथ से नहीं छूट पाते। इनके दबा लेने पर बादशाह सहज ही दिल्ली आ सकेंगे। मैं उनको ले आने का जिम्मा लेता हू। इस कारखाई मे–पूरी कारखाई मे–मैं अपनी जान लडा दूँगा।'

माधव जी ने फिर प्रतिवाद किया। वे चाहते थे कि जाटो को रुपये के लिये तो दबाया जाय, परन्तु उनकी भूमि न छीनी जाय और न गंगापारी पठानो पर आक्रमण किया जाय। परन्तु रामचन्द्र गणेश ने नही माना।

तुकोजी ने प्रबलता के साथ नजीब का समर्थन किया। रामचन्द्र नवलसिंह को एक लडाई में हरा चुका था। तुकोजी दुआब में घुसकर लूटमार करना चाहता था। इसलिये रामचन्द्र को युद्ध के द्वारा ही रुपये मिलने की आशा थी, नजीब के मत को महत्व मिल गया।

माधव जी ने हठपूर्वक अनुरोध किया, 'इस युद्ध का सबसे अधिक बुरा प्रभाव दीन किसानों पर पडेगा। जाट राजा के साथ दया का बर्ताव करिये जितना वह अभी दे सकता हो उतना लेकर काम चलाइये।'

नजीब बोला, 'पूना का करोड़ो रुपया निकलना है भरतपूर राज पर।'

रामचन्द्र ने कहा, 'बिलकुल। ब्याज व्याज समेत चार पाच करोड़ से कम नही बैठेगा।'

तुकोजी ने बढ़ावा दिया,—'इनके प्रदेश पर अधिकार किये बिना रुपया नही मिल सकता। घी सीधी उँगलियो कभी नही निकल सकता।'

अन्त में, घी को टेढ़ी उँगलियों निकालने का निर्णय किया गया।

रामचन्द्र और नजीब ने मिलकर भरतपुर के इलाके को रौंद डाला फिर परगने के परगने नजीब के हाथ मे चले गये। मराठो के हाथ थोडी-सी लूटमार लगी ! पहुच गये थे रुहेलखण्ड के पड़ौस मे !!

(८५)

'भारत में स्वराज्य स्थापित करना है तो नजीब रुहेले का संग छोड़ ही नही देना चाहिये वल्कि जाटों को न सताकर उससे युद्ध कर डालना चाहिये', माधव जी ने गुनीसिंह से कहा जो चिट्ठियां लिखने के लिये उनके पास बैठा था। पुङ्गी कान पर थी। वह मराठी सीख गया था।

गरमियों के दिन थे। लू चल पडी थी। एक पहर दिन चढते ही लू के झकोरे बढ गये। माधव जी कुर्ता धोती पहिने हुये थे। गुनीसिंह ज्यादा कपड़े परन्तु ढीले ढाले। नौकर पंखे झल रहे थे।

'हां जी', गुनीसिंह बोला।

माधव जी कहते गये, 'नाना फडनीस वाली चिट्ठी में इतना और लिख देना कि रामचन्द्र गणेश को छोटे सा छोटा सिपाही मूर्ख समझता है। होलकर लूट मार की धुन मे उसे चाहे जैसा घुमा देता है। नजीब ने पहले से अपना सारा प्रदेश दबा रखा था, अब उसने जाटों की भूमि के भी परगनें अपने दखल मे कर लिये हैं। वह उनको नहीं छोड़ेगा। गंगापारी पठानों पर आक्रमण करने या उनसे कर वसूल करने की योजना से बहुत आशा नही की जा सकती। अन्त में वही, बड़े भाई को माधव पटेल का बार बार प्रणाम।'

'हां जी', कह कर गुनीसिंह ने लिखने की सामग्री बटोरी। चलने को हुआ। उसी समय पहरे वाले ने सूचना दी, 'दिल्ली के वजीर मिलना चाहते हैं।'

गुनीसिंह जाने से रुक गया।

'कौन वजीर?' माधव ने अपनी स्मृति को टटोलने हुये पूछा।

उसने उत्तर दिया, 'नाम नहीं बतलाया। छोटा-सा लाव-लश्कर भी साथ में है। हाथी पर सवार हैं।'

गुनीसिंह अब बिलकुल स्वस्थ हो गया था। चेहरे पर लाली, माथे पर चमक और आंखों में ओज आ चला था। वजीर का नाम सुनकर उसने अपनी सुराहीदार गर्दन जरा टेढ़ी की। भौंह पर बहुत हल्की सिकुड़न और आंखों पर जरा-सा तिरछापन आया।

माधव जी ने कहा, 'यह कौन वजीर है ? और कैसा है ! पहले से कोई सूचना नहीं दी !! वैसे ही चला आया !!! दिल्ली में तो इस समय जाबिताखां या नजीब के, आबुदों के सिवाय और कोई है नहीं। अच्छा, भेजो।'

पहरेदार चला गया।

गुनीसिंह ने धीरे से कहा, 'पटेल जी, दरबारी कपड़े पहन लीजिये। मैं ले आऊं।'

'नहीं भाई', माधव मुसकराते हुये बोले, 'पटेल के कपड़े पहिने तो हूं। तुम बहुत दिनों दिल्ली में रहे हो। वजीर नाम के कितने अहलकिये थे वहां ?'

गुनीसिंह ने बिना किसी भाव के उत्तर दिया, 'मैं तो, जी, एक को जानता था, अर्थात् उसे देखा था, उसी की बाबत सुनता रहता था। शिहाबुद्दीन नाम था उसका।'

ले ग्राये । गुनीसिंह ने कनखियो देखा । माधव जी ने उसे पहिचान लिया था—शिहाबुद्दीन था ।

माधव ने उसे ग्रादर के साथ बिठलाया । सकेत पाकर गुनीसिंह भी बैठ गया । उसने कागज सामने रखा । एक हाथ मे कलम ली ग्रौर दूसरे से पुङ्गी कान मे लगा ली । तिरछे होकर बातें सुनने लगा ।

शिहाब ने माधव जी से कहा, 'इस बेईमान, फरेबी, जालिम नजीब का भरोसा मत करिये राजा साहब—'

'राजा साहब मत कहिये, केवल पटेल', माधव जी ने टोका ।

गुनीसिंह ने ग्राखो नीची किये हुये कनखियो शिहाब को देखा ग्रौर दात सटा लिये ।

शिहाब नाज-ग्रन्दाज के साथ बोला, 'बहुत ग्रच्छा । ग्राप जिस बात को पसन्द करेंगे वही कहूँगा । वैसे ग्राप राजा ही नही, राजाग्रों के राजा हैं । खैर, मैं कह रहा था यह नजीब ग्राप सब को गहरे खड्ड मे डाल कर रहेगा । इसका साथ छोडिये । रुहेलो पर हमला करिये, उसके बाद गंगापारी पठानो पर । इलाहाबाद के कैदी बादशाह पर से निगाह को हटाइये । किसी भरोसे वाले को दिल्ली के तख्त पर बिठलाइये । मैं मदद करूँगा ।'

गुनीसिंह सक्षेप मे लिखता रहा । शिहाब का उसको ग्रोर ध्यान गया । ध्यान जमा ही था कि माधव जी ने कहा, 'ग्राप जानते हैं मैं ग्रकेला कुछ नही कर सकता । ग्राप हमारे प्रधान सेनापति ग्रौर ग्रन्य सरदारो से मिले ?'

उसने उत्तर दिया, 'जी हा, पटेल साहब, उनसे मिलकर ग्रापके पास ग्रा रहा हूँ । वे सब बहुत ग्रच्छी तरह पेश ग्राये । ग्रापके प्रधान सेनापति से बढ़कर कई सरदार ऐसे हैं जो बडे होशियार हैं । मैं सिर्फ तुकोजी होलकर से ग्रभी नही मिला हूँ । ग्रापसे मिलने के बाद उनके पास भी जाऊँगा ।'

'जिनसे ग्राप मिले उन्होंने क्या कहा ?' माधव जी ने पूछा ।

शिहाब ने उत्तर दिया, 'वे मेरी सलाह में शामिल होने को तैयार हैं।'

'वह सलाह क्या है ?'

'नजीब का लश्कर थोड़ी दूर के फासले पर है। रात में फौरन उस पर हमला कर दिया जाय। रुहेलों को खतम करने का यह सबसे अच्छा और सरल उपाय है।'

'और यदि यह बात नजीब को हमले की तैयारी के पहले ही मालूम हो गई तो ?'

'मुमकिन नहीं है।'

'कर देखिये।'

'आपकी राय क्या है ?'

'सोचकर बतलाऊँगा सन्ध्या तक।'

गुनीसिंह ने लिखना बन्द कर दिया था। शिहाब ने फिर उसकी ओर देखा। कुछ क्षण देखता रहा। बोला, 'आपसे जो बात हुई है उम्मेद है कि कहीं बाहर न निकल पायगी। क्या यहां पर मौजूद लोगों का भरोसा किया जा सकता है ?'

माधव ने उत्तर दिया, 'ये मेरे खास कलम हैं। बाकी मेरे खास नौकर चाकर। आप चिन्ता न करें।'

शिहाब उद्धत प्रकृति का था। बोला, 'कब से हैं ये खास कलम साहब आपकी सेवा में ? ये पूना के नहीं हैं। इसी तरफ के सिक्ख हैं।'

गुनीसिंह की आंखें थोड़ी-सी ऊपर उठकर यकायक शिहाब के ऊपर गईं और फिर मुड़ गईं। शिहाब के चेहरे का रंग थोड़ा-सा बदला।

गुनीसिंह के मुख पर हलकी-सी लाली दौड़ गई और अपनी मुख रेखायें छोड़ गई।

'बहुत भरोसे के हैं, बड़े चतुर। साल डेढ़ साल से ऊपर हुआ तब से मेरे पास हैं।' माधव जी ने उत्तर दिया।

'बहिरे हैं ! कब से ?' शिहाब ने यकायक पूछा । माधव जी को इतनी पूछताछ कुछ अखरी, परन्तु उन्होंने अपनी स्वभाव सहज शिष्टता नहीं छोड़ी ।

'आरम्भ से ही । क्यों ? क्या बात है ?' अबकी बार उन्होंने प्रश्न किया ।

कुछ नहीं, कुछ नहीं ।' क्षमा याचना के स्वर मे शिहाब ने कहा ।

माधव जी ने गुनींसिंह को आदेश दिया,—'अभी और कोई काम नहीं है, जा सकते हो ।'

गुनींसिंह लिखने की सामग्री इकट्ठी करके चला गया । जाते समय शिहाब ने उसकी गति को क्षणिक ध्यान के साथ देखा ।

कुछ समय उपरान्त शिहाब ने विदा ली । शिहाब जानता था कि होलकर नजीब का मित्र है । होलकर से मिलना ठीक न समझा ।

योजना छिपाई नही जा सकती थी । होलकर को मालूम हो गई । उसने तुरन्त नजीब को सूचना दी —'कुछ मराठा सरदार रात में आपके ऊपर छापा मारने वाले हैं । सावधान ! घर चले जाइये ।'

मराठी सेना ने आधी रात के लगभग छापा मारा । नजीब पहले ही खिसक गया था । उसके शिविर के नाम पर वहां शून्य था ।

(८६)

भरतपूर राज्य के अन्तर्वेदी प्रदेश को रौंद कुचली और लूटमार से बिलकुल उजाड़ दिया गया, परन्तु कर की वसूली न हुई न हुई। वर्षा का आरम्भ हो गया। मराठी छावनी यमुना के उस पार अलीगढ़ के इर्द-गिर्द जा ठहरी। यहां निश्चय हुआ कि वर्षा का अन्त होते ही गंगा-पारी पठानों से—जो नजीबखां वाले रुहेला-दल के आने के पूर्व आ बसे थे और रुहेले ही थे—वसूली की जायगी। नजीबखां ने यही सलाह दी थी।

रामचन्द्र, विसाजी और तुकोजी नित्य कोई न कोई नई योजना बनाते बिगाड़ते थे। माधव इन वाद-विवादों में भाग नहीं लेते थे। रामचन्द्र गणेश ढुलमुल था।

पानी बरसकर रुक गया था। रात का समय। फिर बरस पड़ने के भय से छावनी में लोग अपने अपने डेरे में बसेरा ले रहे थे। एक तम्बू में विसाजी और तुकोजी किसी योजना पर बातचीत कर रहे थे।

होलकर ने कहा, 'किसी तरह इस माधव पटेल को हटाओ तो काम चले। हम कहते हैं उत्तर तो वह कहता है दक्षिण, हम कहते हैं पूर्व तो वह कहता है पश्चिम!'

विसाजी बोला, 'अब तक कभी का सब काम निबट गया होता। पटेल तो बड़ा विघ्न है ही, पर यह रामचन्द्र? कितना बड़ा मूर्ख है! बिलकुल पोपा बसन्त!! न हमारी बात समझे और न माधव की छुप चालकियों को। संभव है अन्त में लंगड़े से मिल जाय।'

'असल में वह यह नहीं चाहता कि अन्तर्वेद में होलकर वंश को कोई जागीर मिले।'

'और न वह यह चाहता है कि मैं दिल्ली के उत्तर का इलाका पाऊँ। तुम दुआब में दृढ़ हो जाओ और मैं दिल्ली के उत्तर में, तो स्वराज्य को कितना बड़ा पोषण न मिलेगा?'

'नजीबखां को केवल उत्तरी दुग्राव से प्रयोजन है। हम लोग नहीं कुछ भी करें उसे कोई सरोकार नही।'

तुम्हारे लिये दिल्ली के उत्तर प्रदेश की जागीर और हमारे लिये दुग्राव की, नजीब की ही सहायता से प्राप्त हो सकती हैं।'

'नजीब ने भरतपूर राज्य के कुछ दुग्राबी परगने और किले अपने दखल मे क्या कर लिये माधव के पेट मे चूहे कूदने लगे। नजीब उन सब को लौटा देगा। और न भी लौटावे तो उसने ले कितना लिया है? आखिर इतना परिश्रम किया तो उसे भी तो कुछ चाहिये। हमारे लिये बहुत बाकी है।'

'वर्षा के अन्त पर नजीब की सहायता से पूर्वी प्रदेश के रुहेलों से काफी वसूली हो जायगी। तब तक जाट सरदारो के भी होश ठिकाने लग जायेंगे।'

होलकर ने देखा तम्बू की कनात का एक छोर कुछ हिला। उसने कहा, 'कौन?' परन्तु छोर का हिलना तुरन्त बन्द हो गया। बातचीत फिर चल पडी।

विदाजी बोला, 'कोई भी नही है। हवा का झोका आया होगा। मैंने सुना है माधव शिहाबुद्दीन को वजीर बनाना चाहता है।'

'न भी बनाना चाहे तो कहना यही चाहिये। शिहाब का नाम लेने से बादशाह कुढ जायगा, नजीब का हाथ मजबूत होगा और माधव को पूना वापिस जाना पडेगा। इस समाचार का तो प्रस्तार होना चाहिये।'

'होता रहेगा। मैं एक बात जानना चाहता हूं। नजीब यदि गंगापारी पठानों से मिला हुआ निकला तो?'

'तो क्या? कुछ भी नहीं। रुपया तो वह भरसक दिलावेगा ही। यहां लडाई न लड़के भरतपूर राज्य के दिल्ली निकटवर्ती प्रदेश पर चढाई कर देंगे। काफी उपजाऊ और रुपये वाला खंड है।'

तम्बू की कनात फिर हिली। हवा बिलकुल बन्द थी। होलकर फिर चिल्लाया, 'कौन ?' कनात का हिलना बन्द हो गया। कुछ दूरी पर पैरों की छप-छप सुनाई दी। होलकर ने पहरे वालों को बुलाया। वे लोग अपनी योजनाओं पर बात कर रहे थे। किसी ने कुछ नहीं देखा सुना था। उन्होंने आश्वसन दिया, 'कुछ भी तो नहीं था।'

(८७)

रिमझिम हो पड़ी थी। माधव जी के नित्य नैमित्तिक श्रम का एक पहर रात गये भी पेटा नहीं भरा था। परिश्रम करने में न वे अपने साथ कोई रियायत करते थे और न दूसरों के साथ। आलसियों पर उन्हें सहज ही क्रोध आ जाता था। जैसे ही उन्होंने गुनीसिंह को बुलाया, वह तुरन्त आ गया।

चेहरे पर मेंह की हलकी-सी बूँदें थीं जो गालों पर खिले हुये कमल पर ओसकण-सी प्रतीत होती थीं और शमादानों की तेज रोशनी में चमक रही थीं। छाती पर कीचड़ लिपटा हुआ था।

माधव जी ने देखते ही पूछा, 'कहां थे ?'

उसने उत्तर दिया, 'जी, पटेल जी, अपने डेरे पर।'

मुस्कराकर माधव जी ने कहा, 'डेरे पर से तो आ ही रहे हो परन्तु यह कीचड़ कैसे लग गया छाती पर ?'

तुरन्त सहमा गुनीसिंह। छाती पर हाथ गया। जरा-सा नेहुरा, सिकुड़ा। फिर गालों और दाढ़ी पर की बूँदें पोछने लगा। कपड़ों में पुंगी के लिये हाथ डाला। पुंगी डेरे पर छोड़ आया था। माधव उसकी बात को नौकरों के समक्ष खोलना नहीं चाहते थे। बोले, 'ठहर जाओ, मैं लिखकर अपनी बात समझा दूंगा। बैठ जाओ।'

गुनीसिंह बैठ गया। माधव जी कुछ लिखकर देने वाले ही थे कि गुनीसिंह ने लिखकर दिया—'पटेल जी, यह कीचड़ मुझे फिसलने से नहीं लगा है। मैं होलकर के तम्बू पर गया था। वहां लेट गया था, तब लग गया।'

'क्यों गये थे ?'

'क्योंकि वह आपका अहित चाहता है। क्योंकि रामचन्द्र गणेश मूर्ख है, विसाजी कृष्ण ईर्षालु और परले दर्जे का स्वार्थी और होलकर स्वामि-द्रोही और मित्रघाती।'

'ब्योरेवार बतलाग्रो क्या सुन श्राये हो।'

गुनीसिंह ने ब्योरेवार सब बतला दिया।

माधव जी ने कहा, 'इसीलिये मैं इन लोगो से अब मिलता नहीं हूं। बातचीत तक नहीं होती। तुमने बडी जोखिम का काम किया!'

लिखकर दिया 'तुम मारे जाते तो मेरा एक बहुत प्यारा ससार से उठ जाता, क्योंकि वे लोग बडे क्रूर हैं। तुमको पकड़ लेते तो कभी न छोड़ते।'

गुनीसिंह ने कागज को पढकर आह भरी। अन्य कागजो मे उसे रख लिया। लिखकर दिया, 'नजीब क्या षड्यन्त्र रच रहा है इसके जानने की आवश्यकता है। गंगापार वाले अपने जासूसों को तुरन्त सावधान कर दिया जाना चाहिये।'

माधव जी ने अपने पास बुलाकर उसके कान मे मुँह लगाया और कहा, 'या तो सदा साथ मे पुंगी रखा करो या मैं शीघ्र किसी अच्छे वैद्य हकीम से तुम्हारे कान का इलाज करवा कर ठीक कराऊँगा।'

माधव जी ने नौकरो को वहा से नहीं हटाया।

'इलाज ही करवा दीजिये पुंगी तो बडी झंझट है।'

'अच्छा तो जासूस के पास चिट्ठी लिखकर भेज दो।'

'मैं स्वयं जाना चाहता हूँ।'

'तुम स्वयं! इस वर्षा मे!! कहा मारे मारे फिरोगे? मुझे तुम्हारे बिना बड़ी उलझन पड़ेगी।'

'और मुन्शी भी तो हैं। यह बडा आवश्यक कार्य है। मैं शीघ्र निबटा कर आ जाऊँगा।'

'अच्छा', कहकर माधव जी ने उसके कान से अपना मुंह हटा लिया। जब तक वे कान से मुँह लगाये थे गुनीसिंह का शरीर थर्रा रहा था। माधव जी ने सोचा विचारा बहुत मर्यादा करता है।

गुनीसिंह दूसरे ही दिन अपना कुछ आवश्यक सामान लेकर चला गया। माधव ने पेशवा को लश्कर का सब हाल लिखकर भेज दिया।

(८८)

बादल खुल गया था। गंगापार के किसान डरते डरते खेतों पर ाने लगे थे।

सम्भल नामक गाव की ओर एक पठान घोड़े पर धीरे धीरे चला ा रहा था। मार्ग में कीचड़ था इसलिये घोड़े का दौड़ना कठिन हो रहा ा। उसके पीछे पीछे दो सवार और आ रहे थे। एक सिक्ख था दूसरा ठान। वे दोनो आगे वाले पठान के पीछे पीछे कुछ समय से आ रहे थे। सम्भल थोडी दूर था। धूप तेज थी, पर हवा चल रही थी। आगे वाला ठान एक पेड़ की छाह मे घोड़े से उतर पड़ा। पीछे वाले दोनों सवार भी उसी छाँह में ठहरकर उतर पड़े।

सिक्ख के साथी पठान सवार ने जोर से चिल्लाकर कहा, 'सरदार जी, थोडी देर आराम करेंगे।'

सिक्ख ने कान पर हथेली की पुंगी लगाई। धीरे से बोला, 'क्या ?'

साथी ने अपने कथन को दुहराया। सिक्ख ने हामी का सिर हिलाया। घोड़े का जीन खोला। लम्बी रस्सी से बांधकर चरने को छोड़ दिया। पेड़ के आसपास घास थी। उन दोनो पठानो ने भी अलग-अलग घोड़े बांध दिये। दोनों पास पास बैठ गये। सिक्ख थोड़ी दूरी पर सुस्ताने लगा।

पहले आये हुये पठान ने पूछा, 'क्या सम्भल जा रहे हो ?'

सिक्ख के साथी ने उत्तर दिया, 'हां सम्भल जा रहे हैं।'

'किसके पास ?'

'बड़े सरदार के पास।'

'यह सिक्ख कौन है ? बहुत ऊँचा सुनता है।'

'ऊँचा क्या सुनता है, बिलकुल बहिरा है। दूसरों को समझता है कि कान गया है चींटी के रेंगने की भी आवाज सुन लेंगे। आप कहां जा रहे हैं ?'

'उन्ही सरदार के पास । बड़े जरूरी काम से '

'इस सिक्ख का भी काम जरूरी है ?'

'हा मेरे साथ है । कर्नाल और सहारनपुर के सिक्खों और नवाब नजीबखा के बीच में बहुत दिनों से चखचख चल रही है । यह गगापारी पठानो की मदद चाहता है । इसको मिसिल वाले सिक्खो ने भेजा है।'

'वहिरे को !'

'वह खुद एक बडा सरदार है – पचास आदमियो के जत्थे वाला । फारसी तुर्की जानता है और गगापारी कई पठान सरदारो का मुलाकाती है । आप कैसे जा रहे है सम्भल ?'

'पहले आप बतलाइये कैसे जा रहे हैं ?'

'मैं सरदार को मराठों की साजिशो के खिलाफ आगाह और होशियार करने जा रहा हू । हालांकि नजीबखा ने हम गगापारी पठानो को काफी नुकसान पहुँचाया है, मगर काफिरों के मुकाबिले मे नवाब कई दर्जे अच्छा है ।'

'किसी का खत लाये हो ?'

'जी हा ।'

'किसका ?'

'पहले आप तो बतलाइये आप किस मतलब से जा रहे हैं ?'

'इसी मतलब से । नवाब नजीबखा ने हमारे सरदार के पास खत भेजा है । उसे हम सम्भल लिये जा रहे हैं । आप किसका खत लाये हैं ?'

'अमरोहे के अफीदी सरदार का ।'

सिक्ख अपने घोडे के पास चला गया ।

उसके साथी पठान ने धीरे से कहा, 'इसके पास हीरे जवाहर हैं । नजीबखां का दुश्मन मालूम होता है । क्या कहते हो ?'

इधर उधर देखकर उसने उत्तर दिया, 'कोशिश कर डालें । किसान लोग अपने अपने खेतो मे हैं । खूनखराबी उनके लिये कोई नई बात न होगी । कोई यहां तक आयगा ही नहीं ।'

'कितनी कीमत के होंगे हीरे जवाहर ?'

'कह नहीं सकता। पठान क्या बतलावे ? जौहरी बतला देगा ?'

'तो शुरू करो। हमारा तुम्हारा आधा आधा रहा।'

'रहा। मैं उसे बुलाता हूँ। तुम्हारे सामने बैठेगा। मैं उसे पीछे से जाकर कस लूंगा। तुम छुरा भोंक देना।'

'बिलकुल, वैसे कहो तो घोड़े के पास जहां वह खड़ा है अभी मार दूँ। औरतों जैसा दुबला पतला तो है ही।'

'जोखिम मत लो भाई। वह कृपाण लिये है।'

साथी पठान ने सिक्ख को बुलाया। दूसरे पठान के सामने बैठने के लिये इशारा किया।

चिल्लाकर बोला, 'कुछ बात करेंगे। बैठिये सरदार जी।'

सिक्ख दूसरे पठान के सामने पास बैठ गया। सिक्ख का साथी उस पठान के पीछे गया। सिक्ख ने धीरे से कहा, 'बात करने के लिये अपनी पुंगी निकाल लूँ।' उसने कपड़ों में हाथ डाला। सामने बैठे हुये पठान ने छुरी पर हाथ बढ़ाया। सिक्ख का साथी दूसरे पठान के पीछे जाते ही चिल्लाकर बोला, 'मैं सरदार जी तुम्हारे पास आकर ही बैठूंगा, वहां गीला कम है।' और उसने तुरन्त तलवार निकाल कर बैठे हुये पठान पर वार किया। सिक्ख उचटकर पीछे हट गया। हाथ मे कृपाण ले लिया। बैठा हुआ पठान उठ नहीं पाया, सिक्ख के साथी पठान के दूसरे वार मे समाप्त हो गया।

'जल्दी करो गुनीसिंह, तब तक मैं इसके जीन की खोज करता हूं।' उसने संकेत से समझाया।

गुनीसिंह ने पठान के कपड़ों में से कुछ पत्र निकाल कर सरसरी तौर से पढ़े और भीतरी खलीते मे रख लिये। कुछ रुपया पैसा था वह छोड़ दिया।

गुनीसिंह के साथी ने संकेत में बतलाया, 'उन खेतों में काम करने वाले किसान जब यहां होकर निकलेंगे तब वे ले लेंगे इसका रुपया-पैसा।'

गुनीसिंह ने धीरे से कहा, 'अब वापिस चलो, सरदार इंगले। ये कागज नजीबखां के हाथ के लिखे हैं। बहुत काम के हैं।'

वह पठान नहीं था। इंगले था।

इंगले ने उंगली के संकेत से वर्जित किया, 'अभी इंगले नहीं! भागो जल्दी !!'

वे दोनों सवार होकर लौट पड़े।

(८६)

गंगापारी पठानों से रामचन्द्र गणेश ने पावना मागा तो उन्होंने उत्तर दिया, पहले जाटों से लीजिये, फिर नजीबखां से, तब हमसे, हम अपने सिर दे देंगे पर यों ही जमीन या रुपया पैसा नहीं देंगे,—जमीन और दौलत हमने और हमारे बुजुर्गों ने अपना खून बहाकर कमाई है।' इन्हें नजीब ने अपने हठ पर पक्का कर दिया था।

उसने मराठों को एक चकमा और दिया। आश्वासन दिया कि मेरे साथ दिल्ली चलो, दिल्ली के आसपास जो उपजाऊ जाट इलाका है। थोड़े श्रम से ही मिल जायगा। रामचन्द्र मूर्ख था। शिवाजी को अपने लिये दिल्ली के उत्तर की जागीर चाहिये थी। होलकर जाटों के भूमि खण्डों के मिल जाने की आशा लगाये था। केवल माधव असमत थे। नजीब मराठों को दिल्ली की ओर ले चलने के लिये ससैन्य आ गया।

उसने कुछ दूरी पर अपनी छावनी डाल ली।

रामचन्द्र ने शिवाजी से कहा, 'यहां नित्य ही एकादशी और *शिवरात्रि सदृश्य अनाहार-सा करना पड़ रहा है सारी सेना को। गंगापार* जाने से नजीब रुष्ट हो जायगा, फिर उत्तर में कोई न रहेगा। चलो दिल्ली की ओर।'

'बढ़ो दिल्ली की ओर,' शिवाजी और होलकर ने समर्थन किया।

माधव जी ने सोचा दिल्ली के निकट पहुंचने पर शायद सेनापतियों की समझ में स्थिति ठीक ठीक आ जाय। और नजीब का अधिकृत प्रदेश भी तो दिल्ली में निकटतर था।

माधजी ने शिहाबुद्दीन को बुलवाया। वह अजमेर चला गया था। उन्हें विश्वास था कि शिहाबुद्दीन के आ जाने पर नजीब उचट जायगा, शिहाब वजीर तो न हो सकेगा, परन्तु नजीब के जाल की स्वतः—समाप्ति में सहायक होगा। वह अजमेर से आ गया। नजीब

भी आया, परन्तु बीमार पड़ जाने के कारण थोड़ी दूर रुक गया। मराठी सेना ने उससे मिलने के लिये डग बढ़ाया।

नजीब से मिलने के पहले माधव जी के अनुरोध पर सरदारों की बैठक हुई। शिहाब को भी माधव जी ने इसमें बुला लिया। आगत स्वागत और शिष्टाचार के उपरान्त चर्चा हुई। सरदारों के साथ शमम भी एक ओर जा बैठे।

तुकोजी ने कहा, 'नजीबखा बहुत बीमार हैं, परन्तु कितने भले हैं बिचारे हम लोगों को दिल्ली लिवा ले चलने के लिये यहां तक आये! कल वे अपने डेरे पर स्वयं आवेंगे। उनकी सलाह शान्तिपूर्वक सुन लेनी चाहिये।'

माधव जी बोले, 'सलाह तो उनकी बहुत दिनों से मालूम है। प्रश्न है हम लोग उसका क्या मूल्य आंकना चाहते हैं।'

विसाजी ने कहा, 'कई बार आंका जा चुका है।'

'परन्तु परिणाम कुछ नहीं हुआ,' माधव जी बोले, 'कल नजीब से स्पष्ट कह देना है कि हम लोग उनके फरेब में और अधिक नहीं पड़ना चाहते हैं।'

शिहाब बोला, 'फरेबी तो वह इतना है कि उसके मुकाबिले का दुनियां भर में कोई पैदा ही नहीं हुआ। और यह वह है जिसने अहमदशाह अब्दाली को बुलाया था, जिसने मथुरा वृन्दावन के तीर्थों को बरबाद करवाया और किया—'

तुकोजी ने टोका,—'आग लगाने वाली बातें मत करिये वजीर साहब। मन्दिर मूर्तियां तो निजामअली निजाम ने राघोबा का साथ देते हुये भी पूना के निकट तक तोड़ी थीं। राजनीति में बीती को बिसारना पड़ता है। कल के शत्रु आज मित्र बन जाते हैं।'

'जो आज भी शत्रुता कर रहे हैं उन्हें आज ही मित्र कैसे बनाया जा सकता है?' माधव जी ने पूछा।

शिहाब तुरन्त बोला, 'यह नजीब आज भी जाटों और रुहेलों को मराठों के खिलाफ भड़का रहा है।'

शिहाब ने माधव जी तरफ देखा। माधव की दृष्टि अपने ख.स कलम गुनीसिंह पर गई। वह माधव की ओर टकटकी लगाये था। शिहाब ने भी उसे देखा। चेहरा स्वस्थ था और माथे पर या आंखों के बीच में शिकन न थी। शिहाब उसे देखते देखते कुछ सोचने लगा।

तुकोजी ने कहा, 'इस प्रकार की व्यर्थ बातें और शिकायतें करते तो बहुत लोग हैं, परन्तु प्रमाण कहीं भी किसी के पास नहीं है। नजीब एक बड़ा सरदार है। पुराना आदमी है। उसके विरुद्ध ऐसी बात नहीं कहनी चाहिये।'

'प्रमाण है', शिहाब ने हठ किया और माधव जी की ओर देखा।

तुकोजी बोला, 'इसका तो नजीब से यों ही वैर चला आता है। कोई लिखा पढ़ा प्रमाण है?'

माधव जी ने गुनीसिंह पर आंख पसारते हुये कहा, 'प्रमाण है। जब अवसर आयगा प्रस्तुत किया जायगा।'

तुकोजी ने क्षोभ प्रकट किया,—'यह बहिरा और उस पर सिक्ख! जो नजीब के मारे कहीं भी चैन नहीं ले पा रहे हैं। यह है तुम्हारा प्रमाण!!'

उमड़ी हुई उत्तेजना को दबाकर माधव जी ने कहा, 'बहुत से बड़े बड़े कान वालों की अपेक्षा यह बहुत अच्छा सुनता रहा है—और अब तो उसके बहिरेपन का इलाज भी हो गया है।'

विसाजी ने प्रस्ताव किया, 'तो लाओ सामने उसे। प्रमाण की परीक्षा कर लें फिर तब जैसा निर्णय करके नजीब से कल बात करें।'

'बिलकुल ठीक है', शिहाब ने समर्थन किया और वह आंख गड़ाकर गुनीसिंह को देखने लगा। गुनीसिंह ने सिर नीचा कर लिया था।

माधव ने कहा, 'यदि पक्का प्रमाण सामने आ जाय तो नजीब का साथ छोड़ दिया जायगा या नहीं?'

तुकोजी बोला, 'फिर भी यह तो सोचना ही पड़ेगा कि इतने पुराने साथी इतनी बनी बनाई योजनाओं, और इतने किये कराये प्रयत्नों को मिट्टी में मिलाकर अब क्या करना चाहिये ? मान लो कि नजीब ने अब तक फरेब ही किया है। तब भी यह तो सोचना ही पड़ेगा कि अब जब वह दिल्ली की ओर लिवाये चल रहा है तब उसे त्याग कर क्या गंगापार के अँधेरे में लठ मारना चाहिये ? इसके सिवाय वह माधव जी से विशेष तौर से मिलना भी चाहता है।'

इस अधिवेशन में कुछ भी तै न हुआ। नजीब के विरुद्ध प्रमाण नहीं लिया गया। तै केवल था दूसरे दिन नजीब का मिलाप।

दूसरे दिन नजीब पालकी में आया। उसका लड़का जाबिता भी साथ था। बीमार था। आराम और आदर के साथ मराठा सरदारों में बिठला लिया गया। माधव जी और शिहाब नहीं आये।

माधव जी को विशेष तौर पर बुलाया गया। यह निमन्त्रण उन्होंने अस्वीकार नहीं किया। आये।

साधारण शिष्टाचार के उपरान्त नजीब ने जाबिताखां का हाथ अपने हाथ में पकड़ा और कहा, 'मैं अब बहुत कम जिऊँगा। इस लड़के को आप लोगों के हाथ में देता हूं। आप इसकी रखवाली करें।'

सिवाय माधव जी के अन्य मराठा सरदारों ने आश्वासन दिया।

माधव जी ने कहा, 'हम लोगों को छः महीने हो गये परिश्रम करते करते, चोटी का पसीना एड़ी तक आ गया, परन्तु गङ्गापारी पठानों से बाकी की वसूली में आपने कोई भी सहायता नहीं की।

'मजबूर था। बीमार बना रहा जिन्दा रहा तो अब मदद करूँगा। पहले ही उतनी बड़ी बड़ी कसमें खा चुका हूं। अगर मैं बीमारी से न उठ पाया तो यह लड़का, जाबिता आप का साथ देगा। रहम कीजिये और इसका हाथ अपने हाथ में पकड़िये।'

'इतने सरदारों ने तो आपको भरोसा दिलाया है। मैं अकेला अगर हाथ न पकड़ूँ तो क्या हो जायगा ?'

'ये सब सरदार तो मिहरबान हैं ही। लेकिन मैं आपकी बात चाहता हूं। आप हाथ पकड लेंगे तो बेखटके हो जाऊँगा। जा रे जाबिता पकड ले इनका हाथ, सिन्धिया घराने का हाथ।'

'माधव जी खडे होकर अलग हो गये। बोले, 'सिन्धिया घराना झूठी सौगन्ध खाना नही जानता। और न कच्चे झूठे भरोसे दिलाता है।'

मराठा सरदार एक दूसरे की ओर देखने लगे।

नजीब शरारत से न चूका,—'तब झूठी कसम या तो ये सबके सब मराठा सरदार खाते है या मैं !'

उसने तुकोजी की ओर दृष्टिपात किया।

तुकोजी गरम होकर बोला, 'क्या कह रहे हो माधव जी ?'

माधव ने तुकोजी को उत्तर न देकर नजीब से कहा, 'झूठी कसमे आप खाते हैं—आप। फरेब आप रचते है। जाल आप बिछाते हैं !! हम सबको धोखा देकर मूर्ख आप बनाते हैं !!!'

'मैं !' क्रोध मे भरकर नजीब बोला, और उसके ओठों पर फेन आ गया।

'हां, आप' माधव जी ने दृढता के साथ दुहराया, और जेब से एक कागज निकाल कर नजीब के सामने बढाया।

माधव जी ने कहा, 'आपके लिये कुरान, पुरान, धर्म दीन कुछ भी मूल्य नही रखता। उस दिन मित्रता और सहयोग का आश्वासन देते हुये कितनी बड़ी बड़ी कसमे खाई थी ! इधर सौगन्ध खाई उधर गंगा-पारी अफगानो को चिट्ठियां लिख लिखकर बहकाना, हम लोगो के विरुद्ध उभाड़ना और सगठित करना शुरू कर दिया ! इस चिट्ठी पर आपके और जाबिताखां दोनो के दस्तखत हैं। मुहर भी लगी हुई है। सुनिये अपनी करतूत को।'

माधव जी ने फारसी की चिट्ठी पढ़कर सुनाई।

उसका अर्थ था—'पक्के बने रहो। एक छदाम भी इन काफिर मराठो को मत दो और न चप्पा बराबर जमीन। अब हम सबको एक

हो जाना चाहिये। आपसी लड़ाइयों को बन्द करके मराठों को अपने इलाके के बाहर खदेड़ निकालना है। मैंने मराठों को जाटों से टकरा दिया है। वे लोग मराठों से बहुत नाराज हैं। मराठों को नर्मदा पार करने में जाट अवश्य साथ देंगे। मैं सब पठानों का,—चाहे वे पहले से आकर बसे हों चाहे हम लोगों की तरह बाद में आये हों,—और जाटों का एक प्रबल संघ बनाना चाहता हूं। यह संघ इतना बड़ा और ऐसा प्रचण्ड होगा कि मराठे किसी तरह का भी सामना नहीं कर सकेंगे। जिन जिनके नाम मैंने मराठों को वसूली के लिये बतलाये थे उन सबको लिख दिया है कि एक कौड़ी न दें। आप भी मत देना।'

तुकोजी ने सिर नीचा कर लिया। रामचन्द्र क्षुब्ध होकर इधर-उधर देखने लगा। सारे दरबार में सन्नाटा छा गया।

नजीब के मुंह से निकला,—'मेरी इज्जत बिगाड़ने को यहां यह सब किस्सा रचा गया है।'

सिंधिया ने पूछा, 'यह चिट्ठी आपकी लिखी है या नहीं? यदि है तो आपने बहुत बुरा किया।'

(६०)

नजीबखां की इस चिट्ठी ने मराठा सरदारों में सनसनी फैला दी। होलकर भी नजीब का पक्षपात न कर सका। माधव जी जो कुछ प्रारम्भ से कहते आये थे अब उसने सरदारों के मन में घर किया। माधव जी जिस मान्यता के अधिकारी हो गये थे उन्हे मिलने लगी। तुकोजी के जी में माधव के प्रति और भी मैल बढ़ गया। नजीब के कपटोद्घाटन की प्रतिक्रिया में तुकोजी माधव से और भी अधिक जलने लगा। परन्तु मन की जलन उसने प्रयास के साथ छिपाई। नजीब कुछ ही समय उपरान्त मर गया।

अब सबका ध्यान इलाहाबाद प्रवासी बादशाह शाहआलम की ओर गया। शाहआलम की मा लड़के-लड़किया दिल्ली में थे। कुल परिवार को इलाहाबाद में बुला लेने से दिल्ली का सम्बन्ध ही टूट जाता और सिक्ख दिल्ली को अधिकार में कर लेते। फिर बादशाही का नाम ही मिट जाता, अब उसके दिल्ली पहुंचने के दिन आये।

वैसे वह इलाहाबाद को जल्दी न छोड़ता। अंग्रेज छब्बीस लाख रुपया साल का गुजारा या मालगुजारी देते थे। दो लाख वे अपने गुप्त गुमाश्ता शाह नजफ को देते थे जो ईरान के किसी शाही खानदान से किसी प्रकार सम्बन्ध था और जो धन की तलाश में हिन्दुस्थान आकर, अनेक ऐसे लोगों की तरह सिंहासन को शासित करने की पात्रता पा गया था। नजफ ने बंगाल विहार के अंग्रेजी प्रपंचों में उनकी सहायता की थी। अवध के नवाब का नातेदार था। अंग्रेजों के सम्पर्क में उसने युद्ध प्रणाली राजनैतिक व्यवहार काफी सीख लिया था। इस समय वह बादशाह का मुख्य सलाहकार न होते हुये भी बादशाह पर प्रचुर प्रभाव डालने वालों में से एक था। वह और अंग्रेज यह नहीं चाहते थे कि शाहआलम मुट्ठी में से खिसक जाय, परन्तु एक साधारण से अंग्रेज अफसर की बदतमीजी ने शाहआलम को छुटकारा दिला दिया।

शाहआलम को गायन, वादन और नृत्य का व्यसन था। वह अंग्रेज अफसर एक रात 'इन अभद्र आवाजों और चिल्लपों' को न सह सका। दिल्ली के सम्राट के उसने सब बाजे-वाजे बन्द करवा दिये!

सम्राट को नजीबखा के देहान्त का समाचार मिला। पुष्पों के परिमल की तरह माधव जी की कीर्ति और विश्वसनीयता का भी उसे पता चल गया। उसने माधव जी को लिवा लाने के लिये लिखा। वे शाहआलम को दिल्ली लाने के पक्ष मे थे ही, क्योंकि इस शस्त्र को वे अंग्रेजों के हाथ में नहीं रहने देना चाहते थे।

दिल्ली जाबिताखा के हाथ मे थी। तुकोजी होलकर उसके इलाके में उसकी सहायता के लिये घूम रहा था। माधव जी की सहायता की आशा पर शाहआलम ने मराठा सेनापति रामचन्द्र को दिल्ली से जाबिता की सेना को हटाने और बादशाह के नाम पर अधिकार करने के लिये अपना दूत भेजा। जाबिता के किलेदार ने थोड़ी-सी लड़ाई के बाद किला खाली कर दिया। दिल्ली पर मराठों का फिर अधिकार हो गया।

माधव जी बादशाह को इलाहाबाद से ले आये। माधव आगे निकल आये। बादशाह को दिल्ली पहुँचने मे ग्यारह महीने लग गये! आशा थी कि अंग्रेज पैन्शिन की रकम दिल्ली भेज देंगे!!

बादशाह को माधव जी के संग में शिहाबुद्दीन के होने का डर था। माधव ने उसे शीघ्र ही हटा दिया। तो भी बादशाह गंगापारी पठानों के इलाके मे ठहरता हुआ आया। उनसे बरसो की बाकी वसूल करनी थी। बहुत दिनों से न देने का पाठ पढ़े हुये पठान बड़ी संख्या मे इकट्ठे होकर बादशाह पर आ टूटने के लिये इकट्ठे हुये। माधव जी सुनते ही आये। सब पठान हटे। मराठे लूटमार करना चाहते थे, परन्तु माधव ने उनका नियन्त्रण किया। लूटमार बिलकुल नहीं होने पाई। पेशवा ने रामचन्द्र को पहले ही बुला लिया था और प्रधान सेनापतित्व विसाजी कृष्ण को दे दिया था।

इन्ही दिनों माधवराव पेशवा का देहान्त हो गया। उसका छोटा भाई नारायणराव पेशवा हुआ।

बादशाह ने शाह नजफ को अपना मीरबख्शी नियुक्त कर दिया। होलकर ने जाबिता को आश्वासन दिया था कि 'तुमसे पेशवा को एक पैसा भी बिना दिलाये हुये मीरबख्शी बनवा दूगा' यह असम्भव हो गया।

बादशाह को तुकोजी के रुहेला सहयोग की बात मालूम हो गई और उसने गुलाम कादिर के उस व्यवहार को भी निमक मिर्च लगे हुये रूप में सुन लिया जिसका वह शहजादी के प्रति भीषण अपराधी समझा गया था। जाबितखा और उसके पिता ने बरसो शाही खालसे की भूमि की उगाही करके कुछ नही दिया था। मराठे और तूरानी सिपाहियो को रुपया देना था। जाबिता को मिठास के साथ बुलाने का प्रयत्न किया गया, पर वह नही आया। उसने सिक्खो से सन्धि कर ली थी और अब वह अपने को युद्ध के लिये समर्थ समझने लगा था।

कुछ सिक्खो की उसको सहायता मिल गई। तुकोजी ने बादशाह का थोड़ा-सा विरोध करके हाथ खीच लिया। बादशाह ने रुहेलों के विरुद्ध युद्ध करने की घोषणा कर दी।

विशाजी और होलकर को भी माधव जी का साथ देना पड़ा।

मराठी सेना ने भारी सामान और स्त्री-बालक सुरक्षा के स्थान में रख दिये और अपने आयात और निर्यात के मार्गों को सुरक्षित कर लिया। पानीपत की पुनरावृत्ति की गुन्जाइश नहीं थी।

शाही फौज—तुर्की, तूरानो ईरानी इत्यादि शाह नजफ की अधीनता में थी। माघ के पूर्वार्द्ध की ठण्ड में विशाजी और नजफ की संयुक्त सेना सेना ने कूच कर दिया।

(६१)

जाबिताखां रुहेला की सेना हरद्वार के सामने गंगा के पूर्वीय किनारे बराबर उन्नीस बीस कोस नीचे तक खाइयां खोदकर जम गई। पश्चिमी किनारे खाइयां खोदकर बादशाह और मराठों की संयुक्त सेना लगभग इसी लम्बाई में फैलने लगी। उस पार जाने के लिये चंडीघाट नाम का घाट नीचे आधे कोस की दूरी पर सबसे अधिक उथला था, परन्तु सामने रुहेले बहुत संख्या और तत्परता के साथ अड़े हुये थे।

जाड़ा विकट था। दिन में कुहरा गंगा की तीव्र धारा के ऊपर से नाचता कूदता हिमालय की एक के पीछे दूसरी श्रेणी की चोटियों पर जा थिरकता। कभी रिमझिम और झिर झिर भी हो जाती। परन्तु रात में दमकते तारे और चमकती चांदनी।

कई दिन हो गये तब कहीं माधव जी ने नजफ से मिलकर एक योजना बनाई। आशंका थी कि तुकोजी जाबिता को सूचना न दे दे! योजना और आक्रमण के समय को गुप्त रखा गया।

एक दिन शाही सेना का सारा भारी सामान हरद्वार से नीचे की ओर कोसों दूर भेजा जाने लगा। सामान के जाने की भड़भड़ रुहेलों ने अपनी खाइयों से सुनी और कुछ ने देखी भी। समझे कि नजफ और विसाजी की सेना नीचे की ओर किसी और घाट से गंगा पार करने के लिये जा रही है। उन्होंने भी अपना भारी सामान और सेना का एक बड़ा अंग नीचे हटाया। चंडीघाट से वे निश्चिन्त और शिथिल हो गये।

तुकोजी जानना चाहता था कि कब और कहां से रुहेलों पर आक्रमण किया जायगा।

उसने माधव से पूछा,—'अभी तक निश्चय नहीं कर पाया ?'

'अवसर की खोज में हूँ। सम्भव है नीचे की ओर कुछ और खिसकना पड़े,' उन्होंने गोलमटोल उत्तर दिया। तुकोजी को अन्त अन्त

तक रहस्य का पता न लगा। उसे दूर के एक स्थान पर भटका दिया गया।

होते होते फागुन का महीना आ गया। किसी प्रकार की भी कोई स्थिर योजना न देखकर रुहेले चण्डीघाट पर और भी ढीले पड़ गये।

चण्डीघाट पर उस रात ठण्ड कंपाने वाली थी। एक पहर गये माधव जी ने गुनीसिंह से अकेले में कहा,—

'आज रात के अन्तिम पहर के बिलकुल आरम्भ में। मैं चाहता हूं तुम मेरे डेरे पर ही बने रहो।'

गुनीसिंह डेरे पर रहने के लिये यहां तक माधव के साथ नहीं आया था। बोला, 'नहीं जी, पटेल जी, आपके बिलकुल निकट ही रहूँगा।'

उन्होने कहा, 'अच्छा, तो थोड़ा-सा विश्राम कर लो। ऊनी कपड़ों से सारे शरीर को अच्छी तरह ढक लेना, क्योंकि गंगा के बरफ सरीखे ठण्डे पानी में रोगग्रस्त होने का डर है।'

'बहुत अच्छा जी,' उसने कहा।

प्रातःकालीन नक्षत्र अभी हिमालय की छोटी ऊँचाइयों के ऊपर नहीं आया था। नजफ, शिवाजी और माधव जी के सवार पानी में चुपचाप उतर पड़े। चंडीघाट के उस किनारे के नीचे काफी रेत थी। बगल में एक रेतीला पथरीला टापू भी था। नजफ ने अपने ऊँट-तोपखानों को इस टापू में जा जमाया। सिन्धिया दल की हरावल का नायकत्व इंगले कर रहा था। उसने घोड़ों को कुछ घुड़सवारों के हाथ कर दिया और रुहेलों की खाइयों पर टूट पड़ा। मराठे तलवार की लड़ाई बहुत अच्छी करते थे। रुहेले भी इस लड़ाई के लिये कम प्रसिद्ध न थे। घोर युद्ध हुआ। रुहेले संख्या में काफी थे। वे मराठों के दल को चारों ओर से सिमट कर घेरने लगे। अभी रात काफी थी। इङ्गले का दल थोड़ा-सा दबा और कुछ पीछे हटा। माधव जी एक दस्ते के साथ नदी में उतर पड़े और इंगले के दल की दिशा में बढ़े। गुनीसिंह साथ था।

गुनीसिंह के घोडे पर गोली पडी। वह डूबने लगा। गुनीसिंह घोड़े को छोड़कर तैरने लगा। माधव ने एक हाथ से अपने घोडे की लगाम सम्भालने और दूसरे से झुककर गुनीसिंह का हाथ पकड लिया। उन्होंने अपने दस्ते के नायक को आगे बढ़ने की आज्ञा दी और वे गुनीसिंह के सम्भालने में लग गये। गगा की धार तीव्र थी। गुनीसिंह बह बह जा रहा था। माधव जी उसे बचाने के प्रयत्न मे घोड़ा समेत कुछ दूर बह गये। उनका दस्ता आगे निकल कर घाट पर लग गया। गुनीसिंह गङ्गा की तीव्र धार से अधिक समय तक नहीं लड सका। उसके मुह मे पानी भरा और गोते खाने लगा। जब माधव ने पार पाकर रेती पर उसे रखा तब वह बिलकुल अचेत था।

रुहेले तलवार से लड़ रहे थे और बन्दूकें भी चला रहे थे। और हल्ला तो दोनों ओर से विकट हो रहा था। माधव ने देखा नजफ के ऊँट-तोपखानों की लौ पर लौ रात के अन्धेरे को चीर चीर डाल रही है और तोपों की धायँ धायँ गोली की सायँ सायँ मराठा-रुहेले चीत्कारों को भी फाड़ फाड़ रही है।

माधव जी घाट के इस छोर पर इतने हट आये थे कि वहां निकट कोई भी नही था। झाऊँ के पेड़ों की झुरमुट मे इन्होने अपना घोड़ा बांध दिया। थोड़े थोडे अन्तर से शाही पक्ष के सवार और पैदल रुहेलों पर टूट पड़ने के लिये आगे बढ़ते चले जा रहे थे। वह किसी को भी पुकार नही सकता था।

घोड़े को बांधकर उन्होंने गुनीसिंह की नाड़ी टटोली। गति शून्य-सी मालूम पड़ती थी। उन्होने छुरी से रेती को हटाकर आतुरता के साथ एक खाई झाऊँ की एक झुरमुट में बनाई। फिर गुनीसिंह को उल्टा करके पेट का पानी बाहर किया। इसके उपरान्त उसके शरीर से लिपटे हुये ऊनी कपड़ो को हटाकर एक ओर सूखने के लिये टाग दिया। अपने ऊनी कपड़ों से उसे ढकने का प्रयत्न करने के पहले उन्होंने सोचा इसके अन्य

कपड़ ढीले कर दिये जायें। गुनीसिंह को बचाने के आतुर उपायों के साथ सामने का युद्ध भी देखना भालना था।

गुनीसिंह के कपड़े उतारते हुये उन्होंने देखा वह छाती के ऊपर एक चौड़ी पट्टी बड़ी तंगी के साथ लपेटे हुये है। इसके हटाने से शायद गुनीसिंह को फिर सहज सांस वापिस मिल जाय, उन्होंने सोचा और तुरन्त उस पट्टी को खोला। पट्टी सूखी थी और नीचे के भी कपड़े सूखे थे पैजामा नीचे की ओर गीला हो गया था। ऊपर से लपेटे हुये ऊनी कपड़ों ने नीचे के कपड़ों को गीला होने से बचा लिया था। माधव ने गुनीसिंह के हृदय की गति परखने के लिये कपड़ों के नीचे हाथ डाला। हृदय गतिवान हो चला था।

तुरन्त उन्होंने हाथ खींच लिया। गुनीसिंह के पीन, सुडौल वक्षस्थल पर उन्हें आश्चर्य हुआ। क्या यह कोई स्त्री है? परन्तु दाढ़ी? उनका हाथ गुनीसिंह की भीगी दाढ़ी पर गया। दाढ़ी पोंछी और रिसता हुआ पानी गले से नीचे तक सुखाया। अङ्गों का उभार किसी युवती का जैसा! चेहरा बिलकुल झुककर देखा। सांस चल उठी थी। बड़ी बड़ी आंखों की लम्बी बरोनियां अचल थीं। तो दाढ़ी कैसी? हलका झटका दिया। ढीली पड़ गई। दाढ़ी नकली है! उसके कंठ स्वर पर स्मृति दौड़ी जिसे नित्य सुना करते थे। मृदुल, मधुर! साधारण स्त्रियों के स्वर से कहीं अधिक मंजुल!! जिज्ञासा बढ़ी। गुनीसिंह आरम्भ में बहिरा बना हुआ था! उस दिन वनवाड़ी में छद्म खुल गया होता। उसने छद्म की कितनी रक्षा की! मेरे प्राण इसी ने बचाये। यह कौन है? पुरुष वेश में क्यों है? मेरे प्रति इसे इतनी भक्ति क्यों है? क्यों छाया की तरह मेरे साथ है? इसको मैंने वचन दिया था, सदा रक्षा करूँगा, यह परम सुन्दरी, चरम कुशाग्र बुद्धि वाली मुझ से क्या चाहती है?'

गुनीसिंह की श्वास कुछ और तीव्र हुई। लड़ाई की गति कुछ और तेज, परन्तु अभी प्रभात के लिये विलम्ब था।

यह छद्मवेश में रहना चाहती है। जो कुछ भी इसका अभिप्राय हो इसके छद्म की रक्षा करना मेरा धर्म है।

माधव ने तुरन्त गुनीसिंह की दाढ़ी ज्यों की त्यों बांध दी और वक्ष के ऊपर उस पट्टी को ज्यों का त्यों कस दिया। अपने ऊनी कपड़ों से ढक कर वे उसे सचेत करने का प्रयत्न करने लगे। युद्ध के लिये व्यग्र थे और गुनीसिंह की रक्षा के लिये व्यग्रतर।

आधी घड़ी के उपरान्त गुनीसिंह को चेत आया। एक हाथ उसका वक्ष पर गया और दूसरा सिर पर। साफा गिर गया था, परन्तु लोहे का कुला कसा हुआ था। माधव ने अपना फेंटा खोलकर उसका सिर ढक दिया।

गुनीसिंह के नेत्र अर्द्धोन्मीलित हुये। बारीक स्वर में उसके मुंह से प्रश्न निकला, 'पटेल जी कहां हैं ?'

'मैं यहीं तो हूँ।' माधव ने उत्तर दिया।

गुनीसिंह ने पूछा, 'डेरे में हैं क्या ?

माधव ने बतलाया, 'नहीं, डेरे में नहीं हैं। लड़ाई हो रही है। हम लोग गंगा की रेत में इस पार आ गये हैं।'

गुनीसिंह ने उठने की चेष्टा की। माधव ने धीरे से कन्धा पकड़ कर लिटा दिया।

बोले, 'तुम यहीं लेटे रहो। मैंने लड़ाई जीत ली है। किसी को बुलाकर तुम्हारे पास किये देता हूँ। मैं अब युद्ध में जाऊंगा।'

गुनीसिंह ने माधव का हाथ पकड़ लिया। अनुरोध किया, 'आप अकेले जा रहे हैं! न जायें। सब दिशाओं में दुश्मन हैं। मैं साथ चलूं—चलूंगा।'

गुनीसिंह के कण्ठ में कुछ अटक गया था।

माधव ने कहा, 'युद्ध की गति का संचालन करना मेरे लिये इस समय अत्यन्त आवश्यक है। तुम यहां अकेले नहीं रहोगे। युद्ध के उपरान्त आ जाऊंगा।'

'मेरा आपके ऊपर वश ही क्या है ?' गुनीसिह ने क्षीण स्वर में कहकर माधव का हाथ छोड दिया ।

माधव को ठेस लगी—यह स्त्री है, परम सुन्दरी युवती, इसने मेरे प्राण बचाये थे, मेरी भक्त है, इसे युद्ध भूमि मे अकेला कैसे छोड़ जाऊँ ?

नजफ का ऊँट-तोपखाना और मराठों का लम्बा खाड़ा तीव्रता और प्रचण्डता के साथ अपना काम कर रहे थे । रुहेले पिछड गये थे और हटते हुये, भागते हुये लड़ने लगे थे । माधव की सेनानायक-भावना को परिणाम की आशंका नही रही ।

यकायक गुनीसिह का सिर अपनी गोदी में रखकर बोले, 'मैं अपने भाई को यो ही नही छोड जाऊँगा ।'

गुनीसिह की आखो मे आसू आ गये । उन्हे पोछकर माधव ने कहा, 'यह क्या ! तुम कैसे सिक्ख हो ?'

गुनीसिह ने आत्म-नियन्त्रण करके पूछा, 'मेरे ऊनी कम्बल, कपड़े कहा हैं ?'

माधव ने उत्तर दिया, 'सूख रहे हैं ।'

गुनीसिह ने अपनी छाती पर हाथ फेरा और चैन की एक सांस ली । बोला, 'आपने बहुत कष्ट उठाया, पटेल जी, मुझ सरीखे तुच्छ आदमी के लिये ।' और वह बैठ गया ।

'थोडी देर और आराम करो ।' माधव ने आग्रह किया ।

'अब मैं अच्छा हूं ।' उसने कहा और एक ओर लेट गया ।

प्रभात हो गया । रुहेले मारे जा रहे थे और लौट लौट पड़ रहे थे । माधव जी खाई मे लेट कर देखने लगे ।

सूर्योदय के पहले कुहरा उठा, परन्तु शीघ्र रीना भीना हो गया । माधव जी के दल के लोग आ गये । माधव जी गुनीसिह को उठवा ले गये और युद्ध के संचालन में भाग लेने लगे । उन्होंने तलवार हाथ में लेकर कहा, 'मेरे पीछे आओ मैं देखता हूं रुहेलों को ।'

दोपहरी के समय कुहरा बिलकुल बिखर गया। पूर्वीय किनारे की पूरी रुहेली सेना पराजित हो गई।

फिर रुहेलों के गढ़ पर गढ़ टूटते चले गये। पत्थर गढ़ में उन लोगों ने युद्ध के पहले अपनी सारी सम्पत्ति रख दी थी। वहीं उनके बाल-बच्चे भी थे। इस किले को भी जीत लिया गया। इस किले में से बहुत-सी वे महाराष्ट्र स्त्रियां निकलीं जिनको पानीपत की लड़ाई में रुहेलों और पठानों ने जबरदस्ती पकड़ लिया था। मराठों ने इन स्त्रियों को ग्रहण कर लिया। कुछ मराठे सिपाहियों ने नजीब के मकबरे का भग भग किया।

परन्तु रुहेलों की पठान स्त्रियों के साथ नजफ के ईरानी तूरानी सिपाहियों ने बड़े अत्याचार किये। बर्बर हृदय की बर्बरता युद्ध की क्रूरता में फूट पड़ी। नजफ ने बड़ी मुश्किल से पठान स्त्रियों को अपने सिपाहियों से छुटाकर घरों पर भेज पाया।

रुहेले भाग कर हिमालय की तराई में जा छिपे और वहां बीमारियों से मरे। इनमें से अधिकांश वे लोग थे जिन्होंने मथुरा और पानीपत में जघन्य कृत्य किये थे।

पत्थरगढ़ में बेहिसाब हीरा जवाहिर और सोना चांदी मिला। इसके बटवारे में बादशाह और मराठों के बीच तनाव भी हो गया।

जाबिता ने सन्धि के लिये प्रार्थना की। होलकर और विसाजी ने सन्धि की शर्तों का समर्थन किया। सन्धि की एक शर्त यह भी थी कि जाबिता को मीरबख्शी बना दिया जाय और रुहेलों को सारी भूमि वापिस कर दी जाय। युद्ध के जुरमाने में उससे रुपया ले लिया जाय। सन्धि की एक गुप्त शर्त थी पेशवा को साढ़े दस लाख रुपये का दिया जाना!

महीनों तक चर्चा चलती रही। अन्त में बात इतनी बढ़ी कि वर्षा के समाप्त होने पर विशाजी और होलकर ने दिल्ली पर आक्रमण कर दिया।

बादशाह की सेना हार गई। इस सेना को दो अंग्रेजी पल्टनों का भी सहयोग मिल गया था। विशाजी और होलकर ने बादशाह से शर्तें मनवाईं और जाबिता को मीरबख्शी नियुक्त करवाया। वह अपने लड़के गुलाम कादिर के साथ दिल्ली में आकर फिर रहने लगा।

माधव जी इस युद्ध के पहले ही अपनी दस सहस्र सेना के साथ नूराबाद चले गये थे।

(६२)

वर्षा का अन्त हो गया था, परन्तु शरद ऋतु ने अभी मेंहदी और हरसिंगार के फूलों को खिलाने के सिवाय अधिक साज नही सजा पाये थे।

दोपहर के उपरान्त गरमी, तीसरे पहर कुछ ठण्डी हवा। सन्ध्या के समय पेड़ो की लम्बी छाया।

सन्ध्या होने मे अभी विलम्ब था। माधव जी को पूना के लिये पत्र भिजवाना था। गुनीसिंह को एकान्त में बुलवाया।

गुनीसिंह सोकर आया था। मादक बड़ी आखें कुछ भारी थी।

माधव जी ने पूछा, 'स्वस्थ हो न ?'

'हा जी, पटेल जी।' उसने उत्तर दिया और कागज संभाले।

माधव जी ने दूसरा प्रश्न किया, 'गला कुछ भारी-सा क्यों है ?'

उसने कारण बतलाया, 'जरा सो गया था जी।'

'दाढी आज कैसी है ?' जरा-सा मुस्कराकर उन्होंने पूछा।

गुनीसिंह के चेहरे पर घबराहट दौड़ गई और उसका हाथ कान के पीछे चला गया।

'दाढी कान के पीछे होती है क्या ?' उन्होंने कहा।

गुनीसिंह दाढी का छोर कांपती हुई उँगलियो से छूकर बोला, 'नही तो जी, पटेल जी।'

'तुम कुछ गाना भी जानते हो ?'

'ऐसा ही कुछ थोड़ा-सा।' क्या आपने कभी सुना है जी ?'

'सुना तो नहीं, परन्तु सुनना चाहता हूँ किसी दिन। मुझे सुनने का शौक है। ऐसा जान पड़ता है तुम बहुत अच्छा गाते होगे।'

'जी कुछ ऐसा ही गा लेता हूँ। आप तो गवैयो का गाना सुनते हैं जी। मैं वैसा कहां गा पाता हूं ?'

'तुम्हारा स्वर बहुत मधुर है। बहुत अच्छा गाते होगे ?'

गुनीसिंह के चेहरे पर गुलाली-सी बिखर गई। नीचा सिर करके बोला, 'जब कभी भारी भी हो जाता है।'

माधव हँस पड़े। उन्होंने कहा, 'अभी आये जब जरा-सा था। अब तो फिर वैसा ही बारीक हो गया है।'

गुनीसिंह सकुच गया।

वैसे ही बोला, 'क्या करूँ सदा से ऐसा ही है।'

'तुम्हारा विवाह हो गया है गुनीसिंह?' यकायक उन्होंने प्रश्न किया।

गुनीसिंह के चेहरे की गुलाली चली गई। उसके गले मे कुछ अटक गया। गला साफ करके उसने उत्तर दिया, 'जी पटेल जी, बड़ा दुखिया और अभागा हू मैं। हुआ था, परन्तु भाग्य मे सुख नही लिखा था, इसलिये अब अकेला हूँ और आपकी शरण मे।'

'मेरे भाई हो।' माधव जी ने कहा, 'कभी मुझ से अलग नही होगे। मैं पहले ही वचन दे चुका हू।'

यकायक उसके मुह से निकला, 'जब गङ्गा में बह रही थी—' तुरन्त उसने अपना ओठ काटा और बोला, 'जब गङ्गा मे बह रहा था और मैं मरते मरते बचा यानी डूबते डूबते बच गया बहती धार मे, तब आप ही ने तो बचाया था पटेल जी, अब क्यो न आपकी ही शरण में रहूँगा सदा?'

'सो तो रहोगे ही। तुम इतने अच्छे, इतने भले और—' माधव जी कहते कहते रुक गये।

गुनीसिंह ने नीची आखें ऊँची करके उनकी ओर देखा।

'और तुम इतने पढे लिखे, चतुर और विवेक सम्पन्न हो और तुमको मैं इतना—'

वाक्य पूरा नहीं कर पाये और फिर रुक गये।

गुनीसिंह उनकी ओर सकुचते हुये देखता रहा।

माधव ने दृढ़ स्वर में वाक्य पूरा किया, 'मैं इतना चाहता हूँ कि तुम कभी अलग हो ही नहीं सकते।'

'चाहे मैं कैसा भी होऊं?' दृढ स्वर में ही गुनीसिंह ने पूछा।

'जैसे तुम हो उससे भिन्न तो कुछ तुम हो ही नहीं?'

'शायद नहीं हूं जी। पर यदि निकला तो?'

'तो भी तुमको चाहता रहूँगा। मुझे तुम्हारे भूतकाल से कोई सरोकार नहीं। मैं तो वर्तमान को वास्तविक बनाने का पक्षपाती हूँ जिससे भविष्य अपनी चिन्ता स्वयं करने लगता है। तुम तो कवि हो?'

'जी, पटेल जी, कुछ यों ही थोडा-सा। आप भी तो कविता करते हैं जी।'

'हा, यों ही थोड़ी-सी। कृष्ण भगवान को अर्पित करने के लिये, और तुम?'

'मेरे भगवान मेरे हृदय में हैं। उन्हीं को चढ़ा देता हूँ, आप सुनेंगे? मेरे पास कुछ रखी हैं।'

'सुनूँगा अवश्य सुनूगा। तुम भगवान के किस नाम पर अपनी कविता चढ़ाते हो!'

'उनके कई नाम हैं। एक नाम माधव भी है।'

माधव हँस पड़े। फिर तुरन्त अपने को संयत करके मुस्कराते हुये बोले, 'मेरा भी नाम है यह।'

गुनीसिंह हँसी को न रोक सका। हँसते हँसते उसने एक ओर सिर फेर लिया। माधव ने उसे इतना हँसते हुये कभी नहीं देखा था। और न उसके शुभ्र सुन्दर दांतों को पहले कभी इतना मनोहर अवगत किया था। उसके कान के पीछे एक काला रेशमी डोरा देखा जो माथे से ढके हुये बालों में कहीं चला गया था।

बोला, 'कुछ है जी । हम लोगों के यहा होता है ।'

माधव ने उपेक्षा के साथ कहा, 'होगा । अच्छा यह बतलाओ, अपनी कविता गाकर सुनाओगे न ?'

गुनीसिंह ने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'वैसे ही सुनाऊगा । कविता तो आपकी गाऊँगा मैं यदि बन पडा गाते तो ।'

माधव ने कहा, 'अवकाश पाते ही तुम्हारा गाना सुनूंगा । मैं अपनी कुछ कवितायें तुमको दे दूंगा । उनमे से दो एक जल्दी याद कर लोगे ।'

उसने संकोच के साथ आश्वासन दिया, 'आशा तो है जी ।

'अच्छा तुम पहले इतना थोडा क्यों बोलते थे ?'

'डरता था जी, अब भी तो कम ही बोलता हू ।'

'गाने का साथ करने के लिये बाजे वालों को बुलाऊँ ?'

'जी नही पटेल जी । मैं तम्बूरे पर गाऊँगा । मेरे पास है ।'

'और ताल की आवश्यकता कैसे पूरी होगी ?'

'नहीं जी । मैं वैसे हो गा दूगा ।'

तुम्हारा स्वर, गायन, वादन और नृत्य का एक साथ ही समन्वय है'

गुनीसिंह मुस्कराते हुये, परन्तु सशक दृष्टि से उनकी ओर देखने लगा ।

माधव ने यकायक प्रश्न किया, 'तुम विवाह करोगे ?' और आख गडाकर उसकी ओर देखने लगे ।

अचानक ही गुनीसिंह का हाथ कन्धे पर गया, फिसला और फिर घुटने पर जा थमा । उसके चेहरे पर वेग के साथ रंग आया और गया ।

नीचा सिर करके उत्तर दिया, 'नहीं जी, पटेल जी ।'

'क्या जन्म भर अकेले ही बने रहोगे ?' उन्होंने दूसरा प्रश्न किया ।

अब की बार और कदाचित पहली ही बार गुनीसिंह ने आँख गड़ा कर माधव जी की ओर देखा । बोला, 'हानि भी क्या है पटेल जी अकेले बने रहने मे ?'

'कोई उपयुक्त पात्र मिल जाय तो ?' उन्होने पूछा।

नीचा सिर करके वह बोला, 'भगवान से बढ़कर और कोई नहीं है, उन्हीं के चरणों मे अपने सिर और हृदय को दिये रहूँगा।'

माधव ने सिर दूसरी ओर फेर लिया और मुस्कराने लगे। गुनीसिंह ने फिर आँख गडा कर देखा।

माधव ने फिर उसकी ओर आख घुमाई। गुनीसिंह ने सिर नीचा कर लिया।

माधव ने कहा, 'क्या फिर वैसी किसी लड़ाई में चलोगे मेरे साथ, जिसमें रात को नदी पार करनी पड़े और तुम्हारे सब कपड़े भीग जायें।'

वह बिना सकोच के बोला, 'अवश्य चलूंगा पटेल जी; पर मेरे सब कपड़े तो उस रात नहीं भीगे थे ?' और बड़ी जिज्ञासा के साथ उसने उनकी ओर देखा।

माधव जी ने मुस्कराकर कहा, 'नही तो सब नही भीगे थे। और यदि सब भीग जाते तो मैं उनको बदल देता। बड़ी ठंड थी और तुम अचेत थे।'

माधव ने कनखियों देखा। गुनी की दृष्टि मे कोई प्रश्न था, सकोच,—कुछ वान्छा। उसके मुँह से एक असंगत वाक्य निकला, 'नही जी मेरे सब कपड़े नही भीगे थे—यानी अगर भीग गये होते तो आप बदल देते।'

माधव जी के मुँह तक एक बात आई, परन्तु उन्होंने नियन्त्रण कर लिया।

स्वर में बिना किसी दृढता के बोले, 'आगे तुम्हें लड़ाई मे साथ न ले चला करूँगा।'

उसने जरा-सी गर्दन हिलाकर कहा, 'आपने तो कहा था कि कभी साथ नही छोड़ेंगे।'

'अच्छा मैं तुमसे हार गया।' वे हँसे।

'पर मैं जीत ही कैसे सकता हूँ ?' उसने सिर नीचा कर लिया।

'सदा साथ रह कर ?'

'क्या मेरा ऐसा ही भाग्य है ?'

'पहले ही कह दिया था। अब तो उसी बात को दुहरा भर रहा हूं।'

गुनीसिंह ने सिर ऊंचा किया। माधव मुस्करा रहे थे। गुनीसिंह की बड़ी आखों में दो बड़े आंसू थे।

'तुम्हारा स्वभाव कुछ स्त्रियों जैसा कोमल है।' माधव बोले।

'स्त्रियां कुछ बुरी होती है क्या ?' उसने पूछा।

'जी कहना भूल गये !' माधव ने हँसते हुये कहा।

गुनीसिंह हँस पडा। आंसू पोंछ लिये।

माधव बोले, 'गाना कब सुनाओगे ?'

उसने कहा, 'जब आपकी कवितायें याद हो जायेंगी तब जी।'

'अच्छा जी !' माधव बोले, 'अब चिट्ठी लिख डालो। तुमको अपनी कुछ कवितायें जल्दी दे दूंगा। फिर याद करके सुनाना। एक में माधव ही माधव भरा हुआ है।'

'मेरे गाने मे, और सब जगह वही वही भर जायगा।' नीचा सिर करके माथे पर हाथ फेरते हुये उसने कहा।

माधव हँसते हुये बोले, 'गाना सुनने के समय देखूंगा। अब चिट्ठी लिखो। विशाजी और तुकोजी ने मेरे निषेध करने पर भी गंगापारी रुहेलों के उस इलाके पर आक्रमण करने का निश्चय कर लिया है जिसे अवध का नवाब अपना समझता है। अंग्रेज उसकी सहायता करेंगे। दिल्ली में अपनी स्थिति को पक्का किये बिना हमें अंग्रेजो से टक्कर नहीं लेनी चाहिये। टक्कर उनसे एक दिन लेनी अवश्य पड़ेगी, परन्तु उस संघर्ष के लिये पहले सुधरी सीखी सेना और अच्छे हथियार गांठ में कर लेने चाहिये।'

(६३)

माधव जी नूराबाद से बहुत शीघ्र ग्वालियर होते हुये उज्जैन चले गये। उस समय का उज्जैन तत्कालीन इतिहास का प्रतीक था। भग्न, बिखरा हुआ क्षिप्रा नदी की कल कल के साथ रुदन-सा करता हुआ। माधव जी को उसके सुधारने बनाने का अवकाश ही नहीं मिला था।

यहां उन्हें समाचार मिला कि नारायणराव पेशवा का वध कर दिया गया है। वध का आरोप राघोबा के ऊपर था। एक चिट्ठी भी उसके हाथ की लिखी हुई पकड़ी गई थी जिसमें मराठी में वध करने वालों को लिखा गया था,—'मारावे'—मार डालना। माधव को शोक और क्षोभ हुआ। नारायणराव के भूतपूर्व पेशवा माधवराव ने क्षयरोग ग्रस्त होने के कारण जब देखा कि बचूंगा नहीं, सबके सामने नारायणराव को पेशवा नियुक्त कर दिया था और राघोबा को बन्दीगृह से मुक्त करके उसका भी समर्थन प्राप्त कर लिया था। परन्तु राघोबा स्वार्थान्ध था और उसकी पत्नी आनन्दीबाई गोपिकाबाई से भी अधिक प्रचण्ड और भयङ्कर। उसके प्रभाव में राघोबा—युद्ध-वीर, गृह-भीरु, निर्बल-मन, महत्वाकांक्षी राघोबा—बहुत था। उसका नाम इस वध में विशेष तौर पर लिया जा रहा था। राघोबा उस पाप में लिप्त।

माधव ने सोचा, 'राज्य के प्रति सामूहिक आस्था का विध्वंस हो रहा है। इस आस्था की पुनः स्थापना अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो जो रक्तपात महाराष्ट्र में से आरम्भ होगा उसकी नदियां भारत भर में फैल जायेंगी और अंग्रेज पूरे भारत भर को रौंदकर अपने शासन में कर लेंगे।'

वे पूना की ओर चलने ही वाले थे कि उनसे मिलने के लिये अजमेर से सिहाव आ गया। वह अजमेर का प्रवासी हो गया था।

माधव जी बोले, 'आपको पूना का समाचार मालूम ही है। कुछ सरदार बखेड़ा न कर बैठें इसलिये पूना जा रहा हूं।'

'वह मैंने सुना है। एक बादशाह मार दिया जाता है तो उसकी जगह दूसरा आ जाता है। कोई बात नही। हां एक सरदार का कुछ मजेदार किस्सा सुना है जो फकीर बनकर कुछ फसाद कर रहा था।'

'ऐसे फकीरो की हमारे यहाँ कोई परवाह नहीं की जाती। आपका प्रयोजन उस सरदार से होगा जो लगोटी लगाये पूना मे घूमता रहा। जिससे लोगों की सहानुभूति पा जाय। पेशवा ने उसे बहुत डाटा-फटकारा और जनता ने निरा मूर्ख समझा। ऐसे लोगो का हमें कोई डर नहीं है।'

'तो मैं आप से पूना में आकर मिलूं ? यहां तो आपको फुरसत नही है।'

'नहीं, नही, बात करिये। मैं सुन तो लू गा ही।'

'शुजा को अब भी वजीर कहा जाता है हालाकि वह बरसों से कोई भी काम नही कर रहा है, और अग्रेजों की कठपुतली है। बादशाह ने नजफ को मीरमुन्शी बनाकर जाबिता को भी बना दिया है ! बादशाह का एक कान लगा, वजीर न होते हुये भी, वजीर बन रहा है। अब क्या करना चाहिये ? आप दिल्ली पहुचें तो मेरे लिये कुछ हो सके।'

'मैं अभी तो नही जा सकता हूं। पूना से निवट कर देखूगा।'

शिहाब ने चलते हुये पूछा, 'वह आपका सिक्ख खास कलम कहां गया ?'

माधव जी ने उपेक्षा के साथ उत्तर दिया, 'यहीं है। कहिये ?'

'कुछ नही,' कहता हुआ शिहाब चला गया।

(६४)

माधव जी उज्जैन से इन्दौर आये। राघोबा उनकी और तुकोजी की सहायता लेने के लिये आया था। मृत नारायणराव पेशवा की पत्नी गर्भवती थी। नाना फड़नीस पूना की राजनीति में ऊपर आ चुका था। वह राघोबा के विरुद्ध था। चाहता था उस गर्भवती के प्रसव तक तो प्रतीक्षा की जाय।

राघोबा ने माधव को अपने पक्ष में मिलाने की चेष्टा की। अभी तुकोजी और विसाजी दिल्ली से अपने घर नहीं लौट पाये थे।

राघोबा ने माधव जी से प्रस्ताव किया, 'महाराष्ट्र की वर्तमान संकटपूर्ण परिस्थिति में मुझे ही पेशवा माना जाना चाहिये।'

माधव ने कहा, 'श्रीमन्त थोड़ा-सा ठहरें। यदि आप नहीं मानेंगे तो महाराष्ट्र-जनता उत्पातों में सन जायगी।'

पैर उचका कर किसी भी ऊँचे लक्ष्य को देखने का राघोबा अभ्यस्त ही न था। वह केवल नाक के नीचे की वस्तुओं को देखा करता था। बोला, 'महाराष्ट्र जनता के युवकों को मुल्कगीरी की परम्परा मालूम है। वे तो लड़ने के लिये बाहर जाना चाहते हैं। पेशवाई के प्रश्न से उन्हें कोई प्रयोजन नहीं है।'

'होलकर से लिखा-पढ़ी की श्रीमन्त ने ?' माधव ने पूछा।

'की है', उसने उत्तर दिया, 'वह आ रहा है। हमारा साथ देगा।'

'और न दिया तो ?' माधव ने कहा।

राघोबा को अपने साहस, प्रयत्न और योजना-विधान में उग्र विश्वास था।

उसने उत्तर दिया, 'वह साथ देगा। हमारा नौकर जो है। थोड़े से सरदारों का सिर चाहे फिर जाय, परन्तु तुम हो, अंग्रेज हैं, मेरा दल है। इतना सब एक साथ देखकर होलकर भी सहायता देगा ही।'

अपने को अंग्रेजो के साथ एक ही कोष्टक मे रखा जाना माधव को बहुत चुभ गया। परन्तु राघोबा की पूरी योजना जान लेना चाहते थे।

'अंग्रेज सेंतमेंत सहायता तो करेंगे नही। बदले मे कुछ चाहेंगे।' उन्होने कहा।

राघोबा ने बात खोल दी,—शायद आवश्यकता नही पडेगी। पर यदि उन्होंने सहायता दी तो केवल सालसिट और बसीन के टापू चाहेंगे।'

'श्रीमन्त से बातचीत हो चुकी है? और कुछ तो नहीं चाहेंगे?'

'नही और कुछ नही।'

'इससे अपना समुद्री बेडा संकट मे पड जायगा। किसी समय अंग्रेज हमारी समग्रता पर भी दांत अडा सकते हैं।

'वे ऐसा नहीं कर सकेंगे। हम लोग उनका प्रतिबन्ध करने की शक्ति रखते हैं, और, अवसर आने पर उन लोगों से इन दोनों टापुओं को छीन भी सकते हैं।'

माधव जी को राघोबा की इस बच्चो की सी मूर्खतापूर्ण बात पर मन मे हँसी आई।

माधव जी चाहते थे राघोबा को हाथ से खिसकने न दिया जाय अन्यथा वह अंग्रेजो से तुरन्त जा मिलेगा और महाराष्ट्र के कुछ विद्रोही सरदार संयुक्त होकर उपद्रवों को बढा देंगे।

उन्होंने पूछा, 'नाना फडनीस क्या कहता है?'

राघोबा ने उत्तर दिया, 'तुम्हें मालूम ही होगा। वह मेरे विरुद्ध है। पेशवा की विधवा से उसका प्रेम सम्बन्ध रहा है। गर्भ भी उसी का है। वास्तव मे इसीलिये मुझे पेशवाई का हठ है और इसीलिये नाना मेरे प्रतिकूल है।'

राघोबा के इस निन्द्याचार पर माधव के मन में बड़ी ग्लानि हुई। उन्होंने इसे भी दबा लिया। कहा, मुझे मालूम है नाना श्रीमन्त के विरुद्ध है और उसके साथ बहुत से सरदार भी हैं।'

'बहुत से नही हैं, थोडे से हैं।' वह बोला।

माधव ने अनुरोध किया, 'होलकर को आ जाने दीजिये। सब मिलकर पूना चलें और बैठकर इस झमट को निपटा लें। मान लीजिये पेशवा की विधवा से लड़की उत्पन्न हुई तो यह सब व्यर्थ का ही टटा तो रहेगा न?'

राघोबा ने हठ किया, 'लड़का ही होगा तो वह किसका होगा? हम तो उसे औरस सन्तान नहीं मान सकते।'

माधव जी ने उसके हठ को टालने के लिये कहा, 'संभव है आपका कथन सत्य हो। होलकर के आ जाने पर पूना चलिये। वहां निर्णय और निश्चय कर लेंगे। श्रीमन्त जानते हैं मैं आपका कितना आदर करता हूं।'

वह बोला, 'मैं जानता हूं तुम कितने सुशील और दृढ़ हो और कितने स्वामि-भक्त।'

(९५)

रावोवा से बातचीत करने के बाद माधव मन में ग्लानि और क्लान्ति लिये अपने डेरे पर आये। सन्ध्या होने में काफी विलम्ब था। उन्होंने गुनीसिंह को अकेले मे बुलाया। वह कलम दावात और कागज लेकर आ गया।

माधव जी ने कहा, 'लिखने के सामान को रख आओ और गाने का सामान ले आओ।'

गुनी की मुख मुद्रा विकसित हो गई। वह चला गया और आवरे में बन्द तम्बूरा ले आया। आवरे से निकालकर उसने तम्बूरे को मिलाया। माधव ने देखा उसके तम्बूरे पर मीनाकारी है, शायद सच्चे रत्न श्रम और कारीगरी के साथ पची किये गये हैं। एक किनारे पर फारसी अक्षरो में कुछ पची किया हुआ था। उसकी बराबरी पर दूसरी ओर उतने ही स्थान मे एक बुलबुल खचित थी। माधव जी का ध्यान बुलबुल की ओर अधिक गया। उन्हें गुनीसिंह की उस कविता का स्मरण हो आया जो उसने पुष्पोद्यान और बुलबुल के खाक हो जाने पर लिखी थी। उसके बाद की गुनी सम्बन्धी अनेक घटनायें उनकी आखो के सामने घूम गई। तम्बूरा मिलाकर गुनीसिंह ने भीमपलासी राग मे माधव जी की बनाई हुई कविता सुनाई,—

'माधवि, मालति, मल्लिका फूली तरुनि समेत,
कित 'माधव' ब्रजराज है मोहि कहौ करि हेत ?
गुल्म लता तरु मृगकुल कालिन्दी इत देखि,
मो प्यारो 'माधव' कहा मोहि बताउ बिसेखि ?'

गुनीसिंह के मधुर कण्ठ ने गायन को तानों, अलकारों, से ऐसा सजाया कि वह अपने ऊपर स्वयं मुग्ध हो गया। उसने रीझ रीझकर हलकी भूम ले लेकर 'मो प्यारो माधव कहा' अनेक बार अनेक तानो में गाया। आँखें तो उसकी मादक थी ही गाते समय झुक झुक पड़ी—कभी

पूरी मुकलित, कभी मधमुदी। तम्बूरा बहुत मीठे स्वर वाले तारों का था। वह अपने पेट के पन्ने से ताल का काम ले लेता था। माधव को लगा वास्तव में उसकी तानों में गायन, वादन और नृत्य का समन्वय है।

गुनीसिंह ने गायन समाप्त करके तम्बूरे को गोदी में रख लिया। माधव उस समय आँखें मूँदे हुये तकिये के सहारे लेटे थे। गुनीसिंह उनकी ओर लालसा के साथ देख रहा था। कोठे में करुण उल्लास और कामना से भरी हुई तानें मानो थिरक थिरककर नाच रही थीं। जैसे कोई गोदी में 'मो प्यारो माधव कहाँ' कहती हुई उन तानों के पीछे घूम रही हो और वे तानें उसके साथ आँख मिचौनी खेल रही हों।

गुनीसिंह ने कल्पना की, शायद माधव जी सो गये हैं। उसने बहुत धीरे बारीक स्वर में कहा, 'कुछ और गाऊँ ?'

माधव जी तुरन्त बैठ गये।

मुस्कराकर बोले, 'वह फारसी वाली कविता याद है जो एक दिन चिट्ठी लिखते लिखते लिख उठे थे तुम ?'

उसने उत्साह के साथ उत्तर दिया, 'नहीं याद है पटेल जो। उसे तो मैंने फाड़कर फेंक दिया।'

'क्यों ? कब ?' माधव ने पूछा।

नीचा सिर करके गुनीसिंह बोला, 'जब इस कविता को याद कर लिया।'

'फारसी की उस कविता का कुछ याद है ?'

'कुछ भी नहीं ?'

'उसका विषय भी नहीं ?'

'बहुत दिन हो गये। सब भूल गया—सब भुला दिया।'

'तुम सुखी हो गुनीसिंह ?'

'मुझ से बढ़कर कोई नहीं—इस समय पटेल जी।'

माधव ने मुस्कराकर कहा, 'तुम्हारा तम्बूरा बहुत अच्छा है। इसकी बनावट बड़ी सुहावनी है। परन्तु यह कहना कठिन है कि इसके तारों की झंकार अधिक मधुर है या तुम्हारे कण्ठ की।'

गुनीसिंह तम्बूरे की ओर देखने लगा।

माधव बोले, 'बहुत मूल्यवान पड़ता है। क्या सच्चे नग जड़े हैं इस पर? कहां का बना है? तुम्ही ने बनवाया था?'

सिर नीचा किये हुये ही उसने उत्तर दिया, 'सच्चे नग हैं जी। दिल्ली का बना हुआ है जी। मैंने ही बनवाया था।'

'इस पर जो बुलबुल खचित है वड़ी सुन्दर बनाई गई है', उन्होंने कहा, 'देखूं जरा।'

गुनीसिंह की दृष्टि तम्बूरे पर खचित बुलबुल पर गई। और फिर उसकी दूसरी ओर बराबरी पर पच्चीकारी की हुई लिखावट पर। वह कुछ विचलित हुआ। उस जगह पर उँगलियां रख लीं। सिर उठाया। झिझकी हुई चितवन से देखा और बोला, 'असल की नकल की कोशिश कारीगर ने की है। साधारण सी ही है।'

माधव जी ने हाथ बढ़ाकर कहा, 'सारा तम्बूरा सुन्दर है लाओ देखूं।'

गुनीसिंह के भीतर थोड़ी सी धड़कन हुई। टेढ़ी गर्दन करके तम्बूरा लिये माधव जी के पास आया। तम्बूरे को खचित बुलबुल की ओर से दिखलाया। दूसरी ओर के खचित लेख पर एक हाथ की गदेली रखली। दूसरे से तम्बूरा साध लिया। माधव ने एक क्षण तम्बूरे पर आंख घुमाई फिर गुनीसिंह की ओर देखा। उसके ओठों पर क्षीण मुस्कान थी और आंखों में गहमती सूक्ष्म थिरक।

माधव ने बुलबुल पर आंख साधी फिर उस लिखावट को पढ़ा। तम्बूरे पर खचित था—गन्ना बेगम। गुनीसिंह ने भी पढ़ा। माधव जी मुस्कराये। उसकी ओर देखा। सिर नीचा किये था। चेहरे पर रंग बिखर गया था।

'इस पर किसका नाम है ?'

कोई उत्तर नहीं मिला।

'क्या तम्बूरे के बनाने वाले का नाम है ?'

गुनीसिंह चुप रहा।

'तो फिर गाने वाले का होना चाहिये।'

गुनीसिंह नीचा सिर किये हुये बैठ गया। उसके मुंह से क्षीण स्वर में निकला, 'किसी दुखिया का।'

'अभी अभी तो कह रहे थे तुम्हारे बराबर कोई सुखी नहीं ! अब ?'

'अब आपकी शरण में।'

'उठो गन्ना बेगम। तुम बहुत बड़ी नारी हो। गुनीसिंह को मैंने जो वचन दिये थे वे सदा सच्चे रहेंगे। उनमें रत्तमात्र का भी अन्तर नहीं पड़ेगा।'

गन्ना थोड़ी देर हिलकी मार कर रोई। फिर शान्त होकर बोली, 'मेरी कहानी बुरी है, परन्तु बुरी की अपेक्षा दुख भरी अधिक है, सुना डालूं ?'

माधव जी भी किन्चित हिल गये थे।

उन्होंने कहा, 'मुझे तुम्हारी बुरी भली कहानी से कोई मतलब नहीं। मैं नहीं सुनना चाहता। तुम मुझसे सबका सब आश्वासन पहले ही ले चुकी हो। माधव अपनी बात का बदलना नहीं जानता। तुम पर मेरा अगाध स्नेह है।'

उसने लाल रेखाओं से भरे हुये नेत्रों को ऊपर किया। बोली, 'मैं चाहती थी मेरी असलियत आपको कभी न मालूम हो पाती और यों ही सेवा करते करते संसार से विदा ले जाती।'

माधव मुस्कराये। उस मुस्कराहट में गन्ना ने अप्रतिम ललक नापी। उन्होंने कहा, 'मुझे बहुत पहले मालूम हो गया था।'

अब गन्ना मुक्त होकर मुस्कराई। पूछा, 'कब ?'

उन्होंने उत्तर दिया, 'जब हरद्वार के निकट वाले युद्ध में भीग गईं और अचेत हो गई थी तब। दाढ़ी ऐसी बांधी थी जो ढीली पड़ गई थी ! और—और—।'

गन्ना ने सिर नीचा कर लिया।

बोली, 'और—और क्या ? आप कवि हैं न। उस बिचारी को इतने दिनों कैसा धोखे में डाले रहे !'

'और वह बिचारी,' उन्होंने कहा, 'मुझ सरीखे सतर्क को कितने समय तक छल में डाले रही ! क्या तुम्हारे रहस्य को मेरी छावनी में कोई और भी जानता है ?'

'नहीं तो कोई भी नहीं। मैं रहती ही इतनी सावधानी के साथ रही हूं कि कभी किसी ने नहीं जान पाया। आज्ञा हो तो अब खुल जाऊँ ?'

'खुल जाओ, मैं डरता नहीं हूं। अब तुम्हारे चेहरे पर यह दाढ़ी सुहा भी नहीं रही है।'

गन्ना ने दाढ़ी खोलकर हाथ में ले ली। गन्ना का रूप छिटक पड़ा जैसे किसी बांध को फोड़कर निर्मल जल वाली नदी की धार बह पड़े।

'फिर से गा सकोगी उस कविता को ?' मुग्ध माधव ने पूछा।

गन्ना ने तम्बूरा हाथ में ले लिया। बोली, 'दिन रात गा सकती हूँ। मुझ से बढ़कर सचमुच कोई और सुखी नहीं है।'

माधव ने हँसकर कहा, 'नहीं। यह अभिप्राय नहीं था। तुमसे बात ही करूँगा अभी तो। गाना तो सुना ही करूँगा। वह तुम्हारा साथी कौन था—मनीसिंह ?'

उसने उत्तर दिया, 'मुसलमान हिजड़ा था। उसने बहुत निभाया। उसकी पूरी कथा कभी सुनाऊँगी।'

'कभी नही सुनूंगा।' माधव ने कहा, 'पीछे की एक भी बात नहीं सुनूंगा।'

'अब मेरे लिये क्या आज्ञा है ?'

माधव जी कुछ देर सोचते रहे। बोले, 'तुम्ही बतलाओ। मेरी चिन्ता न करते हुये बतलाना। जिसमे तुमको क्षेम कुशल, शान्ति और सुख सब पूरे प्रकार से मिलें, वह कहो। तुम्हीं कहो।'

गन्ना की आंखें चमक से भर-सी गईं। उसने तुरन्त कहा, 'आपकी चिन्ता न करूं! खूब कहा, आपने!! जिनकी चिन्ता या सेवा मे बाकी जिन्दगी बिता देना चाहती हूँ उनकी मान-मर्यादा के सम्बन्ध में कुछ भी न सोचूं!!! मैं गुनीसिंह ही बनकर रहूँगी। उसी सावधानी के साथ, उसी होशियारी से! मुझे चाहिये ही क्या? आपकी रक्षा और—

और मेरा प्यार।' माधव ने निष्कम्प स्वर में वाक्य पूरा किया 'सो मैंने कह ही दिया है।'

लजीली आंखों को नीचा करके उसने मुस्कराकर कहा, 'यह मैंने कब कहा था?'

'मैंने तो कहा।' माधव हँसते हुये बोले।

वे दोनो कुछ क्षण चुप रहे।

उसने सिर ऊंचा करके कहा, 'मैं पानी का बबूला हूँ। आप पानी पीना चाहेंगे तो बबूला टूट जायगा।'

'बबूला है!' माधव बोले, 'चमत्कार का प्रतिबिम्ब, किरणों से भर हुआ। बबूला नही है, प्रकाश बिन्दु है। माधव के प्यार में ओछापन कभी नहीं पाओगी गन्ना। अपना गायन माधव को सुनाती रहना और माधव के माधव को।'

गन्ना ने यकायक उठकर माधव का एक हाथ अपने दोनों कोमल करों मे पकड़ लिया। कहा, 'निस्सन्देह। अवश्य। मुझे सुख ही नहीं मिल रहा है बल्कि अमित शान्ति भी। आप मुझ सरीखी क्षुद्र को

महान कहते हैं। आगे कभी मत कहना; नही तो मैं आपके लिये कुछ कह उठूंगी।'

माधव ने अपने दूसरे हाथ से उसके हाथो की कलाइयों तक बांध लिया। बोले, 'अच्छा मेरे लिये कुछ मत कहना। मैंने एक आदर्श रख छोड़ा है। मैं भारत भर की शक्तियो का एकीकरण और सामन्जस्य करके ऐसे संघ की स्थापना करना चाहता हूँ जिससे भारतीय संस्कृति की रक्षा हो जाय, उसका विकास हो और वह निरन्तर बढ़े। अहमदशाह सरीखे विदेशियों से जो यहां रक्तपात और भयङ्कर उत्पात मचा चुके हैं और अंग्रेजों सरीखे परदेशियो से, जो आगे चलकर हमको दाब सकते हैं, इस देश को बचाना चाहता हूँ। इस प्रयत्न में मेरी सहायता करती रहोगी ?'

'मेरा अहोभाग्य', उसने प्रफुल्लित होकर उत्तर दिया। मैं हूँ ही किस योग्य।'

माधव जी कहते गये, 'मैं इस आदर्श की योजना और प्रयत्न के स्वप्न तक देखा करता हूँ। तुमसे मुझे अवश्य सहायता मिलेगी।'

'हां जी पटेल जी' अनोखी मुस्कान मे घुला हुआ वाक्य उसके मुंह से निकला।

वे भी हँसे। बोले, 'हां जी, मैं तुमको याद दिलाना चाहता था। ओफ! जी कितना अपव्यय हुआ है जी।'

वह भी हँस पड़ी।

उसने कहा, 'अब मैं अपनी दाढ़ी जहां की तहां लगा लूं ?'

'हां हां,' माधव बोले, 'अब बहुत विलक्षण दिखोगी मुझे।,

उसने मदभरी आंखो को जरा-सा झुका कर कहा, 'हरद्वार वाली लड़ाई से लेकर आज के दिन तक मानो आपको कुछ लगा ही नहीं। अच्छा अब, जी पटेल जी। गुनीसिंह को चिट्ठी-विट्ठी लिखवानी हो तो बोल दीजिये।' और उसने दाढ़ी लगाकर विनीत, भोले, गुनीसिंह की मुद्रा बना ली।

'गजब करती हो, गन्ना तुम।' उन्होंने हँसकर कहा,—'चिट्ठी तो इस समय नही लिखानी है।'

उमगती हुई हंसी को दांतों से दबाते दबाते बोली, 'गन्ना नही, गुनीसिंह पटेल जी।'

'अच्छा, अब मैं सवारी के लिये जाऊंगा।' उन्होंने कहा।

गुनीसिंह चला गया।

एकीकरण हो सकता था ? क्या यह घृणा भारत की विविधताओं का एकीकरण और सामञ्जस्य कर सकती थी ? माधव जी इस समस्या पर बहुत विचार किया करते थे। जब वे पूना पहुचे तब उन्होंने राघोबा और उसके थोड़े से समर्थकों मे इस घृणा को भी कम मात्रा में पाया।

पूना के रत्न, उस महामहिम व्यक्ति राम शास्त्री ने अपना पद, यहा तक कि पूना का निवास भी त्याग दिया था। नारायणराव पेशवा के नृशस वध पर, शास्त्री राघोबा के पास पहुचे। पूछा, 'यह क्यों और कैसे हुआ ?'

जैसे सूर्य के प्रचण्ड तेज के मारे अन्धकार की सिट्टी भूल जाती है राम शास्त्री के समक्ष वही गति राघोबा की हुई थी। उस पाप में उसका जितना हाथ था उसे अस्वीकार करने का साहस राघोबा नही कर सका। उसने कहा था, 'मैंने उन लोगो को लिखा था 'धारावे'—पकड़ लेना,—उसने धा को मा मे बदल कर—कर दिया 'मारावे'—मार डालना।'

'तुम इस पाप के भागी हो', उपनिषद और महाभारत की सस्कृति उस निरीह ब्राह्मण की वाणी से निसृत हुई।

अपराधी ने पूछा था, 'क्या प्रायश्चित है शास्त्री जी इस पाप का ? अर्थात् जितने का मैं वास्तव मे भागी हूं ?'

'प्राणदण्ड। तुम्हारी देह की समाप्ति, जिसे तुम अपने हाथ से ही कर डालो तो अनुचित न होगा।'

राघोबा ने नही माना। पेशवा को पकड लेने या मार डालने की वासना रखने वाले राघोबा को प्रायश्चित से बढ़कर महाराष्ट्र का राज्य और मुल्कगीरी का चमत्कार प्रिय था।

घर में एक दिन से अधिक के लिये भोजन सामग्री न रखने वाले राम शास्त्री पूना को पाप रंजित छोड़कर चले गये।

नाना फडनीस राघोबा का दृढ विरोधी था ! उसे माधव जी का सहयोग प्राप्त हुआ। तुकोजी होलकर भी आ गया था। उसने भी नाना फडनीस का साथ दिया।

नारायणराव पेशवा की विधवा पुत्र प्रसव कर चुकी थी। इस बालक को पेशवा बनाने के नाना फडनीस, माधव जी और तुकोजी समर्थक हो चुके थे। रघुनाथराव—राघोबा—और अंग्रेजों के बीच में पत्र व्यवहार प्रारम्भ हो गया था। लड़ने वाले सिपाही और सरदार अपने अपने मन बाट चुके थे।

अंग्रेज सालसिट और बसीन के टापुओ को चाहते थे। पदमोही और अर्थलोभी राघोबा तक प्रारम्भ में इन टापुओं को अंग्रेजो के हाथ में नही देना चाहता था, जब तक वह भूतकाल के चमत्कार और भविष्य की कीर्ति के सयोग से अपने वर्तमान को अलग रख सका, तब तक। वह उस बालक को नारायणराव का पुत्र मानने को तैयार न था। इस दुराग्रह ने उसकी आकाक्षाओं को वर्तमान पर केन्द्रित किया—केवल वर्तमान पर।

राघोबा के प्रति विरोध सबल और प्रबल होता चला गया। प्रारम्भ में उसे आंशिक सफलता भी मिली, परन्तु फिर वह मुंह की खाकर गुजरात की ओर भागा और अंग्रेजो की शरण में जा पहुंचा।

गोवा के पुर्तगालियो ने देखा महाराष्ट्र घरेलू झगड़ो में फंस गया है इसलिये उनका लोभ भी सालसिट के टापू की ओर लपका। अंग्रेजो ने सालसिट के टापू पर पहले छापा मारने की ठानी। सालसिट का मराठा रक्षक एक वयोवृद्ध प्रभू था—बालकृष्ण गुप्ते। आयु बानवे वर्ष से ऊपर। उत्साह, वीरता और दृढ कर्तव्यपरायणता जवान की। इसे सालसिट खाली करने के लिये कहा गया।

उसने उत्तर भेजा, 'मैं यहां सालसिट को यों ही शत्रु के हाथों हवाले कर देने के लिये नहीं भेजा गया हूं।'

लड़ाई छिड़ गई। बानवे वर्ष का वह वृद्ध व्याघ्र मरते दम तक हाथ में तलवार लिये रहा। सालसिट मराठों के हाथ से तब गया जब बालकृष्ण गुप्ते के शरीर के टुकड़े टुकड़े हो गये। राघोबा ने सूरत में बैठकर अंग्रेजों को न केवल सालसिट और बसीन लिख दिया अपितु सालसिट और बसीन के निकटवर्ती प्रदेश की उगाही का भी अधिकार दे दिया! माधव राव पेशवा के देहान्त के बाद से अग्रेज जिस अवसर की खोजबीन मे थे वह उन्हें विराट रूप में मिल गया।

(६७)

अंग्रेजो ने कई मोहरे साथ रखे थे। निजाम, गायकवाड़ नर्मदा के दक्षिण पश्चिम में, नजफ–अंग्रेजो से दो लाख रुपया वार्षिक पैन्शन पाने वाला नजफ–दिल्ली मे, शुजा लखनऊ में और उनका निज का, एक अंगरेज कभी रुहेलो में, कभी दिल्ली में और कभी राजपूताने में। वह राजपूताने के राजाओं को मराठों के खिलाफ उभाड़ने में लगा रहता था, अंग्रेज दिल्ली के बादशाह को अपनी गुड़िया बनाये रखना चाहते थे। अपने भारतीय मार्ग के प्रस्तार मे महाराष्ट्र-शक्ति को वे सबसे बड़ी बाधा समझते थे। इस बाधा को दूर करने के उन्हें सब साधन सुलभ थे—भारत का घोर वर्ग-मोह, जातपात के झगड़े और परस्पर के अनवरत संघर्ष, सरदारों सामन्तों की अनन्त भूमि-बिभुक्षा, बिगड़े नवाबों और उजड़े हुये राजाओं का शरणार्थी बन बनकर पहुँचना, हिन्दू मुसलमानों की परस्पर घृणा, मुसलमानों का दम्भ और आतङ्क हिन्दुओं में इसकी प्रतिक्रिया के परिणाम स्वरूप पुरातन स्मृतियों और स्मारकों का आवाहन, बेघर द्वार लोगों का लूटमार मे शामिल होना या रुपये के लिये अपनी सेवा और वीरता का बेचना, अंग्रेजों के नये शस्त्र और उनकी अंग्रेजी हिन्दुस्थानी पल्टनों का संयम अनुशासन तथा स्वयं इङ्गलैंड में मध्यमवर्ग का तीव्र गति के साथ उत्थान और अपने व्रत विस्तार की अचल भावना। इन सब साधनों की सुलभता मे केवल एक विघ्न था—रुपये की कमी, जिसके कारण अंग्रेजो को अपनी राजनैतिक घुड़दौड़ में रुक रुक कर गति बढानी पड़ती थी।

मानो अंग्रेजों को सहायता देने के लिये प्रत्येक प्रदेश की एक एक अलग समस्या खड़ी हुई। पेशवाओं ने कोकणस्थ ब्राह्मणों को पदों और अधिकारों पर बढ़ाया और देशस्थों को गिराया। जो प्रभू कायस्थ शिवाजी के समय के पहले से भी चतुर और शूरवीर सेनानी तथा पढ़े लिखे कुशल राजनीतिज्ञ थे उन्हें भी पद निरत कर दिया गया। इससे

जो ईर्षा और जलन उत्पन्न हुई उसने भी रघोबा सरीखे स्वार्थान्धों को अपनी अपनी-सी कर डालने का मोह भेंट किया।

उत्तर में जाट राजपूत विसर्ग थोड़े से रूप में तो भी था। शिया सुन्नी वैमनस्य भी। परन्तु बड़ी समस्या उत्पन्न की सार्वभौम इस्लामी राज्य-भावना ने। हुकूमत की बात चलते ही मुसलमानों को रुतबा, शान, इस्लामी प्रभुत्व और औरंगजेबी आतङ्क की याद आ जाती थी। मुसलमान जन की अनिश्चित धूमिल भावना को शाहवली के 'जम्हूरियती' आन्दोलन से प्रेरणा मिली और उसके चेले शाह अब्दुल अजीज से एक सीमित, सुदृश्य सहज स्पर्शनीय रूप। वह हर जगह दौरे पर दौरे कर रहा था। लोगों का संगठन कर रहा था, यहां तक कि, पिंडारों में जो मुसलमान थे, उनका भी। बाद में वह पिंडारों में भर्ती भी हो गया था। अभी उसने यह फतवा नहीं दिया था कि 'जहा आजाद इस्लामी हुकूमत न हो वह दारुल हरब है; वहा के मुसलमान या तो हुकूमत के खिलाफ तलवार से लड़ें या उस देश को छोड़कर चले आवें', परन्तु इस फतवे के बीज बहुतायत के साथ और विस्तृत रूप में बिखेर दिये गये थे। क्रान्ति के सैद्धान्तिक रूप को साधारण मुसलमान जन नहीं समझ सका, हर किसी ने अपना मनचाहा अर्थ लगाया। किसी ने बादशाह या नवाब को मार डालने का, किसी ने हिन्दुओं को समाप्त कर देने का; प्रत्येक गुट ने अपने विरोधी गुट को मिटाने का।

महाराष्ट्र शासक के लिये महाराष्ट्र की गृह समस्या तो कठिन थी ही बाहर की समस्यायें अमह्य रूप से कठोर हो पड़ीं। उनके ऊपर अन्तिम विचार और निर्णय करने के लिये नाना फडनीस, माधव जी और तुकोजी को एक दिन बैठना पड़ा। महाराष्ट्र सम्बन्धी प्रश्नों पर चर्चा करते करते उत्तर के विषयों पर बात चली।

तुकोजी ने कहा, 'माधव हम लोगों को छोड़कर न चले आये होते तो हम मुजा और अंग्रेजों को एक साथ चित कर देते।'

माधव बोले, 'अंग्रेजों की छावनी पर शिवाजी ने गोले चलाये थे फिर क्या हुआ ? छावनी की एक बुढ़िया मरी और एक हाथी घायल हो गया, बस। अंग्रेजों ने ज्यों ही गोले चलाये, त्यों फौज फाटे समेत चले आये ? मैं सदा यही कहूंगा पहले अपनी सेना को संयमशील बनाओ और अच्छे नये हथियार पैदा करो, तब अंग्रेजों के टोकने की सोचो।'

नाना फडनीस ने समर्थन किया, 'घर को सँभालते ही इन्हीं के समक्ष सबसे पहले होना पड़ेगा। अङ्गरेजों के हथियार हमारे हथियारों की अपेक्षा निस्सन्देह अच्छे हैं।'

तभी तो उन्होंने रुहेलखण्ड का अधिकांश भाग शुजा को दिलवा दिया और विशाजी को पुटिया पुचकार कर चलता कर दिया। माधव जी ने कहा, अब उनका गुमाश्ता नजफ दिल्ली के आसपास अपने को दृढ करता चला जा रहा है। जाटों का दमन उसने कर ही लिया है; आगरे का किला उसके हाथ में आ गया है। जाबिता को हटा दिया, रुहेलों को उसने बोरिये बाध कर यमुना पार कर दिया—'

तुकोजी ने व्यङ्ग किया, 'तुम भी तो यही चाहते थे।'

'मैं यह नही चाहता था', वे शान्त स्वर में बोले, 'मैं उन्हे परदेशी न बने रहने देकर यहीं की मिट्टी का बना देना चाहता था। जाबिता का जो प्रदेश हम लोगों के हाथ मे होना चाहिये था वह हमारी भूलों से अब नजफ के हाथ मे पहुच गया है। नजफ ने विलायती तरीके पर सेना तैयार की है। अबकी बार जब हम लोग दिल्ली पर जावेंगे तब बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ेगा।'

नाना बोला, 'राघोबा वाली समस्या तो हल होती दिखती है, उत्तर प्रश्न अवश्य कराल रूप धारण करता चला जा रहा है।'

'बिलकुल', माधव ने कहा, 'औरंगजेबी शासन को स्थापित करने की भावना साधारण मुसलमान जन के मन में उत्कंठित हो रही है। चतुर लोग उनका संगठन कर रहे हैं। नजफ अपने समर्थकों को उत्तर और

दक्षिण अन्तर्वेद की सारी भूमि जागीरों में बांटने लगा है। इन सबसे हमको लड़ना पड़ेगा।'

तुकोजी बोला, 'इसीलिये हम आगरे के किले को अपने हाथ में करना चाहते थे।'

माधव ने कहा, 'आगरा तो दूर रहा अब ग्वालियर और झांसी की भी कुशल नहीं। ग्वालियर को आगरे से सकट की आशंका है और झाँसी को युजा के पाले हुये गुसाईं दल से। प्रत्येक परिस्थिति में ये सब हम लोगों के लिये समस्यायें ही समस्यायें हैं।'

तुकोजी ने विक्षेप किया,—'दिल्ली में बादशाह के कुछ दरबारियों का एक दल है जो नजफ के विरुद्ध है।

माधव जी ने प्रतीकार किया, 'वह दल किसी सिद्धान्त के आधार पर नहीं है। बादशाह इस दल के हाथ में अवश्य है, परन्तु बादशाह स्वय बहुत निर्बल-मन और अनिश्चयी है। इस दल को सिक्खों ने खदेड़ भगाया था। हम दिल्ली से चले आये हैं तो अब सिक्ख उसे अधिकार में लाने के लिये तत्पर हैं। सिक्ख या अंग्रेज, कोई न कोई, कूदता है जाकर दिल्ली में।'

नाना बोला, 'समाचार तो दिल्ली के सब मिलते ही रहते हैं और इन सब विघ्नों का निवारण भी कर ही लेते, परन्तु रुपये की अत्यन्त कमी है। अपने दिल्ली-स्थित दूत को वेतन तक नहीं दे पाते। वह लिखता है मुझे नित्य ही एकादशी और शिवरात्रि का उपवास-सा करना पड़ता है!'

'यह तो इन लोगों की पुरानी शिकायत है', तुकोजी बोला, 'मैं उत्तर में पहुँच पाऊँ तो रुपये पैसे की कमी नहीं रहने दूगा।' तुकोजी माधव की ओर देखने लगा।

नाना ने कहा, 'यदि माधव तुम उत्तर की ओर जाकर कुछ बाकी वसूल कर लाओ तो बहुत काम चले।'

माधव ने हामी भरी,—'मैं प्रयत्न करूंगा। ग्वालियर को ऐसी स्थिति में कर आने का विचार भी है जिससे गोहद का राजा या आगरे

का मुगलिया सूबेदार हम लोगों को इन व्यापक उलझनों में पड़ा हुआ समझकर ग्वालियर के दाब लेने की चेष्टा न करे।'

महाराष्ट्र मे राघोवा के खुले पक्षपाती बहुत ही थोड़े थे। अंग्रेजों के मुकाविले के लिये नाना फडनीस तुकोजी की सेना और अपनी बुद्धि को पर्याप्त समझता था। माधव की अपेक्षा तुकोजी था भी नाना फडनीस का बड़ा मित्र। इसलिये यही तै रहा।

(९८)

शिहाबुद्दीन ने माधव जी के ग्वालियर की ओर आने का समाचार पाते ही अजमेर से कूच कर दिया और कूच करने के साथ ही भिन्न भिन्न प्रकार की शराबों से कई हाथियों की पीठ लाद ली। अब वह शराब बहुत पीने लगा था। उसकी कुशाग्रबुद्धि को राजनैतिक क्षेत्रों में निराशा मिली, प्रेम के प्रदेश में उसने धक्के खाये, शासनाधिकार में नर-वध करने के अवसर न मिल पाने के कारण उसने अपने हरम पर हाथ साफ करना शुरू कर दिया। शराब की मस्ती उसे सभी कुछ दे उठी थी – निस्सीम देशों की अपरमित वजारत, अनेक बादशाहों को भूर्खों मारकर अन्धा कर देना और फिर उनकी हत्या करवा डालना, असंख्य धन सम्पत्ति, अनिर्वचनीय सुन्दरी—समूह और पूरा कल्पित स्वर्ग।

कई पड़ाव डालने के बाद एक दिन उम्दा बेगम के कक्ष में गया। उम्दा का चेहरा सूख गया था। आखें धस गई थीं। आखों में पागलपन-सा सवार रहने लगा था।

जाते ही बोला, 'आज परियों का नाच देखूंगा।'

'बुला लो', उसने कहा।

'कुछ लौंडों को बुलवा लू नाचने गाने के लिये? बतला सकती हो कहां मिलेंगे?'

'जहन्नुम में।'

'तुम तो यों ही उखड़ पड़ा करती हो। मैंने कुछ बुलवाये हैं। औरतों के भेष में आयेंगे। तुम्हें तो पहिचानने का तमीज़ ही नहीं है।'

'नहीं है—नहीं है। अब क्या करूँ?'

'मैं उनको तुम्हारी बांदियों में मिला दूंगा। फिर तुमसे पूछूंगा, चीन्ह सकती हो?'

'मैं सब पहिचान भूल गई हूं।'

'मैं एक अजीब नाच करवाऊँगा। नाचते ही नाचते ताल और सम मे एक दूसरे को दुलत्ती झड़वाऊँगा। जो ताल चूक जायगी उसे तुम सजा दोगी या इनाम ?'

'इनाम।'

'खूब कहा। इनाम मिहनताना तो सभी को देना पड़ेगा। मगर मैं चाहूंगा कि चूकने वालो को दो दो लातें तुम लगा दो। ह ! ह !! ह !!! मजा आयगा। अब तुम रिसानी-सी मत रहो। तुम हँसो, नहीं तो मैं रो पड़ूंगा।'

'मेरी हँसी तो अर्सा हुआ तब चली गई।'

'सच ! कब ?'

'बरसें हो गईं।'

शराब के उस नशे में शिहाब को आगरा के पास वाले युद्ध का स्मरण हो आया—गन्ना बेगम का, गन्ना के चले जाने का, गन्ना के अत्यन्त मोहक सौन्दर्य का और फिर उस युद्ध के वधों का, उन स्त्री वेशधारी पुरुषो का जिन्हें उसने मरवा डाला था। गन्ना को भूलकर उसे वध की स्मृति अच्छी लगी। बोला, 'वे लौंडे जिनको मैंने खतम कर दिया था। औरत की पोशाक में कब से थे हरम में ?'

उसने उत्तर दिया, 'कौन लौंडे ? मुझे याद नहीं।'

'मैं याद दिलाता हूं—'

'माफ करो। नाच शुरू कराओ। यह चर्चा बन्द करो। तुम्हें शरम ही नहीं आती !'

'शरम मुझे ! शरम तुमको आनी चाहिये। तुमने मुझे बतलाया क्यों नहीं था ?'

तुम बड़े जलील हो। जालिम और कमीने ! क्यों मुझे सताते हो ? क्यों मुझे रत्ती रत्ती करके मारते हो ? मैं जानती होती तो क्या वे रह पाते ?'

'एकदम ही मारूँगा कमबख्त तुझे। गन्ना बेगम को तूने ही भगाया। मेरी जिन्दगी के लुत्फ को तूने ही बरबाद किया।'

'तो मार मुझे हत्यारे! अब्दाली मर गया है, मगर उसका लड़का तैमूरशाह अभी जिन्दा है।'

'चली जा अब्दाली के पास। आ गया है वक्त। न जाने कब तक कैसे और क्यों बचाये रहा।'

उम्दा बेगम का स्वभाव बहुत सुलभ-कोपी हो गया था। उसने शिहाब को झपट कर नोचना काटना शुरू कर दिया। शिहाब के हाथ उसके गले पर पड़ गये। जब तक कोई बचाने के लिये आवे वह अचेत होकर गिर पड़ी।

(६१)

अभी जाड़ा बिलकुल नहीं चला गया था। पेड़ों की टहनियों से पत्ते नोकें और छोटी छोटी कोंपलों की चिकनाहट कोई भविष्यद्वाणी-सी कर उठी थीं।

गुनीसिंह ने माधव जी से कहा, 'जी पटेली जी, एक महत्वपूर्ण बात निवेदन करनी है।'

माधव ने वहां से सबको हटाकर एकान्त कर लिया। मुस्कराकर पूछा, 'क्या है 'सरदार जी ?'

'सोच रही थी—'

उसने उत्तर नहीं दे पाया। माधव ने टोका,—'सोच रही थी सरदार जी, या सोच रहे थे ?'

चारों ओर जल्दी से देखकर वह हंस पड़ी—मानो आम के मौर झलक गये हों, लहरा गये हों। बोली, 'आप तो यों ही टोक देते हैं।'

'अबकी बार जी पटेल जी गायब !'

'कसर मिटाये देती हूँ—कितनी बार कहूं ?'

'एक बार भी नहीं। वही सुनाओ 'मो प्यारो माधव कहां मोहि बताउ बिसेखि।'

'गाना तो यही चाहती थी, परन्तु सामने देखकर भूल गई।'

'यह भूल कब तक बनी रहेगी ?'

'जब तक सामने रहूंगी।'

'तो अब याद करके सुनाओ।'

गन्ना हँस पड़ी। माधव जी भी हँसे।

गन्ना ने कहा, 'जिस महत्वपूर्ण बात को बतलाने आई थी वह यह है—दिल्ली से एक फकीर आया हुआ है। नाम कोई शाह है। दूर दूर के मुसलमान उसका उपदेश सुनने को इकट्ठे हो रहे हैं। यह ऊपरी रूप

है। भीतर भीतर आपके आदर्श के मिटाने की कोशिश है। यह तो खतरनाक है ही, शिहाबुद्दीन इस जमाव में जायगा और वह उस शाह या इस भीड़ के अगुओं के साथ मन्सूबे गांठेगा। मैं उसका सही पता लगाना चाहती हूं। यह शिहाब आपसे वजीर पद का वरदान चाहता है। फिर मुसलम न विद्रोहियों द्वारा अपने को आगे बढ़ाकर आपको पूरी हानि पहुंचावेगा।'

'किस तरह पता लगाओगी ?'

उन्होंने चिन्तित होकर पूछा, 'क्या स्वयं जाओगी ? गुनीसिंह को सिक्ख होने के कारण वहां की कोई हवा तक नहीं लगने देगा। क्या करती हो ?'

उसने दृढ़ स्वर में उत्तर दिया, 'गुनीसिंह नहीं जायगा, गन्ना बेगम जायगी। उत्तर में इस शाह के गिरोहों ने कसकर संगठन किया है। मुसलमान जनता को हरी हरी फुलवाड़ियों का मोह दिखला कर भ्रान्त किया जा रहा है। उनमें कहा जा रहा है बादशाह, नवाब राजा-बाजा सब खतम और जनता की पौ बारह। स्वार्थी लोग इन्हें गुमराह करके अपना मतलब पकाना चाहते हैं और कठमुल्ले उनके जोश, मजहब और पुरानी यादों के बहाने उभाड़ कर, अपने पागलपन को तृप्त करना चाहते हैं।'

'ठीक उस प्रकार जैसे कुछ स्वार्थी दक्षिण में हिन्दुओं को भ्रम में डाल रहे हैं।' उन्होंने कहा।

वह बोली, 'सही बात का पता आपके दरबारियों में से कुछ मुसलमान शायद दे सकें, लेकिन मजहब की नदी में डुबकी खाकर वे कुछ भूल भी सकते हैं। मैं जाऊंगी।'

माधव जी थोड़ी देर चुप रहे। वह मुस्कराकर प्रतीक्षा करने लगी।

माधव ने कहा, 'कैसे जाओगी गन्ना तुम वहां ?'

उसने उत्तर दिया, 'रात को मजलिस होगी। बुर्का डालकर जाऊंगी। शाह या फ़क़ीर के नाम पर बहुत सी बुर्कापोश स्त्रियां भी

पहुँचेगी। मैं पहिचानी नही जा सकूगी। आप विश्वास रखिये। अनुमति दीजिये।'

'और जो अनुमति न दूँ ?'

'तो मैं रूठ जाऊँगी, माधव वाला गाना नही सुनाऊँगी।'

'कब तक ?'

'जब तक माधव अपनी गोपी को मनायेंगे नही, तब तक।'

माधव ने मुस्कराकर शान्त स्वर मे कहा, 'तुम नहीं मानती हो तो जाओ।'

वह बोली, 'मेरे महाराज, मैं रात में ही आकर सब समाचार सुना दूँगी। आप चिन्ता मे क्यों पड रहे हैं ?'

माधव ने हँसकर कहा, 'नही चिन्ता नही करता हूं जिसने बन्दूक चलाने वाले की कमर को कसकर विफल मनोरथ कर दिया था, उसका कोई कुछ नही बिगाड़ सकेगा।'

'और फिर जिसके साथ एक नहीं दो माधव हो', कहकर वह थिरक गई। मुस्कानें बरसाती हुई चली गई।

(१००)

सन्ध्या के उपरान्त ग्वालियर मे किले के उत्तरी छोर के नीचे गौसमुहम्मद फकीर के मकबरे के पास मजलिस हुई। बहुत से मुसलमान इकट्ठे हुये। एक तरफ औरतों के बैठने का भी प्रबन्ध था। वे सब बुर्के मे थीं। सबसे आगे बेगम गन्ना बैठी थी। उसे न केवल उपदेश देने वाले की बात स्पष्ट तौर पर सुननी थी बल्कि शिहाब किस किस से मिलता है यह भी भापना था। फकीर ने धर्म की बातें की, फिर इस्लामी हुकूमत की पुरानी शान की, बगदाद के खलीफा उमर से लेकर औरंगजेब तक की। उसने किसी प्रकार के फतवे की घोषणा न करते हुये भी जिहाद और हिजरत की बातें श्रोताओं के गले उतारीं।

शिहाब माधव जी से मिलने के लिये और दिल्ली की चूल मे अपनी चूल बिठलाये जाने की योजना निर्मित करने कराने के लिये कुछ दिन पहले आ गया था। फकीरों की बरकत में उसका विश्वास था ही। सबसे बड़ा अभिप्राय था महत्वाकांक्षा की सफलता का। वह इस मजलिस में काफी पहले बिना शराब पिये आ गया था। उसका डेरा नूराबाद मे था। गन्ना उससे भी पहले आ गई।

जिस समय वह शाह—फकीर—इस्लामी संगठन के ऊपर उपदेश दे रहा था। शिहाब की आखें बुर्कों की तरफ जा रही थीं। गन्ना तो उसकी जांच पड़ताल मे निरत थी ही। शिहाब ने कई बार देखा आगे बैठी हुई बुर्के वाली चेहरा और आखें उसकी ओर बहुधा करती है। दो तीन बार गन्ना को अपना हाथ कपड़ों के भार में से निकालना पड़ा। पहली बार में उसने हाथ के सुन्दर गठन से बुर्के वाली के अंगों उपांगों के सौन्दर्य और लावण्य की कल्पना की।

उपदेश की समाप्ति के पहले ही वह थोड़ी देर के लिये बाहर गया। उसके सिपाही बाहर थे कुछ साथी भीतर। भीतर वाले उसके साथ बाहर गये। बाहर उसने कुछ सलाह की और फिर लौट आया।

उपदेश की समाप्ति पर उसने उपस्थितो मे से कुछ विशेष लोगों को वहीं रोक कर कहा, 'जरा ठहरियेगा। कुछ बात करूँगा। अभी हाजिर होता हूं।' दो बादशाहों को मौत के घाट उतारने वाले वजीर की बात को हाल मे ही क्रान्ति का सवाद पिये हुये उन लोगो ने तुरन्त मान लिया।

शिहाब फुर्ती के साथ आया। कुछ साथी उसके अगल बगल और पीछे। शिहाब की आख धीरे धीरे चली जाने वाली गन्ना के ऊपर थी। गन्ना के साथ कोई भी नही था। थोड़ी-सी स्त्रियां कुछ अन्तर पर थीं।

जरा-सा एकान्त हुआ नही कि शिहाब के साथियों ने गन्ना को दबोच लिया। कपडो के भार के कारण वह अपने हाथ पैर आत्म-रक्षा मे नही चला सकी। वे कई थे और वह अकेली। एक जरा-सी चीख निकली कि वह गुण्डो के कठोर हाथो से वहीं दबा दी गई। राहगीर नर-नारी चिल्लाते हुये भागे। व्याकुल छटपटाती हुई गन्ना को एक हाथी पर रख-कर गुण्डे तुरन्त नूराबाद चले गये। थोडे समय उपरान्त शिहाब भी दूसरे हाथी पर बैठ कर नूराबाद जा पहुंचा। गन्ना का मुँह आखीर आखीर तक कसा हुआ था परन्तु वह अचेत नहीं हुई थी।

जो स्त्री अगरक्षिकाये और हिजड़े इसी प्रकार के कार्यों के लिये नियुक्त थे वे उसे डेरे के एक कक्ष मे ले गये। गन्ना को उँगली तक के उठाने के लिये उकास नहीं था। वह घिरी और कसी खड़ी थी। निस्तब्ध।

शिहाब आ गया। बोला, 'जरा हाथ निकालकर दिखलाओ।'

उसके हाथ ढीले किये गये।

गन्ना ने बुर्के के उस भाग को हटा दिया जिससे उसका सिर और मुँह ढका हुआ था। उसका चेहरा लाल था और आंखो में चिनगारी। ओठ सटे हुये, गर्दन जकड़ी हुई।

शिहाब हिलकर पीछे हट गया।

गन्ना के मुँह से धीरे से निकला, 'जो कुछ हूं खड़ी तो हूं।'

एक क्षण बाद शिहाब बोला, 'ग्रोफ ! तुम !!'

'हां मैं कमबख्त।'

शिहाब एक क्षण स्तब्ध रह गया। कल्पना में कुछ चित्र घूम गये—वह रुहेलों के साथ हुई एक छिटपुट लड़ाई की भाग-दौड़ के अवसर पर खिसक गई थी, सोचा था, मर गई होगी या कोई जबरदस्ती पकड़ ले गया होगा। उसके हरम में कई बार हो चुका था, अब सामने खड़ी थी। क्या माधव जी के दरबार में सिक्ख वेश मे इसी को देखा था?

कपड़ों के भीतर गन्ना का हाथ जरा-सा हिला। शिहाब बहुत काइयां था। उसने अंगरक्षिकाओं को तुरन्त आज्ञा दी, 'छुरी है इनके पास, छीन लो।'

अंगरक्षिकाओं ने छुरी छीन ली।

'अब ?' शिहाब ने कहा।

'अब कुछ नहीं', वह बोली, 'बहुत थक गई हूं। जरा-सा लेटना चाहती हूं। थोड़ा सा पानी।'

'पानी ही नहीं', शिहाब ने कहा, 'शर्बत, शराब जो कुछ चाहो सब। तब तक मैं भी कुछ पीकर आता हूं। बड़ी देर से नहीं पी है। फिर यहां पियूंगा और पिलाऊंगा जब तक की सारी दुनियां न छलक उठे।'

वह बोली, 'मैं शराब नहीं पीती।'

शिहाब अंगरक्षिकाओं को आदेश देता हुआ चला गया, 'आराम से लिटा दो। जब तक मैं लौट कर न आ जाऊं बहुत होशियार रहना।'

गन्ना ने जल मांगा। एक दासी ले आई। गन्ना ने सोने का कटोरा हाथ में लेने के पहले बुर्का उतार कर रख दिया। एक क्षण के लिये आंखें मूंदी। फिर वह हंसी, जैसे सूखे पत्तों के ढेर के नीचे मुरझी हुई गुलाब की कलियां।

कटोरा हाथ में लिये हुये बोली, 'मैं उस छुरी को काम में ला ही नहीं सकती थी। फ़िजूल हैरान हुये मीर साहब।'

उसने एक घूंट पानी पिया। बुरी तरह मुंह बिगाड़ कर छाती पर हाथ रखा। पास खड़ी हुई दासी से कहा, 'जरा मेरी छाती पर हाथ रखो। बहुत दर्द हो रहा है।'

दासी ने सब तरफ टटोला। वह बोली, 'हुजूर आ रहे हैं। हकीम को फौरन बुला लिया जायगा।' दासी को विश्वास हो गया कि और हथियार छाती के पास नही छिपाये है।

गन्ना ने क्षीण मुस्कराहट के साथ कहा, 'हां हां जरूर। तब तक दर्द को दबाने की थोड़ी सी तदबीर मैं खुद करूं।'

उसने चट से अपनी चोली के भीतर एक हाथ डाला। वहां से कुछ ढूंढकर निकाला। दूसरे हाथ से एक घूट पानी फिर पिया।

यकायक घबराकर बोली, 'यह कौन आ रहा है उधर से ?'

सब दासियो की आंखे उसी दिशा मे घूम गई। गन्ना ने छाती के पास वाले हाथ से एक छोटी सी पुड़िया चुटकियो और अंगूठे से खोलकर तुरन्त पानी में डाल ली और झटपट कटोरे का पूरा पानी पी गई। पुड़िया की चीज पानी की तली मे बैठने भी नही पाई थी। दासियो ने पुड़िया को नही देख पाया। अब गन्ना के चेहरे पर आभा की रेखा पर रेखा विकसित होने लगी। आराम से पलंग पर लेट गई।

एक दासी से कहा, 'आज सुहाग की घडी है। कलम दावात और कागज जल्दी ले आओ। कुछ शायरी करने को मन चाहता है। सुहाग के मालिक को भेंट करूंगी।'

दासी लिखने की सामग्री ले आई।

गन्ना ने बैठकर कागज कलम को सम्भाला। उसके सिर में चक्कर था और हाथ मे कम्प। गन्ना ने भौंहो को सिकोड़कर दृढ किया और ओठ समेट कर सटाये।

कागज पर उसने एक सतर लिखी। फिर उसे अपने पास रख लिया। बोली, 'लेटूंगी। नीद के लिये चक्कर-सा आ रहा है। कुछ गाने को तबियत चाहती है। तुम लोग सुनो।'

वह गुनगुनाने लगी। शिहाब आ गया। उसके मुह से शराब की बू दासियों ने दूर से ही सूघ ली और इत्र को सूघने जैसा पाखण्ड बनाया।

शिहाब ने दासियों की उपस्थिति की जरा भी परवाह न करके जरा-सा झूमकर कहा, 'हुस्न में कोई कमी नहीं है। ज्यों का त्यों है। ताज्जुब है! ताज्जुब है क्यों मेरे दिल को इतने दिनों तड़पाया!!'

गन्ना गाने लगी। राग भीम पलासी था।

पलंग पर बैठकर शिहाब बोला, 'तुम्हारा गाना क्या है आबेहयात है, बिलकुल अमृत। कसूर माफ कर दूंगा। मगर इस वक्त कसूरों की चर्चा ही बेकार है। कल वहस होगी।'

उसने गाया, 'मो प्यारो माधव कहा, मोहि बताओ बिसेसि।' गायन में मधुरता होने पर भी कम्प आ गया था।

शिहाब पलग छोड़कर खड़ा हो गया। बोला, 'यह क्या? कौन माधव?'

वह गाती रही।

शिहाब ने क्षुब्ध स्वर में कहा, 'यह क्या बक रही हो?'

गाना बन्द हो गया।

उसके मुह से धीरे से निकला, 'माधव, माधव। पगड़ी तलवार वाला, मुरली मुकुट वाला। मा···ध···व—' गन्ना का सिर एक ओर लटक गया। मुँह लटककर बन्द हो गया। आखें खुल पड़ीं। बड़ी बड़ी आखों की लम्बी बरोनियां शिहाब को भयानक मालूम पड़ीं।

घबराकर बोला, 'यह क्या?···यह क्या हुआ? हकीम को बुलाओ। सदमा हो गया है।'

हकीम के आने के पहले शिहाब ने पलंग पर पड़े हुये एक कागज को उठाया।

एक दासी ने तुरन्त कहा, 'कोई शायरी लिखने के लिये सामान मँगवाया था। उन्हीं का लिखा हुआ है; जर हुजूर—'

'चुप !' शिहाब ने डाटा और कागज पढ़ा। उसमें फारसी अक्षरों और फारसी भाषा में लिखा था—'आह गमये *गन्ना बेगम !'

हकीम आ गया। नाड़ी देखी गई। हकीम ने सिर हिला दिया। नाड़ी में कुछ नहीं था। शिहाब ने सोचा, 'कम से कम आज रात तो बची रहती, कल मैं खुद मजा दे देता। एक का गला, एक का दिल। खैर।'

हकीम चला गया। शिहाब के मन में अहमदशाह अब्दाली का चित्र घूम गया—इस सदमें का जिम्मेदार वह है, और फिर कइयों का अन्त इसी तरह हो चुका है।

और फिर दूसरे दिन गाड़े जाने के लिये शव को रख लिया गया।

उस प्रभात तक माधव जी को नींद नहीं आई। कुछ दिन चढ़े, पता लगाते लगाते उन्हें मालूम हुआ कि किसी सरदार के आदमी एक बुर्कापोश स्त्री को रात मे जबरदस्ती उठा ले गये। वैसे उस युग के लिये कुछ विलक्षण घटना न थी, परन्तु माधव जी के राज्य में और उनके इतने निकट रहते हुये ऐसा बड़ा अत्याचार हो जाय यह असह्य था। थोड़ी-सी खोज बीन के उपरान्त मालूम हो गया कि बुर्कापोश स्त्री को हाथी पर लाद कर शिहाब के आदमियों के सिवाय और कोई नहीं ले जा सकता था। माधव ने तुरन्त पांच सहस्र सवार लेकर नूराबाद की ओर विद्युत वेग से कूच किया। बात की बात मे पहुँच गये। वहां गन्ना बेगम के दफनाने की तय्यारी हो रही थी। माधव जी को मालूम हो गया कौन मरा था।

शिहाब घबराकर आ गया।

विह्वल विनीत स्वर में बोला, 'मेरी बहुत प्यारी बेगम का स्वर्गवास हो गया है। कल रात में नहीं रही। बहुत बड़ी शायर थी। शायरी करते करते मरी।'

---

*अफसोस ! गन्ना बेगम के लिये रोइये।

शिहाब शराबी, निकम्मा, कायर और बेहद क्रूर और बहुत कायर था। उसने अपने कृत्य को छिपाने के अभिप्राय से कहा, शायरी की एक ही सतर लिखो – आह गमये गन्ना बेगम। मुझे बहुत रंज है। दिल टूट रहा है। उसकी कब्र के पत्थर पर इस इबारत को खुदवाऊँगा। ओफ!'

माधव ने सुन लिया। घोर आत्म नियन्त्रण करके बोले, 'मैं उनकी समाधि पर फूल चढ़ाने के लिये ही आया हूं।'

(१०१)

माधव को शीघ्र ही समाचार मिला कि राघोवा ने सूरत में बैठकर अंग्रेजों को सालसिट, बसीन और गुजरात का बहुत सा प्रदेश लिख दिया और परिवर्तन में महाराष्ट्र के विरुद्ध अंग्रेजी पल्टनें प्राप्त की हैं। एक मराठी सेना अरस में अंग्रेजों से जा भिड़ी। अंग्रेजी पल्टन में अधिक तर तिलंगे थे। विकट लड़ाई हुई। मराठे हार गये। अंग्रेज कमाण्डर ने अपनी सरकार को लिखा, 'मेरे तिलङ्गों ने जिस साहस, ठसक और संयम के साथ युद्ध किया है उससे स्पष्ट हो गया है कि ये ससार भर की किसी भी सेना का सामना कर सकते हैं।' माधव जी इङ्गले के साथ एक दस्ते को छोड़कर दक्षिण में आ गये।

कलकत्ता-स्थित अंग्रेज गवर्नमेंट ने सूरत की लिखा पढ़ी को अस्वीकार कर दिया। कलकत्ते के अंग्रेज अधिकारियों ने सीधे नाना फड़नीस से सन्धि की जिसमें राघोवा को तीन लाख रुपया पेन्शन देकर परित्यक्त कर दिया। इस सन्धि को इङ्गलैंड की सरकार ने निरत कर दिया और सूरत की लिखा पढ़ी को ही ठीक रक्खा। उन्हीं दिनों एक फ्रान्सीसी पूना में आया। एमेरिका ने इंगलैंड के विरुद्ध स्वतन्त्रता-युद्ध घोषित कर दिया जिसमें फ्रान्स ने एमेरिका का साथ दिया। पूना में उस फ्रान्सीसी के आने के कारण अंग्रेजों ने अपने को और भी प्रबल बनाया, नाना के साथ की गई सन्धि को मिटा कर राघोवा को फिर अपना लिया और महाराष्ट्र सरकार के साथ युद्ध छेड़ दिया।

कुटुम्ब कैद कर लिया गया—गुलाम कादिर भी। गुलाम कादिर से बादशाह रुष्ट था और उसका हरम गुलाम कादिर से अत्यन्त घृणा करता था। उसके मरवा डालने का उपाय किया गया।

मारने वालों से उसने कहा, 'जरा बादशाह से यह कह दो कि मैं उनका दामाद हूं।'

'ऐं ! कैसे ?'

'कैसे का जवाब उनकी शहजादी देगी।'

सब जानते थे। उसके वध का निवारण मिर्जा नजफ ने कर दिया, परन्तु वह गुलाम कादिर को बादशाह और हरम के दूसरे दण्ड से न बचा सका—गुलाम कादिर का पुरुष चिन्ह जड़ से कटवा डाला गया। हरम में या कहीं को भी पर्दानशीन स्त्रियों में स्वतन्त्रता के विचरण करने योग्य बना दिया गया !! बादशाह के मन ने यह बात कही और बादशाह के आधीनों ने तो हंस हंसकर और जोर से कहा था।

गुलाम कादिर को इस दण्ड के बाद छोड़ दिया गया। जाबिता के अन्य कुटुम्बियों को भी नजफ ने छुटवा दिया।

जाबिता का सम्पूर्ण इलाका खालसा घोषित कर दिया गया। वह सिक्खों की शरण में गया। उन्होंने शरण दी। जाबिता सिक्ख हो गया। नाम उसका रखा गया,—धर्मसिंह !

(१०२)

दिल्ली-स्थित अंग्रेज गुमाश्ते के षडयन्त्र बिना पल्टनो और काफी रुपयो की सहायता के नहीं चल सकते थे। जाट आपस की लड़ाइयों और मिर्जा नजफ के सामरिक प्रयत्नो के कारण जेर हो गये। डीग इत्यादि उनके बड़े बड़े किले और प्रदेशों के बड़े अंश नजफ के शिया और सुन्नी सरदारो के हाथ मे चले गये। इसलिये अंग्रेज-षडयन्त्र शिथिल पड गया।

बादशाह को रुपये की परम आवश्यकता थी। अंग्रेजो ने बादशाह की २६ लाख रुपया वार्षिक, बगाल-बिहार वाली, वसूली बन्द कर दी क्योंकि उनकी राजनीति ने पूरा पल्टा खा लिया था। नजफ का रुपया बन्द नहीं हुआ, परन्तु वह अंग्रेज-षडयन्त्र को, बादशाह, मन्त्रियों और इस्लामी पुनरोत्थान के जोश के मुकाबिले मे अकेला कुछ नही दे सकता था।

शाही खजाने मे रुपये की इतनी कमी पड गई कि त्राहि त्राहि मच उठी। रुपये प्राप्त करने का साधन नजफ या राजपूताने की कुछ रियासतें ही थी। राजपूताने के राजाओ का दीवान खास में बुलाया नही जा सकता था इसलिये बादशाह ने नजफ को एक गुलाम द्वारा बुरी बुरी क़समे धरा कर भेजा।

नजफ ने, जब तक वह दिल्ली का सर्वोच्च पदाधिकारी नही हुआ, सुरा और सुन्दरियो की वासना से अपने को अलग रखा, परन्तु उसके दिमाग मे एक कल्पना दूसरों के साथ ऐसी भँजी उमेठी हुई थी कि देखने मे एक बड़ा और मोटा रस्सा तो बन गया, परन्तु उस रस्से में किसी योजना को पकड़ बांधने की शक्ति न थी और न उसके विविध वानों की कोई पहिचान ही रही। तब आलस्य और मनोरंजन की कामना ने सुरा पर सुरा और सुन्दरियों पर सुन्दरिया प्रस्तुत कर दी। दिल्ली का नैतिक स्तर बहुत गिर चुका था।

नजफ की मनोरंजन-प्रणाली भी कुछ साधारण नहीं थी। जिस समय बादशाह का गुलाम नजफ के पास गया वह खरबूजों के खेत में विहार कर रहा था। चांदनी रात थी। यमुना की ठण्डी रेत पर नजफ की प्रचुर संख्यक वेश्यायें, दासियां इत्यादि बिचारे किसान के खरबूजों को नाचती गाती और कूदती हुई तोड रही थी।

गुलाम ने नजफ से निवेदन किया, 'मुझे हुकुम हुआ है कि मैं हुजूर के यहां धरना दूं।'

क्यों ?' नजफ ने बिना किसी आश्चर्य के पूछा।

नाचने कूदने वाली सुन्दरियां, कोई किसी का कन्धा पकड़े, कोई किसी का हाथ, कोई खरबूजे लिये, कोई सुराही और कटोरा, इधर-उधर से सिमटीं।

गुलाम ने उत्तर दिया, 'क्योंकि जहांपनाह और जहांपनाह का हरम भूखों मर रहे हैं। उन्होंने मुझे कसम रखाई है कि बदजानवर का खून पिऊं अगर आप से जहांपनाह और हरम के गुजारे का पूरा रुपया वसूल किये बिना कुछ भी खाऊं। मैं इसीलिये धरना देने के लिये आया हूं।'

'भाई मेरे, कल मिल जायगा रुपया। सब्र करें,'—नजफ ने कहा, 'तुम भी यहां का कुछ मजा देखो।'

'गुलाम को अपने पेट और सिर की पहले चिन्ता थी। बोला, 'हुजूर, कल कल करते जमाना गुजर गया। क्या यह कल कयामत के दिन खतम होगा ?'

नजफ ने फिर फुसलाया,—'कल के आगे नहीं टलेगा।'

गुलाम ने एक और सुनाई,—'जहांपनाह के सारे कपड़े फटकर खतम हो गये हैं। सिर्फ एक अंगरखा रह गया है।'

'कसम तो हुजूर कई बार खा चुके हैं,' गुलाम ने कहा, 'आपको जहाँपनाह ही से जाकर यह सब कहना चाहिये। मैं तो धरना देने के लिये आया हूँ। न कुछ खाऊँगा न आप को खाने दूँगा।'

'तो कल जाऊँगा।' नजफ ने उत्तर दिया।

गुलाम धरना दिये रहा, नजफ के मनोविनोद की चहल पहल सूर्योदय के दो घड़ी उपरान्त तक चलती रही। गुलाम के धरने का कोई प्रभाव नहीं हुआ। गुलाम ने भर्त्सना की,—'कई रोज से हरम में भूख हड़ताल है। बनिये खाने पीने का सामान अब और उधार देने से इनकार करते हैं। हरम की सारी बेगमों ने तय कर लिया है कि एक दूसरे का हाथ पकड़े यमुना मे डूबकर मर जायेंगी।'

नजफ तीसरे पहर के बाद बादशाह के पास कुछ रुपया लिवा कर गया।

बादशाह ने क्षोभ मे कहा, 'तुम्हारे बराबर दुनियां में कोई भी झूठा नही!'

नजफ ने बादशाह के पैरो के नीचे सिर रखकर सिसकियां ली और आँसू बहाये—रात भर के जागरण के कारण भावना और आसुओं को पर्याप्त मात्रा मे स्फूर्ति मिल गई थी।

गद्‌गद् स्वर मे बोला, 'रुपया लाया हू। जहांपनाह बख्शें इस गुलाम को, और जयपुर वगैरह रियासतों पर हमला करने का हुक्म दें। इन रियासतों पर बहुत रुपया बाकी है। इस बकाया वसूली से ही काम चल सकेगा।'

बादशाह ने कहा, 'खैर। ऐसा ही करूँगा। इन झूठे अंग्रेजों का साथ छोड़कर पेशवा से गठबन्धन करना चाहिये और अंग्रेजो को हिन्दुस्थान से निकाल देना चाहिये। राजपूताना की रियासतें इन्ही लोगों के बरगलाने से बहक गई है और इतने दिनों का चढा हुआ रुपया नही देतीं।'

नजफ ने आश्वासन दिया, 'बरसात के खतम होते ही यह सब हो जायगा जहांपनाह।'

जयपुर के ऊपर चढ़ाई की तैयारी होने लगी। नजफ विलासमग्न रहते हुये भी नई नई पल्टनों के तैयार करने और नये नये शस्त्रों के संग्रह करने मे और भी तत्पर हुआ। रास-विलास, राजनैतिक षड्यन्त्र और समय योजना एक दूसरे से मंजती हुई चलने लगीं।

(१०३)

एक ओर पहाड़िया, तरों गाव नाम का ग्राम, नीचे नदी, इधर-उधर धान-कटे कुछ खेत और कुछ हरे, पहाडों की उपत्यिका वन की हरियाली से आच्छादित । न मराठी सेना को छिपकर लड़ने का अवकाश, और न अंग्रेजी सेना को।

राघोवा को माधव ने समझा बुझाकर अंग्रेजों के जाल से अपनी ओर खींच लिया था । वह इस समय इनके साथ था ।

लड़ाई जमकर हुई—अंग्रेज हटते हुये लड़े और फिर मराठों से घेर लिये गये । अंग्रेजी सेना लगभग छब्बीस सौ थी, मराठी सेना कई गुनी, उनके सैनिक पंक्तिबद्ध और संयमशील, इनके उच्छृङ्खल और अनुशासन हीन । अंग्रेज बुरी तरह हारे, परन्तु वीरता के साथ लड़े । उनकी एक पंक्ति खतम हुई कि दूसरी लाल ईंटों की दीवार की तरह बन गई । माधव इस संयम और शौर्य को देखकर मुग्ध हो गये । जब अंग्रेजों ने देखा कि वे सबके सब नष्ट हो जायेंगे तब उन्होंने हथियार डाल दिये । माधव ने अंग्रेजी सेना के कैदियों के साथ सद्‌बर्ताव किया ।

उन्होंने अपने सहयोगियों से कहा, 'शत्रु सैनिकों के सर्वनाश की अपेक्षा शत्रु-सामग्री की सर्वांश समाप्ति अधिक वान्छनीय है ।'

यही किया गया । अंग्रेज सेनानायकों के साथ प्रतिष्ठा का व्यवहार किया गया । वाडगांव की संधि लिखवाई गई जिसके द्वारा सालसिट इत्यादि टापू और गुजरात का अपहृत प्रदेश छोड़ने की बात अंग्रेज अफसरों ने तै की । अंग्रेजों की सम्पूर्ण बची हुई सेना को लौट जाने दिया ।

तुकोजी ने कहा, 'इस सेना को कैद में रखो । बम्बई-विजय के हर्ष में मूर्ख तो नहीं हो गये हो ? इनके पदाधिकारी बदल सकते हैं ।'

माधव जी बोले, 'अनीति नहीं बर्तनी चाहिये । मैं इस बर्ताव के परिणाम को जानता हूं ।'

उस सेना के बम्बई पहुंचने के उपरान्त अंग्रेज सरकार ने बाड़गांव की लिखा पढ़ी को बिलकुल रद कर दिया ! कलकत्ता और इलाहाबाद से अंग्रेजी सेनायें चली। ग्वालियर का किला जो माधव को पेशवा की सरकार से दो बरस पहले मिला था एक अंग्रेज अफसर ने कुछ चोरों की सहायता से अधिकृत कर लिया। गायकवाड़ की द्विभांति नीति के कारण अंग्रेजों ने अहमदाबाद को ले लिया। माधव अंग्रेजों से अपनी चाही हुई जगह पर लड़ना चाहते थे, अंग्रेज उन्हें हवा की तरह बांधने का प्रयत्न करते रहे। बहुत समय तक विफल रहे। परन्तु एक रात उन्होंने आ दबाया। माधव को हटना पड़ा। कोंकण में उन्होंने कई स्थान ले लिये। उनका सेनापति पूना पर छापा मारने की धुन में लदकर ले पाया। उसे बहुत नुकसान सहकर पीछे हटना पड़ा। परन्तु मालवा में शिवपुरी पर माधव जी के सेनानायक को हारकर हटना पड़ा।

अब अंग्रेजों को रुपये की अटक पड़ी।

मराठा सरकार को तो लगभग अनादि काल से ही आवश्यकता थी। अंग्रेजों ने बनारस के राजा को पकड़ा-धकड़ा, अवध की बेगमों को सताया, तब कुछ रुपया मिला। परन्तु यथेष्ठ नहीं। माधव को विश्वास था कि अपनी इस प्रकार की सेना के भरोसे अंग्रेजों को नहीं हराया जा सकता। अंग्रेजों के खिलाफ संयुक्त मोर्चा बनाने के लिये दिल्ली से निमन्त्रण भी इसी अवसर पर आ गया। अंग्रेज सन्धि चाहते थे और माधव जी भी। पूना से सन्धि की चर्चा इन्हीं के द्वारा हुई। सालबाई की सन्धि हो गई। अंग्रेजों को केवल सालसिट और राघोबा को तीन लाख रुपया साल मिला। मराठों से गायकवाड़ को बड़ोदा प्रदेश का अधीश मनवाया गया और यह भी कि उससे किसी भी बाकी को न मांगा जायगा। एक बड़ा मराठा सरदार सदा के लिये अंग्रेजों को मित्र के रूप मे मिल गया। माधव को भड़ोंच का इलाका सौंप दिया गया। पेशवा को यह वचन देना पड़ा कि पुर्तगाली, फ्रांसीसी इत्यादि किसी भी विदेशी को अपने यहां नहीं टिकने देंगे।

मराठी-स्वाधीनता का अपहरण शुरू हो गया।

इन्हीं दिनों अंगरेजों की लड़ाई हैदरअली से भी हो पड़ी थी जो मराठों के घरेलू संघर्षों के कारण प्रबल हो गया था। अंगरेज इससे कई युद्ध हारे, पर अन्त में जीत गये। अंग्रेजों और सभी विदेशियों को भारत से निकालने के सम्बन्ध में मराठों ने हैदरअली को अपने साथ सम्मत करने का प्रयत्न किया। उसी समय वह मर गया। उसके लड़के टीपू के साथ अंग्रेजों की लड़ाई छिड़ी जो दम साध साधकर चलती रही। टीपू ने सहस्रों हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाया। मराठों को उसके साथ सन्धि करने में यह बात बाधक थी। और एक यह भी—उसके पिता ने कृष्णा नदी के दक्षिण का मराठा प्रदेश अपने अधिकार में कर लिया था।

(१०४)

'अंग्रेज तुमको बहुत मान उठे हैं—' माधव से नाना फडनीस ने प्रच्छन्न व्यङ्ग किया,—'बम्बई वाले तो मानते हैं, परन्तु दिल्ली मे कलकत्ते वालो की कतर ब्योंत है।'

सालबाई की सन्धि मे अंग्रेजों ने माधव जी के प्रति बहुत शिष्टता दिखलाई थी। वह उनके उस व्यवहार का बदला था जो उन्होंने अंग्रेज कैदियो के साथ ताली गाव की लड़ाई में किया था। फडनीस इस बर्ताव को सन्देह की दृष्टि से देखता था।

माधव ने ठण्डक के साथ कहा, 'अन्त में वे सब एक ही ठिकाने पर आ जाते हैं।

तुकोजी बोला, 'यदि मालवा से तुम और मैं उत्तर की ओर से तथा नागपूर से भोंसले बगाल पर चढ दौडते, और दिल्ली से बादशाह हम लोगों से आ मिलता तो अंग्रेजो का पांसा पलट जाता।'

माधव ने कहा, 'परन्तु मिर्जा नजफ दिल्ली से सदा हम लोगो के पत्रों का उत्तर यही देता रहा—बस अबकी वर्षा-ऋतु के उपरान्त लो। वह अंग्रेजों से मिला हुआ था। अब तो वह मर ही गया है।'

नाना फडनीस ने चुटकी सी ली,—'अंग्रेज बड़े कुटिल है, न मालूम किस किस को उन लोगो ने अपनी ओर मिला रखा होगा।' नजफ मर गया, पर और तो हैं।

माधव इस व्यङ्ग को भी समझ गये। जब से, गन्ना बेगम के देहान्त के उपरान्त, ग्वालियर से लौटे, कुछ दूर दूर से, अपनी प्रकृति की चहारदीवारी के भीतर बन्द से, खिचे हुये से और आत्म मग्न दिखने लगे थे। इस परिवर्तन को नाना और होलकर ने भी लक्ष किया था, परन्तु इसका कारण वे लोग नही जानते थे।

माधव ने कहा, 'नजफ के मरने पर शायद अंग्रेजो ने अब उसके साथियों को बहकाया हो।'

'हां तुम्हारे लिये कुछ समस्यायें हैं। जैसे गोहद का राना। उसने ग्वालियर को ले लिया है। इसमें अंग्रेजो का हाथ जरूर होगा।' तुकोजी बोला।

नाना ने कहा, 'तुमको माधव, उत्तर मे जाकर नजफ के उन चारों साथियों मे से जो सबसे अधिक अंग्रेजो के विरुद्ध हो, मिला लेना चाहिये। उसके चार साथी हैं—दो गुलाम और दो नातेदार।'

माधव बोले, 'मैंने ग्वालियर को चारो ओर से घेर लिया है। गोहद के राना से निबटकर दिल्ली की समस्या को देखूंगा। मार्ग का यह कांटा पहले निकालना है।'

नाना ने गम्भीरता पूर्वक कहा, 'उन लोगो को महाराष्ट्र का बहुत भय होगा। शीघ्र हाथ में आ जायेंगे।'

माधव ने ठडक के साथ कहा, 'मैं इस भ्रम मे नही हूं। उन लोगों को हमारी ओर से यह बतलाया गया होगा कि हमने अंग्रेजों को हरा दिया, परन्तु वास्तविक स्थिति उनको मालूम हो गई होगी इससे पहले ही।'

'हा पूना में ही उन्हें समाचार देने वाले कोई न कोई होगे।' नाना बोला।

माधव का मित्र राघोवा क्या चुपचाप बैठा रहता होगा? माधव की सेना की पराजय का हाल उसने ब्योरेवार लिख भेजा होगा।' तुकोजी ने कहा।

'हो सकता है। माधव तुम नजफ के साथियो में से किसे सबसे अधिक उपयुक्त समझते हो?' नाना ने कुछ गूढ होकर कहा।

माधव ने व्यङ्गो को पीते हुये उत्तर दिया, 'दिल्ली में हमारे यहां से भी बड़े राजनैतिक बाजीगर और दरबारी भड़भूजे हैं। नजफ के चार साथियो में से उसके दो गुलाम है और दो नातेदार—'

नाना ने टोका, 'यह सब मालूम है। इन चारों मे नजफ का गुलाम अफ्रास्याब अधिक प्रभावशाली और सम्पत्तिशाली है। वही मीरबख्शी भी है। बाल्यावस्था में हिन्दू से मुसलमान बना लिया था। वह सहज ही साथ देगा।'

माधव ने कहा, 'सम्भव है। चिट्ठी इसकी भी आई है। परन्तु मैं इस भ्रम से दूर रहता हूं इस प्रकार के हिन्दुस्थानी मुसलमान सहज

ही हमारे हितों को भी अपना हित मान लेंगे । इन्हे विदेशों से आये हुये मुसलमान घृणा और उपेक्षा की दृष्टि से देखते हैं और हिन्दू उनसे विदेशियों की भी अपेक्षा दूर रहते हैं, इसलिये इस वर्ग के मुसलमान उन विदेशी मुसलमानों की ओर अधिक झुकते हैं जो उन्हे अपने पदाधिकार मे से कुछ तो प्रदान कर सकते हैं ।'

नाना ने अपना मत प्रकट किया, 'हिन्दुओं का राज्य स्थापित होने के बाद यह प्रवृत्ति बिलकुल बदल जायगी ।'

माधव बोले, 'मुझको नही दिखता ।'

नाना ने जरा तेज होकर कहा, 'क्या नहीं दिखता ? हम अंग्रेजों को यहां से निकालकर रहेंगे । तुम उन पर अधिक मुग्ध मत रहो ।'

माधव सहज ही बोले, 'उन पर मुग्ध नही, उनके गुणों पर मुग्ध हूँ। उन्होंने माल, दीवानी और फौजदारी के न्यायालय कायम किये हैं। शास्त्रियों मौलवियों से सलाह लेकर काम करते हैं—'

तुकोजी ने बीच में ही टोका, 'यह कहो ! अंग्रेजो को भरोगे तुम अब अपने यहां !! इन दिनो कुछ विलक्षण बातें करने लगे हो !!!'

नाना मुस्कराया ।

माधव ने इस व्यङ्ग को भी पी लिया। कहा, 'अंग्रेजो को नहीं भरूंगा । सेना सम्बन्धी मामलो में फ्रान्सीसी उन लोगो की अपेक्षा अधिक चतुर हैं, उनको लूगा । सुपात्र की खोज में हूँ । अंग्रेजो मे दूसरा गुण परस्पर सहयोग, संयम है । उसको पहले सेना मे, और आप लोगो के सहयोग से समाज मे उतारूंगा ।'

नाना ने कहा, 'इस प्रयत्न द्वारा यदि हिन्दुओ का राज्य स्थापित होना सम्भव होगा तो हम सबका सहयोग सहज ही पाओगे ।'

माधव ने जोड़ा, 'हिन्दुओं का राज्य न होगा, हिन्दुओं की संस्कृति के राज्य की सभावना है और अभीष्ट भी यही है ।'

'हिन्दू-राज्य और हिन्दू-संस्कृति के राज्य में क्या अन्तर है इसको शायद तुम्ही पहिचान सकते हो, तुम्हारे पहले तो कोई जानता न था।' तुकोजी बोला।

नाना मुस्कराकर बोला, 'कुछ दिनों से ये ब्राह्मण से रुष्ट रहने लगे हैं। ब्राह्मण रहित जो राज्य हो वही इनकी कल्पना में शायद हिन्दू-सस्कृति का राज्य होगा। है न ?'

माधव ने भी मुस्कराकर कहा, 'नाना के राज्य को मैं बड़े भाई का राज्य कहता और समझता हूँ। सिन्धिया वंश पेशवा के ब्राह्मण राज्य को अपना ही समझता रहा है और समझता रहेगा। कभी विमुख न होगा। परन्तु उसे हिन्दूसस्कृति-राज्य का प्रतीक बनने के लिये अभी कई पग आगे बढ़ाने हैं। नर्मदा के उत्तरवर्ती भारतीय प्रदेशो को 'मुल्कगीरी' 'जबरदस्ती' या 'रांगड़ा' संज्ञा से रहित करना होगा; उनको स्वराज्य सज्ञा के अन्तर्गत समझना होगा, और,' तुकजी की ओर उन्मुख होकर बोले,—'छत्रपति शिवाजी ने जिस राज्यादर्श की कल्पना की थी लगभग उसी के अनुशीलन मे सम्प्रति चलना होगा। शिवाजी ने अहिंदू धर्मों को एकसा सम्मान, अहिन्दू जनो को एकसा न्याय देने का आदर्श रखा था। किसी भी पद को मौरूसी न रखने का, केवल योग्यता को पद पाने के मूल्यमान का, और दम्भी ब्राह्मणो को उच्च पदाधिकारों से हटा कर मन्दिरों मे पूजा करने के लिये भेज देने का आयोजन किया था।'

होलकर और नाना के मानस पर ये चित्र घूम गये। परन्तु छाप एक चित्र की भी न बैठी।

नाना और तुकोजी ने परस्पर मित्रता के कारण इस बात के मर्म को उखाड़ने पछाड़ने में कोई भी अनुरक्ति न पाकर माधव के प्रबल व्यक्तित्व से अपने को हटाने की वृत्ति ग्रहण की।

तुकोजी ने कहा, 'अंग्रेजों ने रुहेलखण्ड के अधिकांश भाग को एक प्रकार से अवध के नवाब के अधीन कर दिया है, और उसके लिये चालीस लाख रुपया साल नियुक्त किया है।'

माधव बोले, 'और अंग्रेजों के वजीफ़ादार नजफ ने दिल्ली-आगरे के सारे जिलों को सहस्रों टुकड़ों में करके अपने छोटे छोटे पिट्ठुओं में बांट

दिया है—ईरानी, ईराकी, तूरानी इत्यादि। ये सबके सब छोटे छोटे नवाब बन गये हैं जो जन पीडन में अपना सानी नहीं रखते।'

नाना बोला, 'इनका दबा लेना तुम्हारे लिये सहज होगा, क्योंकि सम्पूर्ण जनता इनके विरुद्ध हो गई होगी।'

माधव ने कहा, 'इन्हें समर्थन शाह अब्दुल अजीज के इस्लामी आन्दोलन से मिल रहा है जिसे ठिकाने लगाना दुष्कर होगा।'

नाना बोला, 'जाबिता के लड़के गुलाम कादिर को पौरुषहीन बना डाला गया है और जाबिता सिक्ख हो गया है, इसलिये रुहेले डावाडोल परिस्थिति में होंगे। इनका तो समर्थन तुमको मिलेगा।'

माधव ने कहा, 'देखूंगा। आपके आशीर्वाद से बहुत कुछ करने की आशा करता हूँ। मिर्जा नजफ ने जयपुर राजा से बादशाह के लिये बीस लाख रुपये तै किये थे; अपना भी बहुत रुपया जयपुर पर निकलता है। इसे वसूल करना है। उत्तर के कार्यों के लिये हमसे रुपया मत मांगना, अपना काम वहीं के रुपये से चलाना।'

तुकोजी ने कहा, 'पटेल पर पुराने हिसाब के समझने का भी तो कर्तव्य है अभी। राघोबा ने बीच में पड़कर नहीं होने दिया था। राघोबा इसीलिये पटेल की रक्षा पा रहा है।'

माधव बोले, 'और इसीलिये उसे अंग्रेजों के हाथ से निकालने में समर्थ भी हुआ मैं।'

नाना हिसाब वाला झंझट नहीं उखाड़ना चाहता था। बोला, 'अरे उस पुरानी बात की चर्चा का समय नहीं है।'

माधव ने इस चर्चा के विषय की उपेक्षा की। अनुरोध किया, 'मुझे उत्तर में पूना से सैनिक सहायता की आवश्यकता पड सकती है। वह मुझे अवसर और आवश्यकता के अनुसार मिलती रहनी चाहिये। उत्तर की परिस्थितियां बहुत जटिल हो गई हैं।'

नाना ने हामी भरी। वे लोग माधव को उत्तर की ओर धकेल देना चाहते थे।

(१०५)

अंग्रेजों ने पिछले युद्ध में ग्वालियर को अधिकृत करके गोहद के राना को ले लेने दिया था। सन्धि हो जाने पर इस किले को हस्तगत करने के लिये माधव को प्रयत्न करना पड़ा। इसी अवसर पर बादशाह का एक शाहजादा और मिर्जा नजफ के भाई का पोता शफी उनसे सहायता के लिये मिला। ग्वालियर दुर्ग के युद्ध से निपटने के उपरान्त दिल्ली की राजनीति मे हाथ डालने की बात उन्होंने कही। नजफ के दूसरे साथी मुहम्मद बेग हमदानी ने कपट करके क्रूरता के साथ शफी को मार डाला। इस वध के षडयन्त्र मे नजफ के तीसरे साथी और प्रिय गुलाम अफरास्याब का गुप्त हाथ था। नजफ का चौथा साथी नजफकुली एक शिया था जो सुरा, सुन्दरी और अफीम में मस्त रहा करता था, परन्तु इतनी सुविधा थी कि वह पहले दर्जे का मूर्ख था। आसानी से बन्दीगृह में डाल दिया गया।

दिल्ली की सड़कों पर इन सरदारों की सेनायें और तोपें आपस में लड़ पड़ने के लिये नित्य घूमा करती थीं। कभी कभी सड़कों पर खाइयां तक खोद ली जाती थीं जमकर युद्ध करने के लिये ! बादशाह इनमे से किसी का भी नियन्त्रण नहीं कर पाता था। मुहम्मद बेग हमदानी कपटी, क्रूर, योग्य और कायर था। इस्लामी संघ को अपने हाथ मे किये हुये था। वह अपने लिये मेवात के आसपास एक अलग राज्य बनाने की फिकिर में था।

ग्वालियर को अधिकार मे कर लेने पर माधव को अवकाश मिला। अफरास्याब मीरबख्शी बन गया था। उसने माधव की सहायता चाही। इसके सहायक महत्वकांक्षी गुसाईं सरदार थे। माधव अपनी सेना को लेकर आगरे के निकट पहुँचे। उस समय आगरा का क़िला एक बागी सरदार के हाथ में था।

नजफ अपनी एक अल्पवयस्क लड़की का विवाह शफी के साथ करना चाहता था। शफी के मारे जाने पर विवाह की इच्छा अफ़रासयाब ने प्रकट की। अफ़रासयाब माधव को दिल्ली ले जाने के लिये आया हुआ था। शफी के भाई ने अफ़रासयाब का वध करवा दिया, और भाग कर माधव की छावनी में शरण ली। माधव को कुछ मालूम नहीं था, परन्तु उन्होंने वध करने वाले को कैद कर लिया।

(१०६)

माधव ने अफ्रास्याब की हत्या के सम्बन्ध में तुरन्त खोज-बीन करवाई। उन्हें शीघ्र मालूम हो गया। थोड़ी-सी दूरी पर ही हमदानी एक बड़ी सेना लिये हुये पड़ा था। उसका उद्देश्य स्पष्ट था। वह बादशाह की नायक-विहीन सेना को समाप्त करके फिर माधव से लोहा लेना चाहता था।

माधव ने अपने सेनानायकों को बुलाया। देवाई फ्रांसीसी उनकी सेवा में थोड़े दिन पहले आया था रानेखां धीरे धीरे रण कुशल होता हुआ प्रकाश में आ गया था। इंगले की परीक्षा कई युद्धों में हो चुकी थी। देवाई ने अभी एकाध पल्टन ही तैयार कर पाई थी।

माधव अपनी योजनाओं को मंत्र की तरह गुप्त रखने की भावना के अभ्यासी हो चुके थे। बोले, 'हमदानी ने कहलवाया है कि हम लोग चुप रहें, वह अफ्रास्याब की सेना से निबट लेना चाहता है, परन्तु सेना है बादशाह की।

देवाई ने कहा, 'हम लोगों को लड़ना पड़ेगा।'

इंगले ने परामर्श दिया, 'हमारे पास पैदल पल्टन कम है। सवारों से हमदानी को घेर लिया जाय।'

रानेखां ने समर्थन किया, 'चारों ओर तोपें, उसके पीछे कहीं कहीं पैदल सवार सब तरफ लगा दिये जायें।'

देवाई ने विरोध किया, 'छापामार लड़ाई नहीं लड़ी जायगी। पैदल पल्टन का हमला किया जाय। सवार उनकी रक्षा और सहायता के लिये मुस्तैद रहें।'

माधव जी ने कहा, 'अभी तुम्हारी पल्टन संयम में पूरी तरह नहीं पकी है। पहले उसे कई युद्धों का परिचय प्राप्त हो जाना चाहिये, तब आगे लायेंगे। परन्तु उसे तैयार रहना चाहिये।'

रानेसां बोला, 'अभी इस पल्टन ने केवल ग्वालियर और गोहद की लड़ाइयां देखी हैं। मैं भी सोचता हूँ कि उसे पीछे रखा जाय।'

इङ्गले ने कहा, 'इस पल्टन के सिपाही उस प्रकार के संयम से उकता-उकता उठते हैं।'

माधव जी मुस्कराकर बोले, 'लोहा क्या आग की ज्वाला को पसन्द करता है जो उसका रूप रंग ही बदल देती है? कुछ खीजकर फिर कितना पक्का हो जाता है।'

देब्वाई ने कहा, *'संयम शील पल्टनों के गुण देखे जा चुके हैं और आगे देखे जायेंगे।'*

माधव ने पहले ही निश्चय कर लिया था। परिस्थिति को भांप लेने की भीतरी संचित शक्ति तुरन्त सिर पर आने वाले संकट के बारे में उन्हें ठीक समय पर पहले से सचेत कर देती थी। बोले, 'हमदानी का घेरा डाल दो। अन्न का एक दाना भी उसकी छावनी में न पहुँचने पाये। *विरोधी का अविकल विनाश आवश्यक नहीं। उसकी हिम्मत* का तोड़ देना ही काफी है।'

हमदानी का घेरा डाल दिया गया। गोलाबारी हुई। दोनों पक्षों *की हानि हुई, परन्तु हमदानी ने शीघ्र हथियार डाल दिये। माधव को* बहुत-सी युद्ध सामग्री मिली। हमदानी माधव की सेना में ससैन्य नौकर रख लिया गया।

(१०७)

बादशाह इस समय आगरे में था और उसके साथ ही अंग्रेजों का वह अंग्रेज गुमाश्ता था जो दिल्ली के मराठा-सम्पर्क में आने का घोर विरोधी था। आगरे का किलेदार बादशाह के विरुद्ध था। किसी हिन्दू को— विशेषकर मराठा को—दिल्ली का अभिभावक बनाना इन सबको असह्य था। बादशाह स्वयं किसी मुसलमान को मीरबख्शी और अभिभावक बनाने का आकांक्षी था। परन्तु किसी भी दिशा में अपनी कुशल न देखकर उसने माधव जी की शरण पकड़ी।

बादशाह ने माधव जी के निकट पहुंचकर अनुरोध किया, 'आप हमारे परिवार के वली और सल्तनत के रखवाले बनिये।'

माधव ने तुरन्त प्रश्न किया,—'बिना किसी पद के मैं कर ही क्या सकता हूं?'

बादशाह ने उत्तर दिया, 'मैं आपको मीरबख्शी मुकर्रर करता हूं।'

माधव ने कहा, 'मुझे सोच लेने दीजिये।' माधव के ओझल होते ही अंग्रेज गुमाश्ता आया। उसने प्रार्थना की,—'जहांपनाह यह क्या कर रहे हैं? यह मराठा उन सबों से ज्यादा तिकड़मी है, बादशाहत को समूचा निगल जायगा। हिन्दुओं का राज्य कायम करेगा। मुसलमानों का इतवा सल्तनत की शान और खुद इस्लाम मजहब खतरे में पड़ जायेंगे। जिस मुसलमान कौम ने इतने जमाने हकूमत की है वह बेघर-द्वार और बेचिराग होकर मिट्टी में मिल जायेगी।'

बादशाह का मन फिरा। उसने सोचा—अच्छा हुआ उस वक्त पटेल को मीरबख्शी नहीं बनाया। मगर उसने सोचने के लिये वक्त क्यों मांगा?

बोला, 'ठीक कहते हो। गौर करूंगा।'

फिर गुसाईं सरदारों ने बादशाह को फुसलाया,—'अफ्रासयाब जहांपनाह की सेवा में मारा गया है। उसके तीन बरस के बच्चे को बाप का पद मिलना चाहिये।'

गुसाईं उस बच्चे के अभिभावक बनकर स्वयं धनार्जन करने की योजना बनाये हुये थे।

'सोचूंगा',—बादशाह ने इन लोगों को भी वचन दिया।

और भी अनेक छोटे-बड़े सरदारों ने अपने अपने लिये याचना की और माधव की नियुक्ति के दुष्परिणामों को सुझाया।

बादशाह की तीस हजार सेना वहीं पड़ी थी। जिसका कोई भी धनी-धोरी नहीं था। इनका वेतन बाकी पड़ा हुआ था। नित्य पुकार पुकार कर तकाजे करते थे और बलवे भी।

माधव ने इनका तुरन्त नियन्त्रण किया। किस प्रहार की किस समय साधना करनी चाहिये और ठीक किस क्षण उस प्रहार का उपयोग करना चाहिये यह माधव बहुत अच्छी तरह जानते थे। उन्होंने इन प्रहारों की योजना को विलक्षण धैर्य और विचित्र गोपनीयता के साथ सुरक्षित रखा।

एक दिन जैसे ही शाही सेना में बलवा करने की वृत्ति समाई बादशाह भागकर मराठी छावनी में आ गया। माधव ने तुरन्त अपनी सेना के चुने हुये दस्तों को बिगड़ी हुई शाही सेना के बीच और अगल-बगल नियुक्त कर दिया, बादशाह के डेरों का प्रबन्ध कर लिया और आज्ञा निकाल दी, 'बिना मेरे लिखे परवाने के कोई भी छावनी के एक खंड से दूसरे खंड में नहीं जाने पावेगा और न कोई बादशाह से मिल सकेगा।' अंग्रेज गुमाश्ता इत्यादि सब भरभरा गये।

अब मीरबख्शी इत्यादि पदों की नियुक्ति का समय आया।

माधव ने निवेदन किया, 'मुझे नहीं, पेशवा को मीरबख्शी नियुक्त किया जाना चाहिये।'

पेशवा मीरबख्शी इत्यादि प्रधान पदों पर नियुक्त किया गया। माधव पेशवा का चिरस्थायी प्रतिनिधि, सेनापति और 'वकीलुल मुतलक'।

पेशवा और नाना फड़नीस के लिये, जो पेशवा का अभिभावक था, खिलतें भेजी गईं।

(१०८)

बादशाह ने दो दो हाथ लम्बे खर्रे लिखकर और तड़क-भड़कदार खिलतें देकर पेशवा और माधव जी से दो लाख रुपये मासिक वजीफा पाने का अधिकार पैदा कर लिया ! तीस चालीस सहस्र शाही सेना का बाकी और मासिक वेतन के दिये जाने का वचन अलग। तीस सहस्र सेना माधव जी की और हमदानी के जो सिपाही उनकी सेना मे आ मिले थे उनका वेतन तो मिलना ही चाहिये था। साधन कुछ भी नहीं—सब के सब शाही किले विरोधियो और बागियों के हाथ मे, सारी भूमि ईरानियो तूरानियों इत्यादि मे नजफ द्वारा विभक्त ! माधव को उखाड़ने के षडयंत्र इन सबके ऊपर। तुरन्त जिस भार को उन्होंने किसी उद्देश्य-वश सिर पर लिया था उसका निर्वाह अनिवार्य था।

उन्होंने डीग और आगरे के किलो को बिना किसी युद्ध के ले लिया। अलीगढ़ अफ़ासयाब के दल से लड़कर हस्तगत किया। युद्ध-सामग्री तो बहुत मिली, परन्तु रुपया नहीं के बराबर। रुपया और दिल्ली के महल से पूर्वकाल में खिसकाये हुये हीरे, जवाहर पहले ही टाल दिये गये थे। इनको माधव ने बड़ी कठिनाई के साथ पुन. प्राप्त कर पाया। इस पर भी किसी के साथ कठोरता का बर्ताव नहीं किया, किसी के नाक-कान या गर्दन नहीं काटी। दिल्ली के आसपास मेवों ने लूटमार और डकैतियों की भरमार कर रखी थी, जैसा कि वे अस्मरणीय युगों से करते आये थे। इंगले द्वारा दमन किया, गुसाइयो ने कपटाचार और स्वार्थमूलक विद्रोह कर रखे थे उनका नियन्त्रण किया, बुन्देलखण्ड को शान्त किया और दिल्ली को सिक्खों के सपाटो से बचाकर उनकी सीमा बाध दी; परन्तु इन कार्यों पर इतना खर्च हो गया कि ऋण के बोझ से दब गये। जिन सरदारों और सामन्तों ने भूमिखण्ड चांप रखे थे वे न झुकने को तैयार थे और न भूमि-कर देने को। माधव जी और उनके सेनानायको का सारा समय विद्रोहों के और विरोधों के दमन में ही जा रहा था।

जयपुर जोधपुर इत्यादि से पुरानी बाकी वसूल करनी थी। जयपुर में उत्तराधिकार का और सामन्तों की परस्पर स्पर्द्धा का झगडा खडा हो गया था। माधव को जयपुर से बाकी मागनी पडी। बहुत प्रयत्न किया परन्तु न मिली। अन्त में युद्ध के लिये विवश होना पडा। जोधपुर ने जयपुर का साथ दिया। जयपुर की ओर से लडने के लिये लगभग चालीस सहस्र सेना इकट्ठी हो गई।

माधव जी इन रियासतों से नहीं लडना चाहते थे। मेल-मिलाप करने और सम्बन्ध दृढ बनाने के लिये उन्होंने अपनी छोटी आयु की लडकी को जयपुर के अल्पवयस्क राजा के साथ ब्याह देने का प्रस्ताव किया, परन्तु राजपूतों के आत्माभिमान ने प्रस्ताव ठुकरा दिया।

(१०९)

आगरे की एक मस्जिद में नमाज के बाद अधिवेशन हुआ—ऐसे अधिवेशन मस्जिदों में प्राय होते रहते थे।

शाह अब्दुल अजीज ने कहा, 'मुसलमानों के ऊपर जो जवाल आया है उसका मुकाबिला अब फौरन करना चाहिये। हमारी ही हकूमत में सिन्धिया सरीखे लोग हमें आखें दिखला रहे हैं! इससे कह दो कि नर्मदा के उस पार जावे। हमें जम्हूरियत कायम करनी है, आम लोगों की हकूमत। बादशाह बेवकूफ है और कमजोर—'

एक श्रोता ने टोका,—'बादशाह अपने साथ हैं। उन्होंने कहलवाया, है कि मुझे खाने भर को चाहिये, मैं जम्हूरियती तहरीक के साथ हूं।'

उपस्थित जनता बहुत प्रसन्न हुई।

दूसरे श्रोता ने कहा, 'दिल्ली आगरा के इलाकों के और दुआब के सारे जमींदार आपके ख्याल और काम में शरीक होने के लिये तैयार हैं।' ये सारे जमींदार, ईरानी तूरानी, ईराकी इत्यादि थे।

शाह ने सन्तोष प्रकट किया। बोला, 'सबको मिलकर अपनी हकूमत कायम करनी चाहिये। जहां इस्लामी राज न हो वहां मुसलमानों को तलवार हाथ में लेनी चाहिये, अगर वे देखें कि यह उनकी ताकत के बाहर है तो दिल्ली आगरे के इलाके में आ जायें जहां हमारी बहुतायत है।'

इस अधिवेशन में मुहम्मदबेग हमदानी भी था। उसने कहा, 'जरूरत पड़ने पर पन्द्रह हजार सिपाही तो मैं दे सकता हूं इस इनकिलाब को पैदा करने के लिये।'

शाह बहुत प्रसन्न हुआ। जनता आनन्द प्रमत्त हो गई।

हमदानी कहता गया,—'बादशाह बहुत भोले हैं। उस लगड़े मक्कार सिन्धिया ने उन्हें भरमा लिया था, लेकिन उनका दिल बिलकुल अपने साथ है।'

शाह ने कहा, 'यह सिन्धिया अंग्रेजों का दोस्त है। या तो दिल्ली में हिन्दू राज कायम करेगा या अंग्रेजी हकूमत को हमारे सिर पर बिठलाने की फितरत रचेगा। वह अंग्रेजी तर्ज की अदालतें बनने की बात सोच रहा है।'

हमदानी बोला, 'अंग्रेज उसके खिलाफ हैं, सिन्धिया अंग्रेजों की खुशामद करता है, मगर वे हाथ नहीं धरने देते।'

जनता की समझ में यह बात नहीं आई। लोग एक दूसरे का मुह ताकने लगे।

शाह ने साफ किया—अंग्रेजों को तो हमें अपने से दूर हालत में दूर रखना है। सिन्धिया बहुत खतरनाक है, इस बात को हमेशा याद रखना चाहिये और जो बात कभी नहीं भूलनी चाहिये वह यह है कि इस्लाम की तरही हकूमत कायम करके आम लोगों में राजाओं और नवाबों के अख्तियार बांट देने हैं।' सब ने समर्थन किया।

जब हमदानी बाहर निकला तो उसे मार्ग के एक कोने पर रानेखां मिल गया। रानेखां को देखते ही हमदानी हिल गया, परन्तु वह ढीठ था।

रानेखां मुस्कराया। बोला, 'शाहजादे, शाहजादियों और इन गुण्डे फकीरों को एक साथ खतम करने की सलाह है तो बड़ी अच्छी, मगर अन्देशा यह है कि एक पीढ़ी को खतम करने के बाद दूसरी खड़ी हो जायगी क्योंकि दुनिया में मक्कारों की कमी कभी न रहेगी।'

वे दोनों चले गये। हमदानी को सन्देह हो गया—शायद रानेखां मस्जिद मे था यदि था तो वह माधव जी के कान तक सब बातें पहुंचा सकता है।

(११०)

रानेखां माधव जी के पास तुरन्त पहुंचा। उसने एकान्त चाहा। एकान्त होने पर माधवजी ने पूछा, 'क्या बात है भाई ?'

भाई का शब्द मुँह से निकलते ही माधव को गुनौसिंह का स्मरण हो आया।

रानेखा ने कहा, 'पटेल जी, मैं एक मसजिद में नमाज पढ़ने के लिये गया था। वहा हमदानी भी था।'

'फिर ?' माधव जी को ग्वालियर के इसी प्रकार के अधिवेशन की याद प्रश्न के साथ हो आई।

रानेखा ने ब्योरेवार सब वृत्तान्त सुना दिया और अनुरोध किया, 'इस बेईमान हमदानी को अपनी छावनी में से निकाल देना चाहिये, श्रीमन्त। यह दगा करेगा।'

माधव ने मुस्कराकर कहा, 'निकाले जाने पर तो वह खुलकर बगावत करेगा। उस पर निगाह रखो।'

'और ये अब्दुल अजीज वगैरह जो विद्रोह खड़ा कर रहे हैं, उनका क्या किया जाय ? कुछ इलाज होना चाहिये श्रीमन्त।'

'भाई रानेखा, पहले जो बहुत आवश्यक काम हैं उनसे निबट लो। ऐसी अवस्था में जनता के विद्रोह का दमन करने की कोशिश करना दाल को छुरी से समान खाने के समान होगा।'

रानेखा 'जो आज्ञा' कहकर चलने को हुआ। माधव ने उसे सावधान किया, 'देखो यह बात कहीं भी प्रकट न होने पावे कि तुम उस मजलिस में मौजूद थे जिसमें हमदानी ने मेरे विरुद्ध बातें की हैं।'

रानेखां 'बहुत अच्छा जी,' कह कर चला गया।

'जी पटेल जी,' बार बार कहने वाला अब इस संसार में नहीं था। माधव रोनी आंखों एक ओर देखने लगे।

कुछ समय उपरान्त हमदानी आया। उसने माधव जी को विश्वास कराने का प्रयत्न किया कि रानेखां शाह अब्दुल अजीज वाली उस बैठक में था और शाह की बातों का समर्थन कर रहा था। माधव की आँख में एक रेंगे बराबर भी बल नहीं पड़ा—मानो कुछ जानते ही न हों।

माधव जी बोले,—'सचाई और न्याय की हुकूमत का स्थापित हो जाना अच्छा होगा। जैसे भी हो सके ठीक है। बस परदेसी अंग्रेज इत्यादि के पैर न जमने पावें, मैं तो यह चाहता हू।'

हमदानी आश्वस्त हो गया कि माधव जी को कुछ नहीं मालूम और उसके विरुद्ध उनके मन में कोई आस नहीं। वह चला गया।

माधव जी ने कटु अनुभव होने पर भी स्वभाव मृदुभाषी बना लिया था।

इन्हीं दिनों कुछ गुसाईं सरदारों ने उपद्रव किये। उन्हें शान्त किया। एक को झाँसी प्रदेशान्तर्गत मोठ परगना लगा दिया। जब उन लोगों ने इनके विरुद्ध कभी अवध के नवाब से और कभी अंग्रेजों से मिलकर षड्यन्त्र किये। माधव जी ने गुसाइयों को मिठास के साथ विवश कर दिया ब्रज में भजन करने के लिये।

(१११)

माधव जी ने दिल्ली आगरा प्रदेशो के सम्पूर्ण अपहृत खण्डो को जिन्हे अगणित टुकडों में डाकू सरदारो ने बाँट लिया था अपने अधिकार में बहुत शीघ्र कर लिया। इन सबके सबका समर्थन शाह अब्दुल अजीज के जम्हूरियती आन्दोलन को मिल गया। केवल खुलकर काम करने वाले नेता की अवश्यकता थी। हमदानी माधव जी की सेवा में था। उन सरदारो मे से कुछ इसके साथ हो गये, कुछ उसके भतीजे इस्माईल बेग के साथ। बाकी गुलाम कादिर के पास जाकर भर्ती हो गये। जाबिताखा या धर्मसिंह मर चुका था, गुलाम कादिर सहारनपुर जिले को अपनी जागीर बनाकर दिल्ली पर आख लगाये हुये था। कुछ सिक्ख भी उसके समर्थक हो गये थे। इस्माईल बेग उसका मित्र था और उसके अड़ोस पड़ोस में लूटमारो के लिये बना रहता था।

जयपुर से तीन करोड रुपये की बाकी मांगी गई। वहा इतने कडड भी नही थे। माधव को इसी समय दक्षिण से टीपू के विकास और विस्तार के समाचार मिले। रुपया पूना से बिलकुल नही मिल सकता था। जयपुर ने टालाटूली के बाद रुपया देने में असमर्थता प्रकट की। जयपुर ने लखनऊ से अंग्रेजों की सहायता मागी। अंग्रेजों की एक बड़ी सेना दुआब में उमड पडी। सहारनपुर की ओर गुलाम कादिर ने आक्रमण करने की तैयारी की। माधव ने इसे दबाने के लिये इंगले को भेजा।

उसी समय विकट अकाल पडा। युगो से त्रस्त भूखे निस्सहाय किसानों की लाशो से गाव के गाव पट गये। तेंदुये और नाहर दिन-दहाडे गांवों मे इन लाशों पर पहुंचने लगे।

अंग्रेज जयपुर नहीं गये, परन्तु उनके आक्रमण का भय उपस्थित था।

उसी समय बादशाह ने अपने दो लाख रुपये मासिक वाले वजीफे की माग की। माधव ने कुछ रुपया पहुँचा दिया।

जयपुर-युद्ध की चिनौती मिल चुकी थी। अंग्रेजों का पृष्ठ पोषण मिलने के कारण जयपुर-युद्ध अनिवार्य हो गया था। युद्ध विमुख होने पर माधव को सीधे मालवा का मार्ग पकड़ना पड़ता। थोड़ा-सा रुपया देने की बात जयपुर से आई, परन्तु वह स्वीकार न की जा सकी। माधव जयपुर की ओर बढे।

जेठ के महीने की जलती हुई धूप मे जयपुर के निकट पहुंच गये। आगरा और करोली के मार्ग रुद्ध हो गये। भोजन सामग्री का आना बन्द।

(११२)

धूल, धूप और लू के त्रास को बटोरता हुआ दिन अस्त हो गया। दो घड़ी पीछे हमदानी रानेखा के डेरे पर गया। बोला, 'हमारा दस्ता रुपये पैसे और खाने के सामान न मिलने की वजह से उबल उठा है। नौकरी छोड़कर भागना चाहता है। मैं तो बहुत ही परेशान हूँ।'

रानेखा ने बड़ी ठण्डक के साथ कहा, 'मिरजा साहब इसी मुसीबत मे मैं भी हूं। बतलाइये क्या किया जाय ?'

'असल मे यह सब गलत हुआ है। लौट पड़ना चाहिये।'

'बादशाह को क्या मुँह दिखलायेंगे जब पूछेंगे कि क्या वसूली की ?'

'बादशाह की खुद राय है कि जयपुर पर हमला मत करो, डर है कहीं अग्रेज दिल्ली पर न चढ़ दौड़ें।'

'मैंने भी पटेल जी से कहा था कि अनगिनत मुश्किलें सामने हैं। जयपुर जो थोड़ा-सा रुपया दे रहा है ले लिया जाये, मगर वे तो बड़े हठी हैं। हू हा करते रहते हैं। ठीक ठीक कोई बात बतलाते नहीं और कूच पर कूच करते चले जाते हैं।'

'आखिर मेरे हजारों सिपाही भूखों कब तक मरें ?'

'मैं खुद अपने से यही सवाल करता रहता हू। एक सवाल और मन में उठता है—जयपुर मे जो चालीस पचास हजार फौज इकट्ठी हुई है, यह क्या खाती होगी ? पटेल जी को देने के लिये जयपुर के पास रुपया नही। इतनी बड़ी फौज के लिये कहां से आ गया होगा ?'

'वे सब एक हो गये हैं। कई रियासतों ने मिलकर मोर्चा लिया है। बहुत से मुगल पठान सरदार भी साथ हैं।'

'क्या बतलाऊँ मैं तो पटेल की नौकरी से बिलकुल थक गया हू। कहीं और मिल जाय तो चल दूं।'

'मुझे तो उन्होंने तीन हजार रुपये रोज का लालच दिया है।'

'ग्रापके दस्ते की गुजर भी तो इसी में शामिल होगी ?'

'ग्रापको भी ग्रच्छा मिल जायगा। दस्ते समेत चल देना पड़ेगा।'

'मराठे तो जाने से रहे—'

'बाहर के मुसलमान तो हैं।'

'ग्रापके ग्रादमी तैयार हैं ?'

'हां, इसी घड़ी चल पड़ने के लिये।'

'तो मैं दो तीन दिन मे सोचकर ते कर पाऊँगा।'

'मैंने तो कर लिया।'

'कब तक जाइयेगा ?'

हमदानी ने जरा ग्रचक कर उत्तर दिया, 'दो एक दिन में।'

रानेखा ने पूछा, 'फिर इन्तजार किस बात का है ?'

उसने उत्तर दिया, 'कुछ रुपया तो पटेल से ले लू।'

रानेखा ने कहा, 'सुना करता था कि ग्राप सब इकट्ठा होकर सल्तनत को हाथ मे करेंगे, पर ग्रब हम लोगो को राजपूत राजाग्रों की नौकरी करनी पड़ेगी ! यही खटक रहा है।'

'इस पटेल को खतम करने के बाद हम लोगों की ताकत बढ़ जावेगी। राजपूताना के राजा ग्रपनी रियासतों को छोड़कर कहीं बाहर का राज करने की सनक में नहीं है। मुबारक रहे उनकी रोज रोज की ग्रापसी लड़ाइयां।'

'मेरी समझ मे ग्रा रहा है। मैं कल शाम शाम तक ग्रापको, ग्रपना जवाब दूंगा। ग्रौर दोस्तों से भी पूछूँगा। ग्राप कल इसी घड़ी मिल सकेंगे ग्रपने डेरे में ?'

'जरूर', उसने उत्तर दिया।

हमदानी उधर गया इधर रानेखा माधव जी से ग्रकेले में मिला।

रानेखां ने सारी कथा सुना कर कहा, 'मैंने इस बेईमान के बारे में ग्रागरे में पहले ही विनती की थी।'

माधव जी ने पूछा, 'क्या करना चाहिये ?'

उसने सम्मति दी,—'हमदानी और उसके सरदारों को तुरन्त पकड़ लेना चाहिये।'

माधव जी ने सोचकर कहा, 'रात में गड़बड़ हो जायगी। उसके ईरानी तुरानी लड़ पड़े तो छावनी भर में आग-सी लग जायगी। अपने पड़ाव में अभी व्यवस्था की कमी है। पहले कल व्यवस्था कर लो फिर पकड़ने में कठिनाई नहीं होगी।'

रानेखां को सहमत होना पड़ा।

परन्तु हमदानी रात में ही अपने दस्ते के साथ चला गया और जयपुर की सेना में जा मिला। वह रानेखां के लिये एक पत्र छोड़ गया कि मैं तुम्हें आ मिलने के दिन की सूचना दूँगा।

हमदानी के चले जाने के पहले से प्रत्येक दिन कुछ न कुछ सिपाही माधव जी की छावनी छोड़कर भागते जा रहे थे। अब इनकी संख्या और भी बढ़ गई।

इसी समय बादशाह ने कहलवा भेजा कि जयपुर से लौट पड़ो। इसके बाद बादशाह की दूसरी आज्ञा होती, पूना वापिस चले जाओ! माधव ने सहायता के लिये पूना को लिखा। वहाँ टीपू की उलझनें थीं, रुपया न था। कोई भी सहायता नहीं मिल सकती थी।

(११२)

राजपूतो और मुगल सरदारो की सेना युद्ध के लिये पास के रामगढ मे आ गई। माधव की सेना लालसोत नाम के गांव और पहाड़ के पास पहुँच गई। एक ओर छोटी बडी पहाडिया, रेतीले मैदान, दूसरी ओर भरके और एक छोटा नाला। सिर पर उतरते असाढ की तेज धूप और कभी कभी बूँदा बादी। पीछे के सब मार्ग कटे हुये और सेना के अधिकांश में विद्रोह। माधव रक्तपात न करके राजपूतों को परस्पर फूट की घड़ी को ताक रहे थे और राजपूत माधव की सेना को बिलकुल भूखो मर उठने के क्षणो का। माधव ने डगले को दिल्ली के उत्तर से बुलवाया। वह देर मे आ पाया। बुन्देलखण्ड को सहायता के लिये लिखा। कोई सहायता नही मिली। वर्षा ऋतु का आरम्भ हो गया। राजपूतो ने लिखी हुई ललकार भेजी। तिथि भी नियुक्त कर दी! माधव न पहाडियो पर घूम घूम कर दूरबीन की सहायता से ठौर स्थिर किये। उन तिथि पर युद्ध नही हुआ।

राजपूत तलवार चलाने मे सिद्धहस्त थे, पुरानी परिपाटी के भक्त, बन्दूक से उन्हें अभी घृणा थी और कवायद, परेड और अनुशासन से तो वे दूर ही रहते थे, परन्तु हमदानी समैन्य जा पहुँचा था। उसके पीछे दो परदेसी सरदार और फूट गये। इनके अतिरिक्त कई सहस्र की संख्या मे सीखी सिखाई पल्टनों को जयपुर राजा ने अपनी ओर फोड लिया! ये सब अपने हथियार लेकर माधव के पास से चले गये!! जो सेना उनके पास थी उसके भी अधिकांश ईरानी तूरानी सरदार और सैनिकों की स्वामि-भक्ति बिलकुल डांवाडोल थी। युद्ध से कुछ ही दिन पहले उनकी प्यारी पुत्री का देहान्त हो गया। इस धक्के को भी माधव ने सह लिया।

सेना कम हो गई, पर अन्न-कष्ट दिन पर दिन बढता गया। माधव ने सोचा—मैंने अनेक उद्देश्यो को एक साथ सिर पर लेने में भूल की है।

फिर उन्हे पानीपत का स्मरण हो आया। यहा परिस्थिति उससे भी अधिक भयङ्कर हो गई थी। परिणाम भी अधिक भयकर होगा! वहा अकेला होलकर मन ही मन विरक्त था, खुला विद्रोही कोई न था। यहा विद्रोह खुल्लमखुल्ला था। सिपाही वेतन बिना टस से मस होने को तैयार न थे। माधव ने रुपये का प्रबन्ध करके इन्हे सीधा किया।

युद्ध की घडी आ गई। दूसरे दिन होना था। माधव आक्रमणात्मक प्रणाली से नही लड सकते थे परन्तु आगरा या मालवा की ओर बच निकलने के लिये भी तो वहां कोई साधन नहीं था। इसलिये माधव ने इस ढङ्ग से व्यूह रचना की कि शत्रु से लडते लडते सुरक्षा के साथ हट सकें। उस दिन लगभग इक्कीस घण्टे काम करने के उपरान्त वे और रानेखा इकट्ठे हुये। रात के दो बज गये थे।

थकी हुई मुस्कान के साथ कहा, 'भाई रानेखा स्नान करके आ जाओ।'

रानेखा स्नान करके तुरन्त आया।

'तुम नमाज पढ लो, मैं पूजा करता हूँ। परमात्मा से मनाओ कि पानीपत की पुनरावृत्ति न हो।' उन्होने कहा।

क्षीण मुस्कराहट और सूखे स्वर से रानेखा ने पूछा, 'क्या ये दोनो एक साथ नहीं हो सकतीं हैं?'

माधव की मुस्कराहट और विकसित हुई। बोले, 'अवश्य। मैं पूजा करता हूँ।'

'और मैं ध्यान', रानेखां ने कहा। फिर पूछा, 'क्या खुदा पण्डितों की संस्कृत को ही सुन और समझ सकता है?'

'न। जिस भाषा को हम लोग स्वयं समझ सकते हैं, उसी को वह भी समझ सकता है।' उन्होने उत्तर दिया।

वह बोला, 'तो मैं भी उसका स्मरण हिन्दी मे ही करूँगा।'

माधव ने धीमे स्वर मे अपने ही बनाये हुये उन दोहों को गाया। मुग्ध हो गये। किसी सुरीले कण्ठ का स्मरण हो आया। कितना बल मिला था उस गायन में! आंसू निकल पड़े।

'मो प्यारो माधव कहां मोहि बताग्रो बिसेखि'

उन्होने आंसू तुरन्त पोछे। देखा रानेखा की आंखों में भी आंसू थे। बोले, 'भाई तू है सच्चा भक्त।'

उसने गले को साफ करके कहा, 'मैंने अपनी बोली में परमात्मा के स्मरण को सुना और गुना तब न मालूम क्या पा लिया।'

'यदि हिन्दुस्थान के सब मुसलमान तुम्हारे जैसे हों, यदि इस देश को अपना समझें, इसे पेट भरने भर का खेत न ठहरायें, तो अनेक समस्यायें अपने आप हल हो जायें।'

'यहा की बोली को छोड़कर अरबी फारसी को ही अपनी और खुदा की भाषा समझने मे ही अपने पराये का भेद बढ रहा है। कुरान शरीफ का अनुवाद यदि हिन्दी मे हो जाय तो हम सब ज्यादा अच्छे इन्सान बन जायें।'

'और हिन्दू, सस्कृत के समझ मे न आने वाले मन्त्रों को न रटकर हिन्दी द्वारा परमात्मा को अपनी व्यथा सुनावें तो सुनवाई जल्दी से जल्दी हो।'

इसके उपरान्त माधव ने रानेखा को बहुत भड़कदार पोशाक पहिनाई। फिर होम किया। अपने माथे पर भस्म लगाई। प्रसाद चढ़ा कर लिया।

रानेखा ने कहा, 'भस्म और प्रसाद मुझे भी मिलना चाहिये।' माधव कृष्ण—हमारे भी तो हैं।'

'अवश्य,' उल्लास मग्न होकर माधव बोले और रानेखा को भस्म और प्रसाद दिया।

रानेखा ने अनुरोध किया, 'मैं चाहता हूं श्रीमन्त भी आज शाही खिलत की पोशाक करें।'

माधव ने तुरन्त कहा, 'श्रीमन्त नही केवल पटेल।' फिर मुस्करा कर बोले, 'भाई-रानेखा इन पोशाकों मे तुम लोग बहुत सुहाते हो मैं कभी नहीं पहिनता।'

माधव दूसरों को तड़क भड़क का प्रदान करते थे, परन्तु उनके लिये स्वयं उनके मन में पूरा अनादर था और विलास के आकर्षण उन्हें नही मोह सकते थे।

रानेखां ने आग्रह किया। किसी ने कई वर्ष पहले शिहाबुद्दीन के आने के अवसर पर इसी प्रकार का हठ किया था। उस स्मृति को दबाकर माधव ने कहा, 'सीधी सादी पोशाक में रहता हूँ, युद्ध मे केवल पहिचान के लिये कुछ चिन्हों का रखना आवश्यक होता है। तुम्हे इस पोशाक में देखकर मुझे हर्ष होता है वह अपने को चटकीले वस्त्रों मे लपेटने से नहीं पा सकूँगा। पहनूं तो लगेगा जैसे कोई गुड्डा बन गया हूँ।'

रानेखां ने हठ नही किया। उसने युद्ध की योजना के विषय में स्मरण दिलाया। 'अभी तक लड़ाई के ढंग का ब्योरा नहीं बतलाया!' रानेखां ने कहा।

उन्होंने बतलाया, 'आगे आगे तोपें, जो बिखरी हुई नहीं रहेंगी। पीछे देबाई की दो पल्टनें अगल बगल और उसके पीछे तुम्हारे सवार, बीच मे हिन्दुस्थानी मुसलमान। पीछे मैं रहूंगा कुछ सेना और युद्ध सामग्री के साथ।'

माधव जी अपनी योजनाओं को ठीक समय पर ही बतलाया करते थे।

फिर वे दोनों दो घण्टे सोये। तड़का होते ही पहले दोनों पक्षों के आगे बढ़े हुये, शोध लगाने वालों में छिटपुट लड़ाई हुई फिर गोलेबारी। जयपुर सेना को भ्रम था कि वर्षा के कारण माधव जी का गोलाबारूद भीग गया होगा। माधव जी समझते थे कि जयपुर की तोपें लम्बी मार की न होंगी। दोनों भ्रम में थे। जयपुर की लम्बी मार की तोपों ने दो घण्टे की लड़ाई में बहुत हानि पहुँचाई। माधव ने शीघ्र कुछ बड़ी बड़ी तोपें आगे भेजी। जयपुर-सेना के पांच सहस्र राठौड़ राजपूत छापा मारने के लिये मचल उठे। उन्होने तलवार के जोर से तोपों के छीनने का प्रण किया था। आंधी की तरह प्रचण्ड वेग के साथ झपटे। माधव की तोपों ने झपटते हुये राठौड़ों को बिखरी और सघन पंक्तियों में मार्ग

धनाने शुरू कर दिये, परन्तु वे नही रुके । तोपची मारे गये और देबाई की पल्टनें तितर-बितर हो गई । रानेखा ने उन्हें जा सम्भाला। फिर घमसान हुआ । माधव धैर्य के साथ पीछे से प्रत्येक निर्बल स्थान को कुमुक पहुँचाते रहे । राजपूतों को लौटना पडा । फिर दो घडी रात गये तक क्षीण और शिथिल गति से लड़ाई चलती रही। मुहम्मद बेग हमदानी तोप के गोले से मारा गया ।

दूसरे दिन युद्ध नही हुआ । माधव जी के सात सहस्र सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया । बन्दूकें और तोपें तानकर उनकी शेष सेना पर सीधे हो गये ! परन्तु लड़ाई में अपनी कुशल न देखकर जयपुर पक्ष से जा मिले । हथियार और तोपें भी ले गये। अब माधव को अपनी सम्पूर्ण सेना के सर्वनाश का लक्षण दिखलाई पडा ।

हमदानी का भतीजा इस्माईल बेग जयपुर पक्ष मे था । उसी ने इन सात सहस्र सिपाहियों को फोडा था । वह युद्ध का सचालक था।

माधव जी का परिवार डीग के किले म था । डीग पहुँचना बहुत टेढ़ी खीर थी, परन्तु एक एक कदम फूंक फूंक कर पहुँचना था डीग हो ।

माधव जी ने रात में प्रभात से पहले लौट पडने के कूच करने को आज्ञा दी । रानेखा जैसे युद्ध के समय हरावल मे था वैसे ही सबसे पीछे रखा गया— अपनी पातो को बिना बिगाड़े हुये लडता हुआ हटता आवे । माधव ने कठोर नियम और अनुशासन के साथ सम्पूर्ण सैन्य खण्डो की व्यवस्था की । व्यूह रचना के साथ सबको पीछे हटना था ।

किसी की गलती से या दुष्टता के कारण बारूद की एक गाडी में आग लग गई । जोर का धड़ाका हुआ । समाचार फैला कि किसी ने माधव को मार डाला ! साथ मे कुछ पिंडारे थे । उन्होने लूटमार मचा दी ! भगदड मच गई ।

माधव ने दो घण्टे घूम फिरकर गड़बड शान्त की । फ्रांसीसी देबाई ने रानेखा से कहा, 'विलक्षण योधा है यह ! आश्चर्य पूर्ण प्रतिभा है पटेल की !! इस तरह की पस्त फौज को कोई भी वापिस नही ले जा

सकता। ओफ, कितना गुनता है ! कितना सतर्क और सावधान सेनानी है !! अत्यन्त भयङ्कर कठिनाई के सामने भी इसका श्रम और धैर्य एक क्षण के लिये भी शिथिल नही होता !!! मैं समझता था कि बस इसी लड़ाई के होकर रहे।'

रानेखां दौड़ता हुआ माधव जी के पास आया। हांफता हुआ बोला, 'सर्वनाश होना चाहता है। जयपुरी सेना और बागी मुगल पठान हमला करने को हैं।'

माधव के चेहरे की एक भी रेखा विचलित नहीं हुई।

'अभी हमारा रानेखा जीवित है। देवाई भी जिन्दा है न ?'

'हां पटेल जी', धैर्य पकड़कर उसने उत्तर दिया।

'और', माधव बोले, 'वह याद है न, हारिये न हिम्मत बिसारिये न राम नाम ?'

'रानेखां को भी मुस्कराहट मे होकर निकला, 'जी याद है।'

'तो आओ मेरे साथ। छावनी में ज़रा–सा घूम फिर लो। सबको मालूम हो जायगा कि माधव पटेल और रानेखां अभी पूरे समूचे जीवित हैं।'

रानेखां के मन मे बिजली-सी कौंप गई। उसके मुंह से निकल पड़ा, 'आगे मुगल पठान सिपाहियों की भर्ती कभी नहीं करेंगे।'

माधव जी ने मुस्कराकर कहा, 'सब उँगलियां एक-सी नहीं होतीं, परन्तु तुम्हारी सलाह बिना कोई बड़ी भर्ती नहीं करूँगा। अभी इस झंझट को मिटावें फिर और कुछ सोचेंगे।'

रानेखां बोला, 'अभी कई लड़ाइयाँ लड़नी हैं।' फिर उसने दांत भींचकर कहा, 'यदि इन बागियों और दगाबाजों को किसी दिन धूल में न मिलाया तो मेरा नाम रानेखां नहीं।'

पूर्ण व्यवस्था के साथ माधव जी नौ दिन में डीग आ गये।

(११४)

डीग आकर माधव जी ने सबसे पहले अपने और अपने अफसरों के परिवारों को भारी सामान बड़ी तोपों इत्यादि समेत ग्वालियर भेजा. और लगभग कुल उत्तर-भारतीय—मुगल पठान इत्यादि सिपाहियों की सीखी सिखाई पल्टनों का तोड़कर अलग कर दिया। उन्हें मालूम हो गया था कि मुगलिया दस्ते राजपूतों को लेकर दिल्ली की ओर बढ़ रहे हैं। जो विश्वसनीय सेना उसके पास बची थी उसे लेकर वे पश्चिम की ओर बढ़े जिसमें जयपुर की दिशा से आने वाली सेना दिल्ली की ओर न जाने पावे। वे अलवर में जा रुके। अलवर का राजा उनका सहायक था और मित्र। अलवर में वे मुगलिया विद्रोहियों का सामना करने की तैयारी करने लगे।

'मुझे रुपये की बड़ी अटक है।' माधव जी ने अवसर पाकर अलवर के राजा से कहा, 'आप कुछ रुपया उधार दे सकते हैं ?'

रुपये की थोड़ी बहुत बातचीत पहले हो चुकी थी। राजा ने उत्तर दिया, 'मैंने सात लाख रुपये का प्रबन्ध किया है। एक लाख मेरा निज का है, छः लाख साहूकार का।'

माधव जी प्रसन्न हुये। सोचा—अर्थ संकट कुछ तो कम होगा, दक्षिण के सिपाहियों की बरसों की वेतन बाकी कुछ तो दी जा सकेगी।

उसी समय उनका दिल्ली-स्थित दूत आया। उसने सुनाया—'गुलाम कादिर रुहेले ने दिल्ली पर अधिकार कर लिया है।'

उन्होंने शान्ति के साथ कहा, यह तो प्रत्याशित हो था, परन्तु कुछ दिनों दिल्ली के किले में होकर लड़ा जा सकता था, तब तक मैं वहां पहुँच जाता।'

'हमारी थोड़ी सेना ने वेतन न मिलने के कारण बलवा कर दिया था।'

'हुं—और ?'

'बादशाह ने गुलाम कादिर को मीरबख्शी बना दिया है और आपको अलग कर दिया है।' दूत ने दूसरा समाचार दिया।

उसी शान्त स्वर में उन्होंने कहा, 'बादशाह अनिश्चयी है, हिजड़ों और बदमाशों से घिरा हुआ, करना पड़ा होगा विवश होकर।'

'जम्हूरियत वालों ने गुलाम कादिर और बादशाह को मिलाकर अपना पक्ष पुष्ट कर लिया है और हम लोगों को उत्तर की ओर से बिलकुल हटा देने की योजना कार्यान्वित करने वाले हैं।'

'यह तो बहुत दिनों से चल रहा है। और ?'

'सब प्रकार के सरदार अपने अपने खरीतानामे लिये पदाधिकार के लिये उमड़ पड़े हैं। अन्तर्वेद का पूरा प्रदेश जो सत्तर लाख रुपया साल की आय का है हम लोगों के हाथ से अलग कर दिया गया है।'

'हमारे हाथ में है भी तो नहीं बहुत दिनों से। इस प्रदेश को काबू में लाना आगे की बात है। आज बादशाह से बागियों ने अपने नाम लिखा लिया है, कल मैं बादशाह के पास जाकर इस भूल का सुधार करवा लूँगा। और ?'

बादशाह ने आज्ञा दी है कि आप उनसे न मिलें। आपका मिलना निषिद्ध कर दिया गया है।'

'हूँ !' माधव की शान्ति को धक्का लगा। वे क्षुब्ध हो गये। उन्होंने सोचा—मेरे हाथ में आगरा, अलीगढ़ इत्यादि के किले हैं, इस्माइल बेग अजमेर क्षेत्र की ओर गया है। भरतपुर अधीन मेरा मित्र है और बलवान है।

को सुनकर माधव के मन को ठेस लगी, परन्तु आगरे का किला उनके सेनानी के हाथ में था इसलिये विमन नहीं हुये ।

फिर समाचार मिला, 'अलीगढ़ का किला घेर लिया गया है। उत्तर अन्तर्वेद और दक्षिण अन्तर्वेद के सम्पूर्ण मराठा दीवानों को निकाल भगाया गया है।'

माधव जी ने कहा, 'वहा अकाल के मारे रखा भी क्या था ? पुनः प्राप्ति में कठिनाई अवश्य पड़ेगी । अलीगढ़ का किला चले जाने से भी परिस्थिति कुछ अधिक कठोर हो जायेगी ।'

एक और समाचार मिला, 'इस्माईल बेग और गुलाम कादिर ने परस्पर सन्धि करके यह तै किया है कि भरतपुर के राज्य को दो भागों में विभक्त करके एक इस्माईल ले लेगा और दूसरा गुलाम ।'

'ऐं !' वे फिर चौंके । उन्होने कहा, यह असंभव होगा। भरतपुर की सेना प्रबल है और जाट इसे कभी नही सह सकेंगे । पूना से रुपया नहीं आया तो सेना अवश्य मेरी सहायता के लिये आवेगी । मैं भरतपुर की सहायता करूँगा ।'

(११५)

पेशवा की आयु लगभग बारह साल की थी। नाना फड़नीस उसका अभिभावक था और महाराष्ट्र की राजनीति का परिचालक। जब सहायता के लिये माधव जी की चिट्ठियों पर चिट्ठिया गई तुकोजी होलकर पूना मे था। टीपू से इस समय लडाई नही थी, परन्तु अंग्रेजो और उनके समर्थक निजाम से चौकन्ना रहना पड रहा था। टीपू से किसी समय भी युद्ध छिड सकता था, निजाम से और अंग्रेजो से भी। पूना से धन की सहायता नही मिल सकती थी। सैनिक सहायता की योजना की जाने लगी। सवाल उठा किसे प्रधान सेनापति बनाकर भेजा जाये, एक चतुर और अनुभवी सेनापति। परन्तु वह ब्राह्मण था। उसका नाम लिये जाने पर नाना ने कहा, 'ब्राह्मण सिन्धिया के नीचे काम नही कर सकता। तुकोजीराव होलकर के साथ किसी एक और को भेजा जा सकता है। तुकोजी पहुच जायगा तो माधव का निरीक्षक परीक्षक बन कर काम चलाता जायगा।'

'माधव ने उत्तर में जाकर बुरी तरह लुटिया डुबोई। जयपुर से इस प्रकार नही लड बैठना चाहिये था। जयपुर राजा ने उलहना लिख भेजा है कि सवाई जयसिंह ने स्वर्गीय पेशवा बाजीराव को स्वराज्य आन्दोलन मे कितनी सहायता की थी। अब पेशवा का ही एक मराठा सरदार दिल्ली के बादशाह की ओर से जयपुर की छाती पर होले भूनना चाहता है!'

'जयपुर से हमारा भी रुपया चाहिये है। पहले अपना वसूल होना चाहिये था।'

'अंग्रेजो को मित्र बनाये रखकर, बादशाह को मुट्ठी में कसे हुवे, उत्तर की राजनीति का चलाना सिन्धिया सहज समझता है।'

'असल में सिन्धिया का लोभ कुछ अधिक बढ़ गया है। उत्तर के अधिकारो का सार सार अपने हाथ में रखना चाहता है और पेशवा को भमों तथा भुलावों में डालना चाहता है।'

'उसे किसी प्रकार की सहायता नहीं दी जानी चाहिये। अपने मालवे की जागीर से सेना का काम चलावे। मालवा का स्वामी पेशवा है। सिंधिया को जागीर सैन्य-व्यय के लिये ही लगी हुई है।'

नाना को यह सम्मत्ति नहीं रुची। बोला, 'सहायता तो देनी चाहिये, परन्तु अपनी सुविधा के अनुसार और इस प्रकार कि सिंधिया इस बात को कभी न भूले कि पूना से सहायता न जाती तो वह किसी भी काम का न रहता, अपने को दिल्ली के गुण्डे बादशाह का बनाया हुआ राजा न समझ बैठे और सदा पेशवा के आधीन अपने को समझे।'

उत्तर में तीव्र गति से बढ़ते जाने वाले विदेशी सत्व की चर्चा पर नाना ने कहा, 'अब्दाली के समय में यह विप उत्तर तक ही सीमित था, अब भारत भर में इसके फैलने का भय है। माधव तो घिरा हुआ सा ही है, जो सेना यहां से भेजी जायगी कहीं उसकी दुर्गति पानीपत की जैसी न हो। यथासम्भव और यथाशक्ति छै सात लाख रुपये से उसकी सहायता कर सकते हैं, परन्तु उसे स्वयं भी तो कुछ प्रयत्न करना चाहिये और व्यर्थ के युद्धों में रुपया नहीं फूंकना चाहिये।'

'माधव को इस समय क्या उत्तर दिया जाय?' नाना से पूछा गया।

नाना ने उत्तर दिया, 'लिख दो कि यथा सुविधा सहायता दी जायगी, सेना शीघ्र नहीं भेजी जा सकती। तुकोजी इत्यादि को ससैन्य भेजा जायगा। रुपया का प्रबन्ध हो रहा है।'

माधव को सहायता नहीं मिली। रोड़े अटकाये गये। तुकोजी को इसी उद्देश्य से भेजा गया।

(११६)

माधव जी का एक फ्रांसीसी नायक अपनी पल्टन समेत इस्माईल से जा मिला। देवाई भी अनमना और हतोत्साह हो गया था। उसने भी खिसक कर अंग्रेजों की सेवा की बात सोची, परन्तु माधव के अटूट धैर्य का उस पर प्रभाव पड़ा और वह उन्हें छोड़ कर नहीं भागा। माधव जी अलवर से चले आये। रुपये की कमी निरन्तर थी ही। अब और भी बढ़ गई। पूना से कभी कभी दमदिलासा के पत्र तो आ जाते थे, परन्तु सहायता नहीं आई। उनका समाचारदाता पूना का वास्तविक रुख प्रकट करता रहता था।

माधव जी ने अपनी पत्नियों के गहने लिये, उज्जैन से चांदी सोने के बर्तन सामान तुड़वा गलवा कर मँगवाये।

रानेखा ने पूछा, 'कितने मूल्य के होंगे ये पटेल जी?'

माधव ने मूल्य बतलाया। उतने से काम नहीं चल सकता था। मालवा में जागीरदारों और जमींदारों ने विद्रोह खड़ा कर दिया था, बुन्देलखण्ड के रजवाड़े स्वतन्त्र होकर आसपास की भूमि को दबाने के प्रयास में जी तोड़ कर लगे थे और इस पर पड़ गया मालवा में अकाल!

रानेखा बोला, 'कुछ रुपया मैं खड़ा करता हूं।'

'कहां से?' माधव ने पूछा।

उसने बतलाया, 'जहां से आपने किया वहीं से।' और वह दौड़कर अपने जनाने में गया। स्त्रियों के सारे गहने लाकर माधव जी के सामने रख दिये।

माधव विचलित हो गये। घोर कठिनाइयों ने जिस आदमी को नहीं हिला पाया था उसे रानेखा के इस काम ने थरथरा दिया।

अपने को नियन्त्रित करके माधव ने कहा, 'रानेखा भाई, अब और कितने एहसानों से लदोगे मुझे?'

'आपके लिये किया ही क्या है मैंने ? अपने देश के लिये, अपने देश की संस्कृति की रक्षा के लिये कर रहा हूं। और फिर जिसने दिया था उसी को तो लौटा रहा हूं—वह जो अपने आदर्शों के लिये ही अपने को गला खपा रहा है।'

अन्य कई हिन्दू सेनानियों ने भी रानेखां के उदाहरण का अनुसरण किया। जैसे रिसता हुआ पानी चुपचाप और दृढ़पूर्वक, निरन्तर, भूमि के भीतरी भाग के एक एक कण को भेदते हुये भिगोते हुये रमता चला जाता है उसी प्रकार माधव जी के व्यक्तित्व का प्रभाव इन सेनानियों के मन पर काम कर रहा था, परन्तु जैसे पानी पत्थर को काट भर सकता है उनमें रिस नहीं सकता, इसी प्रकार कुछ भाड़े के टट्टू सरदार उससे प्रभावित नहीं हुये।

बादशाह का लिखा हुआ फरमान आ गया कि कभी दिल्ली का मुँह मत देखना ! देखने से कुछ लाभ नहीं था, परन्तु आगरे के किले में माधव का सेनानी घिरा हुआ था। रानेखां इत्यादि नायकों ने बिजली की सी तेजी के साथ इस्माईल पर छापे मारे, गुलाम कादिर के इलाके की भी खबर ली, परन्तु उन दोनों की मिलाकर सैंतीस सहस्र सेना थी और बहुत तोपें थीं। माधव के पास से भागे हुये बागी पल्टनों वाले उनके पास थे। रानेखां को हटना पड़ा। यहां तक कि माधव को अपना सब डेराडण्डा लेकर चम्बल के इस पार ग्वालियर की ओर चला जाना पड़ा।

देबाई की पल्टन एक सहस्र से भी कम सैनिकों की रह गई थी। इनकी संगीनों ने मुश्किल से माधव के प्राण बचा पाये थे।

अब उत्तर में, सिवाय भरतपुर और अलवर के उनका कोई न था। सो ये दोनों विपद में थे। भरतपुर के राजा ने इस्माईल और गुलाम कादिर द्वारा घिर जाने के कारण माधव से सहायता मांगी।

(११७)

सब दिशाओं से निराश और निरुपाय होकर माधव ग्वालियर से चौदह कोस उत्तर कुमारी नदी के तट पर आ गये। उसी दिन पूना का पत्र मिला, सहायता शीघ्र तो नही दी जा सकती, रुपये का प्रबन्ध किया जा रहा है, सैन्य सग्रह में अभी कुछ विलम्ब और होगा। उनके पूना स्थित समाचारदाता ने लिखा,—नाना आपकी महत्ता की ईर्षा में तुकोजी का समर्थन और प्रोत्साहन पाये हुये है, सेना और रुपये की अभी कोई आशा नही, यहा इस बात की चर्चा है कि आप बादशाह की आड़ लेकर उत्तर में अपना एक विशाल स्वतन्त्र राज्य स्थापित करना चाहते हैं। यदि सहायक सेना आई भी तो तुकोजी आपकी जासूसी के लिये साथ आयगा। सेनापतित्व भी वही करेगा। यह भी तै हो गया है कि सहायक सेना इस शर्त पर भेजी जा रही है कि चम्बल के दक्षिण की सारी भूमि पेशवा, होलकर और आपके बीच बराबर बराबर बांटी जायगी।

डेरे के पास ही कुमारी का प्रवाह और जल प्रपात था। ठण्ड के दिनों में भी पानी ठिठुर ठिठुर कर नहीं बह रहा था। सन्ध्या के समय कुमारी के आसपास की ऊँची नीची पहाड़ियों को भी सिकुड़ा देने वाली तीखी वायु चल रही थी। किसी कवि के रसस्वी हृदय की कोमल कल्पना को इस स्थान ने द्रवित करके 'मालती माधव' नाटक को जन्म दिया था। माधव घोड़े पर सवार, आकर उतर पड़े। साईसों ने घोड़े को ले लिया। वे थोड़ी दूर चलकर एक चट्टान पर जा बैठे। उन्हें परिताप के मारे ठण्ड नही व्याप रही थी। वे दिन भर सन्तप्त रहे थे।

उन्होंने मन में कहा—मैं अपने लिये ही किसी विशाल राज्य के सृजन की उधेड़-बुन में लगा हूं! क्या इन लोगों की समझ में नहीं आ रहा है कि मैं क्यों अपने को राजा तक कहलाने और कहने से अत्यन्त घृणा करता हूं! खिताब, अलकार विलास कुछ नहीं चाहिये!

फिर छोटे से या विशाल राज्य की स्थापना से क्या पाऊँगा ? यदि पेशवा मेरी सहायता नहीं करना चाहते हैं तो मुझे ही क्या पड़ी जो मैं अपना सिर फोड़ता फिरूँ ? अंग्रेजों से सन्धि करके चैन के साथ या तो उज्जैन में पड़ा रह सकता हूँ या अपने कृष्ण के चरणों में वृन्दावन में। अंग्रेजों से सन्धि ! जो भारत को निगल जाने के लिये सब ओर से तैयार हो गये हैं !! अंग्रेजों के आश्रय में रहकर जीवनयापन !!! राज्य ? गुड्डा गुड़िया बन जाना, किसानों को चूस-चूसकर यशोन्नति की कल्पना करके सड़ते रहना ! दरबार, सरदार, लावलश्कर, यह सब !! टीमटाम, तड़क भड़क, वेश्यायें साथ साथ !!! फिर यह जम्हूरियती संघ क्यों बुरा जो कहता है कि राजाओं नवाबों को समाप्त करके जनतन्त्र स्थापित किया जाय ?'

उन्होंने विचलित मन को शान्त करने के लिये धीरे धीरे गुनगुनाया,—'मो प्यारो माधव कहा मोहि बताउ विसेखि।' गुनगुनाते गुनगुनाते आँखें बन्द हो गईं, कुछ तरल भी।

उन्हें जान पड़ा गन्ना बेगम गा रही है। उसने कहा था 'आदर्श के अनुशीलन में सहायक बनूंगी।' परन्तु कौनसा आदर्श ? ऐसा आदर्श जिसका कौड़ी मोल दाम नहीं ! भारत इतने दिनों से बिलबिला रहा है—क्या मेरी प्रतीक्षा में ? मैं अकेला क्या करूँ ? क्यों अपना सिर मारूँ ? *कृष्ण ने अपने मथुरा वृन्दावन को मन्दाली से नहीं बचाया तो* मैं किस गिनती में ? और फिर क्यों ? क्यों नजीब ! नजीब !! उसी का पोता दिल्ली पर चढ़ आया है !!! रुहेले ? फिर रुहेले !!!! होगा—

उनकी विचारधारा टूटी—पास ही एक टोर के पीछे कोई गा उठा था—

> निन्दन्तु नीति निपुणा यदि वा स्तवन्तु,
> लक्ष्मी समा विशतु गच्छतु वा यथेष्टम्,
> अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा,
> न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीराः।

वे सुनते रहे। गायन साधारण सुरीला ही था। गीत की समाप्ति पर वे उठकर उस टोर के पीछे गये। रानेखा बैठा हुआ था।

पुलकित होकर माधव ने आश्चर्य प्रकट किया,—'तुम यहाँ कहाँ रानेखा!'

'और आप उदास कैसे हैं आज? आज चेहरे पर उस मुस्कराहट को दिन भर नहीं देखा जिसे हम लोग सदा देखा करते हैं।' वह बोला।

'अब तो मैं हँस डालने तक को तैयार हूं। मैं नहीं जानता था कि तुम गाते भी हो! और संस्कृत में!! कब सीखी?' उन्होंने पूछा।

उसने उत्तर दिया, 'जब आपके साथ वृन्दावन में रहा था।'

'मतलब भी समझे?'

'जी नहीं। मतलब तो इसका आप जानते होंगे। समझा दीजिये।'

'फारसी में शेख सादी ने भी तो कुछ इसी तरह की बात कही होगी?'

'जब अपने देश में न मिलेगी तब बाहर से ढूँढता फिरूँगा। अब मतलब समझा दीजिये इसका।'

'क्या तुम इसी को सुनाने के लिये मेरे पीछे लगे चले आये?'

'मैं तो दूसरे मार्ग से आया था। घोड़े को उस ओट में बाँध आया हूं। देखा साथ में आपने किसी अंग रक्षक को नहीं लिया तो मैंने ही खवासी करली।'

'ओ मेरे खवासी वाले भाई रानेखां, तुम्हारे इस श्लोक के अर्थ को वास्तविक करके दिखलाऊँ तब बात है। खूब कहा—नीति जानने वाले लोग बुरा कहें चाहे भला, रुपया पैसा बना रहे चाहे सब चला जाय, युगों जिएँ चाहे इसी क्षण प्राण निकल जाय, परन्तु धीर को न्याय का पथ कभी नहीं छोड़ना चाहिये। नहीं छोड़ूंगा, भाई।'

'मैं तो इतना ही समझा कि अपने काम को कभी किसी हालत में भी न त्यागे।'

'यही तो है। आदर्श और सद्विचार इन आंखो से दिखलाई पड़ने वाले जगत में पार्थिव साधनों द्वारा प्रत्यक्ष और स्पर्शनीय किये जाने चाहिये।'

'मैं कुछ नही समझा।'

तुम्हारा काम समझने का है ही कहा? तुम्हारा काम तो समझाने का है।' कहकर वे हँसे। बोले, 'मेरी बुद्धि कुछ खटाई में पड़ गई थी। अब सब साफ़ दिख रहा है। पहले मालवा के विद्रोहियों का दमन करना है फिर मालवा के आसपास वालो का। इसके उपरान्त उत्तर को देखा जायगा। पूना से सहायता आवे या न आवे, अपना काम बन्द नही होगा। अपने जामगाव से नई सेना की भर्ती की जाय और मालवा की वसूली से काम चलाया जाय, क्योंकि मालवा में लगातार अकाल नही पड़ सकता।'

ऐसा ही हुआ। जामगाव से पाच सहस्र सैनिको की भर्ती होकर माधव के पास ग्वालियर के निकट आ गई। रुपया मिल गया परन्तु इस कुमुक के आने के पहले ही अलीगढ़ का किला हाथ से निकल गया था।

इन्दौर से अहिल्याबाई ने माधव को ग्वालियर—गोहद के उद्धार के समय तीस लाख रुपया दिया था। वहा से माधव को और भी मिल सकता था, परन्तु उन्होने अनुचित समझ कर नही मांगा। फिर वे आगरा के किले के भीतर घिरे हुये अपने वीर सेनानी की सहायता के लिये चल पड़े। परन्तु रण की योजना उन्होंने किसी को नहीं बतलाई। उन्हे सन्देह था कि छावनी मे अब भी ऐसे अनेक लोग होंगे जो रण योजना के रहस्य को प्रकट करदें। धौलपुर तक पहुँच आने पर भी उन्होंने अपना मन्त्र प्रकट नहीं किया।

तत्कालीन परिस्थिति में फूंक फूंककर कदम रखने वाले माधव से सेनानियों ने एकत्र होकर उनसे आगे का कार्य-क्रम पूछा।

एक ने कहा, 'आगरा के किले को गुलाम क़ादिर और इस्माईल—दोनों की सम्मिलित सेनाओं ने घेर रखा है। शत्रु के ऊपर किन दिशाओं से आक्रमण किया जाय ?'

इस्माइल और गुलाम कादिर ने डीग, भरतपुर के किलों पर भी आक्रमण किया था, परन्तु नहीं ले पाया था। अब वे पूरे जोर के साथ आगरा के क़िले के चारों ओर अड़े पड़े थे।

माधव जी ने उत्तर दिया, 'किसी ओर से भी नहीं। पहले तो अपने सिपाहियों को जो आगरा के किले में नौ महीने से इस्माईल और गुलाम को चिनौती दे रहे हैं और छका रहे हैं, रसद सामान पहुँचाओ।'

रानेखाँ ने दायित्व लिया,—'मैं पहुंचाता हूं।'

माधव जी ने कहा, 'फिर गुलाम कादिर रुहेले पर टूट पड़ना है।' उनके सेनानियों ने इस कर्तव्य को मुड़ियाया।

'इसके उपरान्त ?' एक ने पूछा।

माधव ने उत्तर दिया, 'एक दलपति दूसरे के सम्पर्क में निरन्तर, अनवरत बना रहे। इस समय इतना ही। फिर जैसा अवसर आयगा, बतलाऊँगा।'

सारे दलपति अपने प्रधान को जानते थे। एक को दूसरे के निकट सम्पर्क में रहना है इसका महत्व वे जानते थे। उन्होंने राई रत्ती पालन किया।

रानेखां ने अत्यन्त वेग के साथ इस्माईल के ऊपर छापा मारा और उतने ही वेग के साथ पीछे हटा। इस्माईल ने उसका पीछा किया। घेरे में तब तक एक स्थान पर गुन्जाइश मिल गई। उतने ही समय और स्थान में होकर उसने किले में रसद पहुंचा दी। फिर गुलाम कादिर के इलाके पर छापामारी हुई। गुलाम कादिर इस्माईल को छोड़ कर अपने इलाके की रक्षा के लिये चला गया। वह उधर जाकर उलझा, इधर माधव की सेना के मुख्य अङ्ग ने आगरा के घेरने वालों को खुले मैदान में लड़ने के लिये विवश किया।

आधे असाढ़ में एक दिन लड़ाई हुई। धूप और लू अपनी पूरी प्रबलता और उद्दण्डता पर थी परन्तु ठण्डे देशों वाले गोरे तो थे नहीं जो गरमी से घबराकर न लड़ते। धूप और लू से तो उनकी देहें ही बनी थीं। घोर युद्ध हुआ। जान पड़ता था माधव के प्रभाव मे उसके सैनिक पागल हो गये है और मौत असम्भव हो गई है। माधव जी के लगभग ढाई सौ सैनिक मारे गये और इस्माईल के दस सहस्र! गुलाम कादिर को उसके इलाके में उलझाकर माधव का वह दस्ता आगरा की लड़ाई में शामिल होने के लिये लौट पड़ा था। गुलाम भी लौटा, परन्तु वह दस्ता पहले आ गया। गुलाम कादिर ने यमुना ही पार न कर पाई। जब इस्माईल हारा और भाग कर यमुना उस पार गुलाम के पास पहुंचा तब उसके पास पहिनने के लिये कपड़े तक न थे।

यह थी रण योजना माधव की जो ठीक समय पर ही प्रकट की जा सकी थी।

गुलाम कादिर यमुना के पूर्वीय किनारे पर इतने निकट था कि उसकी छावनी मे माधव की तोपों के गोले जा गिरे। परन्तु वह पछियाया नहीं जा सका। उसने नावों के पुल को नष्ट कर दिया। ऊपर में वर्षा हो पड़ी। यमुना बाढ़ पर आ गई। पार नहीं की जा सकती थी। गुलाम कादिर इस्माईल का लेकर चला गया।

आगरा नगर मुक्त हो गया और आगरा किले के वीर मराठा सैनिक भी। अब प्रश्न था, 'आगे ?'

बरसात सिर पर थी और आगरा से लेकर दिल्ली तक का प्रदेश 'दीन खतरे में!' हमारी हकूमत कायम हो!!' दक्षिण के काफिरों को मत आने दो!!!' इत्यादि दुराग्रहों से ओतप्रोत था। भरतपुर और अलवर के राजाओं के सम्पर्क मे लाकर पहले अपनी स्थिति का दृढ़ कर लेना दिल्ली की ओर मुँह उठाने से कहीं अधिक महत्वपूर्ण और लाभदायक

था। हाथ मे आई हुई विजय को दृढ करके तब दूसरा डग बढाना उचित था।

'आगे ?' के प्रश्न के उत्तर मे माधव का असंदिग्ध उत्तर था,—'विशेष अवसर और स्थान पर सेना और सामग्री का ठोस और प्रबल होना अधिक महत्व रखता है, विस्तृत क्षेत्र मे, व्यापक रूप से सबल होना कोई महत्व नही रखता यदि हम विशेष अवसर और उपयुक्त स्थल पर प्रबल न हुये तो सब व्यर्थ है।'

'दिल्ली को इन क्रूर बर्बरों से बचाना है जिन्होने आगरा को मिटा दिया है।'

'यदि स्वय हम लोग मिटा दिये गये तो बादशाह को कौन बचावेगा ? पानीपत का पाठ भूल गये तो जयपुर का तो याद रखो। यातायात के सब मार्ग टूट गये थे—लौटते लौटते लड़े और मारते मरते बचे थे।'

यहां पर माधव को पूना से सूचना मिली कि तुम प्रधान सेनापति के पद से हटाये जा रहे हो, तुकोजी होलकर तुम्हारा स्थापन्न होकर आ रहा है, वही राजपूताने की बाकी वसूली करेगा !—और दिल्ली ? जो प्रधान सेनापति होगा वही दिल्ली को भी सभालेगा। इसके सिवाय उनकी सेना मे अब भी कुछ पल्टनें ऐसी थीं जिनका विश्वास नही किया जा सकता था। उस पर सेना के मराठा अंग ने, जिसका पूरा विश्वास किया जा सकता, वेतन की पूरी बाकी के लिये दिल्ली जाने से बिलकुल नाहीं कर दी।

माधव ने नाना फडनीस को लिखा, 'स्मरण करो बड़े भाई, गाढ़े समय पर कौन तुम्हारे काम आता रहा है ? तल्ली गाव के युद्ध मे अंग्रेजों को किसने हटाया था ? उसके बाद अंग्रेजों से कौन टक्कर लेता रहा ? हम और तुम एक ही स्वामी के सेवक हैं। सन्देहो का निवारण करो, चुगलखोरो की बात पर ध्यान मत दो। राष्ट्र के उद्देश्य को उत्तर भारत में सफल होने दो। स्वराज्य की कल्पना अस्त-व्यस्त मत होने दो।'

(११८)

अलीगढ़ की विजय से गुलाम कादिर को बहुत अधिक युद्ध सामग्री प्राप्त हुई थी। आगरा से हटकर वह और इस्माईल इस सामग्री के साथ दिल्ली जा पहुँचे।

गुलाम कादिर ने बादशाह से मीरबख्शी का पद झपट लिया। बादशाह को उसकी बर्बरता से भय था। बादशाह को शका थी कि गुलाम कादिर के रुहेले पठान लूटमार न मचा उठें—इसके सिवाय उसने सुन रखा था कि गुलाम कादिर अपने पहले अपमानों का बदला चुकाना चाहता है।

माधव की आगरा-विजय के कारण दिल्ली में एक सनसनी फैल गई। जहां दिल्ली के बादशाह का नाम लेते ही हिन्दू की स्मृति या दबी हुई चेतना अकबर, शाहजहां की शान, ताजमहल और तख्त-ताऊस के विशाल गौरव, नादिरशाह और अहमदशाह की विराट सेनाओं और उनके कराल क्रूर कर्मों की ओर दौड जाती थी वहां मुसलमानों की स्मृति में औरंगजेब की महानता, अपने रुतबा, हकूमत, इस्लाम के विदेशी प्रभुत्व और इस समय की हीन अवस्था की याद जाग जाग पड़ती थी। साधारण मुसलमान जन बादशाही को बुरा न समझ कर इस या उस बादशाह को बुरा समझता था। गुलाम कादिर ने इस भावना से लाभ उठाया। शाह अब्दुल अजीज का संगठन था ही। उसके आते ही शहर के मुसलमान इकट्ठे हो गये। बादशाह का प्रधान हिजड़ा; हिजड़ों का नाजिर इस भीड़ का नायक था।

मुसलमानों की मनोवान्छा ने उसके कान में कहा—गुलाम कादिर और इस्माईल ही माधव सिन्धिया को पस्त कर सकते हैं।

भडकी हुई मुसलमान जनता ने नारे लगाये, 'साहूकारों को खतम करो इन्होंने हमको लूट लिया है।'

'दिल्ली मे ये ही लोग माधव सिन्धिया के सहारे हैं।'

'मराठों को ये ही लोग तो बुलाया करते हैं।'

गुलाम कादिर ने कहा, 'बादशाह ने बुलाया था।' नारे लगे—

'बादशाहत को खतम कर दो ! नवाबों को हटा दो !!' ये हमारा खून चूसते हैं। शराबखोर और ग्रय्याश हैं।'

'जम्हूरी हुकूमत कायम करो।'

हिजड़ों के नाजिर ने गुलाम कादिर के कान के पास आकर कहा, 'जायदाद के बाटने की बात कहलवाइये।'

गुलाम कादिर के साथ उसके रहेले सरदार और सिपाही भी थे जो शोर को अपना सहयोग दे रहे थे। गुलाम कादिर उन्हें सुनाते हुये चिल्लाया, *'अमीरों की जयदाद को छीन लो ! गरीबों में बांट दो !!'*

यह पुकार दुहराई तिहराई गई।

फिर गुलाम कादिर ने आवाज ऊंची की, *'आम लोगों की हुकूमत कायम करो।'*

'आम लोगों की हुकूमत कायम हो ! कायम हो !! मराठों के खिलाफ जिहाद का ऐलान करो !!'

'मराठों को खतम करो।' लगभग दो लाख की भीड़ ने दुहराया।

'मराठों के सरपरस्त इस बादशाह को खतम करो ! निकालो !! जम्हूरी सल्तनत कायम करो !!!'

किले का फाटक बन्द था। उस प्रधान हिजड़े ने बादशाह को फुसलाकर फाटक खोल देने के लिये राजी कर लिया। गुलाम कादिर और इस्लाईल बेग अपने दलबल सहित किले में घुस पड़े ! किले के रक्षक सिपाहियों को हटा दिया गया और उनकी जगह गुलाम कादिर की रहेला फौज भर गई। गुलाम कादिर के साथ मन्यारसिंह नाम का एक अङ्ग-रक्षक था जो उसके बाप जाबिताखां—धर्मसिंह—के समय से रह रहा था। इस्माईल का एक दस्ता शहर से बाहर रहा। बाहर की परिस्थिति को अपने नियन्त्रण में रखने के लिये। वह थोड़े से सिपाहियों को लेकर गुलाम कादिर के साथ महल के भीतर हो गया।

गुलाम कादिर ने किले में आने जाने वालों का कठोर नियन्त्रण किया और सबसे पहले छिपे हुये खजानों और लुकी-छिपी हुई शहजादियों और बांदियों की खोजबीन करवाई। प्रधान हिजड़ा इस अनुसंधान मे उसका सहायक हुआ।

गुलाम कादिर ने एकान्त मे उससे पूछा, 'वह शहजादी कहां है ख्वाजा साहब ?'

उसने उत्तर दिया, 'महल मे। मगर हुजूर से मेरी अर्ज है कि जो काम पहले करने के हैं उन्हें पहले कर डालें।'

'तुम जो कुछ कहोगे मैं वही करूँगा' गुलाम ने कहा, 'लेकिन एक बात बतलाये देता हूं—मैं किसी भी आवाज को अपनी रूह की आवाज के मुकाबिले मे बड़ा नही मानता। जब मैं अकेले मे थोड़ी देर के लिये बैठ जाता हूँ तब मुझे कुछ सुनाई पडने लगता है. शुरू मे खुसफुस सा फिर साफ साफ। मैं उसी आवाज के हुकुम पर काम कर रहा हूँ। मुझे इलहाम होता है।'

हिजड़ा अपने शरीर को फड़फड़ाकर बोला, 'मैं बलायें जाऊँ, मेरी आवाज हुजूर की आवाज की खिदमत करेगी।'

'कह डालो।'

'हुजूर हमारे एके के नुमाइन्दे हैं। इसके लिये करोड़ों रुपया चाहिये। महल मे अरबों रुपये के बेश कीमती जवाहर छिपे पड़े हैं। उन्हें हाथ में करके लाखों आदमियों की फौज बनाकर निकल पड़िये। पठानो, मुगलो और तुर्कों से जो परगने और मौजे छीन लिये गये हैं उन्हें वापिस करने का फरमान जारी कर दीजिये और फिर निकल पड़िये सारे हिन्दुस्थान की फतह के लिये।'

'तुम्हारा मतलब जिहाद से है न ?'

'हुजूर का ख्याल बिलकुल सही है।'

'ऐसा ही करूँगा। वे जवाहररात कहाँ हैं ?'

'बादशाह, शहजादों, बेगमों और शाहजादियो को मालूम है। शायद कुछ बांदियो को भी मालूम हो। इन पर थोड़ी-सी मार पड़ी और उन्होंने भेद उगला। पहले जिहाद की तैयारी करिये। बादशाह को और बड़े शाहजादे अकबरशाह को उसका सरगना बनने के लिये कहिये। वे मन्जूर करेंगे। मन्जूर करते ही रुपया मांगिये। इनकार जरूर करेंगे फिर उनकी जरा गत बनाई कि रुपया सामने आया।'

'मेरे भीतर से भी मुझमें कोई यही कह रहा है। और शाहजादियां अपने आप इस तलाश के सिलसिले में हुजूर के सामने आयेंगी।'

'मेरे पठान सरदारो को उनकी है भी जरूरत।'

'मेरे मातहत हिजड़े हुजूर की मदद करेंगे। वे सब शाहजादों और बेगमों से खार खाये बैठे हैं।'

गुलाम कादिर की उस 'आवाज' ने भीतर ही भीतर कहा, 'तुमको इसी बादशाह और इन्ही शाहजादे और शहजादियो के कहने पर हिजड़ा बना दिया गया और जीवन के आनन्द से हीन कर दिया गया। सबसे पहले वह जिसने गिनकर ग्यारह जूते सिर पर मारे थे!'

प्रधान हिजड़े की 'खिदमती रूह' की आवाज ने भी भीतर कहा—तुम्हारे मा बाप ने इन्ही कमबख्तो की सेवा के लिये जन्म भर तरसने के लिये हिजड़ा बनाया था।

गुलाम कादिर की आखें भयानक हो गई। बोला, 'ख्वाजा साहब, मैं कहरे खुदा हूं। बादशाहों, शहजादो और शहजादियों ने बहुत अर्से से मुफ्त का माल खा उड़ा रखा है। अब जम्हूरी सल्तनत के कायम करने का वक्त आ गया है। इनकी खाक पर ही यह सल्तनत कायम होगी।'

हिजड़े ने बड़ी गम्भीरता के साथ कहा, 'आमीन। हुजूर जम्हूरी सल्तनत कायम करें, और उसकी कायमी का पहला जल्सा आज हो।'

गुलाम आंखों को नशीली-सी बनाकर बोला, 'हिन्दुस्थान को इस बादशाही बुरी बीमारी से साफ करने के लिये ही मैं पैदा हुआ हूँ। शाहआलम को दीवानखास में लेकर आ जाओ।'

हिजड़ा बादशाह के पास गया। महल में तरह तरह की खबरें उड़ रही थीं—सल्तनत जम्हूरी—जनसत्ता कायम होगी, बादशाह सपरिवार मौत के घाट उतारा जायगा, स्त्रियों की बेइज्जती की जायगी, सर्वस्व का अपहरण होगा, महलों में सिपाही रहेंगे! बादशाह बहुत भय-त्रस्त था।

हिजड़े ने विकल स्वर में कहा, 'जहांपनाह बड़ी मुसीबत सिर पर आ रही है।'

'क्या करूं भाई मेरे? कोई नहीं दिखता जिसका सहारा पकड़ूं। वे सब बहुत जालिम हैं। कैसे बचूं?'

'बाहर तो हुजूर किसी तरह जा नहीं सकते, बहुत ही सख्त पहरा पठानों और मुगलों का है। गुलाम कादिर बहुत संगदिल आदमी है। वह चाहता है मुसलमानों का बहुत बड़ा जत्था बनाया जावे। जहांपनाह और शाहजादे उसके नुमाइन्दे बनें।'

'एँ! अच्छा!!'

'हां जहांपनाह। यह ख्याल बहुत बढ़िया है। हुजूर को कोई बादशाह कहे या हम सबका नुमाइन्दा, बात एक ही है। इस मसले को तै करना है।'

'कोई हर्ज नहीं।'

'गुलाम कादिर कहरे खुदा है जैसा कि वह अपने आपको कहता है। अन्देशा है कहीं महल में ही कुछ से कुछ न कर बैठे।'

बादशाह इस संकेत के भीतर निहित संकट को समझ गया। बरसात थी, ठंडी हवा चल रही थी, परन्तु उसे पसीना आ गया और कल्पित विभीषकाओं के मारे आंखों से तारे छिटक पड़े।

'गुलाम कादिर अभी क्या कर रहा है?' उसने पूछा।

हिजड़े ने बतलाया, 'वह और उसके साथी बेहिसाब शराब पी रहे हैं।'

बादशाह फिर कांपा। कांपते, फटे हुये स्वर में पूछा, 'क्या करना चाहिये?'

हिजड़े ने योजना बतलाई, 'माधव सिन्धिया आगरा में पड़ा हुआ है। उसे जहांपनाह फौरन लिखें। वह उधर आगरा से चलेगा इधर गुलाम और इस्माईल लड़ाई के लिये निकल पड़ेंगे। दोनो मूजी कट मरेंगे फिर अपने लोग जहापनाह और शाहजादो की नुमाइन्दगी मे आसानी के साथ बढ जायेंगे। गुलाम कादिर और माधव सिन्धिया वाली लड़ाई मे जो हारेगा वह मरेगा और जो जीतेगा उसे हारा हुआ समझा जाना चाहिये।'

बादशाह ने इस सलाह को तिनके का सहारा समझकर मान लिया। माधव जी के नाम पत्र लिख दिया। प्रश्न उठा, पत्र पहुँचेगा कैसे माधव तक ? नाजिर ने जिम्मा लिया। पत्र को यत्नपूर्वक अपने पास रखकर नाजिर ने कहा, 'जहापनाह दीवानखास मे तशरीफ ले चलें।'

घबराये हुये बादशाह ने बेबसी मे हाँ का सिर हिलाया।

(११९)

जिहाद के लिये दीवानखास में अधिवेशन हुआ। बादशाह का एक लड़का जिहाद का नेता बनाया गया। बादशाह के नेतृत्व में जनतन्त्र का चलाना तै पाया। फिर रुपया मांगा गया। शाहआलम ने थोड़ा-सा दिया। पर उतने से जिहाद और जनतन्त्र कितने दिन चल सकता था? मुहम्मदशाह की विधवा बेगम शाहआलम से बहुत जलती थी, क्योंकि गिहाद द्वारा अहमदशाह के मारे जाने पर, जो मुहम्मदशाह का लड़का था, आलमगीर और फिर शाहआलम बादशाह बनाये गये थे। यह बेगम बुढ़ापे में और भी अधिक प्रतिहिन्सा पूर्ण हो गई थी। उसने गुलाम कादिर को बारह लाख रुपये देने का वचन दिया। शर्त रखी शाहआलम को गद्दी पर से उतार कर अहमदशाह के लड़के बेदारबख्त को बादशाह बनाने की। उसने यह भी कहलवाया कि शाहआलम के पास अरबों रुपये के हीरे जवाहर है!

जब शाहआलम ने और अधिक रुपया देने से विवशता प्रकट की, तब गुलाम और इस्माईल ने बादशाह को तख्त से उतार दिया। उसको, उन्नीस लड़को समेत, कैद मे डाल दिया, बेदारबख्त को तख्त ताऊस की नकल पर बिठला दिया। दीवानखास मे इस्माईल के साथ बैठकर उत्सव किया और जनतन्त्र की स्थापना के प्रारम्भ समारोह में 'हयात-बख्श' नामक निकट के उद्यान में रात भर जशन किया जिसके हल्ले को सुन-सुन कर पास लगे हुये भवन में हरम की स्त्रियां रोती चीखती रहीं।

पठानों ने महल मे लूटमार शुरू करदी, परन्तु जिन करोड़ों की बात गुलाम कादिर ने सुनी थी वे नहीं मिले।

गुलाम कादिर ने हिजड़ों के नाजिर को डाटा फटकारा। उसने अपनी बला टालने के लिये कहा, 'हुजूर ने अभी सब तरकीबों का इस्तेमाल ही कहां किया है? यह चिट्ठी लीजिये जो शाहआलम ने उस

काफिर माधव सिन्धिया को लिखी थी। मैंने इसे नहीं जाने दिया। वक्त पर काम में लाने के लिये रखे रहा।'

पत्र को पढ़कर गुलाम कादिर आग बबूला हो गया।

बोला, 'मेरी रूह, मेरे बाबा नजीबखां की रूह, मेरे वालिद जाबिताखां की रूह पुकार रही है—अब वक्त आ गया है काम करने का।'

हिजड़े ने समर्थन किया।

गुलाम कादिर तख्त पर जा बैठा। शाहआलम को पकड़वा बुलाया और बगल में बिठला लिया। अपना हुक्का मंगवाया और बेतकल्लुफी के साथ पीने लगा।

साठ बरस के उस भयत्रस्त बुड्ढे की गर्दन में हाथ डालकर हुक्का पीते पीते बोला, 'क्या मेरा नाम सुना है तुमने? मेरा नाम है कहरे खुदा। याद है तुमने मेरे बाप के साथ, पठानों के साथ और मेरे साथ क्या सलूक किया था?'

मारे डर के थरथर कांपते हुये शाहआलम के मुँह से बोल नहीं फूटा।

उसने हुक्के का एक कश खींचकर शाहआलम के मुँह पर फूंका। कहा, 'बोल भी यार मेरे! चुप रहने से कैसे काम चलेगा?'

शराब के ज्वार के कारण गुलाम की आंखें बाहर निकली पड़ रही थीं। बादशाह और भी सहमा। गुलाम कादिर ने कड़ककर आज्ञा दी, 'बुड्ढे को धूप में बिठलाओ।' शाहआलम धूप में बिठला दिया गया।

जब बार बार 'छिपाई हुई' धन सम्पत्ति की मांग की गई, शाहआलम ने उत्तर दिया, 'जो कुछ गांठ में था सब दे दिया। अब क्या बाकी को मैंने अपने पेट में छिपा रखा है?'

'हो सकता है,' मदमत्त रुहेले ने कहा, 'पेट में छिपा हो सकता है। उसको चिरवाकर देखूंगा। भेज दे खबर उस लंगड़े सिन्धिया को!'

इसके बाद गुलाम कादिर ने निर्दयता की हद कर दी—बादशाह की आंखों में सूजे ठुकवाई और छुरे से अपने हाथों बादशाह की एक आंख

निकाल दी। उसके हर्ष का भी ठिकाना न था जब उसने दरबार के चित्रकार को आंख निकालने के समय का चित्र बनाते जाने की अत्यन्त भीषण और नृशंस आज्ञा दी।

रोते कलपते तड़पते शाहआलम ने कहा, 'नाजिर को, हिजड़ों के नाजिर को, छिपे हुये खजाने का पता होगा। उसके पास खुद का भी बहुत है।'

बादशाह को भूखो-प्यासो मरने के लिये छोड़कर गुलाम नाजिर के पीछे पड़ा। उसने हाथ नहीं धरने दिया, परन्तु जब गुलाम ने उसको टट्टीघर में बन्द करके धमकी दी, 'तुम्हारे मुह मे मैला भरवाता हूं अभी,' तब नाजिर ने पांच हजार अशर्फियां, चालीस हजार रुपये और बहुत से हीरे-जवाहर दिये। परन्तु छिपे हुये खजाने का उसे भी पता न था। इसके उपरान्त उसने बेदारबख्त को भी पीटा—जिसे बादशाह बनाया था! अब स्त्रियों की बारी आई। उसने मुहम्मदशाह की वृद्धा विधवा को भी नहीं छोड़ा। भूखो प्यासो मारा और अपमानित किया। फिर दासियो के ऊपर अत्याचार किये। शहजादियां और अन्य हरम-सुन्दरियां एक तहखाने में जा छिपी थीं। इनके लिये वह लालायित नही था। पहले खजाना हाथ में कर लेना चाहता था। अत्याचार पीड़ित दासियों ने बतला दिया। लगभग २५ करोड़ रुपये के हीरे जवाहर उसे मिले। अब उसकी 'रूह' ने उसे आवाज दी,—'शहजादी जेबुन को ढूंढ़ो!'

(१२०)

शाहआलम अपने हरम को नई नई सुन्दरियों से भरते रहने मे किसी बादशाह या सम्राट से पीछे नही रहा था।

ये सब तहखानो मे मिल गईं। शहजादियां भी।

मोती महल मे रात के समय गुलाम कादिर ने अपने दस बारह शराबी साथियो के सामने शहजादियो मे से दो को पकड़ बुलाया। बुर्कों में थर थर काप रही थीं। उनके चेहरे उघाड़े गये। उनमे से एक वह थी जिससे गुलाम कादिर को बहुत दिन पहले ग्यारह जूते लगवाये गये थे। दोनो पीली पड़ गईं।

गुलाम ने कहा, 'तुम्हे जूते तो नहीं लगवाऊंगा, पर तुम्हारे मौजूदा खामिन्द से छुट्टी दिलाकर तुम्हारी शादी कर दूंगा।'

शहजादियां बिलबिलाईं, रोईं, गिड़गिड़ाईं, परन्तु गुलाम तो पिशाच था। ऊपर से शराब का मद। उसने ऐसे अवर्णनीय प्रश्न किये कराये कि सुनकर उस महल के पत्थर कांप उठे होगे। फिर शहजादियो पर अत्यन्त बर्बर अत्याचार ढहवाने वाला ही था कि नंगी कृपाण लिये मन्यारसिंह आ गया। इसने गुलाम के अनेक बार प्राण बचाये थे।

बोला,—'हुजूर, मैं और मेरे सारे सिक्ख साथी पहले मारे जायेंगे तब इन स्त्रियो के साथ अत्याचार किया जा सकेगा।'

उस समय दिल्ली का किलेदार मन्यारसिंह था। गुलाम उससे डरता था और उसका आदर भी करता था। गुलाम और उसके साथियो को रुकना पड़ा। मन्यारसिंह सिसकती शहजादियों को सुरक्षा के स्थान में ले गया।

इसके उपरान्त गुलाम का मन लूटपाट की ओर दौड़ा। महल मे कुछ हाथ लगता न दिखा, जुमा मस्जिद को गुम्बद के सोने पर लालच गई। हरम की अन्य स्त्रियों का ध्वन्स कराने के बाद दूसरे दिन जुमा मस्जिद पर जा पहुचा। एक गुम्बद का सोना निकाल पाया था कि मान्यारसिंह फिर आ कूदा।

'हुजूर, यह क्या ?'

गुलाम कादिर ने सहमकर उत्तर दिया,—'शाहजहा बादशाह ने गरीबो का रुपया खीचकर गुम्बदो पर सोने की शकल में चढ़ा दिया था, मैं उतार रहा हूँ।'

मन्यार ने कहा,—'यह धर्म, मजहब की निशानी है। इसे मत छुइये। चलिये किले मे।'

गुलाम शराब पिये था। हठ किया,—'मजहब का वास्ता रूह से है। इनकिलाब ने रूह बदल दी, इसलिये मजहब मे भी तबदीली होगी।'

'सारा शहर और इलाका खिलाफ हो जायगा। बना बनाया काम बिगड जावेगा', मन्यार ने समझाया।

गुलाम के हठ मे थोडी-सी क्षीणता आई, परन्तु नशे की लहर ने फिर ठोकर दी।

बोला,—'पहिले पठान हमारे साथ हैं और सिक्ख भी रहेगे। जम्हूरी सल्तनत सिक्खों और पठानों की होगी, मार दो मुगलों और मराठों को।'

मन्यार ने हाथ पकड लिया। कहा,—'हमें भागने तक की राह नहीं मिल सकेगी। चलिये, यहा के सब लोग उस लगड़े मराठे से जा मिलेंगे।'

गुलाम ने हठ छोड़ दिया। मन्यारसिंह के साथ चला गया। मार्ग में उसने शराब में डूबी अपनी योजना सुनाई,—'मराठों को बेभाव पीटेंगे। उनसे निबट कर फिर कभी बाकी गुम्बदें देखी जायेंगी।'

(१२१)

लूट के बटवारे मे गुलाम कादिर की इस्माईल बेग से अनबन हो गई। लड़ाई हो पडी। गुलाम पकड़ लिया जाता, परन्तु मन्यार के सिक्खो ने जो दिल्ली आक्रमण मे उसके भाड़े पर थे, बचा लिया। इस्माईल गुलाम का परित्याग करके माधव जी शरण मे गया। वे उस क्रूर कपटी का अधिक विश्वास नही करते थे। उसे तुरन्त दूर दिशा मे भेज दिया।

माधव को बादशाह और शाही महल की पूरी दुर्गति का समाचार आगरे मे मिला। शरण दान के लिये निर्बल, वृद्ध, अत्याचार पीड़ित शाहआलम की लिखी हुई पुकार उनके पास आई। एक बडी सेना के साथ उन्होने रानेखां को दिल्ली भेजा और मार्गों की रक्षा करते हुये स्वय पीछे पीछे, धीरे धीरे दिल्ली की ओर बढ़े उनके मराठा सैनिको ने विद्रोह-हठ नहीं किया।

विपद-ग्रस्त माधव की बुद्धि आपत्काल मे सुविधाओ, सुलझी हुई योजनाओ और सुफलदायक साधनो का सृजन करने में समर्थ थी, किन्तु निरापद, विजयी और निर्बाध माधव की बुद्धि चूक खा गई। उन्होने सोचा कि जिन विदेशियो—तुर्कों ईरानियो—को जागीरो जमींदारों से अलग किया था उन्हे जागीरें जमीनें फिर लौटा दी जावें। वे उस समय उस किसानों को भूल गये जिन्हें जागीरदारी और जमीदारी की चक्कियां दिन रात पीसा करती थी।

रानेखा के पहुचने पर गुलाम कादिर दिल्ली से लूटी सामग्री लेकर भागा। कुछ शाहजादो को कैद कर ले गया। रानेखा ने बादशाह और शाही परिवार के बचे-खुचे नर-नारियों को कैसे छुटाया और उनके लिये खाने-पीने इत्यादि की सुविधायें सुलभ कर दीं। उसने माधव के अनुरोध के अनुसार मस्जिद मे शाहआलम के नाम का खुतबा भी पढ़वाया।

अब पड़ा रानेखां गुलाम कादिर के पीछे। वह पंजाब की ओर भाग रहा था। साथ में लूट खसोट का बोझिल सामान और कैद में शाहज़ादे! भार पर भार!! शाहज़ादों को काट डालने के लिये तलवार लेकर दौड़ा। मन्यारसिंह फिर बीच में आ पड़ा। 'कैदी नहीं मारे जा सकते।' मान्यरसिंह ने गर्दन झुका कर प्रतिवाद किया,—'तलवार पहले मेरी गर्दन पर।'

शहज़ादों को छोड़ना पड़ा।

रुहेलों को विकट दण्ड देते हुये रानेखां एक रात गुलाम कादिर पर जा टूटा और उसे पकड़ लिया। बोला,—'अब लिया मैंने अपने देश के लिये पानीपत का बदला!' मन्यारसिंह भी पकड़ा गया।

दिल्ली आने पर रानेखां ने गुलाम कादिर के हत्यारे साथियों को कठोर दण्ड दिया, उसके अन्य सहयोगियों को हलका। मन्यारसिंह छोड़ दिया गया।

गुलाम कादिर रानेखां के सामने लाया गया।

कुछ विनती के उपरान्त गुलाम ने पूछा,—'अब मेरा क्या होगा?'

रानेखां ने उत्तर दिया,—'जो कुछ तुम सरीखे पापियों का होता है वही होगा।'

'मुसलमान होकर ऐसा मत कहो। आप भी पठान हैं। मुझे छोड़ दो तो जो कुछ कहोगे दूंगा।'

'मुसलमान नाम को नापाक मत कर और न पठान नाम की बेइज्जती, ओ कमीने। मैं सच्चा पठान हूं। तुम लोगों सरीखा लुटेरा नहीं।'

'मेरा जाना हुआ बहुत रुपया पैसा यहां वहां है। माधव जी को और आपको भी मिलेगा।'

'जब तेरा दादा नजीब हिन्दुस्थान में आया, नंगे पांव आया था। इस देश का खून बहा बहाकर तुम लोगों ने जो दौलत इकट्ठी की है वह इसी देश की है। हमारे प्रधान सेनापति जो आज्ञा देंगे वह होगा।'

गुलाम कादिर माधव जी के पास भेजा गया। वे इस समय मथुरा में थे। उन्होंने गुलाम को कैद में आराम के साथ रखा! आशा की कि फुसलाते पुचकारने से वह करोड़ों का लूटा माल दे देगा!! फिर न्याय किया जायगा!!! निरापद और विजयी माधव की यह दूसरी भूल थी।

गुलाम कादिर के साथ किये गये इस बर्ताव का समाचार जब बादशाह के पास पहुँचा उसने लिख भेजा,—'ऐसे पापी को रुपये के लोभ में जो इतना आदर दे रहे हो तो मैं बादशाहत से इस्तीफा देता हूँ और हज करने मक्का शरीफ जाता हूँ।'

अब माधव को अपनी भूल समझ में आई। वे गुलाम कादिर को दण्ड देने की बात सोच ही रहे थे कि उनके क्षुब्ध सैनिकों ने स्वयं दण्ड दे दिया। उनके सामने वह लाया ही नहीं गया। उनके कुछ नायकों ने गुलाम को पेड़ से बाँधकर कुत्तों से नुचवाया, फड़वाया। उसकी मृत्यु अत्यन्त रोमांचकारी रूप में हुई। उसके शव की भयानक दुर्गति हुई। कुत्तों और स्यारों से कुछ भी नहीं बचा। सैनिक केवल उसकी आँखें बादशाह के पास भेज सके।

(१२२)

रानेखां ने दिल्ली पर माधव जी का झंडा दिया। दिल्ली पहुँच कर माधव जी ने बादशाह और उसके परिवार को सान्त्वना दी। होलकर के साथ पूना से भेजी हुई सेना चौदह महीने में अब आई। अलीगढ का किला उनके हाथ में कुछ समय उपरान्त आ गया।

माधव ने सबसे पहले दिल्ली नगर की अव्यवस्था मिटाई। इसके बाद गुलाम कादिर के अधिकृत प्रदेश का प्रबन्ध किया।

शिहाबुद्दीन घूमता भटकता हुआ फिर भरतपूर के जाट राजा के आश्रय में पहुँच गया था माधव के पुनरोत्थान का समाचार पाकर उनके मन में फिर पुरानी लालसायें जागीं। शायद दिल्ली का प्रधान मन्त्रित्व या उसके निकट का कोई ऊँचा पद फिर मिल जाय। गुलाम कादिर ने अपने पतन को इतने प्रचण्ड वेग के साथ बटोरा था कि शिहाब उसकी योजनाओं में अपने को न संजो सका। वह माधव से दिल्ली में मिला। अतिथि बनकर चाहे जहां अनामन्त्रित भी पहुंच जाने का उसे अभ्यास हो गया था।

माधव में आत्म-नियन्त्रण अब और भी अधिक बढ़ गया था, परन्तु शिहाब के आने पर वे कुछ विचलित हो गये। तो भी उन्होंने शिष्टाचार का बर्ताव किया।

शिहाब ने कहा, 'आपकी जीत ने इन जालिम रुहेलो को ठिकाने से लगा दिया है, हिन्दू और मुसलमान, दोनों, का आपको मुखिया बना दिया है पटेल साहब। इस बड़े मौके का सही इस्तैमाल करना अब आपके हाथ में है।'

'किस तरह मीर साहब?' उन्होने पूछा।

'मुसलमान रईसों के बहुत से पुराने खानदान है उनको अपना लीजिये। इन खान्दानियों का आम मुसलमानो पर बहुत असर है।'

'और उन फ़क़ीरों का कितना है मीर साहब?'

'अब तो नहीं के बराबर है पटेल साहब। ये भड़काने वाले गरम गरम और चिकनी चुपड़ी बातें सुनाकर सीधे सादे आदमियों को थोड़े दिन के लिये ही गुमराह कर सकते हैं। फिर उनको मालूम हो जाता है *कि कौन क्या है ?'*

'अब मालूम है उनको मीरसाहब कौन कहां है ?'

'मालूम तो जरूर होना चाहिये। ये लोग गुलाम कादिर और इस्माईल के बहकावे में आ गये जो उन्हें खाई खड्डों में हाक ले गये। अब उनको मालूम हो गया है कि बेमर्यादा वाले उमूल हवा में उड़ते रहते हैं, ज़मीन पर चलने के लिये उनके पैर नहीं होते।'

'जान तो कुछ ऐसा ही पड़ता है।' शिहाब ने देखा उड़ान छू बातों से काम नहीं चलेगा। उसने बिना घुमाये फिराये स्पष्ट कहा, 'मैं चाहता हूँ आपके किसी काम आऊं। कुछ काम बतला दीजिये तो करूं ?'

माधव जी को वह रात और उसके उपरान्त के प्रातःकाल का स्मरण हो आया जैसे अभी अभी सब कुछ हुआ हो—'आह गमये गम्रा बेगम !' इसने मारा हो या अपने आप मरी हो, परन्तु पकड़ यही ले गया था ! और मैं उसके लिये कुछ न कर पाया !! असमर्थ नपुंक-सा रह गया !!! वह बुलबुल अपने चमन के साथ खाक हो गई !!!!

माधव की आंख में आंसू आने को हुआ। शिहाब ने अनुमान किया माधव बादशाह की दुर्गति पर हिल गया है बिलकुल बनावटी सहानुभूति के साथ बोला, *'खुदा की मर्जी थी, जो होना था हो गया।'*

ऐसे दुष्ट के मुंह से खुदा की दुहाई ! *माधव का आंसू* वहां का वहीं जलकर रह गया।

गले को साफ करके माधव ने कहा, 'खुदा का नाम अकेले में बैठकर लें तो ज्यादा अच्छा होगा। मैं कुछ नहीं कर सकता। आप चाहें तो बादशाह से स्वयं कह देखें।'

माधव की बात में नाहीं पाकर वह चला गया।

(१२३)

बादशाह का दरबार हुआ। पेशवा के लिये और उसके पुत्रसंतान के लिये 'वकील मुतलक' और 'मुख्तार' का पद तथा माधव के लिये पेशवा के स्वामी नवाब का पद बादशाह से प्राप्त हुआ। लम्बे चौड़े फरमान लिखे गये। पेशवा और माधव के लिये शाहआलम ने बहुमूल्य खिलतें दीं। मुगल सत्ता के प्रतीक—माही मरातब, झण्डे मोरछल, ढाल, तलवार कलमदान इत्यादि प्रदान किये गये। दूसरा फरमान था गोवध के बिलकुल बन्द किये जाने के विषय में।

माधव ने दिल्ली और दिल्ली के बादशाह के केवल नाम की क्षीण ओट में अपने आदर्शों को कार्यान्वित करने का अवसर पा लिया। वे उस दिन हर्षमग्न थे। उन्होंने दिल्ली निकटवर्ती रिवाड़ी प्रदेश में इस्लाईम बेग को एक खासी बड़ी जागीर लगा दी! विरद युग के माधव का स्पष्टदर्शी विवेक दरबारी सफलता की घड़ी में फिर भूल कर गया। इस्माईल पर नियन्त्रण बनाये रखने के लिये उसके पड़ोस में उन्होंने रानेखां को भी एक जागीर लगाई।

तुकोजी होलकर ने यह सब खुली आंखों और धधकते हृदय से देखा।

इस्माईल ने अपनी जागीर पर जाते ही जयपुर जोधपुर के अधीशों का प्रोत्साहन पाया। जम्हूरियती संगठन का केन्द्र दिल्ली से हटकर मेवात में पहुंच गया जहां इस्माईम बेग की जागीर थी। इस्माईल ने जयपुर जोधपुर को कड़े बने रहने की मन्त्रणा दी और अहमदशाह अब्दाली के लड़के तैमूरशाह को भारत के ऊपर आक्रमण करके अपने संगठन के मनोनीत बादशाह को तख्त पर बिठलाने के लिये लगातार लिखा-पढ़ी की!

राजपूताना के राजा माधव के दक्षिण से दिल्ली आने जाने वाले दस्तों पर छापा मारते रहते थे। भोपाल के नवाब को भी इसमें उन्हें गुप्त सहायता मिलती थी।

माधव ने देवाई फ्रांसीसी द्वारा सुधारी सिखाई बन्दूक संगीन वाली पल्टनों का काम कई लड़ाइयों में देख लिया था। मराठा सवारों की बिजली जैसी तेजी और अनुशासन हीनता को भी वे जानते थे। उन्होंने अपनी सेना को सुधारने और बढ़ाने का निश्चय किया। देवाई को बुलाया।

उससे कहा 'जयपुर जोधपुर इत्यादि में से किसी से भी लड़ने के पहले सैनिक भर्ती करो। दस सहस्र सैनिकों की पल्टनें तो तुरन्त ही बनाओ, बिलकुल यूरोपियन ढङ्ग पर।'

'इनको वेतन कहा से दिया जायगा?' उसने पूछा।

उन्होंने उत्तर दिया, 'दुआब के इलाके को मुगलों और तुर्क दुरानियों को वापिस करके मैंने भूल की थी। मैं तुम्हारी इस नई सेना के व्यय के लिये अलीगढ़ का क्षेत्र लगाता हूँ और तुम्हारा वेतन चार हजार रुपया मासिक नियुक्त करता हूँ। यह दस हजार तक पहुच जायगा।'

उसने स्वीकार किया।

देवाई का सेनानी मत यूरोपियन फौजी सिद्धान्तों के एक स्तर के ऊपर दूसरे स्तर से चिपटकर जुड़ा हुआ था। इस मत की परीक्षा उसने रूस, तुर्की, ईराक इत्यादि देशों की सरकारों के युद्ध-संचालन में दी थी और उसने मत संग्रह किया था। इस मत को उसने छील छालकर, रेत रासकर बहुत चमकीला रूप दे दिया था।

उल्लास मग्न होकर बोला, 'मैं कठोर अनुशासन और संयम की आंचों मे मराठा लोहे को वज्र सा बना दूंगा। आपने एक बार कहा था, लोहा आग की ज्वाला को पसन्द नही करता जो उसकी शकल को बदल देती है। शुरू मे सैनिक संयम की आंच को नापसन्द करेंगे, परन्तु शीघ्र ढल जायेंगे।'

माधव ने मुस्कराकर कहा, 'मैं तुम्हें पूरा अधिकार देता हूं और जनरल पद प्रदान करता हूं, परन्तु एक बात का भ्रम है कहीं अनुशासन

और सयम इतना गहरा और सचे की तरह कठोर न हो जाये कि वैयक्तिक उत्कृष्टता मे ही कमी आ जावे।'

इस बात ने उसके पके पकाये मत को थोड़ी-सी ठेस पहुँचाई। बोला, 'हमारे सिपाहियो मे लूटमार, बगावत इत्यादि की भावना बहुत भरी हुई है। इसका दमन अनुशासन से ही हो सकता है।'

'मैं कहता हूँ अवश्य करो, परन्तु सिपाही के हृदय पर तीन बातें अंकित करते रहो—वह हेतु जिसके लिये वह लड रहा है उसे मालूम होना चाहिये, हेतु उसके लिये मोहक होना चाहिये, और हेतु ऊँचा होना चाहिये।'

'मैं समझ गया। इसका प्रयत्न करूँगा। मुझे हेतु भी बतला दिया जावे।'

'मैं अपने लिये कोई राज्य स्थापित नही करना चाहता। अपने को जनता के सुख का साधन बनाये रखना चाहता हूँ। मेरी इच्छा है सम्पूर्ण भारतीय रियासतों का एक संघ बने, उनमे व्यवस्था स्थापित हो। दिल्ली का बादशाह इस संगठित संघ का मुखिया रहे, पेशवा प्रधान संचालक, और हमारी सेना के मन से मुल्कगीरी का लोभ मोह निकल कर उनके मन मे दूसरा हेतु बिठला दिया जाय।'

'ठीक है। बाहर वालों के साथ नीति कैसी रहेगी श्रीमन्त ?'

'बाहर वालो को हम भारत से बाहर रखना चाहते हैं। अंग्रेजों को हमें निकालना है। मुझको भय है कि हम सबको ये लोग ग्रस लेंगे। अवध के नवाब को ऊपरी तड़क-भड़क देकर अधिकार और शक्ति अंग्रेजो ने अपनी मुट्ठी मे कर ली है। यही नीति उनकी सब रियासतों के साथ होगी। राजपूताना में उनके षड्यन्त्र चल ही रहे हैं।'

'आप क्षमा करें तो कहूँ—आप अंग्रेजों की सेना से कभी टक्कर मत लेना।'

'क्यों ?'

'क्योंकि हिन्दुस्थानियों को यूरोपियन रण-विज्ञान यूरोप के निरन्तर संसर्ग से ही मिलेगा। आज की बनी सेना और तोपें बन्दूकें कल पुरानी पड़ सकती हैं।'

माधव सोचते रहे। थोड़ी देर बाद बोले, 'तुम ठीक कहते हो जनरल। असल को इस नकल का मैं कभी अतिशय मूल्यांकन नहीं करूँगा। परन्तु शीघ्र ही हमारा जहाजी बेड़ा तैयार होगा, शीघ्र ही हम अपने युवकों को फ्रांस इत्यादि देशों में भेजेंगे। काम का आरम्भ कर दो।'

'पल्टनों में सब प्रकार के अच्छे युवक भर्ती करूँगा। राजपूत और जाट ज्यादा भर्ती करना चाहता हूँ।'

'करो, परन्तु किसी भी जाति विशेष की प्रधानता न रहे। ब्राह्मणों को भी भर्ती करो। मुसलमानों को भी।'

देबाईं के चले जाने पर एक जाट युवक आया। नाम उसने रामलाल बतलाया। शिहाब का पत्र लाया था। शिहाब भरतपुर में रहने लगा था। उसने युवक को अंगरक्षकों में भर्ती करने की सिफारिश की थी। आयु उसकी उन्नीस बीस के लगभग होगी।

माधव ने पूछा, 'क्या पढ़े हो?'

'फारसी, उर्दू और नागरी।'

'नागरी अर्थात् हिन्दी। तुर्की, अर्बी भी जानते हो?'

'जी नहीं।'

माधव को उस दिन का स्मरण हो आया जब मुनीसिंह ने आकर अपने पढ़ने-लिखने की बात सुनाई थी। उन्हें भ्रम हुआ—फिर कोई स्त्री तो नहीं आ गई छद्म वेश में। उनका भ्रम तुरन्त दूर हो गया। युवक की मूँछें निकल आई थीं और छाती सपाट चौड़ी थी गर्दन पहलवान की जैसी भरी हुई।

माधव ने उसे भर्ती कर लिया। कहा, 'तुमसे लिखने पढ़ने का भी काम ले लिया करूँगा।'

इस कृपा के लिये युवक ने कृतज्ञता प्रदर्शित की।

माधव ने रानेखां और इंगले को बुलाया। आने पर उन्हें नई सेना भर्ती की योजना सुनाई।

रानेखां ने कहा, 'मैं आ ही रहा था। इस्माईल बेग ने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया है। इन लोगों के संगठन ने उसकी जागीर में जोर पकड़ा है। होलकर ने इस्माईल को दबाने के बहाने मेरे इलाके में लूटमार की है।'

माधव शान्त स्वर में बोले, 'तुकोजी से छेड़ छाड़ लेना इस समय ठीक नहीं है। मराठे सैनिक लूटमार के लिये जहां एक बार आपे से बाहर हुये कि फिर मित्र शत्रु के अन्तर को नहीं देख पाते। सेना तैयार हो जाय तब देखा जायेगा। अभी शान्त बने रहो। राजपूताना की समस्या हल करनी है। पहला कदम इस्माईल बेग का दमन है। हमारा संकट उसी स्थल पर केन्द्रित है।'

सेनाओं को तैयार करके भेजने की योजना बना ली गई। तुकोजी को पेशवा की—अर्थात् नाना फडनीस की—आज्ञा थी कि माधव स्वतन्त्र होकर कोई बड़ा काम न करने पावे। तुकोजी भी इस्माईल के खिलाफ सेना लेकर गया।

लड़ाई तीन चार महीने चली। कहीं असाढ़ में जाकर समाप्त हुई। ठीक समय पर तुकोजी ने इस्माईल से षडयन्त्र करके युद्ध बन्द कर दिया। देवाईं की पल्टनों और रानेखा, इंगले इत्यादि मराठा सरदारों के सवारों ने स्थिति संभाल ली। नहीं तो माधव की सेना का सर्वनाश हो जाता।

इस्माईल की बीस सहस्र सेना ने हथियार डाल दिये। इस्माईल कैद कर लिया गया और आगरा के किले में बन्द कर दिया गया।

जयपुर जोधपुर ने इस्माईल को सहयोग दिया था। देवाईं, इंगले और रानेखां राजपूताने की ओर गये।

जोधपुर के राजा ने देवाई को फोड़ने की कोशिश की। रिश्वत में अजमेर का इलाका देने का वचन दिया। देवाई ने अपना उत्तर भेजा, आप अकेले अजमेर का इलाका देकर मुझे बेईमान बनाना चाहते हैं। मुझे तो मेरे मालिक सिन्धिया ने जयपुर और जोधपुर की रियासतें भी दे दी हैं।'

घोर युद्ध हुआ। चार सहस्र वीर राठौर युद्ध में मारे गये। जयपुर थोड़े से प्रयत्न के उपरान्त दब गया। मेवाड़ ने भी अधीनता स्वीकार करली। साठ लाख रुपये जोधपुर को कर में देना पड़ा। जयपुर ने अलग दिया। इगले इस क्षेत्र का सूबेदार बनाया गया।

परन्तु इस क्षेत्र के एक अंक की वसूली का अधिकार संयुक्त रूप से होलकर और सिन्धिया को था। इस कार्य ने तुकोजी को प्रकट शत्रु के रूप में स्पष्ट कर दिया।

देवाई ने अपनी पल्टनों की सैनिक संख्या बीस सहस्र करदी। मथुरा से बुलन्दशहर जिले तक का क्षेत्र देवाई को 'तनखाह जायदाद' के नाम इस सेना के व्यय के लिये लगा दिया गया।

माधव के आदेश पर देवाई ने युगों से पीड़ित इस क्षेत्र को माल दीवानी और फौजदारी प्रबन्ध की व्यवस्था दी।

माधव जी को पूना से सूचना मिली कि नाना फड़नीस ने टीपू के विरुद्ध अंग्रेजों और निजाम को सहयोग देने का वचन दिया है। कारण था टीपू का असंख्य हिन्दुओं के साथ, अत्याचार और जबरदस्ती मुसलमान बनाने का प्रयत्न। सन्धि की शर्तें थीं, टीपू के आधे राज्य को अंग्रेजों, निजाम और मराठों के बीच सम भाग में बांट लेना।

माधव ने इस सन्धि का विरोध किया। उन्होंने नाना फड़नीस के पास अपना प्रतिवाद भेजा,—'जरा-सा ठहर जाइये। टीपू को हम लोग अकेले समझ लेंगे। इस समय इस युद्ध से अंग्रेज बहुत प्रबल हो जायेंगे। निज़ाम सदा के लिये अंग्रेजों के हाथों बिक जायगा, अंग्रेज अपने को भारत की मण्डलेश्वर शक्ति बनाने की चिन्ता में हैं। उनके नौकर प्रचण्ड

अर्थ-लोलुप हैं। खुल्लमखुल्ला यहा की सम्पत्ति सोख सोख कर विलायत लिये चले जा रहे हैं। उनके विलायती शासक भी इसी वृत्ति के हैं। ये लोग अपनी धूर्त नीति पर मुलम्मा चढ़ा कर काम ले रहे हैं। यह युद्ध उन्हें मण्डलेश्वर बनाकर रहेगा। फिर हम टीपू की आंशिक भूमि को लेकर क्या करेंगे ?'

इससे पहले उन्होने पूना में अंग्रेज रेजीडेंट के रहने पर भी आक्षेप किया था। उनका कहना था कि रेजीडेंट को मेरे पास रखा जाना चाहिये, अंग्रेजों की सन्धि मेरे साथ हुई थी, पूना स्वतन्त्र राष्ट्र की राजधानी है वहां अंग्रेज रेजीडेंट का रखा जाना अनुचित है।

माधव उत्तर का प्रबन्ध देवाई इत्यादि नायकों के हाथ में छोड़कर पूना की राजनीति को प्रभावित करने के लिये एक काफी बड़ी सेना लेकर चल पड़े। वे बहुत रुकते रुकते, आसपास के प्रदेशों को व्यवस्थित करते हुये बढ़े। वे जानते थे कि पूना पहुंचने की जल्दी करने से उत्तर की उत्तरोत्तर बढती हुई व्यवस्था में निर्बलता के आने का भय है। यह भी चाहते थे कि उनकी नई पल्टनें और भी संबद्धित और संगठित हो जायें, तब पूना पहुचे। वे जानते थे कि जल्दी करने से नाना के मन में आतङ्क और शङ्का का भय और अधिक बढ़ जायगा।

(१२४)

माधव जी नूराबाद मे कुछ समय के लिये ठहर गये। सन्ध्या के समय कुछ फूल लेकर गन्ना की समाधि पर गये। रामलाल अङ्गरक्षक साथ था। वह बाहर रह गया। माधव समाधि के अहाते मे चले गये।

माधव ने फूल अन्जलि मे लिये और आखें मूँद लीं। उनको कुछ दिखलाई पड़ा—जैसे गन्ना सामने खड़ी हो।

मलुल मधुर मुस्कान जो खिले हुये गुलाबी चेहरे पर छिटक रही थी, जैसे गुलाब के ढेर पर शरद के सध्या कालीन सूर्य की रश्मिया छुटक पड़ी हो। काले कुञ्चित केशो की एक लट ललाट पर और कुछ लटें कन्धों पर। मानो कह रही हों, उस घाट के युद्ध मे भीगे हुये अचेत गुनीसिंह को क्या आपने सचमुच जान लिया था? मेरे पास वह तम्बूरा न होता तो आप कैसे जानते कि यह दु.खिनी गन्ना बेगम है? आप की कविता को किसी और राग मे सुनाऊँ? मेरे गायन से आप थकते ही नहीं, और मैं तो भूल ही जाती हूँ,—'मो प्यारो माधव कहा, मोहि बताउ बिसेखि'—जिसको ढूंढती हूँ वह सामने है, फिर भी भूल भूल जाती हूं। वे मद भरी बड़ी बडी काली आखें कितने अनुराग में छलक पड़ी। जो बरोनिया अभी तक भौंहो को छू रही थी वे अब जुड़ गईं और उनमें भीतर से आकर यह क्या बिध गया? दो आसू! एं! यह क्या? उसने आसू पोछ डाले। आप क्यों द्रवित हो गये? आपके आदर्श! आपके आदर्श!! संभलिये!!! मैं आपकी सहायता के लिये ही तो आपके सामने आ जाती हूँ। मान जाइये नहीं तो दाढ़ी लगाकर गुनीसिंह बन जाऊँगी! फिर आप कहेगे—गुलाबो के ढेर पर भौंरे क्यों चिपका दिये? देखिये सामने—उत्तर और दक्षिण, पूर्व और पश्चिम को देखिये। उधर दिल्ली इधर पूना! उधर परदेशी संगठन को शका इधर नाना फड़नीस के षड़यन्त्रो का भय!

माधव ने आखें खोल दी। तरलता के कारण कब्र धुँधले रूप में दिखलाई दी। उस तरलता को दूर करने के प्रयास में दो आंसू कब्र के पत्थर पर जा पडे। उसके पत्थर पर खुदा था—आह् गमए गन्ना बेगम! माधव ने अंजलि के पुष्प चढा दिये। दो आसू तो उस पर चढ़ ही चुके थे। एक बार फिर आँखें बन्द करके उस सुहावने दृश्य के देखने की प्रतीक्षा की। परन्तु दिखलाई पड़ा— दिल्ली का षडयन्त्र, पूना का षडयन्त्र, अंग्रेजो का षडयन्त्र। माधव जी समाधि पर एक ललक भरी दृष्टि डालकर चले गये।

बाहर निकलते ही उन्होंने देखा रामलाल जाट निकटवर्ती मस्जिद के भीतर से निकल रहा है। उसके माथे पर धूल लगी हुई थी जैसे नमाज पढ़ने के समय धरती पर माथा टेका हो। उन्हें आश्चर्य हुआ। फिर उन्होंने आत्म संयम कर लिया, भीतर से मस्जिद को देखने गया होगा, दीवार से टकराने के कारण या धूल भरे हाथ के स्पर्श से माथे पर धूल का चिन्ह बन गया होगा। परन्तु चिन्ह तो सिर टेकने से बना जान पड़ता है। संभव है ऐसे स्थान की शाही मस्जिद मे नमाज ही पढ़ने गया हो, क्योकि बहुत से कायस्थ, खत्री और वैश्य नमाज पढ़ते हैं, कुछ तो रोजे तक रखते हैं!

माधव ने रामलाल से कोई प्रश्न नही किया। रामलाल उनको देखकर थोड़ा-सा अकचकाया था, परन्तु अर्दली होने के कारण भी तो अकचका सकता था। माधव जी ने सोचा।

(१२५)

उज्जैन में ठहरते हुये माधव जी दिल्ली से कूच करने के लगभग डेढ़ वर्ष पीछे असाढ़ में पूना पहुँचे। टीपू लड़ाई हार रहा था। अंग्रेजों के साथ सन्धि की चर्चा हो उठी थी क्योंकि वे ही इस त्रिकुटि-अंग्रेज, निजाम और मराठा—साझेदारी के बड़े भागीदार बन गये थे।

अंग्रेजों से सन्धि करने की इच्छा के साथ नाना के मन में एक कामना और उठी। उसके मन में माधव जी के विरुद्ध इतनी कड़ी गांठ पड़ गई थी कि उनके पूना पहुँचने के पहले उसने बम्बई-स्थित अंग्रेजों को माधव जी के दमन के लिये पल्टनें भेजने तक की याचना की थी। परन्तु माधव जी की दूरदर्शिता और सावधानी के कारण यह भीषण उत्पात नहीं होने पाया।

पहले वे पेशवा से नहीं मिले। पेशवा लगभग सत्तरह साल का लड़का था। पहले नाना से मिले। माधव जी का विचार उनके वार्तालाप से डगो आगे चलता था। वे जानते थे नाना को उलहने देने से कटुता ही बढ़ेगी, और कोई अच्छा परिणाम न होगा। उन्होंने आगे की बात ध्यान में रखकर नाना से योजनाओं के सिलसिले में कहा, 'टीपू से सन्धि करने में यदि यह ध्यान में रखा जावे तो कैसा रहे कि टीपू की शक्ति को नितान्त क्षीण न होने दिया जावे ?'

'जिसमें वह हिन्दुओं पर मनमाने अत्याचार करने की समर्थता बनाये रहे! जानते हो उसने कितनों को धर्मभ्रष्ट और पतित करवाया है ?' नाना ने क्षोभ के साथ उत्तर दिया।

'मैंने सुना है और मेरे मन में उसके प्रति बड़ा क्षोभ है। उसने गरीब ईसाइयों को भी बहुत सताया है, परन्तु बड़े भाई, इन राजनैतिक परिस्थितियों में जो आज हमारे सामने हैं, सोचना यह पड़ेगा कि किस काम को प्रथम महत्व दिया जावे और किसे द्वितीय। आप सरीखे विशाल प्रबुद्ध को मुझ सरीखे लोग क्या यह बतलावें कि हमारे सामने मुख्य और

प्रधान समस्या अंग्रेजों की है जो इतने प्रबल हो गये हैं कि यदि उनका तुरन्त निरोध नहीं किया जाता है तो वे टीपू के अत्याचारों से पीड़ित हिन्दुओं की संख्या की अपेक्षा सैकड़ो गुनी संख्या में हिन्दू-मुसलमानों को अपने पेट में समेट लेंगे ? जब हमारी स्वतन्त्रता चली जायगी, जब हम नितान्त लुञ्जपुञ्ज हो जायेंगे तब हम किसी की भी रक्षा न कर सकेंगे। टीपू सशक्त बना रहेगा तो अंग्रेजो से टक्कर लेता रहेगा। इसी बीच में हम निजाम का अड्डा मिटा देंगे। फिर अंग्रेजों से निबट कर टीपू सरीखे लोगों को दण्ड देने में कितना समय लगेगा ?'

'इस लम्बी योजना में मुझे महाराष्ट्र की रक्षा कहीं नहीं दिखलाई पड़ती। तुम्हें दिल्ली की रक्षा से अवकाश कहा है ? तुम उधर गुड्डे-गुड़ियों से खेल रहे हो इधर सब स्वाहा हुआ जा रहा है।'

मैं जो कुछ कर रहा हूँ सब स्वराज्य के लिये कर रहा हूँ, ऊपर के खेल के भीतर जो सार है उसे देख लीजिये।'

उत्तर के कितने हिन्दुओं की रक्षा की तुमने ? सुनता हूँ सेना मे रागड़े ही रागडे भर लिये हैं। ये करेंगे स्वराज्य का विस्तार ?'

'मैं अपने सेनानियों और सैनिको के मन पर स्वराज्य के आदर्श और हेतु बराबर बिठलाता रहता हू।'

'अर्थात अकेले अंग्रेजो के विरुद्ध घृणा उत्पन्न करते रहते हो। यह ठीक है कि राष्ट्र का निर्माण घृणा के ही आधार पर होता है; पर स्वराज्य का निर्माण अकेले अंग्रेजो के प्रति घृणा की भावना को पुष्ट करने से नहीं होगा, वरन अंग्रेजो और परदेसी मुसलमानो—दोनों—के प्रति उस भावना को दृढ करने से होगा।'

हिन्दुओं की। हिन्दू मुसलमानो से त्रस्त होकर डरने लगे हैं। लोग सोचते हैं तुम मुसलमानों का बहुत पक्षपात कर उठे हो।'

'जब तक हिन्दू डरेंगे उनकी रक्षा कठिन है। हमें हिन्दुस्थानी मुसलमानों को अपने मेल मे लाना ही होगा। सब मुसलमानों के दिलों में छुरिया नहीं हैं। हमको न तो उनसे डरना है जिनके हाथ में छुरी है और न उनसे जिनके दिल मे छुरी है। मैं मुसलमानों का पक्षपात नहीं करता हूँ, मैं उनको अपना कहलाने योग्य बना रहा हूं।'

नाना ने अपने क्षोभ को हँसी मे परिवर्तित किया। जोर की हँसी हँसकर बोला, फकीरों और कबरो की पूजा कर करके तुम मुसलमानों को बहुत शीघ्र अपना बना लोगे!'

नूराबाद में गन्ना की कब्र पर फूल चढाने की बात उनको स्मरण हो आई। समझ गये नाना को किसी ने समाचार दिया है। चेहरा लाल पड़ गया। थोड़ी देर चुप रहे।

कठोर आत्म नियन्त्रण करके बोले, किसी के सम्मान में पुष्पांजलि चढ़ाने को मैं पूजा नही समझता हू। मैं उस बादशाह का भी सम्मान करता हू जिसके हाथ में किसी प्रकार का भी बल नहीं रहा है। परन्तु वह पूजा नही है। वह परदेशी सगठन के विरुद्ध ढाल और अंग्रेजों के विरुद्ध तलवार है।'

'परन्तु उस ढाल और तलवार के बाधने वाले तुम अकेले कैसे बन गये?' नाना ने अपने कानों की बालियां हिलाते हुये पूछा।

माधव ने मुस्कराकर उत्तर दिया, 'नही तो। पूना के आधिपत्य को सबके ऊपर मानता हूँ। अपने राज्य के प्रति सामूहिक भक्ति में अटल विश्वास रखता हूँ। मैं हिन्दुओं के राज्य की नहीं हिन्दुओं की संस्कृति के राज्य की कल्पना करता हूँ और पूना को इतना दृढ़ बनाना चाहता हूँ कि यह कल्पना व्यवहार मे सम्भव ही नहीं, सहज भी हो जाय।'

उन दोनों में मतभेद बना रहा। माधव ने विषयांतर किया। बोले, 'पेशवा को पद और खिलत देने के अवसर के लिये विशाल समारोह किया जाना चाहिये। इसका व्यापक महत्व है।'

नाना फडनीस ने कहा, 'ऐसे नाटक से कोई भी लाभ नहीं। अभी तक जनता समझती है कि महाराष्ट्र एक स्वतन्त्र राष्ट्र है, स्वराज्य का प्रवर्तक, संचालक और सम्वर्द्धक। इस खेल का अब यह अर्थ लगायगी कि महाराष्ट्र और स्वराज्य दिल्ली के बादशाह के अधीन हैं, उसके केवल खिलौने।'

माधव ने कहा, 'जनता क्या यह नहीं समझेगी कि दिल्ली पूना का पर्याय हो गया है ?'

'या पूना दिल्ली का ?' नाना ने पूछा।

माधव ने तुरन्त उत्तर दिया, 'यह अपने अन्तर्निहित आदर्श पर निर्भर है।'

'जनता के लिये यह अतिशय सूक्ष्म है।' नाना बोला।

माधव ने कहा, 'जनता को सदादर्श और उसका सच्चा अर्थ समझाना अपना कर्तव्य है।'

मतभेद की आशंका से माधव ने ऋतु की चर्चा की,—'बादल घिर तो रहे हैं, परन्तु पानी कुछ देर में बरसेगा।'

नाना ने कहा, 'शीघ्र भी बरस सकता है। राजनीति की भांति ही वर्षा के सम्बन्ध में भी कोई निश्चित भविष्यद्वाणी नहीं की जा सकती है।'

माधव परस्पर शिष्टाचार के उपरान्त चले आये और पेशवा से मिले।

(१२६)

पेशवा को 'वकील मुतलक' का पद और खिलत भेंट करने के लिये माधव ने विशाल मण्डप पूना के पास ही सजवाया। यह खिलत उनके पास सात वर्ष रक्खी रही थी! अब कहीं उन्होंने उपयोग का अवसर प्राप्त कर पाया!! वे मूठा और मूला नदियों के संगम के निकट पड़ाव डाले थे जो वनवाडी से लगा हुआ था।

मण्डप की सजावट इतनी भड़कीली थी कि जैसी पहले कभी नहीं देखी गई थी। मण्डप के एक विशिष्ट ऊँचे स्थान पर दिल्ली के बादशाह का तख्त बनाया गया। उसको चकाचौंध देने वाली सजावट से अलंकृत किया गया। पेशवा के पद प्रदान का फरमान और खिलतें उस पर रखी गईं। महाराष्ट्र के बड़े बड़े सरदार इकट्ठे हुये। बड़ी भीड़ में जनता उस महोत्सव को देखने के लिये आई। मण्डप के बाहर वे हाथी, ऊँट, घोड़े इत्यादि रंग बिरंगे जरतारी और कारचोबी के रेशमी मखमली वस्त्रों से आभूषित खड़े थे जो बादशाह की ओर से पेशवा को नजर किये जाने वाले थे। पेशवा आया,—बालक माधवराव नारायण द्वितीय,—माधव बिलकुल सादे कपड़े पहने, बगल में एक पोटली दाबे हुये उसकी ओर बढ़े।

अभिनन्दन अभिवादन के उपरान्त माधव ने पेशवा से अनुरोध किया, 'श्रीमन्त अपने जूते खोल दें?'

पास खड़े हुये लोगों को आश्चर्य हुआ। नाना फड़नीस रोष में कुछ कहना चाहता था कि पेशवा ने पूछा, 'क्यों पटेल बुवा? क्यों?'

माधव ने अपनी बगल की पोटली खोलकर एक जोड़ी बढ़िया पूना वाला जूता पेशवा के सामने रखकर, उत्तर दिया, 'इस जोड़ी को पहनें श्रीमन्त, उतारा हुआ मुझको दें। उसे पोटली में दाबकर बगल में रखूँगा।'

बालक पेशवा को आश्चर्य हुआ। उसने फिर पूछा, 'क्यों पटेल बुवा? ऐसा क्यों कर रहे हो?'

'क्योंकि', माधव ने विनीत स्वर मे उत्तर दिया, 'मेरे पुरखे ने महान बाजीराव पेशवा के जोड़े को इसी प्रकार पोटली में बांधकर रखा था।'

नाना नीचा सिर करके चिन्तामग्न हो गया। भीड़ से 'ओफ !' की ध्वनि निकल पड़ी। सरदार सन्नाटे मे आ गये। पेशवा ने हर्षमग्न होकर अपने जूते उतार कर माधव के दिये हुये पहिन लिये और माधव ने उतरे हुये जूते पोटली में बांधकर बगल में रख लिये।

माधव ने आनन्द विभोर होकर कहा, 'श्रीमन्त महाराष्ट्र की स्वराज्यवृत्ति के प्रतीक हैं। मैं स्वराज्य का पुजारी और इस प्रतीक का सेवक हूं। अब श्रीमन्त आगे बढ़ें। वह सामने वाला तख्त उस आदर्श और उस प्रतीक का पर्याय है। श्रीमन्त झुककर तीन बार उसे प्रणाम करके आसन ग्रहण करें।'

बालक बोला, 'अवश्य। इसमे हानि ही क्या है ?'

चिन्तित नाना फड़नीस ने यह सब सुन लिया। सकेत से उसने तुकोजी होलकर को बुलाया। वह जब तक नाना के पास पहुंचे पेशवा ने तीन बार तख्त के सामने प्रणाम करके आसन ग्रहण कर लिया। माधव ने तुरन्त अपने खास कलम—अमात्य—को फरमान पढ़ कर सुनाने की आज्ञा दी। फरमान फारसी में था। पढ़कर सुना दिया गया। पेशवा 'वकील मुतलक पुश्त दर पुश्त' के लिये, सिन्धिया उसका नायब। पेशवा को बहुमूल्य खिलत पहिनाई गई और हीरे जवाहरो के कण्ठे। बालक पेशवा को लगा मानो पुराण कथित इन्द्र वही है। फिर माधव को खिलत पहिनाने के हर्ष मे नाचता हुआ खास कलम उनके पास आया।

माधव ने मुस्करा कर कहा, 'मैं महाराष्ट्र का केवल पटेल हूं। खिलत के भ्रम में विश्वास नहीं करता हूं। खिलतें और गहने मेरे लिये नहीं हैं, दूसरों के लिये हैं, अलग रख दो।' खास कलम निराश होकर चला गया। फिर सरदार लोग और जनता के प्रमुख पेशवा को नजर न्योछावर करने लगे। तुकोजी ने भी की। नजर करने के उपरान्त

वह नाना के पास जा बैठा। नाना पहले ही कर आया था। नाना ने तुकोजी से कहा, 'कैसा जाल फैलाया है माधव ने! क्या ये उपस्थित इतने मूर्ख हैं कि इस जाल और नाटक के निपट भौंडेपन के नीचे का बिलकुल न देख सकेंगे?'

'सिन्धिया ने बहुत बुरा किया। हम सब लोगों का अपमान हुआ है।' तुकोजी बोला।

'अपमान की सीमा का उल्लंघन हो गया। फारसी भाषा में फरमान इस तख्त को ब्राह्मण पेशवा से पुजवाया जिसके पुरखे दिल्ली के सिंहासन को लौटने पलटने का दम रखते थे!! पूना को दिल्ली की दासी बना दिया इसने!!!'

'यह दिल्ली के नाम पर और पूना की आड ओट में सतलज नदी से लेकर नर्मदा तक और नर्मदा से लेकर हिमालय तक अपना राज्य स्थापित करना चाहता है। उसी के लिये यह सब ढोंग और धूर्तता है।'

'तो क्या उत्तर मे तुम्हारा कुछ भी नहीं लगता?'

'क्यों नहीं लगता? राजपूताना की रियासतों के खिराज का हिसाब जो मुझे लेना है। उसको वह हिसाब मुझे और आपके दरबार को देना है।'

'खैर, देखते रहना। इस समय यह सब चापलूसी पेशवा को बहकाने के लिये की जा रही है। वह अभी बालक है। बुद्धि कच्ची है। मैंने उसे समझाया था कि इस उत्सव में सहयोग देने से नाहीं कर दे, परन्तु माधव ने इस खेल तमाशे का उसे इतना मोह दे दिया कि वह नहीं माना।'

'पेशवा को ठीक मार्ग पर चलाने के लिये बहुत प्रयत्न करना पड़ेगा।'

'अवश्य करूँगा और इस माधव को भी सन्मार्ग पर लाने का उपाय करूँगा।'

'मैं भी माधव को ठीक करने का यत्न करूँगा। अपने को जैसा पटेल कह कर लोगों को भुलावे मे डाले रहता है इसे वैसे ही कोरा पटेल न बना दिया तो मैं काहे का!'

दरबार की समाप्ति पर पेशवा का विराट जलूस निकला। पूना नगर में होकर जब पेशवा हाथी पर सवार निकला फूलों की वर्षा हो पड़ी। पेशवा अपने इस उत्कर्ष का कारण, यथार्थ ही, माधव को समझता था। माधव के लिये उसके हृदय में बहुत बड़ा स्थान बहुत शीघ्र बन गया। माधव जानते थे कि जब तक नाना उनके विरुद्ध पेशवा के हस्ताक्षरों से तुकोजी के नाम आदेश निकलवा सकता है तब तक न उनकी कुशल है और न उनके आदर्श की।

इस दरबार से बालक पेशवा अपनी महानता अवगत करने लगा जैसे बाल्यावस्था में विवाह हो जाने पर बालक। परन्तु इस दरबार के कारण पेशवा के मन पर माधव के प्रति इतनी श्रद्धा नहीं जा बैठी कि वह नाना फडनीस की ओर से विरक्त हो जाता या उसके आतङ्क से मुक्त। माधव को इस नाटक में स्वयं कोई विश्वास न था, परन्तु वे समझते थे कि अन्य जनो की श्रद्धा उस पर होगी। माधव की यह भूल थी। जनता को इस नाटक, खेल तमाशे से, थोड़ी देर के लिये रस मिला, परन्तु पीछे उसने सोचा, प्रश्न किये।

'माधव ने यह जूतों वाला तमाशा क्यों किया ?'

'दिल्ली के बादशाह की नकल पूना मे क्यों उतारी ?'

'पेशवा को अन्धे निर्बल बादशाह के नीचे क्यों कर दिया ?'

'यह विदेशी तर्ज क्यों दरबार में माधव ने अंगीकृत की ?'

'अब क्या मराठी का स्थान फारसी को मिलेगा ?'

'बीजापुर के आदिलशाही सुलतानो ने फारसी को हटाकर मराठी अंगीकृत किया था, इसने मरी हुई बादशाही की भाषा को क्यों चलाने का प्रयत्न रचा है ?'

मराठों ने कहा, 'छत्रपति शिवाजी के नौकरों को अब दिल्ली के मुगल का गुलाम बनाया जा रहा है क्या ?'

ब्राह्मण बोले, 'यह सब ब्राह्मण-विनाश का षड्यन्त्र नहीं तो और क्या है ?'

'अभी तक भोंसलावंश पेशवा की नियुक्ति के दस्तख्त करता था और पेशवाई की पोशाक प्रदान किया करता था, अब दिल्ली का मुल्ला किया करेगा इस काम को क्या ?'

राजनीति की गूढ़ता के ज्ञान-दम्भियों ने विश्लेषण किया,—'अभी तक दक्षिण का द्वार निरुद्ध था सिन्धिया के लिये अब पेशवा को इस पाखण्ड से लपेट कर उस द्वार के खोलने का उपाय किया गया है।'

आत्माभिमानी विजेता मराठा सरदारों ने मन पर पड़े हुये आघात को व्यक्त किया,—'पेशवा का जूता-बरदार बन कर इसने हम सब की नाक कटवादी !'

माधव की सेना के राजपूत, ब्राह्मण, मुसलमान और यूरोपियन अफसरों ने काना फूसी की,—'कितना बड़ा जनरल और कितना बड़ा राजनीतिज्ञ लेकिन ऐसा ओछा काम कर गया !' परन्तु जनता के मन में एक सन्तोष भी इन प्रश्नों को ठोकर दे देता था,—'माधव ने गोवध बन्द करवा दिया। कोई और तो करवा लेता इससे पहले ?

अंग्रेज सकपकाये। उन्होने कम्पनी के डाइरेक्टरों को उद्बोधन किया,—'सिन्धिया ने एक लोढ़े से दो चिड़िया लुढ़काई हैं। दिल्ली के तमाशे से बादशाह को कठपुतली बना लिया और पूना के तमाशे से पेशवा को अधिकार मे कर लिया है! अब अपने लिये बड़ा संकट सामने है !!'

माधव ने उस नाटक के नशे को पिया था, परन्तु वह नशा उन्हें नहीं पी सका।

(१२७)

माधवराव नारायण पेशवा ने अपने उस छोटे से जीवन में सिवाय निषेधों और नियन्त्रणों के कुछ नही सुना था—यह मत करो, वह मत करो; यह मत खाओ, वह मत पियो, यहां मत जाओ, वहां मत जाओ; इसको छुओ, उसको न छुओ, इससे बोलो, उससे न बोलो; गद्दी पर बैठो, न खेलो न कूदो, इतना ही हंसो कि कोई ठिलठिलाना न सुन ले, स्त्रियों को नागिनें समझकर उनसे दूर रहो।

इतने बडे राष्ट्र का अधिकारी, पेशवा, इन सब निषेधों और नियन्त्रणों को असगत समझने लगा था। उस विराट दरबार में, उस विशाल योधा और राजनीतिज्ञ ने इतना बड़ा मान समर्पित किया! मैं कुछ अवश्य हूं!! मैं भी कुछ कर सकता हूं!!! मैं पवन के साथ खेलूंगा। बादलो को चिनोती दूगा। पुष्पों के परिमल को सूघते हुये नदी की हिलोड़ो के साथ कलोलें करूंगा। वन पक्षियों के गीत सुनूगा। सूर्योदय और सूर्यास्त की महामहिमा को पहाड़ों की चोटी पर से उलझ उलझ कर देखूगा।

पेशवा के पास माधव की घुसपैठ बढ गई, बढती चली गई। रिसते हुये पानी का जैसा प्रभाव निरन्तर घर करता चला गया।

पेशवा के मनमे एक बात बहुत दिनों से उठ रही थी।

माधव से उसने कहा, 'बन्दूक से स्थिर निशाने का उड़ना तो जानता हूं, परन्तु चचंल लक्ष्य पर चलने का अभ्यास नहीं है।'

माधव समझ गये, बोले, 'इस युग में श्रीमन्त को कभी युद्धों का भी संचालन करना पड़ेगा। किसी दिन जगल में बाघ, रीछ सुंअर इत्यादि पर परीक्षा करके देखिये न।'

'मेरे मनमें बड़ी साध है, शिकार खेलना चाहता हूं। तुमने तो बहुत से बाघ मारे होगे। बड़ा प्रचण्ड पशु है।'

'बन्दूक या तीर के सामने कुछ भी प्रचण्ड नहीं है। मैंने विन्ध्यखड में बहुत से मारे हैं। बर्छे तक से मारे हैं। वनों का मुक्त पवन, उस भ्रमण को बड़ा रसीला आनन्द देता है। कभी श्रीमन्त को अपने ऊबड़-खाबड़ जीवन की कहानियां सुनाऊँगा, ढेरों हैं। न जानें कितने बार मौत के दांतों के नीचे से निकल आया हूं।'

'मैं अवश्य सुनूंगा पटेल बुवा, अभी सुनाओ एकाध। मेरी बहुत इच्छा है।'

पटेल ने शिकार की एक कथा सुनाई और फिर लाल सोत के युद्ध की। पेशवा केन्द्रित ध्यान के साथ सुनता रहा। समाप्ति पर उसने आग्रह किया, 'एक और पटेल बुवा, मेरे पटेल बुवा एक और।'

माधव ने एक कहानी और सुनाई।

पेशवा ने निश्चय प्रकट किया, 'चाहे कोई कुछ कहे मैं शिकार खेलने अवश्य चलूंगा, जंगल में डेरे डाल कर मगल मनाऊँगा। कब चलूं पटेल बुवा?'

'जब चाहे तब।' माधव ने आकर्षक मुस्कान के साथ उत्तर दिया।

वह किशोर बोला, 'मुझे जंगल में कुछ कहानियां और सुनाना— अभी जो सुनाई हैं उनसे भी बढ़कर।'

माधव ने उत्साह के साथ आश्वासन दिया, 'अवश्य सुनाऊँगा। शिकार से लौटकर जब हम लोग अपने डेरे में पहुंचेंगे या नदी किनारे की किसी छाया वाली चट्टान पर बैठकर भोजन करते होंगे, तब सुनाऊँगा। फिर श्रीमन्त अपने जीवन में स्वयं इतने पराक्रमों की रचना कर लेंगे कि अपनी कहानियां दूसरों को सुना सुनाकर विनोद-मग्न कर देंगे।'

अभी जाड़े नहीं आये थे। पेशवा ने शिकार की तैयारी की। नाना ने निषेध किया, बहुत समझाया बुझाया परन्तु बालहठ के सामने उसकी एक न चली। पेशवा माधव के साथ शिकार के लिये चला गया। एक बार जाने पर उसको लगा जैसे किसी चमत्कारपूर्ण संसार में आ गये हों!

फिर अनेक बार गया। बर्नने हिंस्र पशु मारे, रात रात डेरे किये। अब उसका जी जंगल में ऐसा रमने लगा कि पूना का महत्व अप्रिय हो उठा। जंगल मे, नदियों के किनारे, पहाड़ो पर लगातार कई दिन तक डेरे लगने लगे। पेशवा और माधव के बीच में निरमकोचता बढ़ गई।

एक दिन शिकार से खाली हाथ लौटे। माधव के लिये निराश या उदास होने की कोई बात ही न थी, परन्तु पेशवा कुछ अनमना था। डेरे के पास जंगली बरगद की छाया थी और नीचे साफ सुथरी चट्टान। आस-पास तीसरे पहर की धूप। भोजन जंगल की नदी के किनारे कर ही आये थे।

पेशवा ने कहा, 'पटेल बुवा, इसी चट्टान पर बैठो। कुछ बात करें।'

'अवश्य' माधव बोले।

वे दोनो वहीं बैठ गये। थोड़ी दूर पर दो तीन अंग-रक्षक। इनमें जरा आगे रामलाल। माधव ने शिकार सम्बन्धी एक अनुभव सुनाना आरम्भ किया।

'यह नहीं,' पेशवा ने अनुरोध किया।

माधव ने युद्धों, दरबारो के षड्यन्त्रों, साधु सन्तो के कथानक आरम्भ कर करके छोड़ दिये क्योंकि पेशवा को उनमें से एक भी नहीं रुचा। माधव में धैर्य अटूट था और माधवराव नारायण पेशवा की जिज्ञासा अथक।

पेशवा ने पूछा, 'पटेल बुवा, तुमको नृत्य-गायन भाता है या नहीं?'

उन्होंने तुरन्त उत्तर दिया, 'बहुत। आपको श्रीमन्त?'

उसने सिधाई के साथ कहा,—'दूर दूर से तो सुना है, पर निकट से तो किसी ने कभी सुनने नहीं दिया।'

माधव सतर्कता के साथ बोले, 'बिलकुल पास से देखिये सुनिये। आग मे हाथ न डाला जाये तो उससे बढकर उपकार करने वाले पदार्थ संसार में थोडे ही हैं। परन्तु बाल-प्रकृति आग के बिलकुल निकट पहुचने की है और बहुधा आग में हाथ डालने की भी।'

पेशवा बोला, 'पुरुषों का गाना, भजन कीर्तन इत्यादि, तो बहुत पास से सुने हैं, परन्तु जो मधुरता स्त्री-कण्ठ में होती है वह पुरुष के स्वर में नहीं हो सकती। तुमने बहुत उत्तम नृत्य गान देखे सुने होंगे ?'

'हां श्रीमन्त।'

'सबसे अच्छा कहां सुना ? कब सुना ? किसने गाया था ?'

माधव के सामने गन्ना की स्मृति पूरे रूप में आ खड़ी हुई। उन्होंने मुक्त होकर उत्तर दिया, 'श्रीमन्त मैंने बहुत सुना है। सोलह सत्तरह वर्ष हो गये तब अन्तिम बार सुना था। गायन क्या था स्वर्ग की ध्वनि थी, रस की धारें वह उठती थी जब वह गाती थी।' माधव एक क्षण के लिये रुक गये।

पेशवा के ओठों तक सवाल आया,—'किसने गाया था ऐसा ?'

माधव ने कहा, 'अब उसका स्मारक भर रह गया है।'

पेशवा की जिज्ञासा ने न माना। 'कहाँ है वह स्मारक ?' उसने पूछा।

'ग्वालियर के पास, नूराबाद में।' माधव ने उत्तर दिया।

'क्या नाम था उसका ?' वह किशोर पूछ ही बैठा।

माधव कुछ अचकचाये। फिर अपने को दृढ़ किया। बोले, 'नाम इस समय याद नहीं आ रहा है।'

'कितने दिनों सुना उसका गाना ?'

'बरसों श्रीमन्त।'

'उससे बढ़कर किसी और का नहीं सुना था ?'

'कभी नहीं।'

'तब से किसी और का सुना है ?'

'किसी का भी नहीं।'

'तब उसका नाम क्यों भूल गये ? वह यदि जीवित होती तो क्या कहती ?'

'क्या कहता' ने उनके कण्ठ तक हिलोड़ मारी। यह हिलोड़ वहीं अटक गई। आंखों में ठोकर-सी लगी। कुशाग्र बुद्धि पेशवा ने देख लिया। बोला, 'पटेल बुवा, तुम उसे बहुत चाहते थे क्या? क्या वह तुम्हें बहुत मानती थी?'

माधव सिर हिलाकर उत्तर दे पाया केवल हां।'

'तो बतलाओ पटेल बुवा उसका क्या नाम था?'

माधव के मुंह से निकला, 'स्मरण हो आया—गन्ना—गन्ना बेगम।'

अंग-रक्षकों ने किसी कहानी के सुनने के लिये कान खड़े किये। पेशवा का कुतूहल और भी जागा। उस युग में गायिकाओं, नर्तकियों, के सम्बन्ध में प्रश्न और उत्तर संकोच उत्पन्न नहीं करते थे।

उनके चेहरे पर शून्य निष्क्रियता सी एक क्षण के लिये छाई फिर सूक्ष्म मुस्कराहट ने रञ्जित किया, मानो महान सत्प्रकृति का प्रतिविम्ब हो।

पेशवा ने उत्साहित होकर कहा, 'मेरे प्रश्न का उत्तर दो पटेल बुवा।'

अंग-रक्षक कुछ दूर हट गये।

कोई उन से 'जी पटेल जी' बहुत दिन कहता रहा था।

उन्होंने उत्तर दिया, 'मैं उसे कितना चाहता था यह मैंने तब जाना जब वह नहीं रही। वह मुझे कितना अधिक मानती थी यह तो मैं जानता ही था।'

'क्या उसका सौन्दर्य अन्तकाल तक वैसा ही बना रहा?'

'सदा वैसा ही। वह एक चमत्कारपूर्ण पानी का बबूला थी; उसे मैंने कभी नहीं बुझाया, आलोकमय ओस का कण थी जिसे मैंने चपल दूर्वादल पर ही बना रहने दिया।'

'गाना सुनाने के अतिरिक्त बातें भी बहुत करती होगी?'

'बहुत।'

'उसकी एकाध बढ़िया कहानी सुनाइये।'

'अनेक हैं। एक सुनाता हूँ।'

माधव ने गंगा के उस घाट वाली युद्ध घटना सुनाई।

पेशवा ने कहा, 'तुम्हारा जीवन विलक्षण है पटेल बुवा।'

माधव बोले, 'सबका हो सकता है। घर से बाहर निकलने पर जीवन के मधर्ष बड़े बड़े अचम्भों का प्रदान करते हैं।'

पेशवा ने इन अनिश्चित अचम्भों के आवाहन का मन में प्रण किया। उसने कहा, 'मैं अच्छी से अच्छी सुन्दरियों का गाना सुनना चाहता हूँ। हमारे पितामह श्रीमन्त बालाजीराव ने तो दिल्ली से बुलवाई थीं।'

'मैं पहले ही कह चुका हूं', माधव जी बोले, 'श्रीमन्त आप के चमत्कार को दूर से ही देखें, उसमें हाथ न डालें।'

'और फिर आपकी वह गन्ना?'

'न उसके हाथ जले थे और न मेरे। उस स्वर्ग की *अप्सरा की अन्य* सुन्दरियों में कोई तुलना ही नहीं की जा सकती।'

'मैं जीवन में गहरे घसकर सब कुछ देखना चाहता हूं।'

'परन्तु इतने गहरे नहीं कि डूब जाने का भय हो। घसिये पर डूबिये नहीं।'

'मैं तुम्हारी सहायता चाहूंगा।'

'करूंगा।'

पेशवा के मन में सहम की दाब और वासना की उत्कण्ठा टकरा गई। जीवन-सौष्ठव के अतिशय रूप और सदुद्देश्य की कल्पना का समन्वय उसकी समझ में न आया। उसने पूछा, 'तो गायन और नृत्य का आयोजन करवाऊं न? कब हो? तुमको कुछ बुरा तो नहीं लग रहा है?'

माधव ने उत्तर दिया, 'जब चाहे तब हो सकता है। मुझे बुरा नहीं लग रहा है, परन्तु मुझे अच्छा लगेगा श्रीमन्त का सात-आठ घण्टे काम करना फिर दो-एक घण्टे का आमोद-प्रमोद।'

पेशवा ने कहा, 'काम? हां काम अवश्य करूंगा। काम करने पर ही यह अच्छा भी बहुत लगेगा। पर आजकल तो कोई ऐसा काम है नहीं।'

माधव ने बतलाया,—'बहुत काम है। उसके करने में श्रीमन्त का मन भी खूब लगेगा। जिस काम में मन लगे वह चाहे जितने घंटे करिये, कभी नही थकाता।'

उसने उल्लास के साथ कहा, 'मैं अवश्य करूंगा। एकाध बतलाओ।'

माधव बोले, 'डेरे पर चलकर बतलाऊँगा।'

पेशवा ने कहा, 'अभी तो यहीं थोड़ी-सी बात और करूंगा। इस क्षणभंगुर जीवन मे थोड़ा-सा रस तो लेना ही चाहिये।'

वे बोले, 'मैं जीवन को वास्तविक मानता हूँ। ऐसा न होता तो कृष्ण भगवान व्रज मे जन्म लेकर लीलाय न करते।'

पेशवा ने विनोद करने के लिये कहा, 'कमल और गुलाब का रूप, रस और सौन्दर्य क्षणिक ही तो है न पटेल बुवा? यह उसे कहीं सिखाया गया था।

'हमारे जीवन की लम्बाई के अनुपात से क्षणिक है, परन्तु जितना है उतना अवश्य ग्राह्य है। फूलों से आँखों को हटाकर कांटों या सूखे पत्तों पर जमाना उतना ही बड़ा भ्रम है जितना फूलों को देखते-देखते कांटो और सूखे पत्तों की बिलकुल उपेक्षा और अवहेलना करना। अपनी अपनी जगह सबका उपयोग होना चाहिये।'

पेशवा हँसा। बोला,—'मैं जीत गया पटेल बुवा।'

(१२८)

गायकवाड़ की गद्दी के लिये नहीं, गायकवाड की गद्दी के अल्पवयस्क उत्तराधिकारी का अभिभावक के बनाने की लालच ने दो महत्वाकांक्षियों को उखाड़ पछाड़ दिया। इनमें से एक का पक्ष नाना फडनीस ने लिया। बहुत बदनामी हुई—लोगों ने रिश्वतखोरी का खुल्लमखुल्ला आरोप किया। माधव ने दूसरे व्यक्ति का पक्ष लिया। नीति भी इस व्यक्ति के साथ थी। पेशवा माधव के पक्ष में सहमत हुआ और उसने तदनुसार निर्णय दे दिया। नाना की उपेक्षा की। पन्त सचिव की जागीर के गावों की वसूली के लिये जिन प्रबन्धकों की नियुक्ति की गई थी उन्होंने ठीक हिसाब देने में कसर लगाई। ये नाना के आदमी थे और उसी के नियुक्त किये हुये। माधव की सलाह से पेशवा ने इन सब को पद-विरत कर दिया। नाना मर्माहत हुआ। इस अपमान ने उसके कलेजे में आग-सी लगा दी।

अंग्रेजों के राजनीतिक ध्यान का केन्द्र उत्तर से हटकर इस समय दक्षिण में आ गया था। इसलिये और नाना के रोष का टक्कर ओढ़ने और पूना के राजनीतिक सन्तुलन को सम्भाले रहने के लिये माधव प्रायः पूना के ही निकट रहते थे। उत्तर का काम सम्भालने वालों में एक देवाई भी था। तुकोजी और माधव के राजस्थानीय संयुक्त अधिकार क्षेत्रों की वसूली के हिसाब को लेकर तुकोजी माधव के फ्रांसीसी जनरल से लड़ गया और अजमेर से कुछ दूर एक करारे युद्ध में हार गया। युद्ध से हार कर वह सीधा उज्जैन पर चढ़ आया और लूटता हुआ इन्दौर चला गया।

तुकोजी के दो लड़के थे—एक मल्हारराव (द्वितीय) और दूसरा यशवन्तराव। मल्हारराव बड़े ही निकृष्ट चरित्र का युवा था। माधव जी के क्षेत्र में उपद्रव मचाता रहता था।

माधव के पूना-स्थित सेनानी क्षुब्ध हो गये। वे तुरन्त यूरोपीय सांचे में ढाली हुई अपनी सेना लेकर इन्दौर पर टूट पड़ना चाहते थे। माधव ने रोक दिया और नाना से मिले।

नाना ने कहा, 'तुकोजी ने बुरा किया। उसे दण्ड दिया जा सकता है।'

माधव बोले, 'नहीं बड़े भाई। इस मामले मे भूल मेरी और मेरे आदमियों की अधिक है। हिसाब न मिल पाने के कारण तुकोजी को असर गया। बात बढ़ गई और वह लड़ पड़ा। उज्जैन को अवश्य उसे लूटना नहीं चाहिये था।'

'जो हो गया सो हो गया। चढ़ा-चढ़ी होने से अंग्रेजों का हाथ प्रबल हो जायगा।' नाना ने कठिनाई के साथ माधव की अड़चन पर अपना सन्तोष छिपाते हुये कहा। माधव ने नाना की ऊपरी चिन्ता को छेद कर भीतरी सन्तोष पहिचान लिया।

वे अपनी कुढन का तुरन्त निग्रह करके बोले, 'हां बड़े भाई, मैं तुकोजी को कोई दुःख नहीं देना चाहता हूँ।' हिसाब नहीं हो जायगा। कोई चिन्ता नहीं। मैं चाहता हूँ मेरी ओर से उसके मन में कोई बुराई न रहे। अपने पुत्र मल्हार के कारण तुकोजी वैसे ही चिन्तित रहता है।

'हां सो तो है ही। असल मे वह तुम्हारी दिल्ली सम्बन्धी नीति पसन्द नहीं करता। तुमने बादशाह को अतिशय महत्व दे दिया है। जिस पेशवा को खिलत और पद भोंसलेवंश देता आया है उसे तुमने एक अन्धे अपाहिज से दिलवाया।'

'उस खिलत को भोंसलेवंश आगे भी देता रहेगा। दोनों प्रकार से निर्वाह हो सकता है।'

'मुझे सम्भव नहीं दिखता। तुमने सेना में इतने परदेसी भर लिये हैं कि जिसका ठिकाना नहीं।'

'और तुकोजी ने जो हब्शी, अरब, पठान और तुर्क रख छोड़े हैं वे कौन हैं? असल में बड़े भाई तुम एक बात समझने में अटक रहे हो।

तुकोजी इन अरबो तुर्कों से विदेशी बर्बरता लेकर जो इस्लाम का सही रूप है ही नही उज्जैन को लूट ले गया और मैं इन्हे देश की सच्ची संस्कृति का रूप दे रहा हूं।'

'ब्रह्मर्षि होने जा रहे हो!'

'राजर्षि तो हो ही सकता हूं बडे भाई, परन्तु मैं विश्वास दिलाता हूँ कि ऐसे किसी भ्रम या मोह मे नही हूं। केवल कर्तव्य का पालन कर रहा हूँ।'

'हां बहुत कर रहे हो! उस कच्ची बुद्धि वाले युवक पेशवा को तुमने बहका फुसलाकर शिकार का व्यसन लगा दिया है। नृत्यगान मे मस्त किये रहते हो। किसी दिन मद्यपी बना दोगे। उस लड़के का सर्वनाश कर रहे हो।'

'सर्वनाश से बचा रहा हूं मैं तो। वे अपनी सारी इन्द्रियो को पुष्ट कर रहे हैं अब। तुम सोच लो, बड़े भाई तुमने क्या क्या नहीं किया अपने उस समय मे?

'बहुत बढ़ रहे हो माधव!'

'नही तो। बढूंगा अवसर आने पर अंग्रेजो के सामने अवश्य। तुमको नाना, उस समय तो हर्ष मग्न पाऊंगा।'

'हर्षमग्न तो मैं भीतर भीतर रहता ही रहा हूं अग्रेज मेरे ओहे को पहिचानते हैं। वे मेरे कुस्वप्न देखते रहते होंगे। तुम उत्तर मे जो अपने लिये स्वतन्त्र राज्य की स्थापना करने मे प्रयत्नशील हो। उससे मैं बहुत चिन्तित न होता, परन्तु पेशवा का पतोन्मुख होना नहीं देखा जाता।'

इस लम्बे वक्तव्य में नाना को अपने से किसी विषय में भी सहमत होता हुआ न देखकर माधव चुपचाप चले आये।

× × ×

विचारमग्नता मे सिर झुकाये हुये नाना फडनीस पेशवा के पास गया। पेशवा उस समय अपने उद्यान मे टहल रहा था।

नाना ने चेहरे की कठोर गम्भीर मुद्रा को शिथिल करने का यत्न किया। नाना को देखते ही पेशवा का मन फूलों की विविध मनोहरता से उचटकर पूर्व निषेध-निर्देशों की ओर गया और ठिठक कर वर्तमान में प्राप्त स्फूर्ति और दृढ़ता पर जा जमा।

वह मुस्कराने का प्रयत्न करके बोला, 'नाना, अंग्रेजों का फ्रांसीसियों के साथ युद्ध कुछ अधिक भीषण हो गया है। निज़ाम अंग्रेजों के साथ जा रहा है।'

नाना ने अधिक विकसित मुस्कराहट के साथ कहा, 'यह तो स्वाभाविक ही है श्रीमन्त। हमको गत युद्ध में टीपू से अपनी खोई हुई भूमि का कुछ अंश तो मिल गया, परन्तु अभी बहुत-सा दबा हुआ है, इसे अवसर मिलते ही टीपू के चंगुल से निकालना है।'

पेशवा ने नाना से वाद-विवाद न करने का मन में प्रण कर लिया था, बोला, 'हां नाना देर-सवेर करना हो पड़ेगा प्रयत्न।'

'देर-सवेर' में अपनी बात का निर्बल समर्थन पाकर नाना ने विवाद किया, 'विलम्ब नहीं किया जा सकता श्रीमन्त। टीपू को समाप्त करके फिर अंग्रेजो से टक्कर लेनी पड़ेगी।'

'और फिर निज़ाम से? या पहले निज़ाम फिर टीपू, उसके बाद अंग्रेज?' पेशवा ने पूछा।

नाना ने बात को ऊंचे स्तर पर ले जाने का प्रयास किया, 'सेना के बल पर निर्भर है यह। माधव पटेल सोचता है कि उसकी फिरंगी शिक्षित पल्टनें सब कुछ करने में समर्थ हैं, इसलिये किसी को मानता नहीं। वह इन पल्टनों को दिन रात न मालूम किस उद्देश्य से बढ़ाये चला जा रहा है। पर हमारी और होलकर की सेना काफी है।'

पेशवा ने विवाद न करने के प्रयोजन से कहा, 'हां नाना—जो कुछ भी हो। परन्तु इतना अवश्य है कि माधव की पल्टनों के सिपाही लूटमार से बहुत घृणा करने लगे हैं। शान्ति के साथ छावनी मे रहते है और संयमशील हो गये हैं।'

'चेहरा मोहरा सवार लिया गया है, भीतर से इमारत कुरूप और कमजोर हो गई है।'

'पहले थोड़े ही समय मे बहुत बहुत कर डालने की धुन थी। अब प्रत्येक खोया हुआ प्रयत्न, प्रत्येक थकी हुई लालसा भी सफलता की ओर संकेत कर रही है।'

'मुझे हर्ष है श्रीमन्त की बुद्धि प्रखर होती जा रही है परन्तु खोये हुये प्रयत्न और थके हुये मोह उत्तर से दक्षिण मे आ रहे है इसे ध्यान में रखें श्रीमन्त।'

'राजनीति मे भिन्न भिन्न दृष्टिकोण सदा लाभ दायक होते हैं, हां उनका सामन्जस्य होता है।'

'राजनीति ही एक ऐसा शास्त्र है जिस पर छोटे छोटे से बच्चे भी तुतलाते रहते हैं यद्यपि गणित, ज्योतिष इत्यादि की अपेक्षा अधिक गम्भीर और क्लिष्ट है।'

पेशवा ने बहस की नदी में कूद पड़ना चाहा, फिर भी अपने को रोक कर बोला, 'मैं सेना के सम्बन्ध में तुमसे कह रहा था, नाना। टीपू ने अपनी सेना को खूब यूरोपियन ढग पर ढाला है। उसका टक्कर पटेल बुवा के दस्ते ही ले सकते हैं।'

नाना ने क्षोभ मे कहा, 'कवायद परेडी टीमटाम, तड़क-भड़क और कठोरता सैनिक की निज की सूझबूझ कुण्ठित कर देती है। सवारों और सिलेदारों पर दमनकारी सयम का प्रभाव बहुत बुरा पड़ा है।'

पेशवा ने सोचा,—'यह मुझे छुटपन से ही अपने शिकंजे मे कसे रहा है।'

उपेक्षा के साथ पूछा, 'दमनकारी संयम का प्रभाव सभी के ऊपर बुरा पड़ता होगा?'

नाना ने कहा, 'मैं कोई दूसरी ही चर्चा करने आया था। सैनिक और असैनिक के नियम सयम में अन्तर है, यह मैं फिर कभी बतलाऊँगा।

अभी तो एक चेतावनी देने आया हूँ। श्रीमन्त आमोद-प्रमोद में बेभाव डूबते चले जा रहे हैं। इसका परिणाम भयङ्कर होगा।'

पेशवा बोला, 'कहा डूबता चला जा रहा हूं ? किसी चूहे के बिल में चला जाऊं या क्या करूं ?'

नाना ने कहा, 'मैं अत्याचार सहन नही कर सकता।'

पेशवा तड़ाक से बोला, 'ऐसे तो ससार मे बहुत से लोग हैं जो अत्याचार नही सह सकते, परन्तु जो स्वय दूसरो को सताने से नही हिचकते वे—'

नाना ने क्रुद्ध स्वर मे अपना भाव प्रकट किया, 'श्रीमंत ने अपनी बुद्धि को इतना बहक जाने दिया है ! यह सब उसी माधव पटेल की करतूत है !! वह क्षय रोग की तरह पीछे लगा है। जिन खेल तमाशों और भ्रान्तियो मे वह श्रीमन्त को डाल रहा है क्या उनके आर-पार को समझने पर भी नहीं मानेंगे ?'

'पहले स्वयं किसी भी भ्रम या भ्रान्ति का शिकार नहीं है। इस पर भी उसका कितना प्रभाव संसार में है ! कितना पुरुषार्थी है वह !! प्रत्येक प्रकार की निराशा पर विजय पाता रहता है !!!'

सहज क्रोध की प्रेरणा से नाना ने गलत निशाना लगाया,—'तुम्हारे ऊपर ही जो इतनी विजय पा ली है—तुमसे मनमाने काम कराता रहता है—और तुम उचित अनुचित कुछ देखते नहीं। चमकीले भुलावे उसने तुम्हारे सामने रख दिये हैं—तुम उन पर मक्खियों की तरह टूट पड़े हो।'

'और तुम्हारे तुकोजी पर पटेल ने जो विजय पूना में ही बैठे बैठे पाई है वह क्या है ? इस अनुचित करम का क्या दड दिया जाय होलकर को ? उसके लड़के मल्हार का वध किया जाय ?'

'जिस गड्ढे में गिरा दिये गये हो वहा से पैर उभाकर और गर्दन लम्बी करके जरा देखो तब वास्तविकता का पता लगेगा। भंगेड़ियो, शराबियो की सगत मे समय भ्रष्ट करना, शिकार और नाच-गान मे

जीवन गवाते रहना ! क्या पेशवाई इसी प्रकार होगी ? मल्हार होलकर भी ऐसे ही बिगड़ा ।'

'नहीं तो । गायकवाड़ के मामले को घण्टों बैठकर निबटाया, पन्त सचिव की जागीर के प्रबन्ध के लिये तुम्हारे द्वारा नियुक्त किये गये आदमियों का हिसाब लिया और उनको हटाया, चतुर और ईमानदार लोग उनकी जगह रखे । इस प्रकार के अनेक कार्य बराबर करता रहता हूँ । सात घण्टे नित्य से कम काम नहीं करता । तब एक घण्टे *मनोविनोद करता हू । तुम्हारा यह कहना गलत है कि शराबियों में बैठता हू । पटेल बुवा शराब नहीं पीते ।'*

'उसने तुमको इतना पतित कर दिया है ! ओफ !! तुमने उसी की प्रेरणा से हिसाबवश मेरे नियुक्त किये हुये लोगों को निरपराध अलग किया है । मेरा कितना अपमान किया गया ! मेरे लिये संसार में मुह दिखलाने को भी जगह नहीं रही !! एक दिन था जब अग्रेज और टीपू मेरे नाम से थर्रा उठते थे । आज तुम वह दिन ले आये जब मेरी हैसियत एक साधारण कारकुन की भी नहीं है ।'

'मेरे काका माधवराव पेशवा के तुम कारकुन ही तो थे—अब तुम मन्त्री पद पर हो । माधव सिन्धिया की सेना पर आक्रमण करने के लिये प्रेरणा तुकोजी होलकर को कहा से *मिली ? किसके सहारे तुकोजी ने उज्जैन को लूटा ? जब माधव उत्तर में* अत्यन्त विपद्ग्रस्त था तब उसके विरुद्ध पत्र और आदेश मेरे प्रतिवाद पर भी दस्तखत करवा करवा कर कौन भिजवाया करता था ? उत्तर में हम लोगों के नाम की लाज माधव पटेल ही ने रखी या तुम्हारे तुकोजी ने ? भारत भर में गोवध किसने बन्द करवाया ? तुमने या तुकोजी ने ?'

नाना की आखों से आग-सी भर पड़ी । उसने अपना सिर पकड़ लिया । कुछ क्षण उपरान्त रो पड़ा । माधव मुह फेर कर फूलों पर आंखें घुमाने लगा, परन्तु उसे दिखाई कुछ नहीं पड़ रहा था । वह जल्दी जल्दी सासें लेकर अपना *नियन्त्रण* कर रहा था ।

नाना ने आंसू पोंछे और जेब में से एक कागज निकालकर पेशवा के हाथ में दे दिया। यह कागज नाना का त्यागपत्र था।

पेशवा ने त्यागपत्र पढ़ा। बोला तुरन्त स्वीकार करलूं, परन्तु पटेल इसे अच्छा नहीं कहेगा, पूछ लूं ? नहीं, मैं जानता हूं, फिर पूछूं क्यों ? स्वीकार कर लेने पर यदि माधव ने कहा कि नाना को काम पर बुलाओ तो भद होगी, त्यागपत्र स्वीकार नहीं करूंगा।

बोला, 'अरे ! नाना इतने में ही बुरा मान गये !! ये तो सब बातें ही बातें थीं। मैं त्याग-पत्र स्वीकार नहीं करूंगा। तुम्हें बराबर काम करना पड़ेगा।'

'अब निभ नहीं सकती।' उसने कहा।

'अवश्य निभेगी,' पेशवा बोला, 'मैं तुम्हारी बात सुनूंगा, गुनूंगा और समझबूझ कर काम करूंगा। लो इसे वापिस।'

'अपने हाथ से फाड़ डालो।' नाना ने अनमने स्वर में कहा।

पेशवा ने त्यागपत्र फाड़ डाला। पेशवा हँसने लगा। नाना के ओठों पर फीकी मुस्कराहट आई—जैसे बुझते अंगारे में से सूक्ष्म चमक निकली हो।

'आगे से मेरे कहने पर चलना पड़ेगा।' नाना बोला।

पेशवा ने हँसते हुये, उपेक्षा के साथ कहा, 'हां, हां।'

(१३०)

माधव जी का बर्ताव नौकरों के साथ मृदुल रहता था। रानेखां इंगले इत्यादि पर उनका पूरा स्नेह था। स्नेह और दूरदर्शिता के साथ उन्होंने अपने इन सब सेनानियों को ऐसा साजा-संवारा था कि वे उनके, और उनके आदर्शों के ऊपर अपना सर्वस्व बलिदान करने को तैयार रहते थे।

रानेखां का देहान्त हो गया। माधव को बहुत परिताप हुआ, उन्होंने उसके पुत्र को उसका पद दे दिया। परन्तु मन को जो ठेस लग गई थी, उसका निवारण न हो सका। कुछ अस्वस्थ रहने लगे, फिर भी शिकार का व्यायाम उन्होंने नहीं छोड़ा।

रामलाल माधव के अंग लग गया था। शिकार में प्रायः उनके साथ जाने लगा।

वसन्त पंचमी के दिन माधव के साथ पेशवा न जा सका। नाना के निषेध फिर लौटने का प्रयास कर रहे थे और पेशवा फिर उन निषेधों के प्रति विद्रोह कर कर उठता था। नाना को विश्वास था कि उन विद्रोहों का प्रेरक माधव पटेल है। वसंत पंचमी के दिन न जाने का कारण नाना का निषेध था—ब्राह्मण जनता क्या कहेगी ?

शिकार से लौट पड़ने के पहले माधव जी एक नाले के किनारे बैठ गये। उस दिन बहुत थक गये थे। रामलाल साथ था। उसको बुलाकर पीठ और कन्धे चँपवाने लगे।

माधव ने कहा, 'रामलाल तुम बहुत दिन से अपने घर नहीं गये हो, जब चाहो तीन महीने की छुट्टी दे दूंगा।'

रामलाल उत्साहित हुआ। बोला, 'पटेल बुवा, आपके साथ रहते रहते घर को भूल ही गया। आपके साथ इतना अच्छा लगता है कि घर की याद ही नहीं आती।'

'घर कौन कौन है तुम्हारे ?' उन्होंने पूछा।

रामलाल ने उत्तर दिया, कोई भी नहीं पटेल बुवा।'

माधव मुसकराये। सोचा, तभी याद नहीं आती। 'तो भी अपने प्रदेश हो आओ।' माधव बोले, 'तुम्हे छुट्टी का भी वेतन मिलेगा। मेरा नियम है।'

उसने कहा, 'टीपू से लड़ाई छिड़ने वाली है, निजाम से भी छिड़ सकती है। इसलिये मैं घर की ओर नही भागूंगा।'

'अभी टीपू या निजाम से लड़ाई नही छिड़ेगी।'

'टीपू तो बहुत बुरा आदमी है। उसने असख्य हिन्दुओं को मुसलमान बना डाला है।'

'टीपू व्यक्ति से लड़ना होता तो इसी क्षण लड़ डालते, परन्तु टीपू तो एक शक्ति का नाम है। अंग्रेज उससे भी बडी शक्ति है। किससे पहले लड़ा जाये, यह सवाल राजनीति का है, भाव या दुराग्रह का नहीं।'

रामलाल चुप हो गया। माधव का स्वभाव कम बोलने का था, परन्तु जिस प्रकार रसना-निग्रही कभी कभी इकट्ठा बहुत खा जाते हैं, उसी प्रकार वाकसयमी भी निस्सकट परिस्थिति मे कभी कभी काफी बोल उठते हैं।

माधव ने कहा, 'क्या तुम टीपू से तुरन्त लड जाना चाहते हो?'

'जी हां पटेल जी, एक तो वह बाहर का और फिर क्रूर, उसका तो मटिया-मेट होना चाहिये। परन्तु मैं हूँ ही क्या?' उसने उत्तर दिया।

'क्रूर तो हिन्दुओं मे भी होते हैं।'

'लेकिन वे हिन्दू हैं, और उतने क्रूर नहीं होते।'

माधव जी हँस पड़े। बोले, 'राजनैतिक समस्याओं पर जीभ चलाने का लोगों में कितना प्रचण्ड मोह होता है! ऐसा शास्त्र जिस पर अधिकार करना हवा को मुट्ठी में पकड़ने जैसा कठिन है!'

रामलाल ने नम्रता में घुलकर पूछा, 'फिर हमारे स्वराज्य का मतलब क्या है पटेल जी ?'

'स्वराज्य चाहते हो ?'

'अवश्य।'

'और अपने देश को पहिचानने तक नही !' वे फिर हँसे। बोले, 'जिनके लिये गाँवटी पचायत से बडी और कोई इकाई नही, और जाति, वर्ग, उपवर्ग से बढकर और कोई संस्था नही; वे स्वराज्य को जानें भी क्या ? और उन्हे बतलाता ही कौन है ? रामलाल, मैं मुसलमानो को हिन्दुओ का हितू बनाना चाहता हू, इसलिये उनसे घृणा नही करता। देखते हो रानेखां को मैं कितना चाहता था, और यह भी देखा कि वह कैसा था। ये लोग यदि रानेखां सरीखे हो जायें तब भी तुम्हें बुराई रहेगी ?'

'तब शायद नही रहेगी।' उसने नीचा सिर किये हुये कहा।

'तब भी शायद !' माधव जी बोले।

(१३१)

माधव जी कुछ अधिक अस्वस्थ रहने लगे। परिश्रम उनका उपचार था। कुछ औषध भी खा लेते थे। असल में पूना के षडयन्त्रों ने उन्हें विमन कर दिया था। उत्तर की घोर परिस्थितियों और कठोर समस्याओं ने जिसे नही झुका पाया था, पूना के क्षण क्षण पर बनने बिगड़ने वाले आपसी झंझटों ने खिन्नता दी। परन्तु उन्हें विश्वास था कि एक दिन—कभी—अपने आदर्श को दृढ़ स्तर पर खड़ा और मुस्कराता हुआ पाऊँगा। खिन्नता कितने दिन की ?

नाना फडनीस और माधव जी के बीच इतना अन्तर बढ़ गया कि कुछ समय के लिये तो अनबोलना ही हो गया ! कुछ लोग बीच में पड़े। दोनों का हाथ मिलवाया गया।

'मैं तुम्हारी अस्वस्थता का समाचार पाकर चिन्तित हो पड़ता था, परन्तु क्या करता ?' नाना ने कहा।

'अस्वस्थता के कारण ही नहीं मिल पाया—उधर तुकोजी और उसके लड़के मल्हार ने अपने इलाके से बाहर फिर उपद्रव किये हैं, उन्हें शान्त करने के उपायों में बीधा रहा।'

'तुकोजी प्रायः नासमझी कर बैठता है।'

'क्या तुकोजी यह नहीं जानता कि अंग्रेज प्रबल से अब प्रबलतर हो रहे हैं ? और क्या यह नहीं जानता कि उज्जैन का इलाका अपना ही तो है ?'

अंग्रेजों और फ्रान्सीसियों में युद्ध छिड़ जाने के कारण फ्रान्सीसी टीपू के सलाहकार और मित्र हो गये हैं। टीपू से छिड़ जाने पर तुम्हारे फ्रांसीसी जनरल किसका पक्ष ग्रहण करेंगे ?' नाना ने प्रसंगान्तर किया।

'मैं सदा से कहता आया हूं कि पहले अंग्रेजों से निबटो। फ्रान्सीसी थोड़े से हैं और निर्बल। इनका और टीपू का दमन पीछे कर लिया जा सकेगा।'

'मैं जानता हूं।'

नाना की इस जानकारी में अपने प्रति रुखाई को माधव जी ने देख लिया। सोचा, बहस बढाने से असहमति बढ़ेगी। विषयान्तर किया। 'बड़े भाई, आज-कल कुछ दुबले दिखते हो!' माधव जी ने ऐसे प्रसंग पर चर्चा छेड़ी जिसके द्वारा सहमति बढती।

नाना ने कहा, 'नहीं तो— मैं स्वस्थ हूँ। केवल पेशवा की वर्तमान गति मति मुझे कभी कभी चिन्तित कर देती है। तुम तो सब कुछ जानते ही हो।'

माधव की अस्वस्थता के कारण और अधिक बात न करके नाना चला गया।

इसके उपरान्त वे दोनो कभी कभी मिलते रहे। परन्तु उनके मन एक न हो सके। प्रधान कारण युवक पेशवा था। नाना उसे अपने चंगुल के नियन्त्रण मे रखना चाहता था, और वह मुक्त जीवन के सम्पर्कों को नहीं छोड़ना चाहता था। नाना पेशवा की इस 'गतिमति' का जिम्मेदार माधव जी को और भी अधिक दुराग्रह के साथ मानने लगा था।

एक दिन माधव जी के मन मे इतनी कुढ़न बढ़ी कि उन्होने पेशवा के पास अपना त्यागपत्र भेज दिया! लिख दिया कि सब कुछ छोड़ता हूँ। पेट भरने के लिये कहीं भी निकल जाऊँगा!!

पेशवा ने माधव जी का त्याग-पत्र अस्वीकार कर दिया और वह उनके और भी अधिक घनिष्ठ सम्पर्क मे आ गया।

(१३२)

उस वर्ष वसन्त पंचमी के आठवें दिन, पेशवा को माधव जी के संग मे शिकार खेलने का अवसर मिल गया। उस दिन तुकोजी का बड़ा लड़का मल्हारराव भी आग्रह करके साथ लग गया। पेशवा प्रतिवाद न कर सका। माधव जी भी कुछ न कह सके।

मल्हार एक जलते हुये गोले जैसा था दूसरो को भी जला दे और स्वयं तो जलकर भस्म हो ही जाये। उस दिन उसके चेहरे पर काफी लौ थी। वह कुछ ही समय उन लोगों के पास रहा। फिर किसी और दिशा मे निकल गया। पेशवा को उसका चला जाना बुरा नहीं लगा। माधव जी के चेहरे पर तटस्थता थी।

पेशवा को एक गोली से बाघ हाथ लगा। दूसरी से एक बड़ा सुअर। और भी शिकार हुई। दिन भर आखेट के विनोद में सब के सब मग्न रहे। क्रूर गुरु की पाठशाला मे लम्बी छुट्टी पाने पर जैसे बालक प्रसन्न हो जाते है पेशवा उनसे भी अधिक हर्षमग्न था।

सध्या होने के पहले वे सब जगल से हट आये। अभी सूर्यास्त नहीं हुआ था। पहाड़ों के पीछे सूर्य की किरणें समुद्र की चलबलाती फेनिल तरगो पर शयन करने के लिये उतरने वाली थी। वृक्षो की चमकती हुई हरियाली के पीछे पहाड़ो को श्रेणियों का धुँधला रंग किसी रहस्य का आवरण सा प्रतीत होता था। पत्तियों के चचल घूंघट में से फूल सुगन्धि दे देकर अपनी छिपा-लुकी की ओर बरबस ध्यान आकृष्ट कर रहे थे।

पेशवा और माधव जी घोड़ो पर सवार थे। धीरे धीरे चलकर अपने अनुचरों के लिये रुक रुक जाते थे। अनुचर शिकार के संग्रह में लगे हुये थे।

'मेरी तो थकावट बिलकुल दूर हो गई है। जी चाहता है, खूब हसूँ, उछलूँ कूदूँ, और इसी समय डटकर भोजन करके गहरी नींद सो जाऊँ।' पेशवा ने कहा।

माधव जी भी कुछ मोदमग्न थे। बोले, 'ऐसे अवसर पर लोग कविता कर उठते हैं।'

'तुम कहते हो कविता, पटेल बुवा। करते हो न? छिपाना नहीं। मराठी मे करते हो और हिन्दी मे भी!'

'यहां विठोबा को मराठी में सुनाता हूँ, वहां कृष्ण को कभी कभी हिन्दी में सुना देता था। वह कविता नहीं है, केवल प्रार्थना है।'

'क्या उसने—उस—बेगम गन्ना ने भी तुम्हारी कोई कविता, या प्रार्थना, गाकर सुनाई?'

'हां श्रीमन्त।'

'कौन सी?'

'कभी बैठने पर बतलाऊँगा',—माधव जी गम्भीर हो गये। उन्होंने विषयान्तर किया। पूर्व की ओर देखकर बोले, 'उधर पश्चिम मे सूर्य अपनी किरणो को समेट कर वेग के साथ जा रहा है, इधर पूर्व मे तेरस की चांदनी ऊपर उठ आई है! अभी कैसी फीकी लग रही है! दो घड़ी पीछे यही चांदनी कितनी सुहावनी लगने लगेगी!'

पेशवा को यह विषयान्तर नीरस लगा, परन्तु वह माधव का इतना सम्मान करता था कि ऐसे प्रसंग की चर्चा बढ़ानी उचित नहीं समझी जो उन्हें रुचिकर न लगे।

पेशवा ने हँसकर कहा, पटेल बुवा, इस समय मन किरणों के साथ खेले या पेट में उठती भूख से? तुम इतने ब्राह्मणों को खिलाते रहते हो, परन्तु न जाने मुझे क्यों लड्डू श्रीखंड से वंचित रखते हो!'

माधव जी ने हँसकर उत्तर दिया, 'क्योंकि श्रीमन्त मुझसे रुष्ट नहीं हैं।'

'और क्योंकि नाना फड़नीस अब मेरी गिनती ब्राह्मणों में नहीं करते होंगे! नाना को न्योता या नहीं?'

'मैं तो सहस्रों बार न्योतूं, परन्तु जब वह स्वीकार करें तब तो।'

'तुकोजी आया हुआ है। उत्तर के और यहां के षड्यंत्र के मोड़ने-तोड़ने में लगे रहते हैं।'

अंग्रेज इस समय फ्रांसीसी युद्ध मे बिधे हुये हैं और अपनी ओर से तटस्थ से दिखते हैं। परन्तु तटस्थो से सदा सचेत रहना चाहिये। तटस्थों को चुपचाप अपनी छुरी पैनी करने का बड़ा अच्छा अवसर मिलता है। इस समय नाना सदृश सतर्क मनुष्य तुकोजी और भोसले की संयुक्त शक्ति से निजाम का अड्डा साफ करने की सोच रहे होंगे। ध्यान जाना चाहिये। अंग्रेजों पर।'

'मैं किस झंझट की चर्चा ले बैठा!'

'श्रीमन्त ब्राह्मण भोजन की बात कर रहे थे।'

अच्छा मैं पूछता हूं, इतने ब्राह्मणो को खिलाते रहने से तुम्हे जो यश प्राप्त हुआ है उसमे से मुझे भी कुछ दोगे?'

माधव जी महाराष्ट्र के कट्टर पंथियों में काफी अप्रिय हो गये थे। उन्होंने इस अप्रियता के जीतने का बहुत प्रयास किया, परन्तु वे जानते थे कि खाने वाले कोरा आशीर्वाद देकर चले गये और पीठ पीछे उन्हे धर्मवंचक कहते रहे!

माधव जी ने उत्तर दिया, 'यश मे से लेंगे श्रीमन्त या कुछ अपयश में से भी?'

पेशवा खिलखिला कर हँस पड़ा। फिर गम्भीर होकर बोला, 'हमारी सभ्यता और संस्कृति का क्या हाल हो गया है!'

माधव ने कहा, 'सभ्यता शरीर के खजानों पर दिमाग के नाम हुंडिया दिया करती है। हम लोगों के शरीर का खजाना दुर्बल हो गया है। इसे बढ़ाने पर ही मानसिक और नैतिक उन्नति हो सकेगी।'

'आ गई न कविता सामने किसी न किसी रूप में! फिर कुछ पूछ बैठूंगा जिसे सुनकर पटेल बुवा गम्भीर हो जाते हैं। अब पूना जाने का मार्ग आ रहा है। एकाध बात और कर लूँ फिर कल मिलूँगा। कहो तो बिना आमंत्रण के कल तुम्हारे यहां ही भोजन करूँ?'

माधव जी हँस पड़े।

पेशवा ने अपना घोड़ा निकट सटाते हुये कहा, 'मैं तुकोजी का नाना के साथ इतना घनिष्ठ सम्पर्क अच्छा नहीं समझता। तुकोजी को उसके अनेक अपराधों का दण्ड देना चाहता हूँ, परन्तु तुम रोक रोक लेते हो। अबकी बार काफी सेना ले आया है। कोई उपद्रव न कर बैठे।'

माधव जी उपेक्षा के साथ बोले, 'मुझे कोई खुटका नहीं—'

पेशवा ने टोका, 'तुम्हारी भी फिरंगी शिक्षित सेना यहीं है—कितनी है कुल?'

उन्होंने बतलाया, 'पैंतीस सहस्र।'

'तुकोजी उपद्रव करना भी चाहे तो नहीं कर सकेगा।' पेशवा ने कहा।

पेशवा के अनुयायी और अंगरक्षक आ गये। थोड़े समय पीछे पूना का मार्ग। पेशवा पूना की ओर चला गया। माधव जी के कुछ साथी आ गये थे, कुछ पीछे धीरे धीरे आ रहे थे। रामलाल उनके साथ हो लिया। वे दोनों वनवाडी की ओर बढ़ने लगे।

माधव जी की छावनी अभी दूर थी। रामलाल उनके ठीक पीछे घोड़े पर सवार था जो अपने अस्तबल में पहुंचने के लिये फड़ फड़ा रहा था।

माधव जी ने अपना घोड़ा धीमा किया रामलाल बराबरी पर आ गया।

माधव जी ने कहा, 'इस समय मुझे कुछ ज्वर हो आया धीरे धीरे चलूंगा।'

'जो आज्ञा पटेल जी', रामलाल घोड़े की रास कड़ी करके बोला। घोड़ा पिछले की टांगों पर खड़े होकर लगाम चबाने लगा।

बगल में ऊंचे पेड़ों की झुरमुटों का विस्तार दूर तक चला गया था। एक झुरमुट के पीछे से कुछ सवारों के आने की आहट मिली। रामलाल का घोड़ा और भी पीछे हटा। वह उसे संभालने के लिये उतर पड़ा। माधव जी कुछ आगे बढ़ गये। झुरमुट में से थोड़े से सवार निकले। उनके आगे तुकोजी का लड़का मल्हारराव था।

वह माधव जी के पास आकर घोड़े पर से उतर पड़ा। उसके एक साथी सवार ने घोड़े को सँभाल लिया। मल्हार ने माधव जी के बिलकुल निकट आकर विनयपूर्वक प्रणाम किया। सूर्यास्त हुये दो घड़ी का समय हो चुका था। चांदनी के प्रकाश में माधव जी ने पहिचान लिया। मल्हार का आना उन्हें अच्छा नही लगा। फिर भी शिष्टाचार के कारण थोड़ा-सा रुकना पड़ा। रामलाल अपना घोड़ा थामे उनके निकट आया।

माधव जी ने मल्हार से पूछा, 'तुम इस समय यहां कहां ?'

उसने उत्तर दिया, 'मैं इस जंगल के एक दूर सिरे पर निकल गया था। अब यहा अकस्मात भेंट हो गई !'

'पेशवा ने यह जंगल अपने लिये सुरक्षित रख छोड़ा है। आगे उनके आमोद प्रमोद मे दखल मत देना।'

'आपकी कृपा बनी रहे तो ग्वालियर के पास वाले जङ्गल में भी खेल सकता हूँ।'

'ग्वालियर की और बात है, परन्तु यह पेशवा की शिकारगाह है।'

'वे भी मेरे ऊपर कृपा करते हैं।'

'खैर मुझे प्यास लग रही है, घर जाऊँगा। तुम तो पूना जाओगे ?'

'हा काका।'

'पूना का मार्ग तो पीछे रह गया है !'

'शिकार मे मार्ग-भ्रम हो ही जाता है। लौटा जाता हूं। पान खा लीजिये। बहुत अच्छा है। आपकी प्यास बुझ जायगी।'

मल्हार ने तुरन्त पान की डिब्बी माधव जी के हाथ के पास बढाई। उनकी इच्छा पान खाने की न थी, परन्तु इतने आग्रह के साथ पेश किये गये पान को अस्वीकृत करने मे माधव जी ने अभद्रता समझी, फिर भी किसी अड़चन या सकोच के कारण हाथ न बढ़ पाया।

रामलाल ने तुरन्त अपना हाथ बढ़ाकर कहा, 'पहले मैं पटेल जी— पहले मैं खाऊँगा।'

माधव जी क्षुब्ध हो गये। बोले, 'बिलकुल गँवार है!'

रामलाल ने अदृश्य भाव के साथ कहा, 'इसीलिये तो पटेल जी ऐसे ठौर पर पहले मैं तब आप। हमारे उत्तर मे रीति है।'

'लाओरे, पहले मुझे दो।'

मल्हार की आंखो में आधे क्षण के लिये क्रूरता आई। फिर समा गई। हँसकर उसने रामलाल की ओर पान वाला हाथ पसारा।

उसके मुँह से निकल पड़ा, 'काका ने तुम छोटे छोटे लोगों का सिर फिरा दिया है।'

रामलाल ने अविलम्ब पान को पकड़ा और अपने मुँह में डाल लिया।

माधव जी के शरीर में आग-सी फुक गई। परन्तु आत्म-नियन्त्रण का अभ्यास उनका स्वभाव बन गया था दण्ड देने के लिये उन्होंने दांत भींचे—दण्ड को एकाध घड़ी पीछे देने के लिये ही, स्थगित कर दिया। मल्हार के चेहरे पर हँसी अब भी खेल रही थी, मानो उनका उपहास कर रही हो। रामलाल और मल्हार मे कौन बड़ा ढीठ है, वे उस समय तै न कर पाये। शिष्टता के बन्धन ढीले नहीं हुये, उनका हाथ आगे बढ़ गया, मल्हार के दूसरे पान को उन्होंने ले लिया और खा लिया।

मल्हार ने फिर विनयपूर्वक प्रणाम की। कहकर चला गया,—'काका, अगली बार आपके साथ शिकार में लगातार रहूँगा।'

माधव जी की क्षीण 'हाँ' मल्हार और उसके साथी सवारों की टापों में समा गई। वे सब पूना चले गये।

माधव जी को तो रोष था ही, उनके अनुचर भी बहुत क्षुब्ध थे। रामलाल की क्षणिक प्रसन्नता पछतावे में डूब गई। वह पीछे हो गया।

थोड़ी दूर चलने पर माधव जी का माथा घूमा। उन्होंने अपनी आसन दृढ़ की। एक घड़ी पीछे शरीर कुछ शिथिल हुआ। सोचा, क्रोध

पी जाने के कारण यह सब हो रहा है। अपने को और कड़ा किया, परन्तु सिर की घुमेडी और शरीर की शिथिलता कम न हुई। शंका हुई, पान लग गया है। थूक दिया,—परन्तु वे उसका अधिकांश खा चुके थे। रुक गये। रामलाल को बुलाया। रामलाल और भी अधिक ढीला था। धीरे धीरे आया।'

जोर लगाकर प्रश्न किया,—लेकिन स्वर मे जोर न आया,—'कैसा है ?'

'जी – पटेल जी—' उसने कहने का प्रयास किया।

'जी पटेल जी' बरसों पहले किसी मधुर कंठ से सुना करते थे। सिर और भी घूमा।

माधव जी ने अपने को और अधिक संभाला।

रामलाल लड़खड़ाने को हुआ।

माधव जी में यकायक स्फूर्ति आई। बोले, 'क्या बात है रामलाल ?'

रामलाल भी संभला। 'जहर, सरकार, जहर।' रामलाल के मुंह से निकला।

'कभी नहीं ! असम्भव !!' माधव जी ने कहा। परन्तु उनके सिर और शरीर ने उनकी बात का समर्थन नहीं किया। रामलाल घोड़े का सिर पकड़ कर उसी पर औंध गया। घोड़ा तड़पा। रामलाल की जांघें अभी ढीली नही हुई थीं। तुरन्त एक सवार ने घोड़े से उतरकर रामलाल को सँभाला उसके घोड़े को भी।

माधव जी को अपने भीतर फिर कुछ दृढ़ता अवगत हुई।

'इसे तुरन्त घोड़े से बांधकर ले चलो। शीघ्र से शीघ्र डेरे पर पहुँचाओ ?' माधव जी ने आदेश दिया।

'बहुत अच्छा सरकार।' कई कंठों से निकला। उन लोगों ने रामलाल को घोड़े से बांधा और चलने को हुये।

अब माधव जी को एक भीम आई और वे लटकने को हुये। साथी सवारों ने देख लिया। तुरन्त उन्हे घोड़े पर संभाला और तेजी के साथ

ले चले। डेरे पर आते ही उपचार आरम्भ हो गया। रामलाल लगभग अचेत था, माधवजी लगभग सचेत।

उपचार के उपरान्त रामलाल को कुछ चेतना आई।

उसने हीन स्वर में पूछा, 'पटेल जी बच गये?'

माधव जी ने प्यार के साथ उत्तर दिया, 'हां, हां, तुमको क्या हो गया?'

'हो'' गया'' जो ''होना था '',' रामलाल रुक रुक कर कहता गया,—'शिहाबुद्दीन'' ने'' आ''प'' को''मारने''के ''लिये''मुझे पी''छे''लगाया'' था''आ''प''को''चा''ह''ने''ल''गा'' वि''ल''कु''ल'' आ''प''का''हो''ग''या''पा''नी'''

रामलाल को तुरन्त पानी पिलाया गया। उसने कुछ सचेत होकर गंगाजल मांगा। तुरन्त लाकर वह भी दिया गया।

माधव जी को घुमेड़ियों पर घुमेड़ियां आ रही थीं, परन्तु उन्होंने वज्र बनने का प्रयत्न किया।

'य''ह''पा''न''वा''ला''कौ''न''था''?'

रामलाल ने कुछ जगे हुये से स्वर में प्रश्न किया। उसे बतलाया गया।

'मु''झे''सन्देह''हो''ग''या''था'''

अन्तिम बात उसके मुंह से निकली, कुछ क्षण उपरान्त 'गो''वि''न्द।' फिर शरीर को जकड़ सी लगी और उसका देहान्त हो गया। उसके दाह का प्रबन्ध कर दिया गया।

माधव जी की दशा भी बिगड़ चली। उनके आसपास मुख्य मुख्य सेनानायक आ खड़े हुये।

एक बोला, 'इसमें तुकोजी का षड्यन्त्र है।'

एक फ्रांसीसी जनरल ने कहा, 'हम पूना को तोपों से अभी जमीन में मिलाये देते हैं।'

रानेखां के लड़के ने कहा, 'मैं तब अन्न जल ग्रहण करूंगा जब इन्दौर को खाक कर चुकूंगा।'

माधव जी कराह उठे। कराहते हुये बोले, 'पागलपन मत करो। इसका क्या प्रमाण है कि तुकोजी ने यह करवाया? वह लड़का स्वयं काफी बुरा है। जो कुछ भी हो देखो, मैं तुम्हारा प्रधान सेनापति और पटेल हूं न ?'

'हा, स्वामी!' उनके गद्गद् कंठों से निकला।

माधव जी ने कराहते हुये स्नेह के स्वर में आग्रह किया, 'हिन्दू गङ्गाजल की, मुसलमान कुरान की; और ईसाई इंजील की सौगन्ध खावें कि मेरे बाद कोई उपद्रव न करेंगे।'

उन लोगों को सौगन्ध खानी पड़ी।

माधव जी का ज्वर बढ़ रहा था, परन्तु चेतना अभी नष्ट नहीं हुई थी। बोले, 'मैं सिपाही की मौत ही तो मर रहा हूं। रञ्ज मत करो। देखो, यह प्रकट न होने पावे कि मैं कैसे मर रहा हूँ। नहीं तो, पूना, महाराष्ट्र और सारा देश तलवारों का अखाड़ा बन जायगा............ अंग्रेज चढ़ दौड़ेंगे। टीपू, निजाम और न जानें कितने और! कठिनाई से जमाया हुआ स्वराज्य तुरन्त हाथ से चला जायेगा!! मेरा कहना करोगे न ?'

उन अफसरों की आंखों मे आंसू थे। गला रुद्ध। उन लोगों ने आज्ञा-पालन का सिर हिलाया।

माधव जी की स्मृति विचलित हुई।

उन्होंने कहा, 'कैसा दिलेर था वह जाट लड़का! वाह!! जब रानेखां पानीपत के बाद मुझे जाट राज्य में ले गया, तब जाटों ने कितना भला बर्ताव किया था! सिहाब मिला था···वह दुष्ट···जिसने···' कुछ क्षण उनके ओठ बिरबिराते रहे। स्पष्ट कुछ न कह सके। थोड़ी देर बाद पानी का संकेत किया। पानी पीकर फिर सचेत हुये। बोले, 'मेरे पीछे मेरा भतीजा दौलतराव तुम सब का···मं···भा···ल···न करेगा। बुलाओ उसे।'